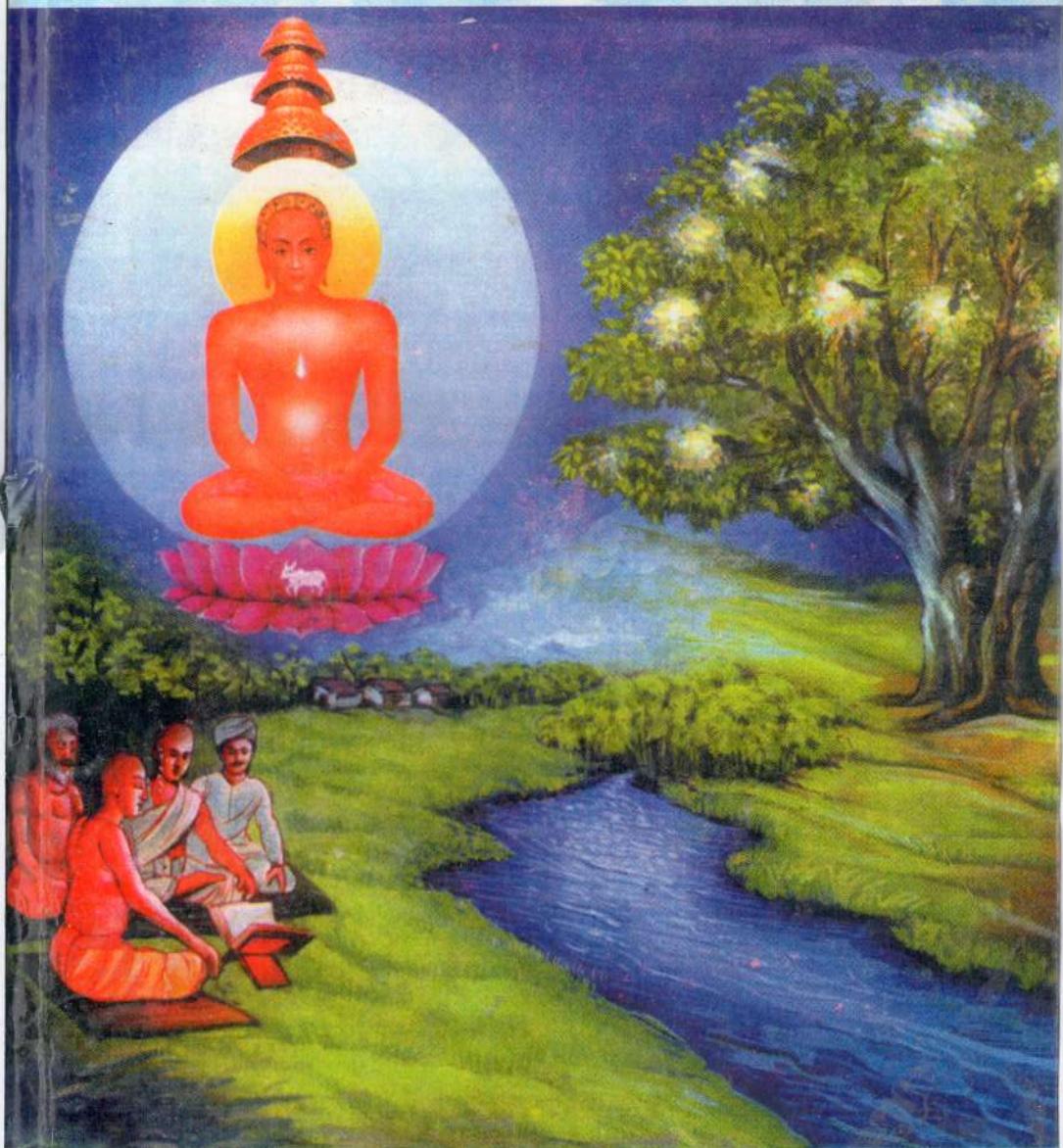


# भविष्य - फल - विज्ञान

(शकुन विज्ञान)



आचार्य रत्न श्री कनकनन्दीजी महाराज

# भविष्य - फल - विज्ञान

(शकुन - विज्ञान)

स्व-पर शुभाशुभ शकुन को जानकर अशुभ से बचने के लिए तथा शुभ से लाभ प्राप्त करने के लिए पढ़िये यह “भविष्य-फल-विज्ञान” (शकुन-विज्ञान)। इसमें जैन, हिंदू, ज्योतिष, विज्ञान व देश-विदेश के शकुनों का वर्णन है।

यह साधारण व्यक्ति, यात्री, वैद्य, रोगी, व्यापारी, कृषकों, वैज्ञानिक, शोधार्थी, समाधि-साधक, साधुओं के लिए अति महत्वपूर्ण कृति है।

**लेखक**

आचार्य कनकनन्दीजी गुरुदेव

झाडोल में आयोजित तृतीय राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी की  
मंगल बेला में प्रकाशित

**द्रव्यदाता**

श्री बंसीलाल चम्पालाल देवडा, झाडोल (उदयपुर),  
हाल मुकाम मुम्बई

**प्रकाशक**

धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान

## धर्म दर्शन शोध संस्थान — ग्रन्थांक — 102

पुस्तक	:- भविष्य फल - विज्ञान (शकुन विज्ञान)
लेखक	:- आचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव
आशीर्वाद	:- गणधराचार्य कुन्धुसागर जी गुरुदेव
सहयोगी	:- मुनि श्री विद्यानंदी जी, मुनि श्री आज्ञासागर जी
परम शिरोमणी	संरक्षक :— रमेश चन्द्र कोटडिया, मुंबई, अमेरिका प्रवासी
अध्यक्ष	:- श्री गुणपाल जैन (मुजफ्फरनगर)
कार्याध्यक्ष	:- श्री गुरुचरण एम. जैन (वकील — मुंबई हाई कोर्ट)
वरिष्ठोपाध्यक्ष	:- श्री सुशील चन्द्र जैन — बडौत (मेरठ)
उपाध्यक्ष	:(सम्पादन — प्रकाशन) 1. श्री प्रभात कुमार जैन (मु. नगर) 2. श्री राजमल पाटोदी (कोटा) 3. श्री रघुवीर सिंह (म. नगर)
मानद निर्देशक	:- डॉ. राजमल जैन (उदयपुर)
मंत्री	:- श्री नेमीचन्द्र काला (जयपुर)
संयुक्त मंत्री	:- श्री पंकज कुमार जैन (बडौत)
संस्करण	:- प्रथम
मूल्य	:- ज्ञान प्रचारार्थ सहयोगी राशि — 101-00
प्रतियाँ	:- 1000

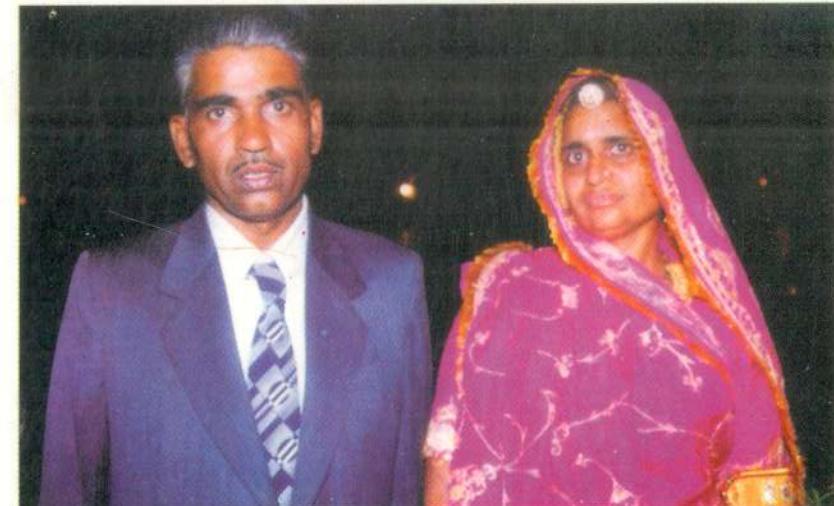
### प्रकाशन एवं प्राप्ति स्थान :-

1. धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान निकट दि. जैन धर्मशाला बडौत (मेरठ) उ.प्र.
2. नव अल्पना प्रिन्टर्स स्टेशनर्स, मोदीखाना, जयपुर — 3 (राज.)
3. श्रीमती रत्नमाला जैन C/o डॉ. राजमल जैन (वैज्ञानिक)  
4-5 आदर्श कॉलोनी पुला उदयपूर फोन (0294) 440793
4. श्री गुणपाल जैन, वेहड़ा भवन, 87/1 कुन्धनपूरा, मुजफ्फरनगर  
(उ.प्र.) फोन — (0131) 433259

ज्ञान दानी (द्रव्य दाता) : श्री बंसीलाल चम्पालाल देवड़ा एवं धर्मपत्नी श्रीमती जमनीबाई देवड़ा तथा सुपुत्र भरत कुमार, भूपेन्द्र कुमार पुत्र वधु श्रीमती तारादेवी देवड़ा ज्ञाड़ोल। हाल मु. 702बी. सुमेर टावर, लवलेन, भायखला मुम्बई—40010 फोन — 3757688

लेसर टाईप सेटर्स :— श्री कुन्धुसागर ग्राफिक्स सेन्टर  
25, शिरोमणी बंगलोज, बडोदरा ऐक्सप्रेस हाईवे के सामने, सी.टी.एम. चार रस्ता के पास, अहमदाबाद—380026 दूरभाष : 5892744

द्रव्यदाता प्रकाशक दंपति  
श्रीयुत् बंसीलालजी देवड़ा एवम्  
उनकी धर्मपत्नी श्रीमती जमनीबाई देवड़ा



## आशीर्वाद

जीवन में जैसे मुहूर्त का महत्वपूर्ण स्थान है उसी प्रकार शकुन का भी है। शकुन शुभ और अशुभ होते हैं। शकुन का ज्ञान पशु-पक्षी, नक्षत्र, सूर्य-चन्द्र, बाल, मनुष्य, बालक, स्त्रियों आदि से होता है। यह शकुन पूर्वोपर्जिक पुण्य-पाप की कारण दिखाई देते हैं। शास्त्र में अशुभ शकुन को दूर करने के लिए इष्ट देव की प्रार्थना, पूजा, मन्त्र-जाप, दान आदि विधान पाये जाते हैं। हमारे गुरु महावीर कीर्तिजी महाराज को शकुन का ज्ञान विशेष था तथा वे अशुभ होने पर उस कार्य को प्रारम्भ करने पर भी स्थगित कर देते थे।

शकुन का वर्णन भद्रबाहु-संहिता, रिष्टसमुद्घय, भगवती-आराधना में विशेष रूप से पाया जाता है। उपाध्याय कनकनंदीजी ने जैन धर्म में वर्णित शकुन के साथ-साथ बौद्ध, हिन्दू, आधुनिक शोधपूर्ण पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से यह भविष्य-फल विज्ञान (शकुन विज्ञान) की रचना की है। उपाध्याय महाराज विशेष करके गहन, जटिल समरयापूर्ण विषयों का वर्णन आधुनिक-वैज्ञानिक प्रणाली से करना अधिक पसन्द करते हैं। इसलिए उनकी पुस्तक युवा वर्ग, विशेषकर पक्ष-लिखे लोग पढ़ते हैं और प्रकाशित करते हैं। उपाध्याय महाराज छपाने के लिए नहीं बोलते हैं परन्तु उनकी लेखन शैली के कारण शिक्षित-वर्ग स्वयं आकर्षित होकर उनके द्वारा लिखित साहित्य छपा रहे हैं। इसे पढ़कर शुभ-अशुभ को जानकर अपने कार्य की सिद्धि करें।

उपाध्याय कनकनंदी जी महाराज को बहुत-बहुत आशीर्वाद है तथा बुद्धिजीवी को ज्ञान कराने का प्रयत्न करते रहें, यही सबसे बड़ा आशीर्वाद ह। इस लेखन कार्य में साधु-साधिवाँ तथा कालेज की बालक-बालिकायें सहयोग करते हैं उन्हें भी बहुत-बहुत आशीर्वाद है तथा ऐसे ही पुण्य कार्य में उनकी बुद्धि लगी रहे।

ग.आ. कुन्युसागरजी

## द्वी

## प्राचीकरणम्

आचार्य कुन्दकुन्द देव ने कहा है कि ‘‘णाणं णेय पमाणं’’ अर्थात् ज्ञान ज्ञेय के प्रमाण होता है। इसका भावार्थ यह है कि जैसे प्रकाश द्रव्यों को प्रकाशित करता है उसी प्रकार ज्ञान, ज्ञेय को प्रकाशित करता है। दीपक जैसे स्वयं प्रकाशित होता हुआ दूसरों को प्रकाशित करता है उसी प्रकार ज्ञान भी स्वयं को जानता हुआ स्वभावतः दूसरों को जानता है। अतः ‘‘णाणं सगपरप्पयासं’’ अर्थात् ज्ञान स्वपर प्रकाशक है। इस ज्ञान-शक्ति के कारण ही जीव यथायोग्य तीन काल सम्बन्धी ज्ञेय (वस्तु, घटनायें, सुख-दुःख, हानि-लाभ, जन्म-मरण, जय-पराजय आदि) को जानता है। जैसे स्वच्छ दर्पण योग्य क्षेत्र में रिथत स्थूल योग्य भौतिक वस्तु को प्रतिबिम्बित करता है, उसी प्रकार ज्ञान रूपी-दर्पण स्वयोग्य ज्ञेय को प्रतिबिम्बित करता है। परन्तु जैसे दर्पण के ऊपर गन्दगी जमने पर वस्तु का प्रतिबिम्ब झलकता नहीं या अस्पष्ट या विकृत दिखता है, उसी प्रकार ज्ञान रूपी दर्पण में जब कर्म रूपी गन्दगी लगी रहती है तब ज्ञेय का प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से नहीं पड़ता है, परन्तु जितने-जितने अंश में कर्म रूपी गन्दगी हटती जाती है उतने-उतने अंश में ज्ञेय प्रतिबिम्बित होता जाता है किन्तु जब पूर्ण कर्म-रूपी गन्दगी हट जाती है तब त्रिकालवर्ती समस्त ज्ञेय उस ज्ञान रूपी दर्पण में प्रतिबिम्बित हो जाते हैं।

जैसे ज्ञान का स्वभाव ज्ञेय को जानना है उसी प्रकार ज्ञेय का स्वभाव ज्ञान का विषय होना है। जैसे दीपक स्वयं प्रकाशित होता हुआ दूसरों को प्रकाशित करता है परन्तु जिस वस्तु में दीपक प्रकाशित होने की योग्यता नहीं है उस वस्तु को दीपक प्रकाशित नहीं कर सकता है। जैसे-उदाहरण के तौर पर दीपक स्थूल पुस्तक, कुर्सी, टेबल आदि को तो प्रकाशित कर सकता है, परन्तु परमाणु, काल द्रव्य, आकाश द्रव्य, शुद्ध अमूर्तिक आत्म द्रव्य, धर्म द्रव्य (इथर) अधर्म द्रव्य (गुरुत्वाकर्षण बल) आदि को प्रकाशित नहीं कर सकता है। यह है ज्ञान एवं ज्ञेय सम्बन्ध।

विश्व के प्रत्येक द्रव्य एक-दूसरे से प्रभावित होते हैं। जैनदर्शन में कहा गया है कि प्रत्येक द्रव्य के स्व-चतुष्टय होते हैं। यथा स्वद्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। इसे ही विज्ञान में आइन्स्टीन के सिन्धान्त के अनुसार Four Dimensional theory

(यतु आयाम सिन्धान्त) कहते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक घटनाओं के लिए भी चतु आयाम सिन्धान्त को जान लेना चाहिए अर्थात् प्रत्येक घटना के कुछ न कुछ द्रव्य होंगे, उसी प्रकार क्षेत्र (आकाश प्रदेश) काल, (समय) भाव (परिणाम) भी होंगे। जैसे सूर्य उदय एक घटना है। इस घटना में सूर्य, द्रव्य हुआ। जिस दिग्बलय में सूर्य उदित होता है वही समय उसके लिए काल हुआ। उस समय में जो परिणाम हुआ वह उसका भाव हुआ। सूर्य उदय के कुछ समय के पहले से ही पूर्वाकाश का अन्धकार कुछ हल्का पड़ता जाता है एवं कुछ प्रकाश फैलता जाता है और लालिमा दिखाई देती है। इसके साथ-साथ मुर्गा आदि पक्षी बोलने लगते हैं। चन्द्र एवं नक्षत्रों का प्रकाश मन्द होता जाता है, देवालय में घटा, शंख आदि की ध्वनि होने लगती है, पशु-पक्षी, मनुष्य निद्रा से जागकर अपने-अपने कार्य क्षेत्र में जाने लगते हैं। निशाचर पशु-पक्षी अपने-अपने निवास स्थान की ओर लौटने लगते हैं। सूर्य उदय होने के बाद पद्म खिल जाते हैं, उल्लू आदि को दिखाई नहीं देता है और मनुष्य आदि को स्पष्ट दिखाई देता है। उष्णता बढ़ती जाती है एवम् शीतलता कम होती जाती है। ये सूर्य उदय रूपी घटना के विभिन्न अंग हैं।

सूर्योदय के पहले जो पूर्व आकाश में लालिमा आदि कार्य हुए वे कार्य सूर्योदय के सूचक शकुन हैं, अर्थात् घटना के पहले ये सूचनायें सूचित करती हैं कि आगे सूर्य उदय रूपी घटना होने वाली है। यह सूचना, (शकुन) कार्य के लिए प्रेरक कारण या उदासीन कारण भी नहीं है। दार्शनिक परिभाषा में यह उदासीन कारण या निमित्त कारण भी नहीं है। परन्तु यह ज्ञापक कारण है। पूर्व दिशा में लालिमा आदि होना यह सूर्य उदय रूपी घटना का पूर्ववर्ती फल है। पूर्ण प्रकाश फैलना, कमल खिलना यह सूर्य उदय से जायमान आनुसांगिक फल है। सूर्योदय के पहले मुर्गा आदि बोलते हैं। उससे सूर्योदय नहीं होता है परन्तु सूर्योदय के पहले मुर्गा आदि पक्षी उस वातावरण से प्रभावित होकर स्वयं बोलने लगते हैं। घड़ी में जब 6.30 बजे तब सूर्योदय हुआ। इसका मतलब यह नहीं हुआ कि घड़ी में 6.30 बजनेके कारण ही सूर्य उदित हुआ परन्तु जब सूर्य उदित हुआ तब घड़ी में 6.30 बज रहा था। घड़ी का यह 6.30 बजने का निर्दिष्ट (निश्चित) समय, सूर्य उदय के लिए न प्रेरक कारण व निमित्त कारण है। इसी प्रकार कुछ शकुन होते हैं जो

केवल सूचक होते हैं न कि प्रेरक या उदासीन कारण। जैसे-बिल्ली का रास्ता काटना, जल से भरा कुम्ह देखना आदि। बिल्ली के रास्ते काटने से बिल्ली को ही अपशुकन मानकर बिल्ली को ही मारते-पीटते हैं। यह मिथ्या-भ्रम है। इससे तो और अधिक पाप बढ़ता है। वह पाप बन्ध अधिक होकर अपशुकन बढ़ता है। बिल्ली शुभ या अशुभ के लिए कारण नहीं है पर शुभ-अशुभ के लिए सूचक है। जैसे घड़ी सूर्योदय के लिए कारण नहीं है परन्तु सूचक या ज्ञापक कारण हो सकती है। जीवों के शुभ या अशुभ, सुख या दुःख, स्वपूर्वाजित पुण्य या पाप कर्म का फल है। दूसरे ज्ञापक निमित्त को शुभ या अशुभ मानकर उसके प्रति भ्रम से रागद्वेष करना मिथ्या है। इसके लिए एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ-

प्राचीन काल में एक राज्य में एक आदमी था। उसे देखकर सब मनुष्य अपशकुन मानते थे। राजा को भी यह विषय मालूम हुआ। राजा ने परीक्षण के लिए उसे अपने राज्य में बुलाया और प्रातः उठते ही उसने उसका मुखावलोकन किया और अपने कार्य में इतना व्यस्त हो गया कि शाम तक खाना-पीना भी भूल गया। जब संध्या हुई तो उसे पता चला कि आज मैंने न खाना खाया न पानी पिया। वह विचार करता है कि आज सुबह उठकर उस अपशकुन वाले पापी का मुख देखा था इस कारण आज मुझे खाना नहीं मिला और मैं दिन भर भूखा-प्यासा रहा। ऐसा विचार करता हुआ क्रोधित होकर उसे फाँसी की सजा देने की सूचना दी और राजा बोला आज प्रातः काल तुम्हारा मुख देखने से मुझे खाना-पीना नहीं मिला इसलिए तुम्हें फाँसी दण्ड दे रहा हूँ। वह व्यक्ति नम्र भाव से बोलता है— हे राजन्! फाँसी दण्ड के पहले मेरी एक प्रार्थना है। आपकी आज्ञा हो तो मैं आपके सामने अर्ज करूँ। राजा बोले— तुम्हारी क्या प्रार्थना है, शीघ्र बोलो। वह बोलता है कि एक व्यक्ति के मुख दर्शन से एक को खाना-पीना नहीं मिला और दूसरे को प्राणदण्ड मिला। इन दोनों में से कौन-सा अपशुकन अधिक भयंकर है? राजा उसका प्रश्न सुनकर बहुत सोच-विचार में पड़ गये एवं विचारने लगे कि मुझे तो इसका मुख देखने से एक दिन खाना नहीं मिला परन्तु इसको तो मेरा मुख देखने से प्राणदण्ड मिल रहा है। इसमें ज्यादा अपशुकन तो मेरा मुख ही है। ऐसा गहन विचार-विमर्श करने के बाद उसने उस व्यक्ति को छोड़ दिया। इस विश्व में छु: मौलिक द्रव्य हैं। यथा (1) जीव द्रव्य (Soul), (2) पुद्गल

द्रव्य (Matter), अणु स्कन्ध (द्रव्यमान) तथा ऊर्जा, (3) धर्म द्रव्य (Media of motion) गति माध्यम द्रव्य, (4) अधर्म द्रव्य (Media of rest) स्थिति माध्यम द्रव्य, (5) आकाश द्रव्य (Space) पाँचों द्रव्यों को अवकाश देने वाला द्रव्य, (6) काल (Time) पाँचों द्रव्यों में परिवर्तन के लिए निमित्त कारण। छु: द्रव्यों में से जीव एवं पुद्गल द्रव्य शुद्ध भी होते हैं और अशुद्ध भी होते हैं। कर्म रहित मुक्त जीव शुद्ध होते हैं तथा अविभाज्य रूप परमाणु; शुद्ध पुद्गल द्रव्य है। दो आदि पुद्गलों के समूह स्वरूप स्कंध अवस्था अशुद्ध पुद्गल है। यह जीव एवं पुद्गल द्रव्य सक्रिय भी होते हैं। छहों द्रव्य परस्पर आश्रित भी हैं एवं परस्पर से प्रभावित भी हैं। जीव द्रव्य जानने वाला है तो पुद्गल द्रव्य जीव के रागद्वेष आदि से प्रभावित होकर बन्ध को प्राप्त होकर सुख-दुःख देने वाला भी है। धर्म द्रव्य जीव और पुद्गल को गति के लिए सहायक है तो अर्धम द्रव्य ठहरते हुए जीव और पुद्गल की स्थिति में सहायक है। आकाश-द्रव्य छहों द्रव्यों को स्थान देने वाला है तो काल द्रव्य छहों द्रव्य के परिणमन का निमित्त है। विश्व की संरचना इन 6 द्रव्यों से हुई है और इन 6 द्रव्यों का प्रभाव परस्पर पड़ता है। एक द्रव्य के अभाव से अन्य द्रव्य की सत्ता का होना संदेहात्मक हो जाता है। इसकी विशेष जानकारी के लिए हमारे द्वारा लिखित ‘विश्व विज्ञान रहस्य’ का सूक्ष्म अध्ययन करें।

उपरोक्त 6 द्रव्यों के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त हुई। अब जीव और पुद्गल के बारे में विशेष वर्णन यहाँ पर किया जा रहा है क्योंकि संसार की विशेष घटनाओं में जीव, पुद्गल का योगदान विशेष रहता है। जीव के सामान्यतः दो भेद हैं— (1) कर्म सहित संसारी जीव, (2) कर्म रहित मुक्त जीव। कर्म रहित मुक्त जीव के ऊपर पुद्गल द्रव्य का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। शुद्ध जीव में परिणमन शुद्ध रूप में ही अन्य द्रव्यों के निमित्त/सहायता से होता है। अशुद्ध जीव कर्म परमाणुओं सहित होने के कारण अशुद्ध जीव के ऊपर बाह्य परिसर (प्रकृति) का प्रभाव विशेष रूप से पड़ता है। क्योंकि बाह्य परिसर पुद्गल का ही विशेष परिणमन है। बाह्य-परिसर में जल, वायु, अग्नि, ऋतु, सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारे, सूर्य-ग्रहण, चन्द्र-ग्रहण, सूर्य कलंक, चन्द्र कला हास-वृद्धि, उल्का, पुच्छल तारा (धूम केतु) हिमपात, भूकम्प, भूचाल आदि सभी गर्भित हो

जाते हैं। जब प्रकृति में परिणमन होता है उस परिणमन का प्रभाव जीवों के ऊपर भी पड़ता है, क्योंकि जीव भी प्रकृति का एक अभिन्न अंग है। जैसे शरीर के अंग-उपांग में फोड़े-फुन्सी होने पर या चोट लग जाने पर पीड़ा-दर्द होने पर प्रायः पूर्ण शरीर में वेदना होती है। उसी प्रकार प्रकृति के किसी भी अंग-उपांग में किसी प्रकार का परिवर्तन होने पर उसका वेदन परिणमन प्रकृति के अन्य अंग-उपांग में होना सम्भव है। इसी प्रकार वेदन या परिणमन से निमित्त सम्बन्धी ज्ञान होता है। जैसे-ज्वर होने पर पूर्ण शरीर में ज्वर हो जाता है और ताप बढ़ जाता है। उस ताप को शरीर के किसी भी अंग उपांग में अनुभव कर सकते हैं, थर्मोमीटर से नाप भी सकते हैं। इसी प्रकार वातावरण की उष्णता का माप, वर्षा होगी या नहीं होगी, कब आयेगी, तूफान आयेगा या नहीं आयेगा इसकी जानकारी बैरोमीटर से हो सकती है। उपरोक्त यन्त्र पारद (पारा) के उत्तर-चढ़ाव के कारण उपरोक्त सूचना देते हैं। पारद उष्णता से शीघ्र प्रभावित होता है और ताप से उसका आयतन बढ़ जाता है। जिसके कारण उपरोक्त सूचना शीघ्र और स्पष्ट हो जाती है। इसी प्रकार जीव में कुछ संवेदन शील अंग-उपांग होते हैं जिसमें वे उन अंग-उपांग से प्रकृति की गतिविधि, परिवर्तन, परिस्पन्दन कर्पन, सक्रमण आदि को वह जीव जान लेते हैं। कुछ जीवों को कैसे पूर्वाभास होता है उसके कुछ उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ— जैलीफिश तूफान आने के 10 से 15 घण्टे पहले किनारा छोड़कर गहरे समुद्र में चली जाती हैं। जापानी लोग घरेलू मछली घरों में ऐसी मछलियाँ पालते हैं, जो भूकंप आने के कुछ घण्टे पूर्व ही उछल-कूद मचाना शुरू कर देती हैं। गहरे समुद्र में रहने वाली मछलियाँ किसी भी प्राकृतिक आपदा की आशंका होने पर सतह पर आ जाती हैं।

चीटियाँ जब अण्डा लेकर भागती हैं तब पता चलता कि आगे जाकर वर्षा होगी। सिकन्दर के समय में एक घटना घटी थी। एक दिन सिकन्दर बादशाह जंगल में जा रहे थे, उस समय में दो भाई-बहन लकड़ियाँ चुन रहे थे। लकड़ी चुनते-चुनते बहन बोली भैया जल्दी करो वर्षा आने वाली है, क्योंकि चीटियाँ अण्डे लेकर जा रही हैं। दोनों लकड़ियाँ बीनकर व जल्दी-जल्दी बांधकर चल पड़े। कुछ दूर जाने के बाद मूसलधार वर्षा होने लगी। सिकन्दर बादशाह उस लड़की से खुश हो गये और मुग्ध होकर कहने लगे एक लड़की को भी कितना

ज्ञान है जिसको चीटियों के कारण पूर्वाभास हो गया।

कुछ पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़ों में मनुष्य से भी अधिक संवेदनशील सूक्ष्म-ग्राही अवयव एवं इन्द्रियाँ होती हैं, जिसके कारण मनुष्यों से भी उन्हें कुछ विषयों में अधिक सूक्ष्म ज्ञान हो जाता है। जैसे— एल्सेशियन नस्ल के कुत्ते की प्राण-शक्ति मनुष्य की तुलना में 10 लाख गुनी अधिक होती है। इस ही पुस्तक में यत्र-तत्र पशु-पक्षियों की सूक्ष्मग्राही शक्तियों का वर्णन किया है। इस कारण यहां नहीं कर रहे हैं। पाठक वृन्द मूल से ही देखने का कष्ट करें।

यहां पर निमित्त सम्बन्धी मेरे कुछ अनुभवों का वर्णन कर रहा हूँ। मैं जब क्षुल्लक था तब चातुर्मास मध्य-प्रदेश के शाहगढ़ में हुआ था। उस समय में एक गृहरथ सख्त बीमार था। उस समय उनके परिवार के लोग आचार्य श्री कुंथुसागर महाराज जी के पास आये। तब उस मरीज को देखने के लिए महाराज जी ने मुझे भेजा। मैं जा ही रहा था कि बिल्ली ने रात्सा काट दिया तब मैंने सोचा वह अपशुकन है, यह मरीज जिन्दा नहीं बचेगा और हुआ भी यही। वह मरीज अधिक बीमार हो गया और अन्त में मुनि दीक्षा लेकर समाधि ले ली। उनका समाधि-मरण 2-3 दिन में ही हो गया।

शाहगढ़ के चातुर्मास के पहले पूरे संघ का बिहार नैनागिरी से सागर की ओर हो रहा था। उस समय में मैं सामान्य बीमार था। जब नैनागिरी से हम बिहार कर रहे थे तब एक पूर्ण अपरिचित व्यक्ति बैठकर मुख थो रहा था और मुझे देखकर कहा कि महाराज जी बिहार मत करो। तो भी संघ का बिहार हुआ और मैं उसके बाद सख्त बीमार में पड़ गया और लगभग 4-5 माह तक बीमार रहा। इस प्रकार मेरे जीवन में अनेक निमित्तों का अनुभव हुआ जो वास्तविक सिन्धु हुआ। जैसे सूर्य-चन्द्र के परिवेश से वर्षा का ज्ञान, चीटियों के अण्डा लेकर चलने से वर्षा का ज्ञान, बादल के विभिन्न आकार-प्रकार से वर्षा सम्बन्धी पूर्वाभास आदि-आदि।

प्राचीन काल में शकुन विज्ञान का अधिक ही प्रचार-प्रसार था। वे लोग आधुनिक यन्त्रों के बिना भी पर्यावरण से परिस्थिति का ज्ञान कर लेते थे। प्राचीन कालीन शकुन विज्ञान का ज्ञान जैन, बौद्ध, हिन्दु तथा विदेश के साहित्य में यत्र-तत्र पाया जाता है। प्राचीन काल में तथा अभी भी अनेक लोग यात्रा, शुभ कार्य

आरम्भ, व्यापार, गृहनिर्माण, गृह प्रवेश आदि में शुभ-अशुभ शकुन को देखकर कार्य प्रारम्भ करते हैं। वरतुतः सम्पूर्ण शकुन अंध परम्परा, अंध विश्वास, अंध रुढ़ि नहीं है। यह तो अनुभव परक वैज्ञानिक सत्य-तथ्य सिद्धान्त है। संहिता शास्त्र में प्रकृति सम्बन्धी शकुन विज्ञान तथा आंगोपांग सम्बन्धी शकुन विज्ञान का वर्णन पाया जाता है। आयुर्वेद शास्त्र में रोग सम्बन्धी शकुन ज्ञान पाया जाता है।

सुख-दुःख, जन्म-मरण, लाभ-हानि आदि में पूर्वोपार्जित पुण्य-पाप कर्म मुख्य कारण है, जिससे सुख-दुःख का पूर्वाभास होता है उसे शकुन कहते हैं। जैसे-पापकर्म के उदय से ज्वर होता है। ज्वर होने से शरीर का ताप बढ़ जाता है; अंगों में दर्द और सिर दर्द होने लगता है। ज्वर को मापने के लिए थर्मामीटर का प्रयोग करते हैं। थर्मामीटर से ताप का परिज्ञान होता है। ज्वर के लिए पापकर्म मुख्य कारण है तो थर्मामीटर ज्ञापक कारण है और सिर दर्द आदि ज्वर से जायमान परिणाम है। ट्रेन चलने के लिए मुख्य कारण इंजन, ऊर्जा आदि है। प्रेरक कारण ड्राईवर है। उदासीन निमित्त कारण पटरी है। सांकेतिक कारण हरी झंडी, सीटी और हरी बत्ती है। इसी प्रकार प्रत्येक घटनाओं में भी उपरोक्त कारण यथा सम्भाव रहते हैं। इसलिए अशुभ शकुन को परिवर्तित करने या शक्तिहीन करने के लिए शुभ-भावनायें, पूजा-पाठ, देव-दर्शन, दान, तीर्थयात्रा, मन्त्र-पाठ आदि का विधान-शकुन-शास्त्र में पाये जाते हैं। इनसे पाप कर्म की निर्जरा या पापकर्म की शक्ति का हास होकर अशुभ घटनाओं में परिवर्तन सम्भव है परन्तु कुछ निकाचित शक्तिशाली कर्म भी होते हैं जो उदय में आकर फल देकर ही विश्रान्ति लेते हैं। शकुन को जानकर मनुष्य सतर्क होकर कार्य करें तो कुछ अंश में दुर्घटना से बच भी सकता है। भगवती आराधना, रिष्ट-समुद्दय आदि में शकुन का वर्णन करते हुए जैनाचार्यों ने कहा कि साधु शास्त्रों को पढ़कर स्वयं की एवं दूसरों की आयु जानकर समाधिमरण करें व करवायें। इसी प्रकार कृषक शकुन ज्ञान से वर्षा आदि का परिज्ञान करके कृषि कार्य करने से अधिक फल हो सकता है।

निमित्तों का वर्णन स्थानांग सूत्र में निम्न प्रकार पाये जाते हैं—

अट्ठविहे महानिमित्ते पण्णते, तं जहा-भोमे, उप्पाते, सुविणे, अंतलिक, अंगे, सरे, लक्खणे, वंजणे।

अष्टविधानि महानिमित्तानि प्रज्ञत्यानि, तद्यथा-भौमम्, औप्तातं, स्वप्नम्,

आन्तरिक्षम्, अंग, स्वरः, लक्षणं, व्यञ्जनम्।

महानिमित्त आठ कहे गये हैं, जैसे-भौम, औप्तात, स्वप्न, आन्तरिक्ष, आङ्ग, स्वर, लक्षण और व्यञ्जन।

जिन कारणों से मनुष्य भूत, भविष्यत् और वर्तमान काल की घटनाओं एवं पदार्थों को जानने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है; उन सभी कारणों को निमित्त कहते हैं।

(1) भौम — भूमि से सम्बन्धित लक्षणों का प्रतिपादन करने वाले शास्त्र को भौम कहते हैं। भूमि में हलचल का होना, सशब्द भूकम्प का होना, यह भूमि उर्वरा है या ऊपर? यह भूमि किस बीज को उत्पन्न कर सकती है? इस भूगर्भ में कौनसी धातु है? कितनी दूर है? जल है, गैस है या तेल है अथवा यूरेनियम की तरह का कौन-सा बहुमूल्य तत्त्व है? इत्यादि पदार्थों को जानने के लक्षणों और शुभ-अशुभ फल का ज्ञान कराने वाले शास्त्रों को भौम महानिमित्त कहते हैं। जैसाकि

शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते।

सेनापतिरमातयश्च राजा राज्यं च पीड़यते॥

अर्थात् महान् शब्द करती हुई जब भूमि कांपती है, तब सेनापति, मन्त्री, राजा और प्रजा पीड़ा को प्राप्त होते हैं।

(2) औप्तात — इसका अर्थ है— उपद्रव, आकर्षिक दुःखदायी घटना, हलचल, दंगा-फिसाद इत्यादि। यह मुख्यतः तीन प्रकार का होता है—दैविक, भौतिक और आध्यात्मिक। जिन लक्षणों से भावी उत्पातों को जाना जाए, उन लक्षणों का ज्ञान कराने वाले शास्त्र को औप्तात महानिमित्त कहते हैं।

(3) स्वप्न — सोते समय गाढ़ी नींद न आने के कारण कुछ घटनायें दिखाई देती हैं, जिन्हें स्वप्न कहा जाता है।

अच्छे, या बुरे स्वप्नों का शुभाशुभ बताना, जैसे कि देव, गुरु, छत्र, कमल आदि का देखना, हाथी या घोड़े की सवारी करना, पर्वत के शिखर पर, महल पर या प्राकार पर चढ़ना, समुद्र को पार करना, दृध-दहीं या अमृत का पीना, चन्द्र और सूर्य का मुख्य में प्रवेश करना इत्यादि स्वप्न शुभ फल देने वाले माने गये हैं। यदि स्वप्न-द्रष्ट्वा लाल रंग वाला पेशाब करे या मलोत्सर्ग करे और उसी समय यदि स्वप्न भंग हो जाए, तो स्वप्न-द्रष्ट्वा को अर्थ-हानि होती है।

(4) आन्तरिक्ष – आकाश से सम्बन्ध रखने वाले निमित्त को आन्तरिक्ष कहते हैं। सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र और तारों की गति विशेष से, ग्रह-वेधसे, अभ्र-विकार से, धूमकेतु के उदय से, दिग्दाह से, बिजली के विभिन्न रंगों से, गंधर्वनगर की बनावट से, इन्द्रघनुप से, वायुमण्डल से, सूर्य और चन्द्र को ग्रहण लगने से तथा उनके परिवेश-कुण्डल से जो शुभाशुभ बताया जाता है, वह आन्तरिक्ष शास्त्र के महानिमित्त से जाना जाता है। गंधर्वनगर के विषय में दिग्दर्शन कराते हुए वृत्तिकार लिखते हैं—

कपिले सस्यधाताय माञ्जिष्ठं हरणं गवाम् ।  
अव्यक्तवर्णं कुरुते वलक्षोभं न संहाः ॥  
गन्धर्वनगरं स्तिर्घं सप्रकारं सतोरणम् ।  
सौभ्यं दिशं समाश्रित्य राजास्तद्विजयं करम् ॥

अर्थात् पीले गंधर्वनगर से धान्य का विनाश होता है, मंजीठ के रंग वाले से गौओं का हरण होता है। अव्यक्त वर्णवाले से सेना में क्षोभ जागता है। इस प्रकार के फलादेश बताने वाला भी आन्तरिक्ष महानिमित्त कहलाता है।

(5) आङ्ग – शरीर के विभिन्न अंगों के स्फुरण से शुभाशुभ फल का बताना। आङ्ग-शास्त्र का विषय है। पुरुष के दाएँ और स्त्री के बाएँ अंगों का स्फुरण शुभ माना गया है। सिर के फड़कने से पृथ्वी-लाभ तथा ललाट के स्फुरण से पदवृद्धि होती है। जिस शास्त्र में अंग-स्फुरण के शुभाशुभ फलों का उल्लेख हो, उसे आङ्ग महानिमित्त कहते हैं।

(6) स्वर – इस पद से तीन अर्थ ग्रहण किए जाते हैं। षड्ज आदि सात स्वरों के द्वारा शुभाशुभ बताना, अथवा इडा, पिंगला और सुषुम्ना इन तीन स्वरों के द्वारा शुभाशुभ फल बताना और पक्षियों के शब्द से शुभाशुभ बताना। इन सबका समावेश स्वर में हो जाता है।

(7) लक्षण – स्त्री और पुरुष के शरीर की बनावट या रेखा आदि से शुभाशुभ फल बताना लक्षण कहलाता है। साधारण मनुष्यों में 32 लक्षण पाए जाते हैं। बलदेव और वासुदेव के 108 लक्षण होते हैं। चक्रवर्ती और तीर्थङ्करों में 1005–1008 लक्षण होते हैं। सामुद्रिक शास्त्र में अच्छे-बुरे अंगों पांगों का तथा रेखा-विज्ञान (पामिरस्ट्री साइंस) का विस्तृत वर्णन मिलता है। “अंगविज्ञा” नामक ग्रन्थ

में बड़े विस्तार के साथ शारीरिक लक्षणों का वर्णन किया गया है और साथ ही वहाँ शुभाशुभ फल भी निर्दिष्ट हैं।

अस्थिष्वर्थाः सुखं मांसे, त्वचि भोगाः स्त्रियोऽक्षिषु ।

गतौ यानं स्वरे चाज्ञा सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ॥

अर्थात् पुष्ट हड्डियों से जाना जाता है कि यह व्यक्ति धनवान होगा, मांसल होने से सुखी समझा जाता है। शरीर की त्वचा प्रशस्त होने से व्यक्ति विलासी होता है। आँखें सुन्दर होने से सुन्दरियों का बल्लभ बनता है, राजहंस, वृषभ एवं गम्भीर शब्द वाला सत्ताधीन होता है, उसकी आज्ञा सर्वमान्य होती है। विशिष्ट शक्ति-सम्पन्न व्यक्ति सबका स्वामी होता है।

जिस शास्त्र में तिल-मसा आदि का विशेष वर्णन हो, उसे “व्यज्जन शास्त्र” कहते हैं। जिस स्त्री की नाभि से नीचे के भाग में कुंकुम की बृंद के समान तिल या मरसा हो या कोई और लक्षण हो वह अच्छी मानी जाती है। लक्षण श्रीरार के साथ उत्पन्न होते हैं और व्यज्जन बाद में उत्पन्न होते हैं। जो चिन्ह पुरुष या स्त्री के होते हैं, उनके फलादेश से जीवन की पूर्ण दशा का ज्ञान हो जाता है।

“भविष्य-फल विज्ञान” (शकुन विज्ञान) को जानकर मानव भविष्यत् की घटनाओं का यथायोग्य परिज्ञान करके लाभान्वित हो इस उद्देश्य से मैंने जैन (श्वेताम्बर. दिग्म्बर), बौद्ध, आयुर्वेद, सहिता शास्त्र, आधुनिक पत्र-पत्रिकाओं आदि में वर्णित शकुनों का संकलन इस शकुन विज्ञान में किया है, इसलिए इस शकुन विज्ञान का यथार्थ कृतिकार मैं नहीं हूँ, परन्तु जिन कृतियों से मैंने संकलन किया उस कृति के कृतिकार ही इस कृति के कृतिकार हैं। मैंने तो केवल माली के समान उन कृति रूपी वर्गीयों से सिद्धान्त रूपी पुस्त्रों को चुनकर भविष्य फल विज्ञान (शकुन विज्ञान) रूपी माला के रूप में संयोजन की है।

इस पुस्तक के द्रव्यदाता श्री बंसीलाल चम्पालाल देवडा के सपरिवार सहायक कर्ता, हेमलता, रेशमा, भारती, चेतना, कुशलप्रभा, आशा, पुष्पा (चावण्ड), सलुम्बर के मनीष जैन, विकिशा जैन, मनिषा जैन, समता गांधी, दर्शना गाडिया तथा धर्म दर्शन शोध संरथान के कार्यकर्ताओं को मेरा मंगलमय आशीर्वाद है, जो निष्ठापूर्वक प्रकाशन कार्य में संलग्न हैं।

– आचार्य कनकनन्दी

## मेरी विवशता तथा चिन्ता क्यों? कब?

आचार्य रत्न कनकनंदी

1. क्योंकि मैं 'सर्वजीव सुखकारी' 'सर्वजीव हितकारी' संकीर्णता से रहित, भाव की पवित्रता से युक्त, वैज्ञानिक सत्य-उदार धर्म को चाहता हूँ और उसका प्रचार-प्रसार करना चाहता हूँ परन्तु अधिकांश व्यक्ति विभिन्न, संकीर्णता, भाव की मलिनता, अन्धविश्वास, अनुदार भाव से युक्त होते हैं और वे धर्म का प्रचार-प्रसार इसी दृष्टि से करना चाहते हैं।.... तब.....

2. क्षणाय रहित भाव की पवित्रता ही वस्तुतः अहिंसा है। परन्तु स्वयं को अहिंसा के अनुयायी मानने वाले भी अधिकांश व्यक्ति ईर्ष्या, द्वेष, तृष्णा, घमण्ड, नाम ख्याति - पूजा-लाभ से ओत-प्रोत रहते हैं और जिससे आनुशांगिक रूप से भी एकेन्द्रिय जीव की द्रव्य हिंसा हो जाती है। उसे हिंसक पापी मानकर उससे घृणा करते हुए और भी हिंसा रूपी सागर में बेसहारा ढूबते जाते हैं।.... तब....

3. भाव को पवित्र करना, संक्लेश के भाव से रहित होना तथा आध्यात्मिक सुख-शान्ति को प्राप्त करना धर्म का उद्देश्य है। और इसके लिए विभिन्न धार्मिक क्रिया-काण्डों की आवश्यकता होती है। परन्तु जब धार्मिक क्रिया-काण्डों में संक्लेश, धन संग्रह, विग्रह(कूट), अशान्ति, अनुशासन विहीनता पाई जाती है।.... तब.....

4. 'वसुधैव कुटुम्बकम्' प्रत्येक जीव में परम ब्रह्म का दर्शन करने वाले, जीव में जिनेन्द्र को मानने वाले जब गुरु शिष्य सधर्मी पिता-पुत्र भाई-भाई लडते हैं। दूसरों को नीचा दिखाते हैं, दूसरों को क्षति पहुँचाते हैं, कूट डालते हैं।.... तब....

5. सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवों की रक्षा करने वाले जब पचेन्द्रिय मनुष्य यहाँ तक की माता-पिता गुरु-शिष्य को संकट में डालते हैं असुरक्षा उत्पन्न करते हैं।.... तब.....

6. संस्कार, सदाचार, सद्विचार को अपनाना और इसका प्रचर-प्रसार करने रूप प्रभावना को छोड़कर ईंट-पथर को इकट्ठा करना (भवन निर्माणादि), धन का संग्रह करना, हाथी-घोड़ा आदमियों की भीड़ लगाना रूपी प्रभावना करते हैं।.... तब.....

7. जब दिग्म्बर जैन साधु तक सिद्धि को छोड़कर प्रसिद्धि, णमोकार को छोड़कर ममकार, धर्म को छोड़कर धन, वात्सल्यभाव को छोड़कर राग, समता को छोड़कर ममता, वीतरागता को छोड़कर वित्तरागता, निर्ममत्व को छोड़कर निर्मम के पोथे बोते हैं.... तब....

8. मौन पूर्वक एकान्तवास करके पूर्ण समता तथा क्षमता के साथ ध्यान, अध्ययन एवं तपश्चरण के माध्यम से पूर्ण सत्य को जानकर-मानकर-आचरणकर त्वयं 'सत्यसाम्यसुख' स्वरूप बनकर विश्व को भी इसी प्रकार बनाने की भावना चाहता हूँ परन्तु शारीरिक असमर्थता (शरीर की उष्णता, भयंकर अम्लपित्त, उल्टी गर्मी से स्वास्थ्य बिगड़ना आदि) विपरीत परिस्थिति, प्रतिकूल जन-मानस, अयोग्य आहारआदि से भावना को क्रियान्वित नहीं कर पाता हूँ .... तब.....

9. (१) धी को छोड़कर धी के घड़े (धी रहित केवल पूर्व में जिस घड़े में धी था ऐसा घड़ा) को ही धी मान लेने के समान जब जीवन्त यथार्थ धर्म स्वरूप साधु, श्रावकों आदि का जीवन यथार्थ धर्म स्वरूप साधु, श्रावकों आदि का अनादर तिरस्कार करते हैं उनकी सेवा, सुरक्षा व्यवस्था नहीं करते हैं.... तब....

(२) इसी प्रकार जीव जब भाव की पवित्रता के बदले धार्मिक क्रिया-काण्डों को, सत्य धर्म को छोड़कर अन्ध परम्पराओं को सत्य-तथ्य के परिवर्तन में रीति रिवाजों को महत्व देता है.... तब.....

10. शिक्षा, विद्या, ज्ञान, धर्म, राजनीति, संविधान, कानून आदि जीवों के सुख, शान्ति, समृद्धि, विकास के लिए हैं जब मनुष्य इसका दुरुपयोग दुःख अशान्ति, अवरुद्ध विनाश के लिये करता है.... तब.....

11. जो भारत विश्व गुरु, सोने की चिड़िया, अहिंसा प्रधान, आध्यात्मिक, धर्म प्रधान के कारण महान् कहलाने वाला था उस देश में जब भ्रष्टाचार, हिंसा, बलात्कार, धोकाधड़ी, गुण्डा-गर्दी, धर्मान्धता-संकीर्णता, अन्धविश्वास, अकर्मण्यता आदि के कारण गरीब, बर्बर भ्रष्ट दीन-ही कायर विवश पाया जाता है।.... तब.....

# संस्थान का संक्षिप्त परिचय

## १. धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान का उदात्त उद्देश्य

अखिल विश्व के सर्वश्रेष्ठ महान त्रिकाल अबाधित परम सत्य को धार्मिक आस्था से दार्शनिक-तार्किक पद्धति द्वारा वैज्ञानिक परीक्षण, निरीक्षण प्रणाली के परिप्रेक्ष्य में परिशीलन, परिज्ञान, परिपालन, साक्षात्कार, संदर्शन उपलब्धि करके ख्यय को समग्रता से पार्गपूर्ण परम सत्य स्वरूप परिनिर्माण करना है। अतः इसका सर्वोपरि उद्देश्य :-

**“संचर्वं भगवं” सत्य ही परेश्वर है।  
“सत्यं शिवम् सुन्दरम्।”  
“सच्चिदानन्दम् ।”  
“उत्पाद व्यय ध्रोव्य युक्तं सत् ।”**

**Truth is God तथा God is Truth**

व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र, विश्व मैं उदारता पूर्ण सत्य वैज्ञानिक धर्म के माध्यम से प्रचारशीलता, प्रखरता, समरसता सुख-शांति का प्रचार-प्रसार करना है।

## २. संस्थान के कार्यक्षेत्र

(१) आचार्य कनकनन्दी के साहित्य का विभिन्न भाषाओं में प्रकाशन करना तथा देश-विदेश में प्रचार-प्रसार करना।

(२) संगोष्ठी सम्बन्धी स्मारिका का प्रकाशन करना।

(३) स्थानीय शिविर से लेकर जिला-प्रदेश-राष्ट्र स्तरीय एवं धर्म-दर्शन विज्ञान प्रशिक्षण शिविरों का आयोज करना।

(४) राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन करना।

(५) विभिन्न क्षेत्रों के योग्य व्यक्तियों को उपाधि पुरस्कारादि देकर सम्मानित करना।

(६) इंटरनेट तथा टी.वी. के माध्यम से आचार्य श्री के साहित्य, उद्देश्य तथा प्रवचनों का प्रचार-प्रसार करना।

(७) पशु-पक्षी, पर्यावरण, असहाय-व्यक्ति, रोगी, गरीब पीड़ित व्यक्ति आदिको सहायता पहुंचाना।

(८) शोध-कार्यों के लिये, संस्थान के कार्यों के लिये साहित्य प्रकाशन सुरक्षा के लिये वैज्ञानिक उपकरण तथा कम्प्यूटर सुरक्षा के लिये वैज्ञानिक उपकरण तथा कम्प्यूटर-लाइब्रेरी, इंटरनेट ओवर हेड प्रोजेक्ट आदि क्रय करना।

## ३. सर्वजन सहयोग :

सत्य-उपासक, उदारमना, एवं परोपकारी महानुभावो! यह संस्थान “सर्व जीव हिताय” “सर्वजन सुखाय” रूपी महानलक्ष्य को आदर्श मानकर कार्यरत है। अतः यह संस्थान विश्व के द्वारा, विश्व के लिये है। अतः अर्थ सहयोग, श्रम सहयोग, शिविर में सहभागी, संगोष्ठी में सहभाग, उपाधि एवं धर्मावलंबी सज्जन महानुभावों को सादर आमंत्रण, आहवान सुखागत करना।

बन्धुवर! आप एक विचारशील, स्वाध्याय प्रेमी और धर्मवत्सल बन्धु हैं। युवा पीढ़ी हेतु विशेष रूप से पू. आचार्य श्री कनकनन्दी जी द्वारा रचित तथा “धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान” और विभिन्न स्थानों से प्रकाशित ग्रन्थों के पठनोपरान्त आप निम्न प्रकार से हमे सहयोग दे सकते हैं। आपका सहयोग हमारे उद्देश्य और लक्ष्य का सम्बल है-

- (१) पुस्तकों के विषय में अमूल्य, उपयोगी एवं निष्पक्ष सुझाव देकर।
- (२) अन्य स्वाध्याय प्रेमी बन्धुओं से पुस्तक के विषय में चर्चा करके।
- (३) अपने इष्ट मित्रो एवं रिश्तेदारों को प्रकाशन की पुस्तकें पढ़ने की प्रेरणा देकर।
- (४) यथाशक्ति अप्रकाशित पुस्तकों के प्रकाशन मे अपना वोगदान देकर।
- (५) प्रकाशित पुस्तकें पर्व आदि पर वितरणार्थ मंगवाकर।

## ४. संस्था की नियमावली

(१) विवक्षित पुस्तक के प्रकाशन के द्रव्यदाता को उस किताब की दशमांश प्रतियां दी जाएँगी।

(२) ग्रंथ प्रकाशक (द्रव्यदाता) ग्रन्थमाला का आजीवन सदस्य रहेगा तथा उन्हें ग्रंथमाला से प्रकाशित पुस्तक की एक-एक प्रति निःशुल्क दी जायेगी।

(३) साधु, साध्वी, विशिष्ट विद्वज्जन और विशिष्ट धर्मायतिनों को पुस्तकें निःशुल्क दी जायेगी।

(४) ग्रंथमाला से सम्बन्धित कार्य-कर्त्ताओं को प्रकाशित पुस्तकों की एक

प्रति निःशुल्क दी जायेगी।

#### आपका आर्थिक सहयोग

१. आजीवन सदस्यता	5000/- रु.
२. संरक्षक	11000/-रु.
३. परम संरक्षक	25000/ रु.
४. शिरोमणि संरक्षक	51000/- रु.
५. परम शिरोमणि संरक्षक	100000/- रु.

#### आपका अन्य सहयोग

संगोष्ठी, शिविर आदि में साहित्य, पुरस्कार आर्थिक सहायता, श्रमदान आदि देकर।

#### आपका नाम साहित्य में

विशेष-संस्थान की प्रत्येक पुस्तक, स्मारिका मे संस्थान के कार्यकर्ता शिरोमणि और परम शिरोमणि संरक्षक के नाम छपेंगे। जो जिस साहित्य या कार्य मे अर्थ, श्रम, बौद्धिक सहायता करेगा उसमे उसका नाम आयेगा और सम्मानित किया जायेगा।

#### आप से प्राप्त धन का सदुपयोग

ज्ञान दान, आजीवन-सदस्यता आदि से प्राप्त धन, गुप्तदान, साहित्य-विक्रय से प्राप्त धन, संस्थान को प्राप्त पुरस्कार का धन, साहित्य प्रकाशन आदि उपर्युक्त संस्थान के कार्य क्षेत्रों में संस्थान के वैज्ञानिक यंत्रादि क्रय में सदुपयोग किया जाता है।

#### आपके ही निवेदक

धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान

बड़ौत, मुजफ्फरनगर (यू.पी.)

जयपुर, कोटा, उदयपुर (राज.)

मुम्बई (महाराष्ट्र)

## धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान के उद्देश्य एवं नियम

**उद्देश्य :**— धर्म दर्शन विज्ञान एवं संप्रदाय के समन्वयक वैज्ञानिकाचार्य तथा धर्म, इतिहास, शिक्षा, स्वास्थ्य, मंत्र, मनोविज्ञान तथा विज्ञानादि के समीक्षात्मक शोधपूर्ण शताधिक ग्रन्थों के रचायिता आचार्य रत्न श्री कनकनन्दी गुरुदेव के मार्गदर्शन व आशीर्वाद से यह संस्थान कार्यरत है। इसका मुख्य उद्देश्य है विश्व को प्रगति के पथ पर आगे बढ़ाने के लिए धर्मान्वयता तथा संकीर्ण भौतिक विज्ञान से ऊपर उठकर वैज्ञानिक धर्म का प्रचार-प्रसार करना। यह संस्थान विश्व के द्वारा, विश्व के लिये, विश्व का है। अतः इसमें प्रत्येक विश्व-मंगल कामनार्थियों को, मन-मन-धन-समय से भाग लेकर सहयोग करने की भावना भाते हैं तथा आह्वान करते हैं।

**नियम :** संस्थान की ओर से साधु-संघों को प्रति निःशुल्क भेट की जाती है। पूरे सेट क्रय करने पर पुस्तकालय, वाँचनालय, भिज़नग संस्थाओं के लिये 15% छूट से शास्त्र दिये जाएंगे तथा सामान्य स्वाध्याय प्रेमियों के लिये 10% छूट है, डाक खर्च अलग से है।

**आजीवन सदस्यता** 500/-रु. अग्रिम भेजने की आवश्यकता है। द्रव्यदाता, आजीवन सदस्य व कार्यकर्ताओं को संस्थान की ओर से समस्त पुस्तकें निःशुल्क दी जाती हैं। आर्थिक दृष्टि से समर्थ सामान्य व्यक्ति से उचित मूल्य इसलिये प्राप्त किया जाता है कि जिससे साहित्य का अवमूल्यन न हो, योग्य व्यक्ति को ज्ञानदान (सहयोग) हो, साधु आदि को निःशुल्क साहित्य भेजने में आर्थिक आपूर्ति हो एवं उस सहयोग से अधिक साहित्य का प्रकाशन प्रचार-प्रसार हो। द्रव्यदाता को उस द्रव्य से प्रकाशित प्रतियों की एक दशमांश प्रतियाँ भी निःशुल्क प्राप्त होंगी। पुस्तकें छपवाने वाले यदि लागत रूपयों में से कुछ रूपये देने में असमर्थ होंगे तो संस्थान उसकी पुस्तक छपा देगा। इसमें संस्थान का कोई निहित स्वार्थ नहीं है। परन्तु ज्ञान-प्रसार एक मात्र उद्देश्य है। जो ज्ञान-प्रेमी, ज्ञानदानी, महानुभावी, ज्ञानदान, गुप्तदान, सहायता करना चाहते हैं वे सहर्ष, स्वेच्छा से करें। क्योंकि संस्थान के लिये चन्दा, याचनादि नहीं की जाती है। अधिक सहायता करने वाले को संस्थान में पटभार भी दिया जाता है।

आजीवन सदस्य ध्यान दें :— साथ ही जिन आजीवन सदस्यों ने 1100/- रु. सदस्यता के रूप में दिये हैं उन्हें पुनः 3000/- देना पड़ेगा, इसी प्रकार जिन्होंने 2100/- से लेकर 2500/- रूपया दिया है पुनः 2000/- रूपया निम्न पते पर भेजने की कृपा करें। हमें ऐसा इसलिए करना आवश्यक हुआ है क्योंकि आचार्य श्री के अनेक बड़े ग्रन्थ प्रकाशित हो गये हैं। तथा कई ग्रन्थों की माँग अधिक होने के फलस्वरूप उनको पुनः अधिक संख्या में प्रकाशन होने के साथी डाक व्यय अधिक होने के कारण उपर्युक्त व्यय भार बढ़ गई है। अतः आजीवन शुल्क अतिरिक्त भेजने की आवश्यकता है इसके बिना बड़े ग्रन्थ एवं नवीन ग्रन्थ आपके पास भेजने के लिए असमर्थ हैं। साहित्य प्रकाशन करनेवाले ज्ञानदानी तथा आजीवन सदस्य आदि को समरत साहित्य निःशुल्क प्राप्त होते हैं। परम शिरोमणि संरक्षक का नाम प्रत्येक पुस्तक एवं संस्थान के लेटर हेड में आयेगा।

### संस्थान के लिए आपका सहयोग

(1) आजीवन सदस्यता	5001.0 रु.
(2) संरक्षक	11000.00 रु.
(3) परम संरक्षक	25000.00 रु.
(4) शिरोमणि संरक्षक	51000.00 रु.
(5) परम शिरोमणि संरक्षक	100000 रु.



### “आचार्यश्री कनकनन्दीजी द्वारा रचित ग्रन्थ”

क्रम	शीर्षक	मूल्य
(1)	धर्म विज्ञान बिन्दु	15.00 रु.
(2)	धर्म ज्ञान एवं विज्ञान	15.00 रु.
(3)	भाग्य एवं पुरुषार्थ (पंचम संस्करण)	15.00 रु.
(4)	Fate and Efforts	15.00 रु.
(5)	व्यसनका धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण (द्वि.सं.)	20.00 रु.
(6)	Nakedness of Digamber Jain Saints and Kesh Lonch (तृतीय संस्करण)	5.00 रु
(7)	पुण्य पाप मीमांसा (द्वितीय)	15.00 रु.
(8)	जिनार्चना पुष्प (1) (तृतीय संस्करण)	51.00 रु
(9)	जिनार्चना पुष्प (2)	21.00 रु.
(10)	निमित्त उपादान मीमांसा (द्वितीय संस्करण)	9.00 रु.
(11)	धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान—पुष्प (2) (द्वितीय संस्करण)	20.00 रु.
(12)	धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान—पुष्प (2)	20.00 रु.
(13)	धर्म दर्शन विज्ञान (द्वितीय संस्करण)	51.00 रु.
(14)	क्रांति के अग्रदूत (द्वितीय संस्करण)	21.00 रु.
(15)	लेश्या मनोविज्ञान	6.00 रु.
(16)	ऋषभपुत्र भरत से भारत (द्वितीय संस्करण)	21.00 रु.
(17)	ध्यान का वैज्ञानिक विश्लेषण (द्वितीय संस्करण)	21.00 रु.
(18)	अनेकांत दर्शन	20.00 रु.
(19)	कर्म का दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विवेचन	45.00 रु.
(20)	अहिंसामृतम्	7.00 रु.
(21)	युग निर्माता ऋषभदेव	15.00 रु.
(22)	विश्वशांति के अमोघ उपाय (द्वितीय संस्करण)	10.00 रु.
(23)	मनन एवं प्रवचन (द्वितीय संस्करण)	5.00 रु.
(24)	विनय मोक्ष द्वार	6.00 रु.
(25)	क्षमा वीररय भूषणम् (द्वितीय संस्करण)	15.00 रु.

## भविष्य-फल-विज्ञान

- |      |   |           |
|------|---|-----------|
| (26) | संगठन के सूत्र (द्वितीय संस्करण)  | 25.00 रु. |
| (27) | अति मानवीय शक्ति (द्वितीय संस्करण)  | 31.00 रु. |
| (28) | मंत्र विज्ञान(द्वितीय संस्करण)  | 25.00 रु. |
| (29) | Philosophy of Scientific Religion   | 21.00 रु. |
| (30) | दिगम्बर साधु का नगनत्व एवं केंशकोच (एकादश. सं.)<br>(हिन्दी,मराठी,गुजराती) | 5.00 रु.  |
| (31) | भगवान महावीर व उनका दिव्य संदेश   | 5.00 रु.  |
| (32) | धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका पुष्प I (पंचम संस्करण)                       | 10.00 रु. |
| (33) | संस्कार(हिन्दी) (एकादश सं.)   | 5.00 रु.  |
| (34) | विश्व विज्ञान रहस्य   | 100.00रु. |
| (35) | संस्कार (गुजराती)   | -----     |
| (36) | स्वप्न विज्ञान(द्वितीय सं.)   | 51.00 रु. |
| (37) | त्रैलोक्य पूज्य ब्रह्मचर्य  | 12.00 रु. |
| (38) | आत्मोत्थानोपायः तपः   | 9.00 रु.  |
| (39) | तत्त्वानुचिंतन  | 5.00 रु.  |
| (40) | विश्व इतिहास  | 25.00 रु. |
| (41) | शकुन विज्ञान  | 30.00 रु. |
| (42) | संस्कार सचित्र (तृतीय संस्करण)  | 11.00 रु. |
| (43) | कथा सुमन मालिका   | 15.00 रु. |
| (44) | 72 कलाएँ  | 5.00 रु.  |
| (45) | हिंसामय यज्ञ का प्रारम्भ क्यों?   | 7.00 रु.  |
| (46) | कथा सौरभ  | 21.00 रु. |
| (47) | कथा पारिजात   | 15.00 रु. |
| (48) | धर्म प्रवर्तक चौबीस तीर्थकर (द्वितीय संस्करण)                             | 11.00 रु. |
| (49) | जीने की कला   | 7.00 रु.  |
| (50) | संस्कार-(वृहत्)   | 30.00 रु. |
| (51) | स्वतंत्रता के सूत्र   | 71.00 रु. |
| (52) | कथा पृथ्वांजलि  | 15.00 रु. |

## भविष्य-फल-विज्ञान

- |      |  |           |
|------|--|-----------|
| (53) | धार्मिक कुरीतियों का परिशोधन                         | 5.00 रु.  |
| (54) | सत्य धर्म  | 5.00 रु.  |
| (55) | धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका पुष्ट 2 (पंचम संस्करण)  | 15.00 रु. |
| (56) | आ.कनकनन्दी की दृष्टिमें शिक्षा                       | 11.00 रु. |
| (57) | अयोध्या का पौराणिक ऐतिहासिक<br>एवं राजनीतिक विश्लेषण | 11.00 रु. |
| (58) | गुरु अर्चना  | 3.00 रु.  |
| (59) | दंसण मूलो घम्मो तहा संसार मूल हेतु मिछतं             | 15.00 रु. |
| (60) | धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका पुष्ट 3 (तृतीय संस्करण) | 21.00 रु. |
| (61) | संस्कार (अंग्रेजी)                                   | 5.00 रु.  |
| (62) | त्रमण संघ संहिता                                     | 30.00 रु. |
| (63) | युग निर्माता ऋषभदेव(अंग्रेजी)                        | 51.00 रु. |
| (64) | पाश्वनाथ का तपोपर्सर्ग कैवल्य धाम बिजौलिया           | 15.00 रु. |
| (65) | भारतीय आर्य कौन-कहाँ से कब से कहाँ के ?              | 25.00 रु. |
| (66) | ये कैसे धर्मात्मा-निर्व्वसनी-राष्ट्रसेवी             | 11.00 रु. |
| (67) | विश्वधर्म सभा-समवशरण                                 | 21.00 रु. |
| (68) | “बंधु बंधन के मूल”                                   | 61.00 रु. |
| (69) | विश्व द्रव्य विज्ञान (द्रव्य संग्रह)                 | 41.00 रु. |
| (70) | आदर्श आहार-विहार विचार                               | 35.00 रु. |
| (71) | उपवास का धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण                  | 15.00 रु. |
| (72) | पूजा से मोक्षःपुण्य तथा पाप भी                       | 21.00 रु. |
| (73) | आदर्श नागरिक की प्रायोगिक क्रियाएँ                   | 7.00 रु.  |
| (74) | सत्य साम्य सुखामृतम्- प्रवचनसार                      | 301.00रु. |
| (75) | अग्नि परीक्षा  | 11.00 रु. |
| (76) | कथा चिंतामणि   | 11.00 रु. |
| (77) | उठो! जागो! प्राप्त करो!!!                            | 15.00 रु. |
| (78) | सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (वृहत्)                    | 201.00रु. |
| (79) | सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (छोटा)                     | 21.00 रु. |

(80)	संस्कार (मराठी)	10.00 रु.
(81)	प्रष्टाचार उन्मूलन	7.00 रु.
(82)	आहारदान से अभ्युदय	9.00 रु.
(83)	बालबोध जैनर्धम	7.00 रु.
(84)	नग्न सत्य का दिग्दर्शन	15.00 रु.
(85)	ज्वलंतं शंकाओं का शीतल समाधान (द्वितीय संस्करण)	41.00 रु.
(86)	आहार दान विधि (हिन्दी-मराठी) पच्चीसवा संस्करण	---
(87)	शाश्वत समस्याओंका समाधान	18.00 रु.
(88)	जैन धर्मावलम्बी संख्या और उपलब्धि	21.00 रु.
(89)	भाव एवं भाग्य तथा अंग विज्ञान	151.00 रु.
(90)	कथा त्रिवेणी	8.00 रु.
(91)	स्मारिका (प्रथम संगोष्ठी)	81.00 रु.
(92)	पुरुषार्थ सिद्धयुपाय	101.00 रु.
(93)	Laishya Psychology	11.00 रु.
(94)	जीवन्त धर्म : सेवा धर्म	11.00 रु.
(95)	स्मारिका (द्वितीय संगोष्ठी)	51.00 रु.
(96)	भविष्य-फलविज्ञान	101.00 रु.
(97)	What Kinds of "DHARMATMA" (plousman)These Are	21.00 रु.
(98)	अनेकान्त के प्रकाश में मोक्षमार्ग	21.00 रु.
(99)	संस्कार (कन्नड़)	15.00 रु.
(100)	दिग्म्बर जैन साधु नग्न क्यों(उर्दू)	11.00 रु.
(101)	युग निर्माता भ. ऋषभदेव (द्वितीय संस्करण)	41.00 रु.
(102)	युग निर्माताभ. ऋषभदेव (पद्यानुवाद)	5.00 रु.
(103)	इष्टोपदेश	51.00 रु.
(104)	अनुपरागमन पथः मोक्षपथ	3.00 रु.

विशेष :— आजीवन सदस्यता आदि ज्ञान-दान, गुप्त-दान, साहित्य विक्रिय आदि से प्राप्त धन का सदुपयोग साहित्य प्रकाशन, ज्ञान के प्रचार-प्रसार, संस्थान के उपकरण, वैज्ञानिक-यंत्रादि के लिए किया जाता है।

## विषय-सूची

अध्याय	विषय	पृ.नं.
1.	भविष्य फल विज्ञान का रहस्य	1
2.	रिष्टों दर्शन का वैज्ञानिक कारण	7
3.	निमित्त (शकुन) ज्ञान ऋद्धि	8
4.	प्राकृतिक विपर्यास से प्राप्त सूचनायें	13
(अ)	(अ) उत्पातों का कारण	13
(ब)	(ब) उत्पातों के लक्षण एवं भेद	13
(स)	(स) भय एवं मरण सूचक उत्पात	13
5.	विभिन्न वृक्ष रस से प्राप्त सूचनायें	16
6.	नदियों से प्राप्त सूचनायें	20
7.	चीटियों से प्राप्त सूचनायें	21
8.	विभिन्न प्रतिमाओं से प्राप्त सूचनायें	22
9.	ज्योतिष्क विमानों से प्राप्त सूचनायें	25
10.	हाथी, घोड़ादि से प्राप्त सूचनायें	30
11.	विभिन्न उत्पातों की सूचनायें	34
12.	उत्पातों से बचने के उपाय	41
13.	उत्पातों की शान्ति के उपाय	42
14.	विजय सूचक शुभाशुभ लक्षण	42
15.	प्रतिमा खण्डन से शुभाशुभ शकुन	45
16.	प्रतिमा के आकार-प्रकार से शुभाशुभ शकुन	45
17.	पदस्थ अरिष्ट का लक्षण	47
18.	शकुन का प्रयोजन	50
I-	शकुनों के सामान्य लक्षण	50
II-	शकुन फल का विचार	51
III-	दिशाओं के लक्षण	51
IV-	यात्रा के शुभाशुभ शकुन	56
V-	शुभाशुभ शब्दों का ज्ञान	56
VI-	विरोधी शकुन का फल	60
VII-	भयप्रदायक शकुन	60
VIII-	दुर्भिक्षकारी शकुन	62

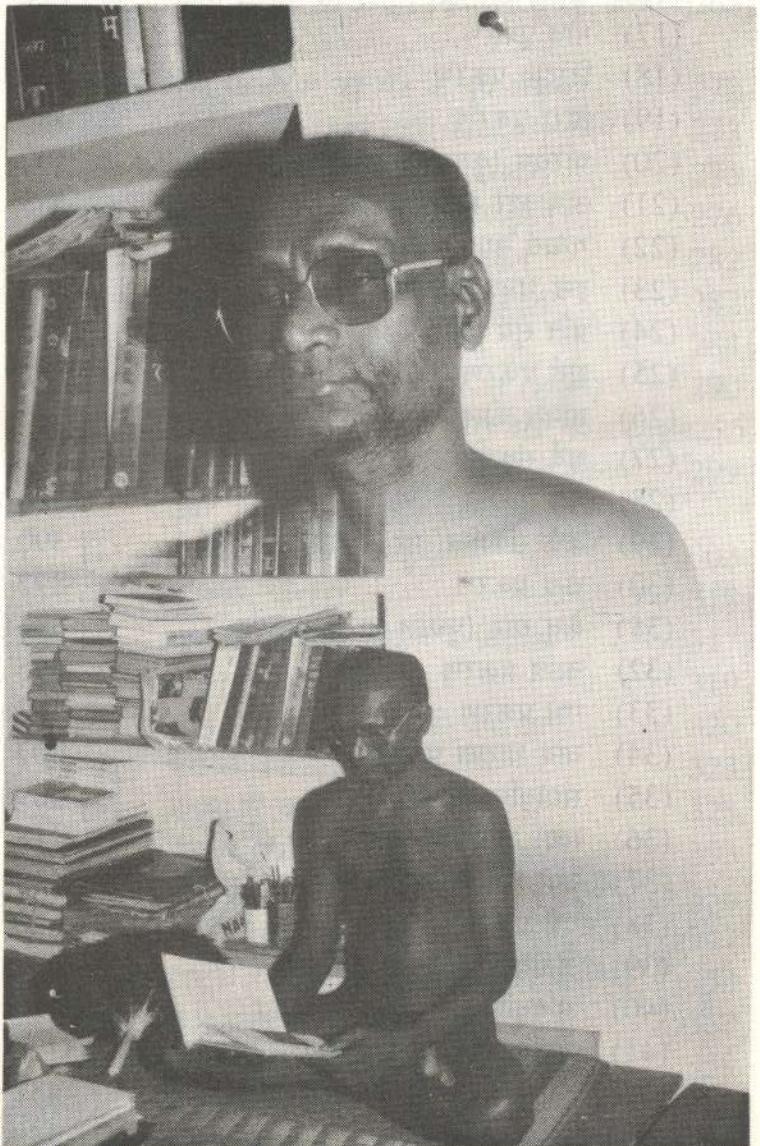
19.	उत्पात-विज्ञान	67
20.	सूर्य से शकुन-विज्ञान	85
21.	प्रतिसूर्य(परिवेष) से शकुन-विज्ञान	92
22.	अन्तरिक्षीय हलचलों व उनका प्रभाव	93
23.	चन्द्र से शकुन-विज्ञान	99
24.	उल्कापात से शकुन-विज्ञान	107
25.	निर्धात से शकुन-विज्ञान	112
26.	धूलि से शकुन-विज्ञान	113
27.	इन्द्रधनुष से शकुन-विज्ञान	114
28.	ग-धर्वनगर से शकुन विज्ञान	116
29.	प्रकृति और मानव परस्पर अन्योन्याग्रित	117
30.	बनस्पति से शकुन-विज्ञान	120
31.	संध्या से शकुन-विज्ञान	123
32.	दिग्दाह से शकुन-विज्ञान	130
33.	भूकंप से शकुन-विज्ञान	131
34.	पौधे निर्णय कैसे लेते हैं?	136
35.	क्या पशु-पक्षी भूकंप के वक्ता होते हैं?	139
2.	(1) छाया प्रतिच्छाया से ज्ञापक शुभाशुभ	152
	(2) छाया पुरुष दर्शन	155
	(3) परिच्छाया दर्शन की विधि	161
	(4) छाया पुरुष से प्राप्त भविष्य विज्ञान	164
3.	(1) भद्र बाहु संहिता में वर्णित मृत्युलक्षण	171
	(2) रिष्ट समुद्घाय में वर्णित मरण संकेत	174
	(3) पिण्डस्थ रिष्ट का लक्षण	174
	(4) पदस्थ रिष्ट का लक्षण	179
4.	(1) चरक संहिता में वर्णित रिष्ट	185
	(अ) प्राकृतिक रिष्ट	185
	(ब) विकृति रिष्ट	186
	(2) वर्ण से रिष्ट ज्ञान	188
	(3) मुख विकृति से रिष्ट ज्ञान	188
	(4) स्वर निमित्त से रिष्ट ज्ञान	189
	(5) स्पर्श विज्ञान से मृत्यु का ज्ञान	192

(6)	पूर्वरूप मृत्यु सूचक का लक्षण	194
(7)	ग-थ रस विज्ञान से मृत्यु परिज्ञान	197
(8)	ग-थ से मृत्यु का ज्ञान	198
(9)	रस विज्ञान से मृत्यु ज्ञापक	200
(10)	इन्द्रियों की परीक्षा से मृत्यु का निर्णय	201
(अ)	चक्षुः परीक्षा	201
(ब)	श्रोत परीक्षा	204
(स)	द्राण परीक्षा	205
(द)	रसना परीक्षा	205
(य)	स्पर्शन-परीक्षा	206
(11)	सब इन्द्रियों सम्बन्धी रिष्टलक्षण	206
(12)	अष्टाङ्ग हृदय में वर्णित मरण शकुन (रिष्ट)	207
(13)	रिष्ट तथा अरिष्ट का ज्ञान	208
(14)	छाया विपर्यथ रिष्ट	216
(15)	प्रकृति विपर्यय	219
(16)	जैन आयुर्वेद में वर्णित शकुन-विज्ञान	230
(17)	आयुर्वेद में वर्णित स्वप्न एवं शकुन	233
(अ)	सप्तविधस्वप्न	233
(ब)	स्वप्न देखने का कारण	234
(स)	अशुभ स्वप्न	235
(द)	मृत्यु सूचक स्वप्न	236
(य)	अनेक रोगों में विविध स्वप्न	236
(18)	अशुभ स्वप्नों को शान्त करने का उपाय	240
(19)	आयुर्वेदोन्द्वारा में वर्णित शुभाशुभ शकुन	247
(20)	अष्टांग हृदय में वर्णित शुभाशुभ शकुन	252
5.	(1) भगवती आराधना में वर्णित शुभाशुभ निमित्त	257
	(अ) दोष निवारक निमित्त	261
	(ब) सुभिक्ष के निमित्त	262

१	(स) सिद्धि गमन में निमित्त	262
१	(द) विभिन्न देव प्रवर्याय में उत्पत्ति के निमित्त	262
२	(२) सीता से पुत्र प्राप्त एवं निर्वासन सूचक स्वर्ण	263
	और शकुन	
३	(३) राम परशुराम की भेंट के पूर्व शकुन	272
३	(४) मृत्यु के पूर्व रावण द्वारा अपशुक्न दर्शन	273
४	(५) यादवों के विनाश सूचक अपशुक्न	275
४	(६) राम-रावण युद्ध के पहले अपशुक्न	276
४	(७) रावण का मरण सूचक अपशुक्न	282
४	(८) धन्य कुमार चरित्र में वर्णित शकुन	282
४	(९) अग्नि पुराण में वर्णित शकुन	284
४	(१०) भविष्य पुराण में वर्णित उत्पात (शकुन)	290
४	(११) सीता हरण के बाद राम द्वारा देखे गये अपशुक्न	295
४	(१२) श्री राम को शकुनों द्वारा राक्षसों के विनाश	299
	और अपनी विजय की सम्भावना	
६	(१) यात्रा के शुभाशुभ शकुन	303
	(२) दुःशकुन परिहार	313
७	(१) वर्षा का भविष्य - फल - विज्ञान	317
	(२) वर्षा जानने की विधि	319
	(३) भौम (भूमि) के निमित्त से वर्षा ज्ञान	320
	(४) वृक्ष से वर्षा का ज्ञान	323
	(५) मनुष्य से वर्षा का ज्ञान	328
	(६) पशु से वर्षा का ज्ञान	333
	(७) पक्षी से वर्षा का ज्ञान	336
	(८) कीट से वर्षा का ज्ञान	347
	(९) अन्तरिक्ष के निमित्त से वर्षा का ज्ञान	353
	(१०) वायु प्रकरण	353
	(११) मेघ प्रकरण	359
	(१२) विजली प्रकरण	362
	(१३) विज्ञानानुसार विजली की शक्ति	370

(१४)	गाज प्रकरण	374
(१५)	जलादि वर्षा प्रकरण	374
(१६)	सन्ध्या प्रकरण	375
(१७)	मोथ प्रकरण	378
(१८)	दिग्दाह प्रकरण	379
(१९)	तारा प्रकरण	380
(२०)	परिवेष (कुण्डल) प्रकरण	380
(२१)	अन्धकार प्रकरण	383
(२२)	गन्धर्व नगर प्रकरण	383
(२३)	इन्द्र धनुष प्रकरण	384
(२४)	प्रति सूर्य प्रकरण	385
(२५)	सूर्य प्रकरण	385
(२६)	तामस कीलक (सूर्य के काले दाग) प्रकरण	386
(२७)	सूर्य संक्रान्ति प्रकरण (वार से दुर्भिक्ष का ज्ञान)	387
(२८)	मेष संक्रान्ति	388
(२९)	कर्क संक्रान्ति (वार से वर्षा का ज्ञान)	390
(३०)	चन्द्र प्रकरण	392
(३१)	केतु चार (पुच्छल तारा) प्रकरण	393
(३२)	नक्षत्र प्रकरण	395
(३३)	गर्भ प्रकरण	397
(३४)	वायु धारणा प्रकरण	407
(३५)	सद्योवृष्टि प्रकरण	409
(३६)	सद्यः अनावृष्टि प्रकरण	418
(३७)	वर्षा होने का उपाय	419
(३८)	यज्ञ प्रकरण	420
(३९)	अनावृष्टि आदि उपद्रवों का कारण	422
(४०)	अनावृष्टि की शान्ति के उपाय	423
(४१)	जैनमत से वर्षा का प्रयोग	428
(४२)	अशुभ शकुन के शान्ति के उपाय	432
८	(१) जैन निमित्त-विज्ञान	440

साहित्य रचनामें लीन  
आरत्त श्री कनकनन्दी जी महाराज



1

## भविष्य-फल-विज्ञान का रहस्य

भूत तथा वर्तमान को जानने की अपेक्षा भविष्यत को जानने की प्रवृत्ति मनुष्य की अधिक होती है। क्योंकि भूत जो बीत गया परन्तु पुनः वापस नहीं आयेगा। जिससे उसे हानि या लाभ मिले। वर्तमान तो सम्मुख विद्यमान है जिससे वह उसे कुछ अंश में स्पष्ट देखता है और जानता है इसलिए वह उसका समाधान अपनी योग्यता के अनुसार करता है। परन्तु भविष्य अज्ञात अन्धेरा दूर में है। इससे वह उसके हानि-लाभ से अपरिचित होने के कारण अधिक शंकाशील पाये भवभीत होता है। जिससे वह उसे अधिक जानने के लिए लालायित रहता है। इसके साथ-साथ वर्तमान क्षणिक एक समवावधि वाला होने से तथा भूत काल अनन्त होते हुए भी उसका वर्तमान या भविष्य में अस्तित्व नहीं होने से वह दोनों काल को न अधिक महत्व देता है न शंकाशील या जिज्ञासु होता है। परन्तु भविष्य आगामी अनन्त काल के साथ-साथ अज्ञात है और जीवन में अवश्य गुजरने वाला है। इसलिए भी भविष्य को जानने की आकांक्षा अधिक होना स्वाभाविक है। इस आवश्यकता से ही ज्योतिष, पंचांग, अमल, सामुद्रिक-शास्त्र, स्वन्-विज्ञान, शकुन-विज्ञान आदि भविष्य-कथन ज्ञान, जिज्ञानों का आविष्कार हुआ। अनेक बार अनुभूत कार्य कारण सम्बन्धों से सामान्य मनुष्यों को भविष्य का ज्ञान हुआ तो मुनि, ऋषि, सर्वज्ञों को अपने अन्तरंग दिव्य ज्ञानों से भविष्य का ज्ञान हुआ। वर्तमान वैज्ञानिक युग में वैज्ञानिक यंत्रों से कार्य-कारण, क्रिया-प्रतिक्रिया सिद्धान्त का ज्ञान करके भविष्य का ज्ञान किया जाता है।

इतिहास, पुराण, चरित्र, आत्म-कथा, शिला-लेख, परम्परा, रीति-रिवाज, लोक-कथा, किंवदन्ति, मन्दिर, स्मृति-चिन्ह, स्मारक, शिल्पकला, चित्रकला आदि से भूतकाल का परिज्ञान होता है; तो देखने से, सुनने से, स्पर्श करने से, टा.टी. से रेडियो से, फोन से, दूर संचार विभाग से, वर्तमान का ज्ञान होता है। तथा ज्योतिष, शकुन, स्वन, सामुद्रिक शास्त्र, सेटेलाइट, कृत्रिम, उपग्रह, विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों से, ग्रह, नक्षत्रों की गतिविधियों से निमित्त ज्ञान, अवधि ज्ञान,

मनः पर्यावरण व. केवलज्ञान से भविष्य का ज्ञान होता है।

जीवन में तीनों कालों का योगदान महत्वपूर्ण है क्योंकि जो भूतकाल में शुभ या अशुभ कर्म पुरुषार्थ किये जाते हैं उसका फल वर्तमान में प्राप्त होता है और जो वर्तमान में पुरुषार्थ किये जाते हैं उनका फल भविष्य में मिलता है। जो कुछ शुभ या अशुभ शकुन वर्तमान में दृष्टिभूत होते हैं वे भी भूतकालीन शुभ एवं अशुभ कर्म के फल-प्राप्ति के पूर्व सूचना देते हैं। यथा.....

अन्यजन्मान्तरकृतं कर्म पुंसां शुभाशुभम् ।  
यत्स्यशक्नः पाकं निवेदयति गच्छताम् ॥5॥

वृहत्संहिता:

मनुष्यों के पूर्व जन्मार्जित जो शुभाशुभ कर्म हैं, उन कर्मों के शुभाशुभ फल का गमनकालीन शक्ति प्रकाशित करता है।

उपर्युक्त सिद्धान्त के अनुसार शकुन के कारक/सूचक वस्तुतः शुभ या अशुभ नहीं होते हैं। परन्तु भूतकालीन शुभ-अशुभ कर्म के सूचक और भाविकालीन शुभाशुभ घटना के ज्ञापक मात्र हैं। इसलिए शुभ या अशुभ शकुनों से न राग करना चाहिए न द्वेष करना चाहिए क्योंकि इससे पाप बन्ध होता है जिससे जीवों को कष्ट मिलता है। परन्तु अवश्य अशुभ शकुन होने पर भाव को निर्मल करना चाहिए / भगवान का स्मरण करना चाहिए। जिससे अशुभ शकुन का फल कम मिले या पाप टल जावे। इसके साथ-साथ अशुभ शकुन दृष्टिभूत होने पर सावधान भी हो जाना चाहिए। जैसे कि पशु-पक्षी की विशेष गतिविधियों से जब शकुन मिले कि किसी निश्चित क्षेत्र में भूकम्प आनेवाला है, तब भूकम्प रूपी अशुभ घटना के सूचक रूप पशु-पक्षियों को शत्रु मानकर के नहीं मारना चाहिए। परन्तु वे तो अशुभ घटना को हमें पहले सूचित करके हमारें मित्र ही बने हैं। हाँ, उस सूचना से लाभ उठाने के लिए और स्वयं को सुरक्षित करने के लिए सम्भावित भूकम्प क्षेत्र से निरापद स्थान पर चले जाना चाहिए। इसी से भूकम्प रूपी दुर्घटना से हम बहुत हद तक सुरक्षित रह सकते हैं। इसी प्रकार अन्य अशुभ शकुन के बारे में जान लेना चाहिए। इसी प्रकार शुभ शकुन से भी लाभान्वित होना चाहिए। यथा-पशु-पक्षी की विशेष गतिविधि से जब वर्षा होने की पूर्व सूचना मिलती है तब क्रृषकों को क्रृषि करके लाभ उठाना चाहिए न कि केवल सूचना देनेवाले

पशु पक्षी से राग करना चाहिए। इसी प्रकार अन्य शुभ सूचना के बारे में भी जान लेना चाहिए।

जो पाप रूपी मल को गालन करे, नष्ट करे उसे मंगल कहते हैं। इसे ही शुभ (पुण्य) कहते हैं। इसके विपरीत जो पाप कर्म को संचय करे उसे अशुभ (पाप) कहते हैं। वस्तुतः दया, करुणा, परोपकार, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, सरलता, निर्लोभता, क्षमा, मृदुता, पवित्रता, संयम, तप, त्याग, सन्तोष, विश्वमैत्री आदि-आदि उत्तम पवित्र भावना ही शुभ है / मंगल है / पूण्य है। उपर्युक्त पवित्र भावना से युक्त द्रव्य क्षेत्र, काल, भाव, कार्य शुभ हैं। इसके विपरीत हिंसा, असत्य, अन्याय, क्रोध, लोभ आदि भाव अशुभ हैं और इन अशुभ भावों से युक्त द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अशुभ हैं / पाप है / अमंगल है। प्राचीन साहित्य में पूर्ण-कलश, सफेद सरसों, सधवा (सती) स्त्री, बालक सहित स्त्री, बछड़ा सहित गाय, फल-फूल, अनाज, मंगल ध्वनि, जय-जयकार पुष्पवृष्टि, ध्वजा आदि को द्रव्य मंगल द्रव्य शुभ कहा गया है। क्रन्दन, कलह, खाली रखा हुआ कलश, धुँआ निषेधकारक वचन, हड्डी आदि द्रव्य को अशुभ माना गया है। इसी प्रकार जहाँ पर तीर्थकर साधु-सन्त साधना करते हैं, मोक्ष प्राप्त करते हैं उसे क्षेत्र-मंगल कहते हैं। जिस काल में तीर्थकर आदि महापुरुष जन्म लेते हैं, तप करते हैं, मोक्ष जाते हैं उसे काल मंगल कहते हैं।

जिस सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र रूपी भाव से मोक्ष प्राप्त होता है उसे भाव मंगल कहते हैं।

As you Save So you reap अर्थात् जैसे बोओगे वैसा ही पाओगे के अनुसार मनुष्य के स्वअर्जित शुभ या अशुभ कर्म ही जब उदय में आकर जीव को सुख या दुःख देते हैं तब उसके पहले न्यूटन Every action have reaction अर्थात् प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। इस सिन्धान्त के अनुसार शुभ कर्म के शुभ शकुन अशुभ कर्म के अशुभ शकुन दिखाई देते हैं। यह शुभ या अशुभ शकुन वर्षा, भूकम्प, दुर्घटना, सुघटना, रोग, मृत्यु, हानि-लाभ, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि सम्बन्धी इसकी सूचना हमें वैज्ञानिक यंत्र में पारा का ऊपर चढ़ना नीचे उतरना, कंपना आदि से तथा पशु-पक्षी, कीट, पतंग, मनुष्य, बादल, वायु, सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र आदि की क्रियाओं से प्राप्त होती है।

सर्वश्रेष्ठ भाव मंगल/भाव शुभ है और सर्वनिकृष्ट भाव—अमंगल/भाव—अशुभ है। जिस समय में भाव प्रसन्न, प्रशस्त, पवित्र, उल्लास युक्त हो वह समय सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त है, उस समय के शकुन / कार्य उत्तम हैं। पवित्र भाव ही उत्तम धर्म तीर्थ – मंगल – शकुन – मुहूर्त है। यथा...

**ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं पुण्यं तीर्थमुदाहतम्।**

**तीर्थानामवि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः परा॥**

ज्ञान तीर्थ है, धैर्य तीर्थ है, पुण्य तीर्थ है, परन्तु तीर्थों का भी तीर्थ जिसका मन विशुद्ध है।

**द्रव्यतः शुद्धमप्यन्नं भावशुद्धा प्रदुष्यते।**

**भाव ह्यशुद्धो बन्धाय शुद्धो मोक्षाय निश्चितः॥**

द्रव्यतः अन्न शुद्ध होने पर भी भाव अशुद्धि से अन्न भी प्रदूषित हो जाता है। भाव अशुद्धि बन्ध के लिए कारण है तो भाव विशुद्धि मोक्ष के लिए कारण है। नीचे विभिन्न प्रकार के मंगल / शुभ का वर्णन कर रहे हैं—

### (१) नाम मंगल

**अरिहाणं सिद्धाणं आइरियउवज्ञायाइसाहूणं।**

**णामाई णाममंगलमुद्दिद्वं वीयराएहिं ॥ (१९)**

वीतराग भगवान् ने अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इनके नामों को नामामंगल कहा है।

### (२) द्रव्य मंगल

**टावनमंगलमेदं अकट्टिमाणि जिणबिंवा।**

**सुरिउवज्ञायसाहूदेहाणि हु दव्यमंगलयं। (२०)**

जिन भगवान् के जो अकृत्रिम और कृत्रिम प्रतिबिम्ब है, वे सब स्थापनामंगल हैं तथा आचार्य, उपाध्याय और साधु के शरीर द्रव्य मंगल हैं।

### (३) क्षेत्र मंगल

**गुणपरिणदासणं परिणिक्कमणं केवलस्स णाणस्य।**

**उप्तती इयपहुदी वहुभेयं खेत्तमंगलयं॥ (२१)**

गुणपरिणत आसनक्षेत्र, अर्थात् जहां पर योगासन, वीरासन आदि विविध

आसनों से तदनुकूल ध्यानाभ्यास आदि अनेक गुण प्राप्त किये गये हों ऐसा क्षेत्र, परिनिष्क्रमण अर्थात् दीक्षा का क्षेत्र, केवलज्ञानोत्पत्ति क्षेत्र, इत्यादिरूप से क्षेत्रमंगल बहुत प्रकार का है।

**(४-७) क्षेत्रमंगल, कालमंगल**

**एदस्स उदाहरणं पावाणगरुज्ञायं तचं पादी।**

**आउद्दहत्ययुद्दी पणुवीसध्भहियपणसयधणूणि। (४)**

**देह अवद्विदकेवलणाणा वदुद्धगयणदेसो वा।**

**सेढि धणमेत अप्पदेस गदलोयपूरणापुण्णा । (२३)**

**विस्साणं लोयाणं होदि पदेसा वि मंगलं खेतं।**

**जसिं काले केवलणाणादिमंगलं परिणमति । (२४)**

**परिणीक्कमणं केवलणाणुद्भवणिव्वुदिष्पवेसादी।**

**पावमलगालणादो पण्णतं कालमंगलं एदं । (२५)**

इस क्षेत्र मंगल के उदाहरण पावानगर, उर्ज्यन्त (गिरनार पर्वत) और चम्पापुर आदि है। अथवा साढ़े तीन हाथ से लेकर पाँच सौ पद्मीस धनुष प्रमाण शरीर में रिथ्त और केवलज्ञान से व्यात आकाश प्रदेशों को क्षेत्रमंगल समझना चाहिए अथवा, जगत्येणी के घनमात्र अर्थात् लोक प्रमाण आत्मा के प्रदेशों से लोक पूरणसमुद्धात द्वारा पूरित सभी (उर्ध्व, अधो व तिर्यक) लोकों के प्रदेश भी क्षेत्रमंगल हैं। जिस काल में जीव केवलज्ञानादिरूप मंगलमय पर्याय को प्राप्त करता है उसको तथा परिनिष्क्रमण अर्थात् दीक्षाकाल केवलज्ञान के उद्भव काल और निवृत्ति अर्थात् मोक्ष के प्रवेश का काल यह सब पापरूपी मल के गलाने का कारण होने से कालमंगल कहा गया है।

**एवं अणोयभेयं तं कालमंगलं पवरं ।**

**जिन महिमा संवंधं णंदीसरदीव पहुदी ओ। (२६)**

ति.यप.भा. पृ. ५.

इस प्रकार जिन महिमा से सम्बन्ध रखने वाले वह श्रेष्ठ कालमंगल अनेक भेद रूप हैं जैसे नन्दीश्वर द्वीपसंबंधी पर्व आदि।

(8) भावमंगल

मंगल पञ्चाणहि उवलम्बिखयजीवदव्यमेत्तं च ।

भावं मंगलम् ..... । (27)

वर्तमान मैं मंगलरूप पर्यायों से परिणत जो शुद्ध जीवद्रव्य है वह भाव मंगल है। भाव मंगल से पाप कर्म नष्ट होता है, पुण्य कर्म का सम्पादन होता है और अन्त में मोक्ष भी प्राप्त होता है। इसलिए सतत भाव-मंगल/भाव शुभ-शकुन रखना चाहिए जिससे सर्व प्रकार से सुख-शान्ति मिले। पूर्वचार्यों ने कहा भी है-

दुरादभीष्टममिगच्छति पुण्ययोगात्,  
पुण्याद्विना करतलस्यमपि प्रयाति ।  
अन्यत्परं प्रभवतीह निमित्तमात्रं ,  
पात्रं बुद्धाः भवतः निर्मलं पुण्यराशेः॥32॥

पुण्य के भोग से अभीष्ट वस्तु दूर स्थान से भी आ जाती है— मिल जाती है और पुण्य के बिना हस्त तल पर स्थित भी चली जाती है। इष्ट वस्तु की प्राप्ति-अप्राप्ति के विषय में अन्य तो निमित्त मात्र हैं, इसीलिए हे विद्वज्ञानों ! निर्मल पुण्य राशि के पात्र होओ।

पुण्याङ्गलायते बन्हिर्विषमप्यमृतायते ।  
मित्रायन्तके द्विषःपुण्यात्पुण्याचाम्निभीतय॥33॥

पुण्य से अग्नि जल के समान हो जाती है, विष भी अमृत के समान आचरण करने लगता है, पुण्य से शत्रु मित्र के समान हो जाते हैं ओर पुण्य से भय शान्त हो जाते हैं।

बान्धवमहमेऽपि जनो दूःखानि पापं पाकेन ।  
पुण्येन वैरिसदनं मातोऽपि न मुच्यते सौख्येः ॥34॥

पाप के उदय से मनुष्य बन्धुजनों के बीच में भी दुःखों को प्राप्त होता है और पुण्य से शत्रु के घर गया हुआ भी सुखों से मुक्त नहीं होता — सुख प्राप्त करता है।

शुभे स्वस्यानुकूलानि चेतना चेतनानि वे ।  
प्रतिकूलानि तान्येव जीवस्याशुभं कर्मणि ॥42॥

पुण्योदय में चेतन-अचेतन सभी पदार्थ अपने अनुकूल होते हैं और पाप कर्म के उदय में वे ही पदार्थ प्रतिकूल हो जाते हैं।

दुरस्थं सुलभं रत्नं पुंसां भाग्ये पचेतिमे ।

हस्तागतं विपुण्यानामपि दूरे ब्रजेत्युनः (44)

भाग्य के अनुकूल होने पर दूरवर्ती रत्न भी सुलभ होता है और पुण्य हीन मनुष्यों का हस्तगत रत्न भी दूर चला जाता है।

औषधानि च मित्राणि नक्षत्राणि शकुनग्रहाः ।

भाग्यकाले प्रसन्नाः स्युरभाग्ये निष्कलाश्च ते॥46॥

औषध, मित्र, नक्षत्र, शकुन और ग्रह भाग्योदय के समय प्रसन्न रहते हैं ओर अभाग्योदय के समय वे सब निष्कल होते हैं। अर्थात् पुण्योदय से शकुन औषधादि अनुकूल होते हैं परन्तु वे ही पापोदय में प्रतिकूल हो जाते हैं। अतः सुख के लिए प्रमुख कारण पुण्य है और दुःख के कारण पाप है। शुभ या अशुभ शकुनादि बात्य निमित्त हैं।

### रिष्टों दर्शन का वैज्ञानिक कारण

आचार्य ने पदरथ रिष्टों का निरूपण प्रधानतः चन्द्र विष्व और सूर्य विष्व के दर्शन द्वारा किया है। इसका मुख्य हेतु यह है कि चन्द्ररिश्मयों और सूर्यरिश्मयों का सम्बन्ध नेत्र इन्द्रिय की रश्मयों से है। शरीर शास्त्रियों ने आँखों की बनावट का कथन करते हुए बताया है कि आँखें वास्तव में दो कैमरों जैसी हैं, जिसमें से प्रत्येक में एक लेन्स, एक अन्येरी कोठरी और एक संवेदनशील पर्दा होता है। यदि इन कैमरों में माँस की ऐसी समुचित व्यवस्था न हो कि क्षण भर में ही लेन्स को समीप या दूर की दृष्टि के लिये ठीक कर सके तो कैमरे सम्यक् चित्र नहीं उतार सकेंगे। यदि नेत्र गोलकों को इधर-उधर धुमाने वाली मांस पेशियाँ न होती तो इन यन्त्रों के होते हुए भी सिर को इधर-उधर धुमाकर भी कुछ नहीं देख सकते तथा इन पेशियों की कलों को चलाने वाले स्नायु चालक यन्त्रों के विगड़ जाने या कमजोर हो जाने पर पदार्थों का विपर्यय ज्ञान होता है। तात्पर्य यह है कि नेत्रों के पर्दों पर बाहर के चित्र तो अंकित होते हैं किन्तु मरितष्क स्थित दृष्टि केन्द्र तक उनकी सूचना नहीं पहुँच पाती है अथवा सूचना नाड़ी के विकृत हो जाने से उन चित्रों की विपर्यय सूचना मिलती है। चन्द्रमा और सूर्य विष्व के

जो स्वाभाविक गुण, रूप, स्वभाव और कार्य बतलाये हैं, उनका विकृत भाव सूचना नाड़ियों की विकृति या शक्तिहीनता के कारण ही होता है। जब तक नेत्रों के लेन्स, अन्धेरी कोठरी और संवेदनशील पर्दा वे तीनों ठीक रहते हैं और सूचना नाड़ी विकृत नहीं होती तब तक शरीर की स्थिति कायम रहती है, लेकिन जब सूचना नाड़ी कमज़ोर होने लगती है, तो आयु का क्षीण होना प्रारम्भ हो जाता है। परस्थ जितने भी रिष्ट कहे गए हैं उन सब में सूचना नाड़ी की शक्ति के आयु परीक्षण की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं पर उन सब विधियों का उद्देश्य मरिष्ट, सुषुम्ना और उससे निकलने वाले स्नायु सूत्रों की शक्ति की परीक्षा करना ही है। जब तक व्यक्ति की सुषुम्ना, मरिष्ट और सूचना वाहक स्नायु-सूत्र बलिष्ठ रहते हैं तब तक उसकी जीवन शक्ति कायम रहती है। पर इन तीनों की शक्ति के हास में मृत्यु अवश्यम्भावी होती है। वह रिष्टों का वैज्ञानिक कारण है।

### ‘निमित्त’ (शकुन) ज्ञान ऋद्धि-

नैमित्तिक ऋद्धि ज्ञान के भेद-

णाइमित्तिका य रिद्धी, णभ-भउमंग-सराइवेंजणयं ।

लक्खण-चिह्नं सउणं, अटु-वियप्पेहि वित्थरिदं ॥(1011)॥

नैमित्तिक ऋद्धि नभ, भौम, अंग, स्वर, व्यंजन, लक्षण, चिन्ह (छिन्न ?) और स्वप्न इन आठ भेदों से विस्तृत है।

नैमित्तिक ऋद्धि-

रवि-ससि-गह-पहुदीणं, उदयत्थमणादिआइं दट्टूणं ।

कालत्तय-दुक्ख-सुहं, जं जाणइतं हिणह-णिमित्तं ॥(1012)॥

सूर्य, चन्द्र और ग्रह आदि के उदय एवं अस्त आदिकों को देखकर जो कालत्रय के दुःख-सुख आदि का जानना है, वह नभ-निमित्त है।

भौम निमित्त-

धण-सुसिर-णिद्ध-लुक्ख-प्पहुदि-गुणे भाविदूण भूमीए।

जं जाणइ खय-वड्ड, तम्यस-कणय-रजद पमुहाणं ॥(1013)॥

दिस-विदिस-अंतरेसुं, चउरंग-बलं ठिदं च दट्टूणं ।

जं जाणइ जयमजयं, तं भउम-णिमित्तमुद्दिं ॥(1014)॥

पृथ्वी के धन (सान्द्रता), सुषिर (पोलापन), रिनाधता और रुक्षता आदि गुणों का विचार कर जो तांबा, लोहा, स्वर्ण एवं चाँदी आदि धातुओं की हानि-वृद्धि को तथा दिशा-विदिशाओं के अन्तरालों में स्थित चतुरंग बल को देखकर जो जय-पराजय को भी जानता है, उसे भौम निमित्त कहा गया है।

॥ (०१५) ॥ अंग निमित्त-

वातादि घ्यडीओ, रुहिर-प्पहुदिस्सहाव-सत्ताइं ।

णिणाण उण्णाणं, अंगोवंगाण दंसणा पासा ॥(1015)॥

णर-तिरियाण टदुटुं, जं जाणइ दुक्ख-सोक्ख-मरणादिं ।

कालत्तय-णिष्णणं, अंग-णिमित्तं पसिद्धं तु ॥(1016)॥

जिससे मनुष्य और तिर्यज्यों के निम्न एवं उन्नत अंग-उपाङ्गोंके दर्शन एवं सर्प से वातादि तीन प्रकृतियों और रुधिरादि सात स्वभावों (धातुओं) को देखकर तीनों कालों में उत्पन्न होने वाले सुख दुःख तथा मरण आदि को जाना जाता है, वह अङ्ग निमित्त नाम से प्रसिद्ध है।

स्वर निमित्त-

णर-तिरियाण विचितं, सदं सीदूण दुक्ख-सोक्खादिं ।

कालत्तय-णिष्णणं, जं जाणइ तं सर-णिमित्तं ॥(1017)॥

जिसके द्वारा मनुष्यों और तिर्यज्यों के विचित्र शब्दों को सुनकर कालत्रय में होने वाले दुःख-सुख को जाना जाता है, वह स्वर निमित्त है।

व्यंजन निमित्त-

सिर-मुंह-कंठ-प्पहुदिसु, तिल-मसय-प्पहुदिआइ दट्टूणं ।

जं तिय-काल-सुहाइं, जाणइ तं वेजण-णिमित्तं ॥(1018)॥

सिर, मुख और कण्ठ आदि पर तिल एवं मसे आदि को देखकर तीनों काल के सुखादिक को जानना, सो व्यञ्जन-निमित्त है।

लक्षण निमित्त-

कर-चरणतल-प्पहुदिसु, पंक्य-कुलिसादियाणि दट्टूणं ।

जं तिय-काल-सुहाइं, लक्खइ तं लक्खण-णिमित्तं ॥(1019)॥

हरततल (हथेली) और चरणतल (पगतली) आदि में कमल एवं वज्र इत्यादि

चिन्हों को देखकर कालत्रय में होने वाले सुखादि को जानना, यह लक्षण निमित्त है।

### चिन्ह निमित्त-

सुर-दाणव-रक्खस्स-णर-तिरिएहि छिण्ण-सत्थ-वत्थाणि ।

पासाद-ण्यर-देसादियाणि चिण्हाणि दट्टूण ॥(1020)॥

कालत्तय-संभूदं, सुहासुहं मरण-विविह-दण्वं च ।

सुह-दुक्खाइलक्खइ, चिण्ण, णिमित्ततितं जाणइ ॥(1021)॥

देव, दानव, राक्षस, मनुष्य और तिर्यज्यों के द्वारा छेदे गये शस्त्र एवं वस्त्रादि तथा प्रासाद, नगर और देशादिक चिन्हों को देखकर त्रिकाल में उत्पन्न होने वाले शुभ-अशुभ को, मरण को, विभिन्न प्रकार के द्रव्यों को और सुख-दुःख को जानना यह चिन्ह निमित्त है।

### स्वप्न निमित्त-

वातादि-दोस-चत्तो, पच्छि स-रत्ते मयंक-रवि-पहु दिं ।

णिय-मुह-कमल-पविदुं, देवखइ सउणम्मि सुह-सउण ॥(1022)॥

धड़-ते ल्लट्टभं गादी, रासह-कर भादिएसु आरोहं ।

परदेस-गमण-सबं, जं देवखइ असुह-सउण तं ॥(1023)॥

जं भासइ दुक्ख-सुह-प्पमुहं कालत्तए वि संजादं ।

तं चिय सउण-णिमित्तं, चिण्णा मालो ति दो-भेदं ॥(1024)॥

करि-के सरि-पहुदीणं, दंसण-मेत्तादि चिण्ण-सउण तं ।

पुव्वावर-संवंध, सउण तं माल-सउणोत्ति ॥(1025)॥

वात-पित्तादि दोषों से रहित सोया हुआ व्यक्ति पिछली रात्रि में यदि अपने मुख कमल में प्रविष्ट होते हुए सूर्य-चन्द्र आदि शुभ स्वप्नों को देखे तथा घृत एवं तैल आदि की मालिश, गर्दभ एवं ऊंट आदि पर सवारी और परदेश गमनादि रूप अशुभ स्वप्न देखे तो उसके फलस्वरूप तीन काल में होने वाले सुख-दुखादिक को बतलाना स्वप्न निमित्त है। इसके चिन्ह और माला रूप से दो भेद हैं। इनमें से स्वप्न में हाथी एवं सिंहादिक के दर्शन मात्र आदिक को चिन्ह स्वप्न और पूर्वापर सम्बन्ध रखने वाले स्वप्न को माला स्वप्न कहते हैं।

योग विशेषज्ञ योग दर्शन के समर्थ प्रचारक पातंजलि महर्षि, योग-दर्शन में ऋद्धियों के कारण बताते हुए प्रतिपादन करते हैं कि-

“जन्मौषधि मन्त्र तपः समाधिजाः सिद्धयः” ॥1॥

सिद्धियाँ जन्म, औषधि, मन्त्र, तपस्या और समाधि से प्राप्त होती है।

जात्यन्तर परिणामः प्रकृत्यापूरात् ॥2॥

सूत्रार्थ- जात्यन्तर परिणाम- एक जाति से दूसरी जाति में परिवर्तन प्रकृति के पूर्व होने से होता है।

व्याख्या- पातंजलि ने कहा है कि ये शक्तियाँ जन्म से प्राप्त होती हैं, कभी-कभी औषधि विशेष से भी प्राप्त होती हैं, फिर तपस्या से भी उन्हें पाया जा सकता है। उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि इस शरीर को जब तक इच्छा हो रखा जा सकता है। अभी वह यह बता रहे हैं कि शरीर के एक जाति से दूसरी जाति में परिवर्तन होने का क्या कारण है। वह कहते हैं कि यह प्रकृति के पूर्व होने से होता है। अगले सूत्र में वह इसकी व्याख्या करते हैं।

अब सवाल उठता है कि विज्ञान की कसौटी इन चमक्तारों की संतोषजनक जांचकर सकने में कितनी सक्षम है। इसका उत्तर दिया है- विख्यात प्राणी-शास्त्री डॉ. व्याल बाटसन ने। उनका कहना है विज्ञान में सम्पूर्ण सत्य कुछ नहीं है। भौतिकी के नियम कभी अकाट्य माने जाते रहे, पर आज वे भी अनिश्चय सिद्धांत के धेरे में आ गये हैं। प्रकृति की ज्ञात शक्तियों से जो कुछ न समझा जा सके वह सब अनिश्चय सिद्धांत के खाने में चला जाता है। तब कोई ऐसी अज्ञात शक्ति अथवा ऊर्जा है, जो मनुष्य और उसके ब्रह्माण्ड को धेरे हुए हैं।

लगभग यही बात जाने-माने वैज्ञानिक डॉ. जोसेफ बैक्स राइन ने भी कहा है कि हम ऐसा क्यों न मान लें कि हमें जो शक्तियाँ ज्ञात हैं उनके अलावा और कोई शक्ति है ही नहीं। ऐसा क्यों माने कि प्रकृति की सारी शक्तियाँ समय, सामूहिक सम्बन्ध के अन्तर्गत हैं और मानवीय इन्द्रियों से देखी सुनी जा सकती हैं।

वैज्ञानिकों की इस जिज्ञासा का समाधान मिलता है कि प्राचीन हिन्दू दर्शनशास्त्र में, जो इस विषय में पश्चिमी दर्शन के मुकाबले में बहुत आगे हैं। भारत के मनस्वी ऋषियों ने हजारों साल पहले कह दिया था कि समस्त जीवन का अस्तित्व ऊर्जा के लहराते सागर में है। ब्रह्माण्ड व्यापी विद्युत क्षेत्र के इस विचार को प्राचीन

भारत में 'प्राण' कहा गया है। आश्चर्य की बात तो यह है कि, आधुनिक भौतिकी की खोज भी इस कथन की पुष्टि करती है। सोवियत संघ और चेकोस्लोवाकिया में हुए प्रयोगों से इस ऊर्जा के अस्तित्व का पता चलता है।

आधुनिक विज्ञान ठोस पदार्थों को अब ठोस नहीं मानता। उसके अनुसार विश्व में हर चीज की रचना कंपनों, लहरों की लम्बाई अथवा लहराते अणुओं से हुई है। मेज हो या गुलाब का फूल अथवा किसी प्राणी का शरीर हर चीज अणुओं के एक निश्चित जमाव के अलावा कुछ नहीं हैं। अपना फलता-फूलता प्रकाशन व्यवसाय छोड़कर हिन्दू दर्शन के अध्ययन के लिये भारत आने वाले अमरीकी मनीषी जॉन सेल का कहना है कि भारतीय विज्ञान के अनुसार प्रत्येक मरित्यज्ञ के गुण होते हैं, जो भार रंग अथवा गंध के समान प्रकट होते हैं। इन्हें किसी दूसरे मरित्यज्ञ में निहित सूक्ष्म उपकरणों से देखा जा सकता है। भिन्न-भिन्न मरित्यज्ञों को प्रगट होने और ग्रहण करने की क्षमता अलग-अलग होती हैं, जो उनकी एकाग्रता के सापेक्षस्तर पर निर्भर रहती है। इस तरह मानसिक वातावरण एक से दूसरे मरित्यज्ञ में स्थानांतरित हो सकता है। लेकिन आप जिस किसी भी वस्तु के सम्पर्क में आते हैं अथवा जो भी कार्य करते हैं उन सब पर अपनी व्यक्तिगत छाप भी छोड़ते हैं।

**वैज्ञानिक सूखूत-** भारतीय दर्शन के कम्पन सिद्धांत की जानकारी एक नई इलेक्ट्रानिक उपकरण से मिलती है। जिसका आविष्कार सोवियत संघ के डॉ. गेनाडी सर्गेयेव ने किया है। इसमें उन्होंने द्रव रंगों का उपयोग होता है जो इलेक्ट्रानिक घड़ियों में लगते हैं। इस बन्ने में बेजान पदार्थों की विद्युत धड़कने भी चुम्बकीय फीते पर अंकित हो जाती है। अब इन धड़कनों का अनुवाद समझ में आने वाली भाषा में करने का काम रह गया है और उम्मीद है कि इसमें सफलता मिलने में भी बहुत समय नहीं लगेगा।

डॉ. सर्गेयेव का सिद्धान्त है हर व्यक्ति अपने आस-पास के वातावरण पर अपनी छाप छोड़ता है। इसलिये कि हमारे शरीर से एक प्रकार की ऊर्जा हमेशा निकलती रहती है। आस-पास की चीजें इसे सुखा लेती हैं और अपने पास जमा रहती हैं। ऊर्जा का विनाश कभी नहीं होता। इस तरह हमारी ऊर्जा की छाप हमेशा के लिए सुरक्षित रहती है।

जो ऊर्जा उपकरण से अंकित हो सकती है, उसे क्या सूक्ष्म और चेतन मरित्यज्ञ से नहीं देखा जा सकता? कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं, जो किसी वस्तु या व्यक्ति का मात्र स्पर्श करके उससे सम्बन्धित हर बात और यहाँ तक कि पूरा इतिहास बता देते हैं। इनमें नीदर लैण्ड के पीटर हरकोस बहुत प्रसिद्ध हैं। सन् 1943 में सीढ़ी से गिरने पर उनकी खोपड़ी की हड्डी टूट गयी थी। इलाज से वह तो जु़़ गयी लेकिन हरकोस एकाग्र हो सकने की क्षमता खो बैठे, किन्तु उन्हें एक नयी क्षमता मिल गई। एक बार हेम की पुलिस ने उनसे एक मामले में सहायता ली। हरकोस ने मृतक का कोट हाथ में लिया और हत्या की समुच्ची घटना को न केवल विस्तार से वर्णन किया वरन् यह भी बता दिया कि हत्यारे का एक पैर काठ का है, उसकी मूँछे हैं और वह चश्मा लगाता है। पुलिस ऐसे आदमी को पहले ही हिरासत में ले चुकी थी। हरकोस ने यह भी बता दिया कि हत्या के बाद हथियार कहाँ छुपाया गया है।

### 'प्राकृतिक विपर्यास से प्राप्त सूचनाये'

उत्पातों का कारण

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वकर्मविपाकजम् ।

शुभाशुभतथोत्पातं राज्ञो जनपदस्य च ॥1॥

अब राजा और जनपद के पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कार्यों के फल से होने वाले उत्पातों का निरूपण करता हूँ।

उत्पातों के लक्षण एवं भेद-

प्रकृतेर्यो विपर्यासः स चोत्पातः प्रकीर्तिः ।

दिव्याऽन्तरिक्षभौमाश्च व्यासमेषां निवोधत ॥2॥

प्रकृति के विपर्यास-विपरीत कार्य के होने को उत्पात कहते हैं। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं— दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। इनका विस्तार से वर्णन निम्न प्रकार अवगत करना चाहिये।

भय एवं मरण सूचक उत्पात-

यदात्युष्णं भवेच्छीते शीतमुष्णे तथा ऋतै ।

तदा तु नवमे मास दशमे वा भयं भवेत् ॥3॥

यदि शीत ऋतु में अत्यन्त गर्मी पड़े और ग्रीष्म ऋतु में अत्यन्त कड़ाके की सर्दी पड़े तो उक्त घटना के नौ महीने या दस महीने के उपरान्त महान् भय होता है।

**सप्ताहमष्टरात्रं वा नवरात्रं दशाहिकम् ।**

**यदा निपत्ते वर्ष प्रधानस्य वधाय तत् ॥4॥**

यदि वर्षा सात दिन और आठ रात अथवा नौ रात्रि और दस दिन तक हो तो प्रधान राजा या मन्त्री का वध होता है। तात्पर्य यह है कि वर्षा लगातार सात दिन और आठ रात अर्थात् दिन से आरम्भ होकर आठवीं रात में समाप्त हो या नौ रात और दस दिन अर्थात् रात से आरम्भ होकर दसवें दिन समाप्त हो तो प्रधान का वध होता है।

**पक्षिणश्च यदा मत्ता पशवश्च पृथग्विधाः ।**  
**विपर्ययेण संसक्ता विन्द्याद् जनपदे भयम् ॥5॥**

यदि पक्षी मत्त-पागल और पशु भिन्न स्वभाव के हो जाये तथा विपर्यय-विपरीत जाति, गुण, धर्म वालों का संयोग हो अर्थात् पशु-पक्षियों से मिले, पक्षी पशुओं से अथवा गाय आदि पशु भी भिन्न स्वभाव वालों से संयोग करें तो राष्ट्र में भय-आतंक व्याप्त हो जाता है।

**आरण्या ग्राममायान्ति वनं गच्छन्ति नागराः ।**  
**रुदन्ति चाथ जल्पन्ति तदापायाय कल्पते ॥6॥**  
**अष्टादशेषु मासेषु तथा सप्तदशेषु च ।**  
**राजा च म्रियते तत्र भयं रोगश्च जायते ॥7॥**

जंगली पशु गाँव में आवें और ग्रामीण पशु जंगल में जावें, रुदन करें और शब्द करें तो जनपद के पाप का उदय समझना चाहिये। इस पाप के फल से अठारह महीनों में या सत्रह महीनों में राजा का मरण होता है और उस जनपद में भय एवं रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अर्थात् उस जनपद में सभी प्रकार का कष्ट व्याप्त हो जाता है।

**स्थिराणां कम्पसरणे चलानागमने तथा ।**  
**ब्रूयात् तत्र वधं राज्ञः षण्मासात् पुत्रमन्त्रिणः च ॥**

स्थिर पदार्थ-जड़ चेतनात्मक स्थिर पदार्थ काँपने लगे-चंचल हो जायें और

चंचल पदार्थों की गति रुक जाय-रिथर हो जायें तो इस घटना के छः महीने के उपरान्त राजा एवं मन्त्री-पुत्र का वध होता है।

**सर्पणे हसने चापि क्रन्दने युद्धसम्भवे ।**

**स्थावराणां वधं विद्यात्विमासं नात्र संशयः ॥9॥**

युद्ध काल में अकारण चलने, हँसने और रोने कल्पने से तीन महीने के उपरान्त स्थावर-वहाँ के निवासियों का निरसन्देह वध होता है।

**पक्षिणः पशवो मर्त्याः प्रसूयन्ति विपर्ययात् ।**

**यदा यदातुष्ट्रमासाद् भूयात् राजवधो ध्रुवम् ॥10॥**

यदि पक्षी, पशु और मनुष्य विपर्यय-विपरीत सन्तान उत्पन्न करें अर्थात् पक्षियों के पशु या मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो, पशुओं के पक्षी या मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो और मनुष्यों के पशु या पक्षी की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो तो इस घटना के छः महीने के उपरान्त राजा का वध होता हैं और उस जनपद में भय-आतङ्क व्याप्त हो जाता है।

**विकृतैः पाणिपादाद्यन्यैश्चाप्यधिकैस्तथा ।**

**यदा त्वेते प्रसूयन्ति क्षुद्रभ्यानि तदादिशेत् ॥11॥**

विकृत हाथ-पैर वाली अथवा न्यून या अधिक हाथ-पैर सिर आँख वाली सन्तान पशु-पक्षी और मनुष्यों के उत्पन्न हो तो क्षुधा की पीड़ा और भय-आतंक आदि होने की सूचना अवगत करनी चाहिये।

**षष्मासं द्विगुणं चापि परं वाथ चतुर्गुणम् ।**

**राजा च म्रियते तत्र भयानि च न संशयः ॥12॥**

जहाँ उक्त प्रकार की घटना घटित होती है, वहाँ छः महीना, एक वर्ष और दो वर्ष के उपरान्त राजा की मृत्यु एवं निस्सन्देह भय होता है।

**मध्यानि स्थिराऽस्थीनि धान्याऽङ्गारवसास्तथा ।**

**मध्यवान् वर्षते यत्र तत्र विद्यात् महद्यम् ॥13॥**

जहाँ मेघ, मध्य, स्थिर, हड्डी, अग्नि चिनगारियाँ और चर्बी की वर्षा करते हैं वहाँ चार प्रकार का भय होता है।



जो मधुर, क्षीरवृक्ष, श्वेतपुष्प और फलों से युक्त उत्तर दिशा में होते हैं, वे चंडी के लिये उत्पात के फल की सूचना देते हैं। अर्थात् उत्तर दिशा में मधुर, क्षीरवृक्ष श्वेत पुष्प और फलों से युक्त ब्राह्मणों के लिये उत्पात की सूचना देते हैं।

**कपायमधुरास्तिका उष्णवीर्यविलासिनः ।**

**रक्तपुष्पफलः प्राच्यां सुदीर्घनृपक्षत्रयोः ॥२५॥**

कपाय, मधुर, तिक्ता, उष्णवीर्य, विलासी, लाल पुष्प और फल वाले वृक्ष पूर्व दिशा में बलवान् राजा और क्षत्रियों के लिये प्रतिपुद्गल-उत्पात सूचक है।

**अम्लः सलवणः स्निधाः पीतपुष्पफलाश्च ये ।**

**दक्षिण दिशि विज्ञेया वैश्यानां प्रतिपुद्गलाः ॥२६॥**

आम्ल, लवणयुक्त, स्निध, पीत पुष्प और फल वाले वृक्ष दक्षिण दिशा में वैश्यों के लिये उत्पात सूचक है।

**कटु कण्डकिनो रुक्षाः कृष्णपुष्पफलाश्च ये ।**

**वारुण्यां दिशि वृक्षाः स्युः शूद्राणां प्रतिपुद्गलाः ॥२७॥**

कटु, काँटों वाले, रुक्ष, काले रंग के फूल-फल वाले वृक्ष पश्चिम दिशा शूद्रों के लिये उत्पात सूचक है।

**महान्तश्चतुरसाश्च गाढाश्चापि विशेषिणः ।**

**वनमध्ये स्थिताः सन्त स्थावराः प्रतिपुद्गलाः ॥२८॥**

महान् चौकोर और विशेष रूप से गाढ़-मजबूत और वन के मध्य में स्थित वृक्ष स्थावरो-वहाँ के निवासियों के लिये उत्पात सूचक होते हैं।

**हस्याश्च तखो येऽन्ये अन्ये जाता वनस्य च ।**

**अचिरोद्भवकारा ये यायिनां प्रतिपुद्गला ॥२९॥**

छोटे वृक्ष और जो अन्य वृक्ष वन के अन्त में उत्पन्न हुए हैं एवं शीघ्र ही उत्पन्न हुए वृक्षों का जिनका आकार है अर्थात् जो छोटे-छोटे हैं, वे पापी-आक्रमण करने वालों के लिये उत्पात सूचक हैं।

**ये विधिक्षुविमिश्राश्च विकर्मस्था विजातिषु ।**

**प्रतिपुद्गलाश्च येषां तेषामुत्पातजं फलम् ॥३०॥**

जो विदिशा ओं में अलग-अलग हों तथा विजाति-भिन्न-जाति के वृक्षों में विकर्मस्थ-जिनका कार्य पृथक-पृथक हों वे उत्पात सूचक होते हैं। प्रति पुद्गल का तात्पर्य उत्पात से होने वाले फल की सूचना देते हैं।

**विभिन्न वर्णात्मक वृक्षरस से प्राप्त सूचना**

**श्वेतो रसो द्विजान् हान्ति रक्तः क्षत्रनृपान् वदेत् ।**

**पीता वैश्यविनाशाय कृष्णः शूद्रनिषूदये ॥३१॥**

यदि वृक्षों से श्वेतरस का क्षरण हो तो द्विज-ब्राह्मणों का विनाश, लाल रस क्षरित हो तो क्षत्रिय और राजाओं का विनाश, पीला रस क्षरित हो तो वैश्यों का विनाश और कृष्ण-काला रस क्षरित हो तो शूद्रों का विनाश होता है।

**परचक्रं नृपभयं क्षुधाव्याधिधनक्षयम् ।**

**एवं लक्षणसंयुक्ताः स्त्रावाः कुर्युमहद्यम् ॥३२॥**

यदि श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण का मिश्रित रस क्षरित हो तो परशासन और नृपति का भय, क्षुधा, रोग, धन का नाश और महान् भय होता है।

**कीटदष्टस्य वृक्षस्य व्याधितस्य च यो रसः ।**

**विवरणः स्त्रवते गन्धं न दोषाय स कल्पते ॥३३॥**

यदि कीड़ों द्वारा खाये गये रोगी वृक्ष का विकृत और दुर्गन्धित रस क्षरित होता है, तो उनका दोष नहीं माना जाता। अर्थात् रोगी वृक्ष के रस क्षरण का विचार नहीं किया जाता।

**वृद्धा द्रुमा सर्वन्त्याशु मरणे पर्युपस्थिताः ।**

**ऊर्ध्वाः शुष्का भवन्त्येते तस्मात् तांलक्षयेद्वुधः ॥३४॥**

मरण के लिये उपरिथत-जर्जरित टृटकर गिरने वाले पुराने वृक्ष शीघ्र ही रस का क्षरण करते हैं। ऊपर की ओर ये सूखे होते हैं। अतएव बुद्धिमान् व्यक्तियों को इनका लंक्ष्य करना चाहिये।

**यथा वृद्धो नरः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ।**

**तथा वृद्धो द्रुमः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ॥३५॥**

जैसे कोई वृद्ध पुरुष किसी निमित्त के मिलते ही मरण को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुराना वृक्ष भी किसी निमित्त को प्राप्त होते ही विनाश को प्राप्त हो जाता है।

वृक्षाष्टवं मनुष्यं में सम्बन्धं प्राप्तं इतरे तरयोगास्तु वृक्षादिवर्णनामभिः  
वृद्धवलोग्रमूलाश्च चलच्छैर्याश्च साधयेत् ॥३६॥

वृद्ध पुरुष और पुराने वृक्ष का परस्पर में इतरेतर-अन्योन्याश्रय सम्बन्ध हैं। अतः पुराने वृक्ष के उत्पातों से वृद्ध का फल तथा नवीन युवक वृक्षों से युवक और धशशुओं का उत्पात निमित्तक फल ज्ञात करना चाहिये तथा उल्कापात आदि के द्वारा भी निमित्तों का परिज्ञान करना चाहिये।

‘देवताओं से सूचना’

हसने रोदने नृत्ये देवतानां प्रसरणे ।  
महद्वयं विजानीयात षण्मासादूद्विगुणात्परम् ॥३७॥

देवताओं के हँसने, रोने, नृत्य करने और चलने से छः महीने से लेकर एक वर्ष तक जनपद के लिये महान् भय अवगत करना चाहिये।

चिन्ह से सूचना

चित्राश्चर्यसुलिङ्गानि निमीलन्ति वदन्ति वा ।  
ज्वलन्ति च विगन्धीनि भयं राजवधोद्वयम् ॥३८॥

विचित्र, आश्चर्य कार्य चिन्ह लुप्त हों या प्रकट हों और हिंगुट वृक्ष सहसा जलने लगे तो जनपद के लिये भय और राजा का मरण होता है।

नदियों से प्राप्त सूचना

तोयावहानि सहसा रुदन्ति च हसन्ति च ।  
मार्जारवच्च वासन्ति तत्र विन्याद् महद्वयम् ॥३९॥

तोयावहानि-नदियाँ सहसा रोती और हँसती हुई दिखलायी पड़ें तथा मार्जार-बिल्ली के समान गन्ध आती हो तो महान् भय समझना चाहिये।

वादिवशब्दाः श्रूत्वे देशे यस्मिन्मानुषैः ।  
स देशो राजदण्डेन पीड्यते नात्र संशयः ॥४०॥

जिस देश में मनुष्य बिना किसी के बजाये भी बाजे की आवाज सुनते हैं, वह देश राजा के दण्ड से पीड़ित होता है, इसमें सन्देह नहीं है।

तोयावहानि सर्वाणि वहन्ति रुधिरं यदा ।

पष्ठे मासे समुद्रभूते संग्रामः शोणिताकुलः ॥४१॥

जिस देश में नदियों में रक्त की रीं धारा प्रवाहित होती है, उस देश में इस घटना के छठवें महीने में संग्राम होता है और पृथ्वी जल से प्लावित हो जाती है।

चिरस्थायीनि तोयानि पूर्वं यन्ति पयःक्षयम् ।

गच्छन्ति वा प्रतिस्रोतः परचक्रागमस्तदा ॥४२॥

चिरस्थायी नदियों का जल जब पूर्ण क्षय हो जाए, सूख जाए अथवा विपरीत धारा प्रवाहित होने लगे तो परशासन का आगमन होता है।

वर्धन्ते चापि शीर्यन्ते चलन्ते वा तदाश्रयात् ।

सशोणितानि दृश्यन्ते यत्र तत्र महद्वयम् ॥४३॥

जहाँ नदियाँ बढ़ती हों, विशीर्ण होती हों, अथवा चलती हों और रक्त युक्त दिखलायी पड़ती हों, वहाँ महान् भय समझना चाहिये।

चीटियों से प्राप्त सूचना

वल्मीकस्याशु जनने मनुजस्य निवेशने ।

अरण्यं विशतश्चैव तत्र विद्यान्महद्भयम् ॥५१॥

मनुष्यों के निवास स्थान में चीटियाँ जल्दी ही अपना बिल बनावें और नगरों से निकलकर जंगल में प्रवेश करें तो राष्ट्र के लिये महान् भय जानना चाहिये।

महापिपीलिकावृन्दं सन्द्रक्षभृत्यविप्लुतम् ।

तत्र तत्र च सर्वं तत्राष्ट्रभङ्गस्य चादिशेत् ॥५२॥

जहाँ-जहाँ अत्याधिक चीटियाँ एकत्रित होकर झुण्ड-के-झुण्ड बनाकर भाग रही हो वहाँ-वहाँ सर्वत्र राष्ट्र भंग का निर्देश समझना चाहिये।

महापिपीलिकाराशिर्विस्फुरन्तो विपद्यते ।

उत्थानुत्तिष्ठते यत्र तत्र विद्यान्महद्भयम् ॥५३॥

जहाँ अत्याधिक चीटियों का समृद्ध विरक्षरित काँपते हुए मृत्यु को प्राप्त हो और उत्थक्षत-विक्षत-यायल होकर रिथत हो, वहाँ महान् भय होता है।



भन्वन्तर की प्रतिमा में उत्पात हो तो वैद्य को अत्यन्त भयंकर उत्पात होता है और यह महीने तक मनुष्यों को विकार और रोग उत्पन्न होते हैं।

जामदग्ने यदा रामे विकारः कश्चिदीर्थते ।

तापसांश्च तपाद्यांश्च त्रिपक्षेण जिधांसति ॥78॥

परथुराम या रामचन्द्र की प्रतिमा में विकार दिखलायी पड़े तो तपस्वी और तप आरम्भ करने वालों का तीन पक्ष में विनाश होता है।

सुलसायां यदोत्पातः षण्मासां सर्पिजीविनः ।

पीड्येद् गरुडे यस्य वासुकास्तिकभक्तिषु ॥80॥

यदि सुलसा की मृत्ति में उत्पात दिखलायी पड़े तो सर्पजीवियों (सपहरों) आदि के यह महीनों तक पीड़ा होती है और गरुड़ की मृत्ति में उत्पात दिखलायी पड़े तो वासुकी में श्रद्धाभाव और भक्ति करने वालों को कष्ट होता है।

भूतेषु यः समुत्पातः सदैव परिचारिकाः ।

मासेन पीडयेत्तूर्ण निर्ग्रन्थवचनं यथा ॥81॥

भूतों की मृत्ति में उत्पात दिखलायी पड़े तो परिचारिकाओं-दासियों को सदा पीड़ा होती है। और इस उत्पात दर्शन के एक महीने तक अधिक पीड़ा रहती है, ऐसी निर्ग्रन्थ गुरुओं का वचन है।

अर्हत्सु वरुणे रुद्रे ग्रहे शुक्रे नृपे भवेत् ।

पञ्चालगुरु शुक्रे पु पावकेषु पुरोहित ॥82॥

वातेऽर्घ्नौ वसुभद्रे च विश्वकर्म प्रजापतौ ।

सर्वस्य तद्विजानीयात् वक्ष्ये सामान्यं फलम् ॥83॥

अर्हन्त प्रतिमा, वरुण प्रतिमा, रुद्रप्रतिमा, सूर्यादिग्रहों की प्रतिमाओं, शुक्रप्रतिमा, द्रोणप्रतिमा, इन्द्रप्रतिमा, अग्निपुरोहित, वायु, अग्नि, समुद्र, विश्वकर्मा, प्रजापति की प्रतिमाओं के विकार उत्पात का फल सामान्य ही अवगत करना चाहिये।

चन्द्रस्य वरुणस्यापि रुद्रस्य च वधूषु च ।

समाहारे यदोत्पातो राजाग्रमहिषीभयम् ॥84॥

चन्द्रमा, वरुण, शिव और पार्वती की प्रतिमाओं में उत्पात हो तो राजा की पद्मरानी को भय होता है।

कामजस्य यदा भार्या या चान्याः केवलाः स्त्रियाः ।

कुर्वन्ति किञ्चिद् विकृतं प्रधानस्त्रीषु तद्दयम् ॥85॥

यदि कामदेव की स्त्री रति की प्रतिमा अथवा अन्य किसी भी स्त्री की प्रतिमा में उत्पात दिखलायी पड़े तो प्रधान स्त्रियों में भय का संचार होता है।

एवं देशे च जातौ च कुले पाखण्डभैक्षिषु ।

तज्जातिप्रतिरूपेण स्वैः स्वैर्देवैः शुभं वदेत् ॥86॥

इस प्रकार जाति, देश, कुल और धर्म की उपासना आदि के अनुसार अपने-अपने आराध्य देव की प्रतिमा के विकार उत्पात से अपना-अपना शुभाशुभ फल ज्ञात करना चाहिये।

ज्योतिष्क विमानों से प्राप्त सूचनायें

उद्गच्छमानः सविता पूर्वतो विकृतो यदा ।

स्थावरस्य विनाशाय पृष्ठतो यायिनाशनः ॥87॥

यदि उदय होता हुआ सूर्य पूर्व दिशा में सम्मुख विकृत उत्पात युक्त दिखलायी पड़े तो स्थावर निवासी राजा को और पीछे की ओर विकृत दिखलायी पड़े तो यारी आक्रमक राजा के विनाश का सूचक होता है।

हेमवर्णः सुतोयाय मधुवर्णो भयङ्करः ।

शुक्ले च सूर्यवर्णोऽस्मिन् सुभिक्षं क्षेममेव च ॥88॥

यदि उदयकालीन सूर्य स्वर्ण वर्ण का हो तो जल की वर्षा, मधुवर्ण का हो तो भयप्रद और शुक्लवर्ण का हो तो सुभिक्ष और कल्याण को सूचना देता है।

हेमन्ते शिशिरे रक्तः पीते ग्रीष्मवसन्तयोः ।

वर्षासु शरदि शुक्लो विपरीतो भयङ्करः ॥89॥

हेमन्त और शिशिर ऋतु में लालवर्ण, ग्रीष्म और वसन्त ऋतु में पीत एवं वर्षा और शरद में शुक्लवर्ण का सूर्य शुभप्रद है, इन वर्णों से विपरीत वर्ण हो तो भयप्रद है।

दक्षिणे चन्द्रशृङ्गे तु यदा तिष्ठति भार्गवः ।

अभ्युदगतं तदा राजा वलं हन्यात् सपार्थिवः ॥90॥

यदि चन्द्रमा के उदयकाल में चन्द्रमा के दक्षिण शृंग पर शुक्र हो तो ससैन्य राजा का विनाश होता है।

चन्द्रशृङ्गे यदा भौमो विकृतस्तिष्ठतेराम् ।

भृंशं प्रजा विपद्यन्ते कुरवः पार्थिवाश्चलाः ॥१९ १ ॥

यदि चन्द्र शृंग पर विकृत मंगल रिथत हो तो प्रजा को अत्यन्त कष्ट होता है और पुरोहित एवं राजा चंचल हो जाते हैं।

शैनैश्चरो यदा सौम्यशृङ्गे पर्युपतिष्ठति ।

तदा वृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं प्रकरोति च ॥१९ २ ॥

यदि शृंग पर शैनैश्चर हो तो वर्षा का भय होता है और भयंकर दुर्भिक्ष होता है।

भिनति सोमं मध्येन ग्रहेष्वन्यतमो यदा ।

तदा राजभयं विद्यात् प्रजाक्षोभं च दारुणम् ॥१९ ३ ॥

जब कोई भी ग्रह चन्द्रमा के भय से भेदन करता है तो राजभय होता है और प्रजा को दारूण क्षोभ होता है।

राहुणा गृह्यते चन्द्रो यस्य नक्षत्रजन्मनि ।

रोगं मृत्युभयं वाऽपि तस्य कुर्यान्न संशयः ॥१९ ४ ॥

(चतुर्दश अध्याय)

जिस व्यक्ति के जन्म नक्षत्र पर राहु चन्द्रमा का ग्रहण करे-चन्द्रग्रहण हो तो रोग और मृत्युभय निसन्देह होता है।

कूरग्रह्युतश्चन्द्रो गृह्यते दृश्यतेऽपि वा।

यदा क्षुभ्यन्ति सामन्ता राजा राष्ट्रं च पीडयते ॥१९ ५ ॥

कूरग्रह युक्त चन्द्रमा राहु के द्वारा ग्रहीत या दृष्ट हो तो राजा और सामन्त क्षुध्य होते हैं और राष्ट्र को पीड़ा होती है।

लिखेत् सोमः शृङ्गेन भौमं शुक्रं गुरुं यथा ।

शैनैश्चरं चाधिकृतं षड्भयानि तदा दिशेत् ॥१९ ६ ॥

चन्द्र शृंग के द्वारा मंगल, शुक्र और गुरु का स्पर्श होता हो तथा शैनैश्चर आधीन किया जा रहा हो तो छः प्रकार के भय होते हैं।

यदा वृहस्पतिः शुक्रं भिद्येदथ विशेषतः ।

पुरोहितास्तदाऽमात्याः प्राप्नुवन्ति महद्भयम् ॥१९ ७ ॥

यदि वृहस्पति गुरु, शुक्र का भेदन करे तो विशेष रूप से पुरोहित और मन्त्रा महान् भय को प्राप्त होते हैं।

ग्रहाः परस्परं यत्र भिन्दन्ति प्रविशन्ति वा ।

तत्र शस्त्रवाणिज्यानि विद्यादर्थविपर्ययम् ॥१९ ८ ॥

यदि ग्रह परस्पर में भेदन करे अथवा प्रवेश को प्राप्त हो तो शस्त्र का अर्थ-विपर्यय विपरीत हो जाता है अर्थात् वहाँ युद्ध होते हैं।

स्वतो गृहमन्यं श्वेतं प्रविशते लिखेत् तदा ।

ब्राह्मणानां मिथो भेदं मिथः पीडां विनिर्दिशेत् ॥१९ ९ ॥

यदि श्वेत वर्ण का ग्रह-चन्द्रमा, शुक्र श्वेत वर्ण के ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करे तो ब्राह्मणों में परस्पर मतभेद होता है तथा परस्पर में पीड़ा को भी प्राप्त होते हैं।

एवं शेषेषु वर्णेषु स्वर्णेश्चारयेद् ग्रहः ।

वर्णतः स्वभयानि स्युस्तद्युतान्युपलक्षयेत् ॥१००॥

इसी प्रकार रक्तवर्ण के ग्रह रक्तवर्ण के ग्रहों का स्पर्श करे तो क्षत्रियों को, पीतवर्ण के ग्रह पीतवर्ण के ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करे तो वैश्यों को एवं कृष्ण वर्ण के ग्रह कृष्ण वर्ण के ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करे तो शूद्रों को भय, पीड़ा या उनमें परस्पर मतभेद होता है। अर्थात् शास्त्र में सूर्य को रक्तवर्ण, चन्द्रमा को श्वेतवर्ण, मंगल को रक्तवर्ण, बुध को श्वामवर्ण, गुरु को पीतवर्ण, शुक्र को श्याम गौर वर्ण, शनि को कृष्णवर्ण, राहु को कृष्णवर्ण, और केतु को कृष्णवर्ण माना गया है।

श्वेतो ग्रहो यदा पीतो रक्तकृष्णोऽथवा भवेत् ।

सर्वर्णविजयं कुर्यात् यथास्यं वर्णशङ्करम् ॥१०१॥

यदि श्वेत ग्रह पीत, रक्त अथवा कृष्ण हो तो जाति के वर्णानुसार विजय प्राप्त कराता है अर्थात् रक्त होने पर क्षत्रियों की, पीत होने पर वैश्यों की और कृष्णवर्ण होने पर शूद्रों की विजय होती है। मिथ्रितवर्ण होने से वर्णशंकरों की विजय होती है।

उत्पाता विविधा ये तु ग्रहाऽधाताश्च दारुणाः ।

उत्तराः सर्वभूतानां दक्षिणा मृगपक्षिणाम् ॥१०२॥

अनेक प्रकार के उत्पात होते हैं, इनमें ग्रहघात-ग्रहयुद्ध उत्पात अत्यन्त दाहण हैं। उत्तर दिशा का ग्रहघात समस्त प्राणियों को कष्टप्रद होता है और दक्षिण का ग्रहघात केवल पशु-पक्षियों को कष्ट देता है।

धूमकेतुहतं मार्ग शुक्रश्चरति वै यदा ।

तदा तु सप्तवर्षाणि महान्तमनयं वदेत् ॥1 17॥

यदि शुक्र धूमकेतु द्वारा आक्रान्त मार्ग में गमन करें तो सात वर्षों तक महान् अन्याय अकल्याण होता रहता है।

गुरुणा प्रहतं मार्ग यदा भौमः प्रपद्यते ।

भयं सार्वजनिकं करोति बहुधा नृणाम् ॥1 18॥

यदि बृहस्पति के द्वारा प्रताङ्गित मार्ग में मंगल गमन करे तो सार्वजनिक भय होता है तथा अधिकतर मनुष्यों को भय होता है।

भौमेनापि हतं मार्ग यदा सौरिः प्रपद्यते ।

तदाऽपि शूद्रचौराणमनयं कुरुते नृणाम् ॥1 19॥

मंगल के द्वारा प्रताङ्गितमार्ग में शनैश्चर गमन करे तो शूद्र और चोरों का अकल्याण होता है।

सौरेण तु हतं मार्ग वाचस्पतिः प्रपद्यते ।

भयं सर्वजनानां तु करोति बहुधा तदा ॥1 20॥

यदि शनैश्चर के द्वारा प्रताङ्गित मार्ग में बृहस्पति गमन करे तो सभी मनुष्यों को भय होता है।

शुक्लप्रतिपदि चन्द्रे समं भवति मण्डलम् ।

भयङ्गर तदा तस्य नृपस्याथ न संशयः ॥1 32॥

यदि शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्रमा के दोनों शृंग समान दिखलायी पड़े-समान मण्डल हो तो निस्सन्देह राजा के लिये वह समय भय करने वाला होता है।

समाभ्यां यदि शृङ्गाभ्यां यदा दृश्येत चन्द्रमाः ।

धान्यं भवेत् तदा न्यूनं मन्दवृष्टि विनिर्दिशेत् ॥1 33॥

यदि इसी दिन दोनों शृंग समान दिखलायी पड़े तो अन्न की उपज कम होती

है और वृष्टि भी कम होती है। यहाँ विशेषता यह है कि आपाङ् शुक्ला प्रतिपदा के दिन चन्द्रमा के शृंगों का अवलोकन करना चाहिय।

वामशृङ्गं यदा वा स्यादुन्नतं दृश्यते भृशम् ।

तदा सृजति लोकस्य दारूणत्वं न संशयः ॥1 34॥

यदि चन्द्रमा का बाँया शृंग उन्नत मालूम हो तो लोक में दारूण भय का संचार होता है, इसमें संशय नहीं है।

ऊर्ध्वस्थितं नृणां पापं तिर्यक् स्थं राजमन्त्रिणाम् ।

अधोगतं च वसुधां सर्वा हन्यादसंशयम् ॥1 35॥

ऊर्ध्वस्थित चन्द्रमा मनुष्यों के पाप को, तिर्यक् स्थ राजा और मन्त्री के पाप को, अधोगत समस्त पृथ्वी के पाप का निस्सन्देह विनाश करता है।

शस्त्रं रक्ते भयं पीते धूमे दुर्भिक्षविद्रवे ।

चन्द्रं तदोदिते ज्ञेयं भद्रबाहुवचो यथा ॥1 36॥

चन्द्रमा यदि समवर्ण का उदित हो तो शरव का भय, पीतवर्ण का हो तो भय और धूम्रवर्ण होने पर दुर्भिक्षकारक होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है।

दक्षिणात्परतो दृष्टं चोरदूतं भयङ्गरम् ।

अपरे तोयजीवानां वायव्ये हन्ति वै गदम् ॥1 37॥

यदि दक्षिण की ओर शृंग या रक्तवर्णादि दिखलायी पड़ें तो चोर और दृत को भवंकर होता है, पूर्व की ओर दिखलायी पड़े तो जलजन्तुओं को ओर वायव्यदिशा की ओर दिखलायी पड़े तो रोग का विनाश होता है।

कृत्तिकासु यदोत्पातो दीप्तायां दिशि दृश्यते ।

आग्नेयीं वा समाश्रित्य त्रिपक्षादर्गिन्तो भयम् ॥1 73॥

यदि पूर्व दिशा में कृत्ति का नक्षत्र में उत्पात दिखलायी पड़े अथवा आग्नेय कोण में उत्पात दिखलायी पड़े तो तीन पक्ष डेढ़ महीने में अग्नि का भय होता है।

रोहिण्यां तु यदा घोषो निर्वातो यदि दृश्यते ।

सर्वाः प्रजाः प्रपीड्यन्ते षष्मासात्परतस्तदा ॥1 74॥

यदि रोहिणी नक्षत्र में बिना वायु के शब्द सुनायी पड़े तो इस उत्पात के एँ:

महीने पश्चात् सारी प्रजा को पीड़ा होती है। उल्कापातः सनिर्धातः सवातो यदि दृश्यते । रोहिण्यां पञ्चमासेन कुर्याद् धोरं महद्यम् ॥175॥

यदि रोहिणी नक्षत्र में घर्षण और वायु सहित उल्कापात हो तो पाँच महीने में धोर भय होता है।

पितामहर्षयः सर्वे सोमं च क्षतसंयुतम् ।  
त्रैमासिक विजानीयादुत्पातं ब्राह्मणेषु वै ॥60॥

पिता, महर्षि तथा चन्द्रमायदि क्षत-विक्षत दिखलायी पड़े तो निश्चय से ब्राह्मणों में त्रैमासिक उत्पात होता है।

यदा चन्द्रे वरुणे वोत्पातः कश्चिदुदीर्यते ।  
मारकः सिन्धुसौवीरसुराष्ट्रवत्सभूमिषु ॥64॥  
भोजनेषु भयं विद्यात् पूर्वे च म्रियते नृपः ।  
पञ्चमासात् परं विद्याद् भयं धोरमुपस्थितम् ॥65॥

यदि चन्द्रमा या वरुण में कोई उत्पात दिखलायी पड़े तो सिन्धु देश, सौवीर देश, सौराष्ट्र-गुजरात और वत्सभूमि में मरण होता है। भोजन सामग्री में भय रहता है और राजा का मरण पूर्व में ही हो जाता है। पाँच महीने के उपरान्त वहाँ धोर भय का संचार होता है अर्थात् भय व्याप्त होता है।

हाथी, धोड़ादि से प्राप्त सूचनाये  
ऊर्ध्वं वृषो यदा नर्देत् तदा स्याच्च भयझरः ।  
ककुदं चलते वापि तदाऽपि स भयझरः ॥139॥

यदि बैल-साँड ऊपर को मुंह कर गर्जना करे तो अत्यन्त भयंकर होता है और वह अपने कुकुद कुब्ब को चंचल करे तो भी भयंकर समझना चाहिये।

क्षीयते वा म्रियते वा पञ्चमासात् पर नृपः ।  
गजस्यारोहणे यस्य यदा दन्तः प्रभियते ॥147॥

जब हाथी पर सवारी करते समय, हाथी के दाँत टूट जायें तो सवारी करने वाला राजा पाँच महीने के उपरान्त क्षय-मरण को प्राप्त हो जाता है।

दक्षिणे राजपीडा स्यात्सेनायास्तु वधं वदेत् ।  
मूलभङ्गस्तु यातारं करिकानं नृपं वदेत् ॥148॥

मध्यमंसे गजाध्यक्षमग्रजे स पुरोहितम् ।

विडालनकु लोलू ककाकक इसमप्रभाः ॥149॥

यदा भङ्गे भयत्येषां तदा व्रूयादसत् फलम् ।

शिरो नासग्रकण्ठेन सानुस्वारं निशंसनैः ॥150॥

भक्षितं सञ्चितं यद्य न तद् ग्राह्यन्तु वाजिनाम् ।

नाभ्यङ्गतो महोरस्कः कण्ठे वृत्तो यदेरितः ॥151॥

पाश्वे तदा भयं व्रूयात् प्रजानामशुभंकरम् ।

अन्योन्यं समुद्रीक्षन्ते हेष्यस्थानगताह्या ॥152॥

यदि दाहिना दाँत टूटे तो राजपीडा और सेनाका वध तथा मूल से दाँतों का भंग होना गमन करने वाले राजाओं के लिये खरोंच और भय देने वाला है।

मध्य से टूटने पर गजाध्यक्ष और पुरोहित को भय होता है।

विडाल, नकुल, उलूक, काक और बगुला दन्त का भंग हो तो असत् फल होता है।

घोड़ों के सिर, नासग्र भाग और कंठ के द्वारा सानुस्वार शब्द होने से संचित भोजन ग्राह्य नहीं होता।

जब छाती तान कर घोड़ा नाभि से कण्ठ तक अकड़ता हुआ शब्द करे तब वह समीपरथ प्रजा को अशुभकारी और भयप्रद होता है।

यदि घोड़े हींसते हुए आपस में देखे तो प्रजा को भय होता है।

शयनासने परीक्षा ग्राममारी वदेत् ततः ।

सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां यदा सेवामुखा ह्याः ॥153॥

यदि सन्ध्याकाल में घोड़े सेना के सम्मुख हींसते हों अथवा शयन और आसन की परीक्षा करके अशुभ होते हों तो ग्राममारी का निर्देश करना चाहिये।

त्रासयन्तो विभषन्तो धोरात् पादसमुद्धृताः ।

दिवसं यदि वा रात्रं हेषप्ति सहसा ह्याः ॥154॥

यदि घोड़े पैरों से मिट्टी उखाड़ते हुए डराते हों या स्वयं डरकर छिप रहे हों तो भय समझना चाहिये। दिन अथवा रात्रि में घोड़ों का अकस्मात् हींसना भी

भय का निर्देशक है।

सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां तदा विद्यात् पराजयम् ।

उन्मुखा रुदन्तो वा दीनं दीनं समन्ततः ॥ १५५ ॥

यदि सन्ध्याकाल में घोड़े ऊपर को मुँह किये हुए रोते हों या दीन होकर चारों ओर भ्रमण करते हों तो पराजय समझना चाहिये ।

हया यत्र तदोत्पातं निर्दिशेद्राजमृत्यवे ।

विच्छिद्यमाना हेषन्ते यदा रुक्षस्वरं हया ॥ १५६ ॥

जब घोड़े रुक्ष स्वर और टूटी-फूटी आवाज में हींसते हों तो वे अपने इस उत्पात द्वारा राजा की मृत्यु की सूचना देते हैं।

खरवद् भीमनादेन तदा विद्यात् पराजयम् ।

उत्तिष्ठन्ति निषीदन्ति विश्वसन्ति भ्रमन्ति च ॥ १५७ ॥

जब घोड़े गधों के समान तीव्र स्वर में रेकें और उठें, बैठें तथा भ्रमण करें तो पराजय समझना चाहिये ।

रोगात्ता इव हेषन्ते तदा विद्यात् पराजयम् ।

ऊर्ध्वमुखा विलोकन्ति विद्याज्जनपदे भयम् ॥ १५८ ॥

यदि रोग से पीड़ित हुए के समान हींसते हों तो पराजय समझना चाहिये और ऊर्ध्वमुख रेकें तो जनपद को भय होता है।

शांता प्रहृष्टा धर्मात्ता विचरन्ति यदा हया: ।

बालानां वीक्ष्यमाणास्ते न ते ग्राह्या विपश्चितैः ॥ १५९ ॥

जब घोड़े शान्त, प्रसन्न और काम से पीड़ित होकर विचरण करें और स्त्रियों के द्वारा देखे जाते हों तो विद्वानों को उनका शुभाशुभत्व नहीं लेना चाहिये।

मूत्रं पूरीषं वहुशो विलुप्ताङ्गा प्रकुर्वतः ।

हेषन्ते दीननिद्रात्तास्तदा कुर्वन्ति तेजयम् ॥ १६० ॥

यदि घोड़े विलुप्तांग होकर अधिक मूत्र और लीट करें और निद्रा से पीड़ित होकर हींसें तो जय की सूचना देते हैं।

स्तम्भन्तोऽथ लांगूलं हेषन्तो दुर्मना हयाः ।

मुहुर्मुहुश्च जृभन्ते तदा शस्त्रभयं वदेत् ॥ १६१ ॥

पूछ को स्तम्भित करते हुए खिन्न होकर घोड़े हींसें और बार-बार जंभाई लें तो शस्त्रभय कहना चाहिये।

यदा विरुद्धं हेषन्ते स्वल्पं विकृतिकारणम् ।

तदापसर्गं व्याधिर्वा सधो भवति रात्रिजः ॥ १६२ ॥

यदि घोड़े विकृत कारणों के होने पर विपरीत हींसते हों तो रात्रि में उत्पन्न होने वाली व्याधि या उपसर्ग शीघ्र ही होते हैं।

भूम्यां ग्रसित्वा ग्रासं तु हेषन्ते प्राङ्मुखा यदा ।

अश्वारोधाश्च बद्धाश्च तदा क्लिश्यति क्षुद्रद्ययम् ॥ १६३ ॥

पृथ्वी में से एकाध और वास खाकर यदि पूर्व की ओर मुखकर घोड़े हींसे तो क्षुधा के क्लेश और भय की सूचना देते हैं।

परिचक्रं प्रयातं च देशभङ्गं च निर्दिशेत् ॥ १६४ ॥

यदि घोड़ों के शरीर, पूँछ और कसबार जलने लगे तो परशासन का आगमन और देश भंग की सूचना समझनी चाहिये।

यदा बालां प्रक्षारन्ते पुच्छं चटपटायते ।

वाजिनः सस्फुलिङ्गा वा तदा विद्यान्महद्ययम् ॥ १६५ ॥

यदि अकारण घोड़ों के बाल टूट कर गिरने लगे, पूँछ चटचट करने लगे और उनके शरीर से स्फुलिंग निकलने लगे तो अत्यधिक भय समझना चाहिये।

हेषन्ते तु तदा राज्ञः पूर्वाह्ने नागवाजिनः ।

तदा सूर्यग्रहं विद्यादपराह्ने तु चन्द्रजम् ॥ १६६ ॥

यदि पूर्वाह्न में राजा के हाथी, घोड़े हींसने लगे तो सूर्यग्रह और पराह्न में हींसने लगें तो चन्द्रग्रह समझना चाहिये।

शुष्कं काष्ठं तृणं वाऽपि यदा संदंशते हयः ।

हेषन्ते सूर्यमुद्दीक्ष्य तदाऽग्नि भयमोदिशेत् ॥ १६७ ॥

सूखे काठ, तिनके आदि खाते हुए घोड़े सूर्य की ओर मुँहकर हींसने लगें तो अग्निभय समझना चाहिये।

यदा शेवालजले वाऽपि मग्नं कृत्वा मुखं हयाः।

हेषन्ते विकृता यन्न कदाप्यग्निभयं भवेत् ॥168॥

जब घोड़े शेवाल युक्त जल में मुँह डुबाकर हींसें तो उस समय भी अग्निभय समझना चाहिये ।

उल्कासमाना हेषन्ते संदृश्य दशनान् हयाः ।

संग्रामे विजयं क्षेमं भर्तुः पुष्टिं विनिर्दिशेत् ॥169॥

जब उल्का के समान दाँत निकालते हुए घोड़े हींसें तो स्वामी के लिये संग्राम में विजय, क्षेम और पुष्टिका निर्देश करते हैं ।

प्रसारयित्वा ग्रीवां च स्तम्भयित्वा च वाजिनाम् ।

हेषन्ते विजयं ब्रूयात्संग्रामे नात्र संशयः ॥170॥

गर्दन को जरा-सा झुकाकर-टेड़ी करके रिथर रूप से खड़े होकर जब घोड़े हींसे तो संग्राम में निस्सन्देह विजय की प्राप्ति होती है ।

### विभिन्न उत्पातों की सूचनार्थ

राजोपकरणे भग्ने चलिते पतितेऽपि वा ।

क्रव्यादसेवने चैव राजपीडां समादिशेत् ॥55॥

राजा के उपकरण-छत्र, चमर, मुकुट आदि के भग्न होने, चलित होने या गिरने से तथा मांसाहारी के द्वारा सेवा करने से राजा पीड़ा को प्राप्त होता है ।

वाजिवारणयानानां मरणे छेदने द्रुते ।

परचक्रागमात् विन्नादुत्पातज्ञो जितेन्द्रियः ॥56॥

घोड़ा, हाथी आदि सवारियों के अचानक मरण, धायल या छेदन होने से जितेन्द्रिय उत्पात शास्त्र के जानने वाले को परशासन का आगमन जानना चाहिये ।

क्षत्रियाः पुष्टिपतेऽश्वत्थे ब्राह्मणाश्चाप्युदुम्बरे ।

वैश्याः प्लक्षेऽथ पीडयन्ते न्यग्रोधे शूद्रदस्यवः ॥57॥

असमय में पीपल के पेड़ के पुष्टित होने से ब्राह्मणों को, उदुम्बर के वृक्ष के पुष्टित होने से, क्षत्रियों को पाकर वृक्ष के पुष्टित होने से वैश्यों को, और वट वृक्ष के पुष्टित होने से शूद्रों को पीड़ा होती है ।

इन्द्रायुधं निशश्वेतं विप्रान् रक्तं च क्षत्रियान् ।

निहन्ति पीतकं वैश्यान् कृष्णं शूद्रं भयङ्करम् ॥58॥

रात्रि में इन्द्रधनुष यदि श्वेत रंग का है तो ब्राह्मण को, लाल रंग का हो तो क्षत्रियों को, पीले रंग का हो तो वैश्यों को और काले रंग का शूद्रों को भयदायक होता है ।

भज्यते नश्यते तत्तु कम्पते शीर्यते जलम् ।

चतुर्मासं परं राजा प्रियते भज्यते तदा ॥59॥

यदि इन्द्रधनुष भग्न होता हो, नष्ट होता हो, काँपता हो और जल की वर्षा करता हो तो राजा चार महीने के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त होता है, या आघात को प्राप्त होता है ।

रुक्षा विवर्णा विकृता यदा सन्ध्या भयानका ।

मारीं कुर्युः सुविकृतां पक्षत्रिपक्षकं भयम् ॥61॥

यदि सन्ध्या रुक्ष, विकृत और विवर्ण हो तो नाना प्रकार के विकार और मरण को करने वाली होती है तथा एक पक्ष या तीन पक्ष में भय की प्राप्ति भी होती है ।

यदिं वैश्रवणे कश्चिदुत्पातं समुदीरयेत् ।

राजनश्च सचिवाश्च पञ्चमासान् स पीडयेत् ॥62॥

यदि गमन समय में राजा को युद्ध के लिये प्रस्थान करते समय कोई उत्पात दिखलायी पड़े तो राजा और मन्त्री को पाँच महीने तक कष्ट होता है ।

यदोत्पातोऽयमेकश्चिद् दृश्यते विकृतः क्वचित् ।

तदा व्याधिश्च मारी च चतुर्मासात् परं भवेत् ॥63॥

यदि कहीं कोई विकृत उत्पात दिखलायी पड़े तो इस उत्पात दर्शन के चार महीने के उपरान्त व्याधि और मरण होता है ।

वीरस्थाने शमशाने च यद्युत्पातः समीर्यते ।

चतुर्मासान् क्षुधामारी पीडयन्ते च यतस्ततः ॥73॥

वीरभूमि या शमशान भूमि में यदि उत्पात दिखाई पड़े तो चार महीने तक

भविष्य-फल-विज्ञान

क्षुधामारी-भुखमरी से इधर-उधर की समस्त जनता पीड़ित होती है।

पञ्चविंशतिरात्रेण कबन्धं यदि दृश्यते ।

सन्ध्यायां भयमाख्याति महापुरुषविद्रवम् ॥79॥

यदि सन्ध्या काल में कबन्ध धड़ दिखलायी पड़े तो पच्चीस रात्रियों का भय होता है तथा किसी महापुरुष का विद्रवण-विनाश और पलायन होता है।

करङ्गं शोणितं मांसं विद्युतश्च भयं बदेत् ।

दुर्भिक्षं जनमारि च शीघ्रमाख्यात्युपस्थितम् ॥103॥

अस्थिपंजर, रक्तमांस और बिजली का उत्पात भय की सूचना देता है तथा जहां यह उत्पात हो वहाँ दुर्भिक्ष और जनमारी शीघ्र ही फैल जाती है।

शदेन महत्ता भूमिर्यदा रसति कम्पते ।

सेनापतिरमात्यश्च राजा राष्ट्रं च पीड़यते ॥104॥

यदि अकारण भयंकर शब्द के द्वारा जब पृथ्वी काँपने लगे तथा सर्वत्र शोरगुल व्याप्त हो जाये तो सेनापति, मन्त्री, राजा और राष्ट्र को पीड़ा होती है।

फले फलं यदा किञ्चत् पुष्पे पुष्पं व दृश्यते ।

गर्भः पतन्ति नारीणां युवराजा च वध्यते ॥105॥

यदि फल में फल और पुष्प में पुष्प दिखलायी पड़े तो स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं तथा युवराज का वध होता है।

नर्तनं जल्पनं हासमुत्कीलनिमीलने ।

देवाः यत्र प्रकुर्वन्ति तत्र विद्यात् महद्भयम् ॥106॥

यहाँ देवों द्वारा नाचना, बोलना, हँसना, कीलना और पलक झपकना आदि क्रियायें की जायें, वहाँ अत्यन्त भय होता है।

पिशाचा यत्र दृश्यन्ते देशेषु नगरेषु वा ।

अन्यराजा भवेत्तत्र प्रजानां च महद्भयम् ॥107॥

जहाँ देश और नगरों में पिशाच दिखलायी पड़े वहाँ अन्य व्यक्ति राजा होता है तथा प्रजा को अत्यन्त भय होता है।

भूमिर्यत्र नभो याति विंशति वसुधाजलम् ।

दृश्यन्ते वाऽम्बरे देवास्तदा राजवधो ध्रुवम् ॥108॥

भविष्य-फल-विज्ञान

जहाँ पृथ्वी आकाश की ओर जाती हुई मालूम हो अथवा पाताल में प्रविष्ट होती हुई दिखलायी पड़े और आकाश में देव दिखलायी पड़े तो वहाँ राजा का वध निश्चयतः होता है।

धूमज्वालां रजो भस्म यदा मुञ्चन्ति देवताः।

तदा तु प्रियते राजा मूलतस्तु जनक्षयः ॥109॥

यदि देव धूम, ज्वाला, धूलि और भस्म-राख की वर्षा करें तो राजा का मरण होता है तथा मूलरूप से मनुष्यों का भी विनाश होता है।

अस्थिमांसैः पश्नूनां च भस्मनां निचयैरपि ।

जनक्षयाः प्रभूतास्तु विकृते वा नृपवधः ॥110॥

यदि पशुओं की हड्डियाँ और माँस तथा भर्म का समूह आकाश से बरसे तो अधिक मनुष्यों का विनाश होता है। अथवा उक्त वस्तुओं में विकार-उत्पात होने पर राजा का वध होता है।

विकृताकृति-संस्थाना जायते यत्र मानवाः।

तत्र राजवधो ज्ञेयो विकृतेन सुखेन वा ॥111॥

जहाँ मनुष्य विकृत आकार वाले और विचित्र दिखलायी पड़े वहाँ राजा का वध होता है अथवा विकृत दिखलायी पड़ने से सुख क्षीण होता है।

वधः सेनापते श्चापि भयं दुर्भिक्षमेव च।

अग्नेवा ह्यथवा वृष्टिस्तदा स्यानात्र संशयः ॥112॥

यदि आकाश से अग्नि की वर्षा हो तो सेनापति का वध, भय और दुर्भिक्ष आदि फल घटित होते हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

द्वारं शस्त्रगृहं वेशम् राज्ञो देवगृहं तथा ।

धूमायन्ते यदा राज्ञस्तदा मरणमादिशेत् ॥113॥

देवमन्दिर या राजा के महल के द्वार शावागार, दालान या बरामदे में धुआँ दिखलायी पड़े तो राजा का मरण होता है।

परिधार्गता कपाटं द्वारं रुधन्ति वा स्वयम् ।

पुरोरुद्धस्तदा विद्यान्नंगमानां महद्भयम् ॥114॥

यदि स्वयं ही विना किसी के बन्द किये वेढ़ा, सांकल और द्वार के किवाड़

बन्द हो जायें तो पुरोहित और वेद के व्याख्याताओं को महान् भय होता है।

यदा द्वारेण नगरं शिवा प्रविशते दिवा ।

वास्यमाना विकृता वा तदा राजवधो ध्रुवम् ॥1 1 5॥

यदि दिन में सियारिन—गीढ़ड़ी नगर के द्वार से विकृत या सिक्त होकर प्रविष्ट हो तो राजा का वथ होता है।

अन्तः पुरेषु द्वारेषु विष्णुमित्रे तथा पुरे ।

अद्वालकेऽथ हद्वेषु मधु लीनं विनाशयेत् ॥1 1 6॥

यदि सियारिन अन्तःपुर, द्वार, नगर, तीर्थ, अद्वालिका और बाजार में प्रवेश करे तो सुख का विनाश करती है।

राजदीपो निपतते भ्रश्यते ऽधः कदाचन ।

षण्मासात् पञ्चमासाद्वा नृपमन्यं निवेदयेत् ॥1 2 1॥

यदि राजा का दीपक अकारण नीचे गिर जाये तो छः महीने या पाँच महीने में अन्य राजा होने का निर्देश समझना चाहिये।

हसन्ति यत्र निर्जीवाः धावन्ति प्रवदन्ति च ।

जातमात्रस्य तु शिशोः सुमहद्भयमादिशेत् ॥1 2 2॥

जहाँ निर्जीव-जड़ पदार्थ हँसते हों, डौड़ते हों और बातें करते हों वहाँ उत्पन्न हुए समस्त बच्चों को महान् भय का निर्देश समझना चाहिए।

निर्वर्ते यदा छाया परितो वा जलाशयात् ।

प्रदृश्यते च दैत्यानां सुमहद्भय मादिशेत् ॥1 2 3॥

यदि जलाशय-तालाब, नदी आदि के चारों ओर से छाया लौटती हुई दिखलायी पड़े तो दैत्यों के महान् भय का निर्देश समझना चाहिये।

अद्वारे द्वारकरणं कृतस्य च विनाशनम् ।

हतस्य ग्रहणं वाऽपि तदा ह्युत्पातलक्षणम् ॥1 2 4॥

अद्वार में—जहाँ द्वार करने योग्य न हो वहाँ द्वार करना, किये हुए कार्य का विनाश करना और नष्ट वस्तु को ग्रहण करना उत्पात का लक्षण है।

यजनोच्छे दनं यस्य ज्वलिताङ्गमथाऽपि वा ।

स्पन्दते वास्थिरं किञ्चत् कुलहानिं तदाऽदिशेत् ॥1 2 5॥

यदि किसी के यजन-पूजा, प्रतिष्ठा, वज्ञादिका स्वयमेव उच्छेद-विनाश हो अथवा अंग प्रञ्चलित होते हों अथवा रिथर वरतु में चंचलता उत्पन्न हो जाये तो कुलहानि समझनी चाहिए।

तैवज्ञ- ज्योतिषियों, भिक्षुओं, मनीषियों और साधुओं को विभिन्न प्रकार के उत्पात होने वाले देश को शोड़कर अन्यत्र निवास करना ही श्रेष्ठ होता है।

युद्ध, कलह, वाधा, विरोध एवं शत्रुओं की वृद्धि जिस देश में निरन्तर हो उस देश का त्याग कर देना चाहिये।

विपरीता यदा छाया दृश्यते वृक्ष-वेश्मनि ।

यदा ग्रामे पुरे वाऽपि प्रधानवधमदिशेत् ॥1 2 8॥

ग्राम और नगर में जब वृक्ष और घर की छाया विपरीत-जिस समय पूर्व में छाया रहती हो, उस समय पश्चिम में और जब पश्चिम में रहती हो तब पूर्व में हो तो प्रधान का वथ होता है।

महावृक्षो यदा शाखामुत्करां मुच्यते द्रुतम् ।

भोजकस्य वधं विद्यात् सर्पाणां वधमादिशेत् ॥1 2 9॥

महावृक्ष जब अकारण ही अपनी शाखा को शीघ्र ही गिराता है तो भोजक सपेरों का वथ होता है तथा सर्पों का भी वध होता है।

पांशुवृष्टिस्तथोल्का च निर्धाताश्च सुदारुणाः ।

यदा पतन्ति युगपद् धन्ति राष्ट्रं सनायकम् ॥1 3 0॥

धूली की वर्षा, उल्कापात, भयंकर कड़क-विद्युतपात एक साथ हों तो राष्ट्रनायक का विनाश होता है।

रसाश्च विरसा यत्र नायकस्य च दूषणम् ।

तुलामानस्य हसनं राष्ट्रनाशाय तद्भवेत् ॥1 3 1॥

जब अकारण ही रस विरस-विकृत रसवाले हों तो नायक में दोष लगता है तथा तराजू के हंसने से राष्ट्र का नाश होता है।

विवदत्सु च लिङ्गेषु यानेषु प्रवदत्सु च

वाहनेषु व हस्तेषु विद्याद् भयमुपस्थितम् ॥1 3 8॥

शिवलिङ्गों में विवाद होने पर, सवारियों में वार्तालाप होने पर और वाहनों

में प्रसन्नता दिखलायी पड़ने पर महान् भय होता है।  
व्याधयः प्रवला यत्र माल्यगंध न वायते ॥

आहूतिपूर्णकुम्भाश्च विनश्यन्ति भयं वदेत् ॥ 140 ॥

जहाँ व्याधियाँ प्रबल हों, माल्यगन्ध न मालूम पड़ती हों और आहूति, पूर्ण कलश-मंगल-कलश विनाश को प्राप्त होते हों, वहाँ भय होता है।

नववस्त्रं प्रसङ्गेन ज्वलते मधुरा गिरा ।

अरुन्धती न पश्येत् स्वदेहं यदि दर्पणे ॥ 141 ॥

यदि नवीन वरत्र अकारण जल जाय, मधुर वचन मुँह से निकलें, अरुन्धती तारा दिखलायी न पड़े तो महान् भय अवगत करना चाहिये अर्थात् मृत्यु की सूचना समझनी चाहिये ।

न पश्यति स्वकार्याणि परकार्यविशारदः ।

मैथुने यो निरततष्ठच न च सेवति मैथुनम् ॥ 142 ॥

न मित्रिचित्तो भूतेषु स्त्री वृद्धं हिसते शिशुम् ।

विपरीतश्च सर्वत्र सर्वदा स भयावहः ॥ 143 ॥

जो परकार्य में तो रत हो, पर स्व कार्य का सेवन न करता हो, मैथुन में संलग्न रहने पर भी मैथुन का सेवन न करता हो, मित्र में जिसका चित्त आसक्त नहीं हो और जो स्त्री, वृद्ध और शिशुओं की हिंसा करता हो तथा स्वभाव और प्रकृति से विपरीत जितने भी कार्य हैं, सब भयप्रद हैं।

अभीक्षणं चापि सुप्तस्य निरुत्साहाविलम्बिनः ।

अलक्ष्मीपूर्णचित्तस्य प्राप्नोति स महद्भयम् ॥ 144 ॥

जो निरन्तर सोने वाला है, निरुत्साही है और धन से रहित है, उसे महान् भय की प्राप्ति होती है।

क्रव्यादाः शकुना यत्र वहुशो विकृतस्वनाः ।

तत्रेन्द्रियार्थाः विगुणाः श्रिया हीनाश्च मानवाः ॥ 145 ॥

जहाँ मांसभक्षी पक्षी अत्यधिक विकृत स्वर वाले हों वहाँ मनुष्य इन्द्रियों के अर्थों को ग्रहण करने की शक्ति से हीन और लक्ष्मी से रहित होते हैं। अर्थात्

वहाँ अज्ञानता और निर्धनता निवास करती है।

निपतति दुमशिष्ठन्नो स्वप्नेष्व भयलक्षणम् ।

रत्नानि यस्य नश्यन्ति बहुशः प्रज्वलन्ति वा ॥ 146 ॥

जो व्यक्ति स्वप्न में निर्भय होकर कटे हुए पेड़ को गिरते देखता है, उसके रल नष्ट हो जाते हैं अथवा बहुमूल्य पदार्थ अग्नि लगाने से जल जाते हैं।

श्रमणा ब्राह्मणा वृद्धा न पूज्यन्ते यथा पुरा ।

सप्तमासात् परं यत्र भयमाख्यात्युपस्थितम् ॥ 171 ॥

जिस नगर में श्रमण, ब्राह्मण और वृद्धों की पूजा नहीं की जाती है उस नगर में सात महीने के उपरान्त भय उपस्थित होता है।

अनाहतानि तूर्याणि नर्दन्ति विकृतं यदा ।

षष्ठे मासे नृपो वध्यः भयानि च तदाऽऽदिशेत् ॥ 172 ॥

जब बाजे बिना बजाये ही विकृत घोर शब्द करें तो छठवें महीने में राजा का वध होता है और वहाँ भय भी होता है।

वाहनं महिपीं पुत्रं वलं सेनापतिं पुरम् ।

पुरोहितं नृपं वित्तं धन्त्युत्पाताः समुच्छिताः ॥ 177 ॥

उत्पन्न हुए विभिन्न प्रकार के उत्पात सवारी, सेना, रानी, पुत्र, सेनापति, पुरोहित, अमात्य, राजा और धन आदि का विनाश करते हैं।

एषामन्यतरं हित्वा निर्वृतिं यान्ति ते सदा ।

परं द्वादशरात्रेण सद्यो नाशयिता पिता ॥ 178 ॥

जो व्यक्ति इन उत्पातों में से किसी भी उत्पात की अवहेलना करते हैं, वे बारह रात्रियों में ही कष्ट को प्राप्त करते हैं तथा उनके कुटुम्ब में पिता या अन्य कोई मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

यत्रोत्पातकाः न दृश्यन्ते यथाकालमुपस्थिताः ।

तेन सञ्चयदोषेण राजा देशस्य नश्यति ॥ 179 ॥

जहाँ यथा समय में उपस्थित हुए उत्पातों को नहीं देखा जाता है, वहाँ उत्पात के द्वारा संचित दोष से राजा और देश दोनों का नाश होता है।

यत्र देशो समुत्पाता दृश्यन्ते भिक्षुभिः क्वचित् ।

ततो देशादिक्रम्य ब्रजेयुरन्यतस्तदा ॥181॥

मुनियों को जिस देश में कहीं भी उत्पात दिखलायी पड़े उस देश को छोड़कर अन्य देश में चला जाना चाहिये।

संचिते सुभिक्षे देशो दिस्त्याते प्रियातिथौ ।

विहरन्ति सुखं तत्र भिक्षवो धर्मचारिणः ॥182॥

धन-धान्य से परिपूर्ण, सुभिक्ष युक्त, निरूपद्रव और अतिथि-सत्कार करने वाले देश में धर्माचरण करने वाले साधु सुखपूर्वक विहार करते हैं।

### उत्पातों की शान्ति के उपाय

एवं नक्षत्रशेषेषु यद्यत्पाताः पृथग्विधाः ।

देवतार्जनलीनं च प्रसाध्यं भिक्षुणा सदा ॥176॥

इसी प्रकार अन्य नक्षत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार का उत्पात दिखलायी पड़े तो भिक्षुओं को देव पूजा द्वारा उस उत्पात के अनिष्ट फल को दूर करना चाहिये। अर्थात् उत्पात की शान्ति पूजा-पाठ द्वारा करनी चाहिये।

देवान् प्रवजितान् विप्रांस्तस्माद्राजाऽभिपूजयेत् ।

तदा शाम्यति तत् पापं यथा साधुभिरितम् ॥180॥

उत्पात से उत्पन्न हुए दोष की शान्ति के लिये देव, दीक्षित मुनि और ब्राह्मण त्रीती व्यक्तियों की पूजा करनी चाहिये। इससे जिस पाप से उत्पात उत्पन्न होते हैं, वह मुनियों के द्वारा प्रतिपादित पाप शान्त हो जाता है। (भद्रबाहु संहिता)

### विजय सूचक शुभाशुभ लक्षण

युधिष्ठिर ने पूछा— भरतश्रेष्ठ ! विजय पाने वाली सेना के कौन-कौन से शुभ लक्षण होते हैं ? यह मैं जानना चाहता हूँ।

भीष्म जी ने कहा— भरत भूषण ! विजय पाने वाली सेना के समक्ष जो-जो शुभ लक्षण प्रकट होते हैं, उन सबका वर्णन करता हूँ, सुनो ।

दैवे पूर्वं प्रकुपिते मानुषे कालचोदिते ।

तद्विद्वांसोऽनुपश्चन्ति ज्ञानदिव्येन चक्षुषा ॥3॥

(महाभा. शान्तिपर्व-अ. 102 पृ. 4684)

प्रायश्चित्तविधिं चात्र जपहोमांश्च तद्विदः।

मङ्गलानि च कुर्वन्ति शमवन्त्यहितानि च ॥4॥

काल से प्रेरित हुए मनुष्य पर पहले दैव का कोप होता है। उसे विद्वान् पुरुष जब ज्ञानमयी दिव्य दृष्टि से देख लेते हैं, तब उसके प्रतीकार को जानने वाले वे पुरुष उसके प्रायश्चित्त का विधान—जप, होम आदि माङ्गलिक कृत्य करते हैं और उस अहितकारक दैवी उपद्रव को शान्त कर देते हैं।

उदीर्णमनसो योधा वाहनानि च भारत ।

यस्यां भवन्ति सेनायां ध्रुवं तस्यां परो जयः ॥5॥

भरतनन्दन ! जिस सेना के धोन्हा और वाहन मन में प्रसन्न एवं उत्साहयुक्त होते हैं, उसकी उत्तम विजय अवश्य होती है।

अन्वेतान् वायवो यान्ति तथैवेन्द्र धनूर्षि च ।

अनुप्लवन्तको मेघाश्च तथाऽदित्यस्य रश्मयः ॥6॥

गोमायवश्चानुकूला बलगृध्राश्च सर्वशः ।

अर्हं ये युर्यदा सेनां तदा सिद्धिरनुत्तमा ॥7॥

यदि सेना की रथयात्रा के समय सैनिकों के पीछे से मन्द-मन्द वायु प्रवाहित हो, सामने इन्द्र धनुष का उदय हो, बार-बार बादलों की छाया होती रहे और सूर्य की किरणों का भी प्रकाश फैलता रहे तथा गीढ़, गीध और कौए भी अनुकूल दिशा में आ जायें तो निश्चय ही उस सेना को परम उत्तम सिद्धि प्राप्त होती है।

प्रसन्नभाः पावकश्चोर्ध्वरश्मिः प्रदक्षिणावर्तशिखो विधूमः ।

पुण्या गन्धाश्चाहुतीनां भवन्ति जयस्यैतद् भाविनो रूपमाहुः ॥8॥

यदि बिना ध्रुएं की आग प्रञ्चलित हो, उसकी ज्वाला निर्मल हो और लपटें ऊपर की ओर उठ रही हों अथवा उस अग्नि की शिखाएँ दाहिनी ओर जाती हुई दिखायी देती हों तथा आहुतियों की पवित्र गन्ध प्रकट हो रही हो तो इन सबको भावी विजय का शुभ चिह्न बताया गया है।

गम्भीरशब्दाश्च महास्वनाश्च शङ्खाश्च भेर्यश्च नदन्ति यत्र ।

युयुत्सवश्चाप्रतीपा भवन्ति जयस्यैतद् भाविनो रूपमाहुः ॥9॥

यहाँ शङ्खों की गम्भीर ध्वनि और रणभेरी की ऊँची आवाज फैल रही हो,

युद्ध की इच्छा रखने वाले सैनिक सर्वथा अनुकूल हों तो वहाँ के लिये इसे भी भावी विजय का सूचक शुभ लक्षण कहा गया है।

**इष्टा मृगः** पृष्ठतो वामताश्चत सम्प्रस्थितानां च गमिष्यतां च।  
**जिधांसतां दक्षिणाः** सिद्धिमाहु येत्वग्रतस्ते प्रतिषेधयन्ति ॥1 0॥

सेना के प्रस्थान करते समय अथवा जाने के लिये तैयारी करते समय यदि 4 इष्ट मृग पीछे और बायें आ जाएँ को इच्छित फल प्रदान करते हैं तथा युद्ध करते समय दाहिने हो जायें तो वे सिद्धि की सूचना देते हैं किन्तु यदि सामने आ जायें तो उसकी युद्ध की यात्रा का निषेध करते हैं।

**माङ्गल्यशब्दाशकुना वदन्ति हंसाः क्रोञ्चाः शतपत्राश्च चाषाः।**  
**हृष्टा योधाः** सत्त्ववन्तो भवन्ति जयस्यैतद् भाविनो रूपमाहुः ॥1 1॥

जब हंस, क्रोञ्च, शतपत्र और नीलकण्ठ आदि पक्षी माङ्गल्य सूचक शब्द करते हों और सैनिक हर्ष तथा उत्साह से सम्पन्न दिखलायी देते हों तो यह भी भावी विजय का शुभ लक्षण बताया गया है।

**शस्त्रैर्यन्तैः कवचैः केतुभिश्च सुभानुभिर्मुखवणैश्च यूनाम्।**  
**भ्राजिष्मतिदुष्प्रतिवीक्षणीया येषां चमूस्तेऽभिभवन्ति शत्रून् ॥1 2॥**

जिनकी सेना भाँति-भाँति के शस्त्र, कवच, यन्त्र तथा ध्वजाओं से सुशोभित हो, जिनके नौजवान सैनिकों के मुख की सुन्दर प्रभामयी कान्ति से प्रकाशित होती हुई सेना की ओर शत्रुओं को देखने का भी साहस न होता हो, वे निश्चय ही शत्रु दल को परास्त कर सकते हैं।

**शुश्रूषवश्चानभिमानिनश्च परस्परं सौहुर्दमास्थिताश्च।**  
**येषां योधाः शोचमनुष्ठिताश्च जयस्यैतद् भाविनो रूपमाहुः ॥1 3॥**

जिनके योद्धा स्वामीकी सेवा में उत्साह रखने वाले, अहंकार रहित, आपस में एक-दूसरे का हित चाहने वाले तथा शौचाचारका पालन करनेवाले हों, उनकी होने वाली विजय का यही शुभ लक्षण बताया गया है।

**शब्दाः स्पर्शस्तथा गन्धा विचरन्ति मनः प्रियाः।**  
**धैर्ये चाविशते योधान् विजयस्य मुखं च तत् ॥1 4॥**

जब योद्धाओं के मन को प्रिय लगने वाले शब्द, स्पर्श और गन्ध सब ओर फैल रहे हों तथा उनके भीतर धैर्य का संचार हो रहा हो तो वह विजय का द्वार माना जाता है।

**इष्टो वामः प्रविष्टस्य दक्षिणः प्रविविक्षतः ।**

**पश्चत्संसाधयत्वर्थं पुरस्ताश्च निषेधति ॥1 5॥**

यदि कौआ युद्ध में प्रवेश करते समय दाहिने भाग में और प्रविष्ट हो जाने के बाद बायें भाग में आ जाये तो शुभ है। पीछे की ओर होने से भी वह कार्य की सिद्धि करता है; परन्तु सामने होने पर विजय में बाधा डालता है।

**सम्मृत्यं महतीं सेनां चतुरङ्गा युधिष्ठिर ।**

**साम्नैव वर्तये पूर्वं प्रयतेथास्ततो युधि ॥1 6॥**

युधिष्ठिर ! विशाल चतुरङ्गी सेना एकत्र कर लेने के बाद भी तुम्हें पहले साम नीति के द्वारा शत्रु से सन्धि करने का ही प्रयास करना चाहिए। यदि वह सफल न हो तो युद्ध के लिए प्रयत्न करना उचित है।

**प्रतिमा खण्डन से शुभाशुभं शकुनं**

**नह अंगुलीअ—बाहा—नालसा—पयं मंगिणु वकमेण फलं ।**

**सन्तुभयं देसभगं वंधण—कुलनास—दव्वक्खयं ॥4 4॥**

प्रतिमा के नख, अंगुली, बाहु, नासिका और चरण इनमें से कोई अंग खण्डित हो जाये तो शत्रु का भय, देश का विनाश, वंधनकारक, कुल का नाश और द्रव्य का क्षय, ये क्रमशः फल होते हैं।

**पयपीढ़चिण्हपरिगर—मंगे जनजाणभिच्छाहाणिकमे ।**

**छत्तसिरिवच्छसवणे लच्छी—सुह—वंधवाण खयं ॥4 5॥**

पाद पीठ चिन्ह और परिकर इनमें से किसी का भंग हो जाये तो क्रमशः स्वजन, वाहन और सेवक की हानि होते। छत्र, श्री वत्स और कान इनमें से किसी का खण्डन हो जाये तो लक्ष्मी, सुख और बन्धु का क्षय होते।

**प्रतिमा के आकार प्रकार से शुभाशुभं शकुनं-**

**वहुदुम्ख वक्कानासा हस्संगा खयंकरी य नायब्बा ।**

**नयणनासा कुनयणा अप्पमुहा भोगहाणिकरा ॥4 6॥**

यदि प्रतिमा वक्र (टेढ़ी) नाक वाली होवें तो बहुत दुःखकारक है। हस्य(छोटे) अवयव वाली होवें तो क्षय करने वाली जानना। खराब नेत्र वाली होवें तो नेत्र की विनाशकारक जानना और छोटे मुख वाली होवें तो भोग की हानिकारक जानना।

**कटिहिणायरियहया सुयबंधवं हणइ हीणजंघा य ।**

**हीणासणरिद्धिया धणक्षया हीणकरचरणा ॥4 7 ॥**

प्रतिमा यदि कटि-हीना होवें तो आचार्य की नाशकारक है। हीन जंघा वाली होवें तो पुत्र और मित्र का क्षय करे। हीन आसन वाली होवें तो रिद्धि की विनाशकारक है। हाथ और चरण से हीन होवें तो धन का क्षय करने वाली जानना।

**उत्ताणा अथहरा वंकगीवा सदेसभंगकरा ।**

**अहोमुहाय संचिता विदेसगा हवइ नीचुच्चा ॥4 8 ॥**

प्रतिमा यदि ऊर्ध्व मुख वाली होवें तो धन की नाशकारक है, टेढ़ी गर्दन वाली होवें तो स्वदेश का विनाश करने वाली है। अधोमुख वाली होवें तो चिन्ता उत्पन्न करने वाली और ऊँचे-नीचे मुख वाली होवें तो विदेशगमन कराने वाली जानना।

**विसमासण—वाहिकरा रोरकरडण्णायदव्यानिष्पन्ना ।**

**हीणाहियंगपडिमा सपक्षयपरपक्षकट्टकरा ॥4 9 ॥**

प्रतिमा यदि विषम आसन वाली होवे तो व्याधि करने वाली है। अन्याय से पैदा किये हुए धन से बनवाई गई होवें तो वह प्रतिमा दुष्काल करने वाली जानना। न्यूनाधिक अंगवाली होवे तो स्वपक्ष को और परपक्ष को कष्ट देने वाली है।

**पडिमा रउह जा सा कारावयं हंति सिष्पि अहियंगा ।**

**दुव्वलदव्यविणासा किसोअरा कुणइ दुष्भिक्खं ॥5 0 ॥**

प्रतिमा यदि रौद्र (भयानक) होवें तो कराने वाले का और अधिक अंग वाली होवे तो शिल्पी का विनाश करे। दुर्बल अंग वाली होवे तो द्रव्य का विनाश करे और पतले उदर वाली होवे तो दुर्भिक्ष करे।

**उड्ढमुही धणनासा अप्पूया तिरिअदिटि विन्नेया ।**

**अइघट्टिदिटि असुहा हवइ अहोदिटि विग्धकरा ॥5 1 ॥**

प्रतिमा यदि ऊर्ध्व मुख वाली होवे तो धन का नाश करने वाली है। तिरछी

दृष्टि वाली होवे तो अपूजनीय रहे। अतिगाढ़ दृष्टि वाली होवे तो अशुभ करने वाली है और अधो-दृष्टि होवें तो विघ्नकारक जानना। **चउभवसुराण आयुह हवंति केसंत उप्पे जइ ता ॥** **करणकरावणथप्णहारण प्याणदेसहया ॥5 2 ॥**

चार निकाय के (भुवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी और वैमानिक ये चार योनि में उत्पन्न होने वाले) देवों की मूर्ति के शस्त्र यदि केश के ऊपर तक चले गये हों तो ऐसी मूर्ति करने वाले और स्थापन करने वाले, कराने वाले प्राण का और देश की विनाशकारक होती है।

यह सामान्य रूप से देवों के शत्रों के विषय में कहा है, क्योंकि यह नियम सब देवों के लिए होवे ऐसा मालूम नहीं पड़ता, कारण कि भैरव, भवानी, दुर्गा, काली आदि देवों के शस्त्र माथे के ऊपर तक चले गये हैं, ऐसा प्राचीन मूर्तियों में देखने में आता है, इसीलिए मालूम होता है कि ऊपर का नियम शान्त वदन वाले देवों के विषय में होगा। रौद्र प्रकृति वाले देवों के हाथों में लोह का खप्पर अथवा मस्तक प्रायः करके रहते हैं, ये असुरों का संहार करते हुए दिखाई पड़ते हैं, इसीलिए शस्त्र उठाये रहने से माथे के ऊपर जा सकते हैं तो यह दोष नहीं माना होगा, परन्तु ये देव शान्त चित्त होकर बैठे हों ऐसी स्थिति की मूर्ति बनवाई जाये तो इनके शस्त्र उठाये न रहने से माथे से ऊपर नहीं जा सकते, इसीलिए ऊपरोक्त दोष बतलाया मालूम होता है।

चौबीस जिन, नवग्रह, चौसठ योगिनी, बावन वीर, 'चौबीस यक्ष, चौबीस यक्षिणी, दश दिक्पाल, सोलह विद्यादेवी, नव नाथ, चौरासी सिन्धु, विष्णु, महादेव, ब्रह्मा, इन्द्र और दानव इत्यादिक देवों के वर्ण, चिह्न, नाम और आयुध आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन अन्य ग्रन्थों से जानना चाहिए।

### पदस्थ अरिष्ट का लक्षण

चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु का विपरीत रूप से देखना पदस्थ या पर पदार्थ स्थित अरिष्ट विद्वानों ने कहा है।

ॐ हीं अरहंताणं कमले कमले विमले उदरदेवी इतिमिटि पुलिन्दिनी स्वाहा ।

एकविंशतिवेलाभिः पठित्वा मन्त्रमुत्तमम् ।

गुरुपदेशमाश्रित्य ततोऽरिष्टं निरीक्षयेत् ॥3 1 ॥

पदरथ अरिष्ट को जानने की विधि का निरूपण करते हुए बताया हया है कि स्नान कर, श्वेत वस्त्र धारण कर सुगन्धित द्रव्य तथा आभृषणों से अपने को सजाकर एवं जिनेन्द्र भगवान् की पूजा कर ‘ऊँ हीं णमो अरिहन्ताणं कमले कमले विमले उदरटेवि इटिमिटि पुलिन्दिनी स्वाहा ।’ इस मन्त्र का इककीस बार उच्चारण कर गृह उपदेश के अनुसार अरिष्टों का निरीक्षण करें।

चन्द्र भास्करयोर्विम्बं नानारुपेण पश्यति ।  
सच्छिद्रं यदि वा खण्डं तस्यायुर्वर्धमात्रः ॥३२॥

जो कोई संसार में सूर्य और चन्द्रमा को नाना रूपों में तथा छिद्रों से परिपूर्ण देखता है उसकी आयु एक वर्ष की होती है।

दीपशिखां वहुरूपां हिमददरधां यथा दिशा सर्वाङ्गम् ।  
यः पश्यति रोगस्थो लघुमरणं तस्य निर्दिष्टम् ॥३३॥

जो रोगी व्यक्ति दीपक के प्रकाश की लौं को अनेक रूपों में देखता है तथा दिशाओं को अग्नि या शीत से जलते हुए देखे तो उसकी मृत्यु निकट समय में होती है।

बहुच्छिद्रान्वितं विम्बं सूर्यचन्द्रमसोभुवि ।  
पतनिरीक्ष्यते यस्तु तस्यायुदेशवासरम् ॥३४॥

जो रोगी पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्रमा के बिम्ब को अनेक छिद्रों से युक्त भूमि पर गिरते हए देखता है उसकी आयु ग्यारह (11) दिन की होती है।

चतुर्दिक्षु रवीन्द्रनां पश्चेद् विम्बं चतुष्टयम् ।  
छिद्रं वा तद्दिनान्मेव चत्वारश्च महर्तकाः ॥३५॥

जो सूर्य या चन्द्रमा के चारों बिम्बों को चारों दिशाओं में देखे तो वह चार घटिका अर्थात् एक घण्टा छत्तीस मिनट (1-36) जीवित रहता है।

तयोर्विम्बं यदा नीलं पश्येदायुश्चतुर्दिनम् ॥  
तयोश्छिष्ठ्रे विशन्तं भ्रमरोच्यं..... ॥36॥

यदि रोगी सूर्य और चन्द्रमा के बिम्ब को नील वर्ण का देखता है तो उसकी आयु 4 दिन की होती है। सचिद्र सूर्य और चन्द्रबिम्ब में भौंरों के समूह को प्रवेश करते हुए देखने से भी चार दिन की आयु होती है।

प्रज्वलद्वासधूमं वा मुञ्चद्वा रुधिरं जालम् ।  
यः पश्येत् विघ्नमाकाशे तस्यायः स्याहिनानि षष्ठ ॥३७॥

जो कोई रोगी सूर्य और चन्द्र के बिम्ब में से धूआँ निकलता हुआ देखे, सूर्य और चन्द्रबिम्ब को जलते हुए देखे अथवा सूर्य चन्द्र बिम्ब में से स्थिर निकलता हुआ देखे तो वह छह दिन जीवित रहता है।

वाणैर्भिन्नमिवालीं विम्बं कज्जलरेखया

यो वा पश्यति खण्डानि पण्मासं तस्य जीवितम् ॥३८॥

जो रोगी सूर्य और चन्द्र बिम्ब को बाणों से छिन-भिन या दोनों को बिम्ब के मध्य में काली रेखा देखता है अथवा दोनों के बिम्ब के टुकड़े होते हुए देखता है, उसकी आयु छह महीने की होती है।

रात्रौ दिनं दिने रात्रिं यः पश्येदातरस्तथा ।

शीतलां वा शिखां दीपे शीघ्रं प्रत्यं समादिशेत् ॥३९॥

जो रोगी रात्रि में दिन का अनुभव करता है और दिन में रात्रि का तथा दीपककी लौ को शीतल अनुभव करता है, उस रोगी की शीघ्र मर्य होती है।

तन्दुलैमियते यस्याऽजलिस्तेषां भवत्तं च पञ्चते

जहीत्यधिकं तदा चर्ण भवत्तं स्याल्लधमन्यवः ॥४०॥

एक अञ्जुलि चावल लेकर भात बनाया जाय यदि पक जाने के अनन्तर भात उस अञ्जुलि प्रमाण से कम या अधिक हो तो उसकी मत्त्व निकट समर्थनी चाहिए।

अभिमन्युस्तव त्रिः वच्चारणैर्मापयेत् सन्ध्यायाम् ।

अपि ते पञ्चः प्रभावे सद्ये ज्ञाने हि साम्भाग्यवत् ॥११॥

“ॐ हीं णमो अरिहन्ताणं कमले कमले विमले उदरदेवि इटिमिटि पुलिन्दिनी स्वाहा” इस मन्त्र से सूत को मन्त्रित कर उससे सायंकाल में रोगी के सिर से लेकर पैर तक नापा जाये और प्रातःकाल पुनः उसी सूत से सिर से पैर तक नापा जाये, यदि प्रातःकाल नापने पर सूत छोटा हो तो वह व्यक्ति एक मास जीवित रहता है।

१वेताः कृष्णाः पीताः रक्ताश्चयेन द्रश्यन्ते द्रज्ञाः।

स्वस्य परस्य च मकरे लघुमत्यस्तस्य निर्दिष्टः ॥४२॥

यदि कोई व्यक्ति दर्पण में अपने या अन्य व्यक्ति के दांतों को काला, सफेद या पीले रंग का देखे तो उसकी मत्स्य निकट समझनी चाहिए।

द्वितीयाया: शशिविम्बं पश्येत् त्रिशृङ्गपरिहीनम् ।

उपरि साधूमच्छायं खण्डं वा तस्य गतमायुः ॥4 3॥

शुक्लपक्ष की द्वितीया को यदि कोई चन्द्रमा के विम्ब को तीन कोणके साथ या बिना कोण के देखे या धूमिल रूप में देखे तो उस व्यक्ति का शीघ्र मरण होता है।

अथवा मृगाङ्कहीनं मलिनं चन्द्रञ्च पुरुषसादृश्यम् ।

प्राणी पश्यति नूनं मासादूर्ध्वं भवान्तरं याति ॥4 4॥

यदि कोई चन्द्रमा को मृगचिन्ह से रहित धूमिल और पुरुषाकार में देखे तो वह एक मास जीवित ही रहता है।

### शकुन का प्रयोजन

अन्यजन्मान्तरकृतं कर्म पुंसां शुभाशुभम् ।

यत्स्यशकुनः पाकं निवेदयति गच्छताम् ॥5॥

बृहत्संहिता: पृ. 500

मनुष्यों के पूर्व जन्मार्जित जो शुभाशुभ कर्म हैं, उन कर्मों के शुभाशुभ फल का गमनकालिक शकुन प्रकाशित करता है।

### शकुनों के भेद का प्रदर्शन

ग्रामारण्याम्बुद्योमधुनिशोभयचारिणः ।

रुतयातेक्षितोक्तेषु ग्राह्याः पुंस्त्रीनपुंसकाः ॥6॥

गाँव में रहने वाले वनचर, जलचर, पृथ्वीचर, आकाशचर, दिनचर, रात्रिचर और उभयचर जीवों के शब्द, गमन, दृष्टि और उक्ति से पुरुष, स्त्री और नपुंसक का ग्रहण करना चाहिए।

### शकुनों के सामान्य लक्षण

पृथग्जात्यनवस्थानादेषां व्यक्तिर्न लक्ष्यते ।

सामान्यलक्षणोद्देशो श्लोकावृष्टिकृताविमौ ॥7॥

पृथक् जाति और अनवरथा के कारण इसमें व्यक्ति (स्त्री, पुरुष और नपुंसक) विभाग नहीं लक्षित होता है, अतः इसके ज्ञान के लिए ऋषियों ने ये वक्ष्यमाण दो श्लोक कहे हैं।

पुरुष, स्त्री और नपुंसक संज्ञक जीव

पीनोन्नतविकृष्टांसाः पृथुग्रीवाः सुवक्षसः ।

स्वल्पगम्भीरविरुताः पुमांसः स्थिरविक्रमाः ॥8॥

तनूरस्कशिरोग्रीवाः सूक्ष्मास्यपदविक्रमाः ।

प्रसक्तमृदुभाषिण्यः स्त्रियोऽतोन्यन्पुंसकम् ॥9॥

मोटे ऊँचे और विस्तीर्ण कन्धे वाले, विस्तीर्ण गरदन वाले, सुन्दर छाती वाले, अल्प गम्भीर स्वर वाले और स्थिर पराक्रम वाले जीव पुरुष संज्ञक शकुन हैं। कुश छाती, सिर और गरदन वाले, छोटे मुख, पाँव और पराक्रम वाले तथा मधुर शब्द करने वाले जीव स्त्री संज्ञक शकुन हैं। पुरुष, स्त्री दोनों के मिश्रित लक्षण जहाँ हों नपुंसक संज्ञक जीव हैं।

### शेष लोक व्यवहार से जानने योग्य

गाँव में रहने वाले, वन में रहने वाले और उभयचारी शकुनों को लोक-व्यवहार से जानना चाहिए। संक्षेप में इच्छा वाला मैं यात्रा में प्रयोजनीय शकुनों को कहता हूँ।

### शकुन फल का विचार

पथ्यात्मानं नृपं सैन्यं पुरे चोदिश्य देवताम् ।

सार्थे प्रधानं साम्ये स्थाज्ञातिविद्यावयोऽधिकम् ॥1 1॥

मार्ग में गमन करने वाले मनुष्य के ऊपर, सैन्य में राजाके ऊपर, पुर में देवता (नगर स्वामी) के ऊपर, जन समुदाय में प्रधान के ऊपर, प्रधानों के साम्य में जाति के ऊपर, जातियों के साम्य में विद्या के ऊपर और विद्या के साम्य में वयोधिक के ऊपर शकुन का फल पड़ता है।

### दिशाओं के लक्षण

मुक्तप्राप्तैष्यदर्कासु फलं दिक्षु तथाविधम् ।

अङ्गारदीप्तधूमिन्यस्ताश्च शान्तास्ततोऽपराः ॥1 2॥

सूर्योदय से एक पहर दिन उठे तक एशानी दिशा मुक्तसूर्या, पुर्वोदिशा प्राप्तसूर्या और अग्नि दिशा एष्यत्सूर्या होती है। एक प्रहर के बाद दो प्रहर दिन उठे तक पूर्व दिशा मुक्तसूर्या, आग्नेयी दिशा प्राप्तसूर्या और दक्षिणा एष्यत्सूर्या होती है।

इसी प्रकार शेष छह प्रहरों में भी जानना चाहिये। मुक्तसूर्या अङ्गारिणी, प्राप्तसूर्या-दीप्ता, एष्वत्सूर्या धूमिनी और शेष पाँच दिशायें शान्ता कहलाती हैं।

दिशाओं में फल का नियम

तत्पञ्चमदिशां तुल्यं शुभं त्रैकाल्यमादिशेत् ।  
परिशेषदिशोर्वाच्यं यथासनं शुभाशुभम् ॥1 3 ॥

अङ्गारिणी दिशा के पंचमी दिशा में दृष्ट शुभाशुभ शकुन का फलभूत, दीप्ता दिशा के पंचमी दिशा में दृष्ट शुभाशुभ शकुन का फल भविष्यत् होता है। शेष अङ्गारित शांतासन और धूमित शांतासन दिशाओं में दृष्ट शुभाशुभ शकुन का फल क्रम से भूत और भविष्यत् जानना चाहिए।

शीघ्रमासन्ननिम्नस्यैश्चिरादुन्नतगूरगै ।  
स्थानबृद्धयुपधाताश्च तद्ब्रूयात्कलं पुनः ॥1 4 ॥

समीप तथा नीच स्थान में स्थित शकुन का फल शीघ्र तथा उच्च और दूर में स्थित शकुन का फल देर में होता है। बढ़ने वाले स्थान पर दृष्ट शुभाशुभ शकुन का फल देर में होता है। बढ़ने वाले स्थान पर दृष्ट शुभाशुभ शकुन का फल बढ़ने वाला और घटने वाले स्थान पर दृष्ट शुभाशुभ शकुन का फल घटने वाला होता है।

दश प्रकार के दीप्त शकुन का लक्षण  
क्षणातिथ्युदुवाताकै देवदीप्तो यथोत्तरम् ।  
क्रियादीप्तो गतिस्थानभावस्वरविचेष्टितः ॥1 5 ॥

क्षण (दारून और उग्र संज्ञक नक्षत्र के मुहूर्त) में दृष्ट शकुन क्षणदीप्त। तिथियों (चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी) में दृष्ट शकुन तिथिदीप्त। नक्षत्रों (मूल, ज्येष्ठा, आर्द्धा, अश्लेषा, पूर्वांत्रिय, भरणी और मध्य) में दृष्ट शकुन नक्षत्र-दीप्त। वात शकुन सूर्यदीप्त ये पाँच देवदीप्त हैं। ये सब दीप्त यथोत्तर क्रम से दीप्त हैं, जैसे क्षणदीप्त से तिथिदीप्त, तिथिदीप्त से नक्षत्रदीप्त, नक्षत्रदीप्त से वायुदीप्त और वायुदीप्त से सूर्यदीप्त अधिक दीप्त हैं। तथा गति, स्थान, भाव, स्वर, चेष्टा ये क्रिया दीप्त हैं।

दशधैवं प्रशान्तोऽपि सौम्यस्तृणफलाशनः ।  
मांसामेध्याशने रौत्रो विमिश्रोऽन्नाशनः सृतः ॥1 6 ॥

पूर्वोत्क दश प्रकार के शान्त शकुन हैं। उसमें तृण और फल को खाने वाले सौम्य, मांस और विष्ठा आदि अपवित्र पदार्थ खाने वाले रौद्र और अन्न खाने वाले मिश्र (न सौम्य न रौद्र) कहे गये हैं।

हर्ष्यप्रासादमङ्गल्यमनोऽस्थानसंस्थितः ।

श्रेष्ठा मधुरसक्षीरफलपुष्पद्वुमेषु च ॥1 7 ॥

महल, देवमन्दिर, मंगल स्थान (देवता, ब्राह्मण और गायों से अध्यासित) मनोज्ञ (हराधास और शीतल द्रुम की छाया) मधुर, फल वाले, दूध वाले, फल वाले और फूल वाले वृक्ष इन सब पर स्थित शकुन शुभ फल दने वाले होते हैं।

शकुनों के बत

स्वकाले गिरितोयस्था बलिनो द्युनिशाचराः ।

क्लीवस्त्रीपुरुषा ज्ञेया बलिनः स्युर्यथोत्तरम् ॥1 8 ॥

दिन में दिनचर शकुन पर्वत के ऊपर और रात्रि में रात्रिचर शकुन जल प्रायः देश में स्थित हो तो बली होते हैं। तथा नपुंसक से स्त्री और स्त्री से पुरुष जाति का शकुन बली होता है।

जवजातिवलस्थानहर्षसत्त्वस्वरान्विता ।

स्वभूमादनुलोपाश्च तदूनाः स्युर्विर्जिताः ॥1 9 ॥

यदि दो आदि शकुनों का दर्शन हो तो गति, जाति, बल, स्थान, हर्ष, सत्त्व, स्वर, इनमें जो बली हो उसी के अनुसार शुभाशुभ फल होता है। तथा अपने स्थान में अनुलोम जाति वाले शकुन भी बली हैं। इनसे विपरीत होने पर निर्बल होते हैं।

पूर्व दिशा में बली शकुन

कुक्कुटेभपिरिल्यश्च शिखिवञ्जुलछिकराः ।

बलिनः सिहनादश्च कूटपूरी च पूर्वतः ॥2 0 ॥

मुर्गा, हाथी, पिरिली (पक्षि विशेष) मध्यूर, खदिरचंचु, छिकर (मृग जाति) सिंहनाद (पक्षि विशेष) कशयिका ये सब पूर्व दिशा में बली हैं।

दक्षिण दिशा में बली शकुन

कोष्ठुकोलूकहरी तकाककोकर्क्षपिङ्गलाः ।

कपोतसुदिताक्रन्दकूरशब्दाश्च याम्यतः ॥2 1 ॥



भेद होते हैं।

### आठ दिशाओं के अधिपति

पूर्व आदि आठ दिशाओं के प्रदक्षिण क्रम से राजा, कुमार, सेनापति, दूत, सेठ, गुप्तचर, ब्राह्मण, गजाध्यक्ष ये आठ तथा पूर्व आदि चार दिशों के क्षत्रिय आदि (क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्राह्मण) ये चार अधिपति हैं।

### यात्रा के शुभाशुभ शकुन

गच्छतस्तिष्ठतो वापि दिशी यस्यां व्यवस्थितः।  
विरौति शकुनो वाच्यस्तद्विग्नेन समागमः ॥३५॥

यात्रा में गमन करते हुए, या एक स्थान पर स्थित पुरुष के जिस दिशा में स्थित होकर शकुन शब्द करे उस दिशा में स्थित प्राणी के साथ समागम कहना चाहिये। जैसे पूर्व और आग्नेय कोण के प्रथम विभाग में शकुन हो तो कोषाध्यक्ष, द्वितीय में हो तो अग्निजीवी, तृतीय विभाग में शकुन तापस इत्यादि के साथ समागम कहना चाहिये।

### शुभाशुभ शब्दों का ज्ञान

भिन्नभैरवदीनार्तपरुषक्षामजर्जराः।  
स्वनानेष्टाः शुभा शांतहृष्टप्रकृतिपूरिताः ॥३६॥

विषम, भयंकर, दीन, गर्जर, (फूटते हुए भाण्ड से उत्पन्न) सब शब्द शुभ नहीं होते। अर्काभिमुख होकर, मधुर स्वर से और हर्षपूर्वक किये हुए सब शब्द शुभ होते हैं।

यात्रा करने वाले के वाम भागगत शुभ शकुन  
शिवा श्यामा रला छुच्छुः पिङ्गला गृहगोधिका ।  
सूकरी परपुष्टा च पुन्नामानश्च वामतः ॥३७॥

सियार, पोतकी, कलहकारिका, छुन्दर, उलूक, चेठिका, पल्ली, सूअर, कोयल, पुरुषसंज्ञक जन्तु ये सब गमन करने वाले के बायीं तरफ शुभ होते हैं।

यात्रा करने वाले के दक्षिण भागगत शुभ शकुन  
स्त्रीसञ्ज्ञा भासभषककपिश्रीकर्णधिकराः।

शिखश्रीकण्ठपिण्डीकरुरुश्येनाश्च दक्षिणाः ॥३८॥

भासपक्षी, भषक, वानर, श्रीकर्णपक्षी, धिक्कार (मृग जाति), बाज, स्त्रीसञ्ज्ञक

जन्तु ये सब गमन करने वाले के दक्षिण भागगत शुभ होते हैं।

वाम दक्षिण भागगत शुभाशुभ फल

क्षेडास्फोटितपुण्याहगीतशङ्काम्बुनिः स्वनाः ।

स तूर्याध्यनः पुवंत् स्त्रीवदन्या गिर शुभाः ॥३९॥

क्षेड (मुख का शब्द), आस्फोट (हाथों का शब्द), पुण्याह शब्द, शंख का शब्द, जल का शब्द, तुरही का शब्द, वेदध्वनि ये सब पुरुष की तरह (वाम-भाग स्थित) शुभ होते हैं। तथा अन्य मांगलिक शब्द स्त्रीवत् (दक्षिण भाग स्थित) शुभ होते हैं।

स्वरों का शुभाशुभ फल

ग्रामौ मध्यमषड्जौ तु गान्धारश्चेति शोभनाः ।

षड्जमध्यमगान्धारा ऋषभश्च स्वरा हिताः ॥४०॥

यात्रा में मध्यम, षड्ज, गान्धार ये तीनों स्वर शुभ और षड्ज, मध्यम, गान्धार, ऋषभ ये चार स्वर हितकारी होते हैं।

अन्य शुभाशुभ शकुन

रुतकीर्तनदृष्टे षु भारद्वाजाजवर्हिणः ।

धन्या नकुलचाषौ च सरटः पापदोऽग्रतः ॥४१॥

भारद्वाज, बकरा, मयूर इनका शब्द, नाम कीर्तन और देखना धन्य है। तथा नेवला, चाष और सरट इनका आगे आना अशुभ है।

जाहकाहिंशशक्रोडगोधानां कीर्तनं शुभम् ।

रुतं सन्दर्शन नेष्टं प्रतीपं वानरक्षयोः ॥४२॥

यात्रा-समय में जाहक, सर्प, खरगोश, सूअर, गोह इनका नाम लेना शुभकारी है। इससे उल्टा वानर तथा भालू का फल होता है। अर्थात् यात्रा-समय में वानर तथा भालू का नाम लेना अशुभ तथा शब्द और दर्शन शुभ है।

ओजाः प्रदक्षिणं शस्ता मृगाः सनकुलाण्डजाः ।

चाषः सनकुलो वामो भृगुराहपराह्वतः ॥४३॥

विषम संख्यक (1, 3, 5, 7 आदि) मृग, नकुल और अण्डज प्राणी वाम पाश्व से आगे आकर दक्षिण पाश्व में आ जायें तथा नकुल के साथ चाष पक्षी दक्षिण

पाश्व से आकर वाम पाश्वमें आ जायें तो शुभ होते हैं। भृगुका मत है कि ये सब अपराह्न में शुभकारी होते हैं, पूर्वाह्न में नहीं।

**छिकरः कूटपूरी च पिरिली चाहि दक्षिणः ।**

**अपसव्याः सदा शक्ता दंष्ट्रिणः सविलेशयाः ॥४४॥**

दिन में सियार, करायिका और पिरिली पक्षी दक्षिण भाग में शुभ होते हैं। तथा दंष्ट्री (सूअर आदि) और बिल में रहने वाले प्राणी वाम भाग में शुभ होते हैं।

**दिशा के वश शकुन का शुभाशुभ फल**

**श्रेष्ठे हयसिते प्राच्यां शवमांसे च दक्षिणे ।**

**कन्यकादधिनी पश्चादुदगोविप्रसाधवः ॥४५॥**

पूर्व में सफेद वस्तु और घोड़ा, दक्षिणमें शब और मांस, पश्चिम में कन्या और ढही तथा उत्तर में गाय, ब्राह्मण और सज्जन पुरुष श्रेष्ठ हैं।

**दिशा के वश शकुन का अशुभ फल**

**जालश्वचरणौ नेष्टौ प्राण्याभ्यौ शस्त्रघातकौ ।**

**पश्चादासवषण्डौ च खलासनहलान्युदक् ॥४६॥**

पूर्व में जाल के साथ चलने वाले और कुत्ते के साथ चलने वाले, दक्षिण में शस्त्र और बधिक, पश्चिम में आसव (मद्य आदि) और नपुंसक तथा उत्तर में आसन और हल अशुभ है।

**कर्म आदि में शकुनों की विशेषता**

**कर्मसङ्गमयुद्धेषु प्रवेशो नष्टमार्गणे ।**

**यानव्यस्तगता ग्राह्या विशेषश्चात्र वक्ष्यते ॥४७॥**

कर्मर (जो करते है) सङ्गम (किसी वृद्ध आदि के साथ संयोग) युद्ध, प्रवेश (गृह प्रवेश आदि) और नष्ट द्रव्य के अन्वेषण में यात्रा में कथित प्रदेश से विरुद्ध प्रदेश में स्थित शकुन शुभ होता है। जैसे यात्रा में जो दक्षिण में शुभ हैं वे यहाँ पर वाम में, यात्रा में जो वाम में शुभ हैं वे यहाँ पर दक्षिण में, यात्रा में जो आगे में शुभ है वे यहाँ पर पीछे में, यात्रा में जो पीछे में शुभ हैं वे यहाँ पर आगे में, यात्रा में जो पूर्व दिशा में शुभ हैं वे यहाँ पर पश्चिम में, यात्रा में जो पश्चिम में शुभ हैं वे यहाँ पर पूर्व में, यात्रा में जो दक्षिण में शुभ हैं वे यहाँ पर उत्तर

में और यात्रा में जो उत्तर में शुभ हैं वे यहाँ पर दक्षिण में शुभ होते हैं।

**दिवा प्रस्थानवदग्राह्याः कुरङ्गरुवानराः ।**

**अङ्गश्च प्रथते भागे चाषवज्जुलकुकुटाः ॥४८॥**

**पश्चिमे शर्वरीभागे नप्तृकोलूकपिङ्गलाः ।**

**सर्व एव विपर्यस्ता ग्राह्याः सार्थेषु योषिताम् ॥४९॥**

दिन में पूर्वोक्त कर्म आदि करना हो तो वहाँ पर कुरंग, रुरु (मृग जाति) और वानर को, पूर्वाह्न में चाष, वज्जुल और मुर्गा को तथा रात्रि के अन्त भाग में नप्तृक, उल्लू और पिङ्गला को यात्रा की तरह ग्रहण करना चाहिए। किन्तु स्त्रियों के लिए पूर्वोक्त सब शकुन उल्टा ग्रहण करना चाहिए।

**नृपसन्दर्शने ग्राह्यः प्रवेशऽपि प्रयाणवत् ।**

**गिर्यरण्यप्रवेशेषु नदीनां चावगाहने ॥५०॥**

**वामदक्षिणगौ शस्तौ यौ तु तावग्रपृष्ठगौ ।**

**क्रियादीप्तौ विनाशाय यातुः परिघसञ्जितौ ॥५१॥**

**तावेव तु यथाभागं प्रशांतरुतचेष्टितौ ।**

**शकुनौ शकुनद्वारसञ्जितावथसिद्धये ॥५२॥**

यात्रा में जो वाम और दक्षिणगत शकुन शुभ हैं वे राजा के दर्शन, गृह-प्रवेश आदि, पर्वत प्रवेश, वन प्रवेश और नदी के पार होने में क्रम से आगे और पीछे में शुभ होते हैं। जैसे यात्रा में जो वाम में शुभ हैं वे यहाँ पर आगे में और यात्रा मैं दक्षिण में शुभ हैं वे यहाँ पर पीछे में शुभ होते हैं कहा भी है— क्रिया दीप्ति में गमन करने वाले के दोनों पार्श्व में शकुन दिखाई दे तो परिघ संज्ञक शकुन होता है, परिघ संज्ञक शकुन होने पर गमन करने वाले का नाश होता है। किन्तु वे दोनों शकुन यथा भाग (दक्षिण भाग वाले दक्षिण भाग में और वाम भाग वाले वाम भाग में) रिथत होकर शांतिपूर्वक शब्द करें तो शकुन द्वार संज्ञक होते हैं। इनमें गमन करने वाले के अभीष्ट अर्थ की सिद्धि होती है।

**मतान्तर से शकुन द्वार का लक्षण**

**केचितु शकुनद्वारमिच्छन्त्युभयतः स्थितैः ।**

**शकुनैरेकजातीयैः शान्तचेष्टाविराविभिः ॥५३॥**

किसी का मत है कि एक जाति वाले, शान्त चेष्टा से शब्द करने वाले, दोनों पाश्व में रिथत शकुनों से शकुन द्वारा संज्ञक शकुन बनता है।

### विरोध संज्ञक शकुन

विसर्जयति यदेकं एकश्च प्रतिषेधति ।  
स विरोधोऽशुभो यातुर्ग्राह्यो तु बलवत्तरः ॥५४॥

यदि यात्रा समय एक शकुन यात्रा करने की आज्ञा दे और दूसरा निषेध करे तो वह विरोध संज्ञक शकुन अशुभ फल देने वाला होता है। अथवा उन दोनों में जो बली हो उनको ग्रहण करना चाहिए।

### विरोधी शकुन का फल

पूर्व प्रावेशिका भूत्वा पुनः प्रास्थानिको भवेत् ।  
सुखेन सिद्धिमाचष्टे प्रवेशो तद्विपर्ययत् ॥५५॥

यदि यात्रा काल में पहले प्रवेशकालिक शकुन होकर बाद में यात्रा कालिक शकुन हो तो सुखपूर्वक कार्य की सिद्धि होती है। तथा गृह प्रवेश आदि काल में इसका उल्टा (पहले यात्रा कालिक शकुन होकर बाद में प्रवेश कालिक शकुन) हो तो सुखपूर्वक कार्य की सिद्धि होती है।

विसर्ज्य शकुनः पूर्व स एव निरुर्णाद्व चेत् ।  
प्राह यातुररेमृत्युं डमरं रोगमेव वा ॥५६॥

जो शकुन पहले शुभ चेष्टा करके बाद में यात्रा का निषेध करे तो शत्रु द्वारा गमन करने वाले की मृत्यु, शस्त्र कलह या रोग को सूचित करता है।

### भयप्रदायक शकुन

अपसव्यास्तु शकुना दीप्ता भयनिवेदिनः ।  
आरम्भे शकुनो दीप्तो वर्षान्तस्तद्रव्यङ्करः ॥५७॥

दीप्त दिशा में रिथत होकर बाईं तरफ शकुन हो तो भय को सूचित करता है। तथा कार्य के प्रारम्भ में ही दीप्त शकुन दिखाई दे तो एक वर्ष तक उस कार्य में भय करता है।

### चेष्टा दीप्त का फल

तिथिवाय्वर्कमस्थानचेष्टा दीप्ता यथाक्रमम् ।  
धनसैन्यवलाङ्घष्टकर्मणां स्युर्भयङ्कराः ॥५८॥

तिथि, वायु, नक्षत्र, सूर्य स्थान और चेष्टा दीप्त हो तो क्रम से धन, सैन्य, वला, अङ्ग, इष्ट और कर्म के लिए भयकारी होते हैं।

मेघ ध्वनि आदि से दीप्त शकुन का फल

जीमूतध्वनीदीप्तेषु भयं भवति मारुतात् ।

उभयोः सन्ध्ययोर्दीप्ताः शस्त्रोद्रवभयङ्कराः ॥५९॥

मेघ की ध्वनि से दीप्त शकुन वायु से भय और दोनों सन्ध्याओं में दीप्त शकुन शस्त्र से उत्पन्न भय को करता है।

चित्ता आदि पर स्थित शकुन का फल

चितिके शक पालेषु मृत्युवन्धवधप्रदाः ।

कण्टकीकाष्टभस्मस्थाः कलहासुदःखदा ॥६०॥

अप्रसिद्धि भयं वापि निःसाराश्मव्यवस्थिताः ।

कुर्वन्ति शकुना दीप्ताः शांता याप्यफलास्तु ते ॥६१॥

यदि शकुन चिता, केश और कपाल पर बैठे हों तो क्रम से मृत्यु बन्धन और वध को करने वाले होते हैं। तथा कांटेदार वृक्ष, काष्ट और भस्म पर बैठे हों तो क्रम से कलह, उपद्रव और दुःख देने वाले होते हैं यदि शकुन निस्सार वस्तु पर बैठे हो तो कार्य की असिद्धि और पथर पर बैठे हों तो भय करते हैं। ये सब दीप्त शकुनों के फल हैं। शांत शकुन विज्ञान बहुत कम अशुभ फल देते हैं।

पुरीषोत्सर्ग आदि करते हुए शकुन का फल

असिद्धिसिद्धिदौ ज्ञेयौ निर्हाराहारकारिणौ ।

स्थानाद्वन् व्रजेयात्रां शंसते त्वन्थागमम् ॥६२॥

टड़ी करने वाले और भोजन करने वाले शकुन क्रम से कार्य की असिद्धि और सिद्धि करने वाले होते हैं। यदि शब्द करते हुए शकुन अपने स्थान से चले जायें तो गमन और पुनः अपने स्थान पर आकर बैठ जायें तो किसी के आगमन को सूचित करते हैं।

स्वर दीप्त आदि शकुन का फल

कलहः स्वरदीप्तेषु स्थानदीप्तेषु विग्रहः ।

उच्चभादौ स्वरं कृत्वा नीचं पश्चाच्च दोषकृत् ॥६३॥

स्वर दीप्त शकुन में कलह, स्थान दीप्त में विग्रह और पहले जोर से शब्द करके बाद में मन्द हो जायें तो दोष करने वाले होते हैं।

सप्ताह आदि तक शब्दायमान शकुन का फल  
एकस्थाने रुवन् दीप्तः सप्ताहाद् ग्रामघातकः ।  
पुरदेशनरेन्द्राणामृत्वर्धायनवत्सरात् ॥6 4॥

यदि एक स्थान पर स्थित शकुन दीप्त होकर सात दिन तक शब्द करता है तो गाँव का नाश, दो मास तक शब्द करना रहे तो पुर का घात, तीन मास तक शब्द करता रहे तो देश का घात और एक वर्ष तक शब्द करता रहे तो राजा का घात करता है।

दुर्भिक्षकारी शकुन  
सर्वे दुर्भिक्षकर्तारः स्वजातिपिशिताशिनः ।  
सर्पभूषकमार्जारपृथुलोमविवर्जिताः ॥6 5॥

सर्प, चूहा, बिल्ली और मछली के अतिरिक्त कोई शकुन यदि अपनी जाति का मांस भक्षण करने लगे तो दुर्भिक्षकारी होते हैं।

भिन्न जाति के साथ मैथुन का फल  
परयोनिषु गच्छन्तो मैथुनं देशनाशनाः ।  
अन्यत्र वेसरोत्पत्तेनुन्णां चाजातिमैथुनात् ॥6 6॥

खद्धर की उत्पत्ति को (घोड़े के साथ गदहे के मैथुन से खद्धर की उत्पत्ति होती है उसको) तथा मनुष्य के अजाति मैथुन को छोड़कर कोई शकुन अन्य जाति के साथ मैथुन करे तो देश का नाश होता है।

पाद आदि पर आया हुआ शकुन का फल  
बन्धधातभयानि स्युः पादोरुमस्तकान्तिगैः ।  
शष्यापः पिशितान्नादर्दोषवर्षक्षतग्रहाः ॥6 7॥

पाद, उरु और सिर के निकट होकर शकुन चला जाये तो क्रम से बन्धन, घात और भय को करता है। घास खाता हुआ शकुन दिखाई दे तो दोष उत्पन्न करने वाला, जल पीता हुआ दिखाई दे तो वर्षा, मांस खाता हुआ दिखाई दे तो अङ्गक्षत और अन्न खाता हुआ शकुन दिखाई दे तो किसी बन्धु से समागम करता है।

शकुन के वश आगन्तुक का लक्षण  
कूरोग्र दोषटुष्टै श्र प्रधाननृपवृत्ताकैः ।  
चिरकालेन दीप्ताद्यास्यागमो दिक्षुतनृणाम् ॥6 8॥

दीप्त दिशा में स्थित शकुन क्रूर के साथ किसी पुरुष का आगमन, घूमित दिशा में स्थित शकुन दण्ड के साथ किसी पुरुष का आगमन, शान्त दिशा में स्थित शकुन दोषयुक्त पुरुष के साथ आगमन, इसके बाद दुष्ट पुरुष के साथ, इसके बाद प्रधान पुरुष के साथ, इसके बाद राजा के साथ, इसके बाद श्रावक के साथ और इसके बाद अङ्गारित दिशा में स्थित शकुन बहुत देर के बाद किसी पुरुष के आगमन को सूचित करता है।

भक्ष्य द्रव्य के साथ शकुन का फल  
सद्रव्यो बलवांश्र स्यात् सद्रव्यस्यागमो भवेत् ।  
द्युतिमान् विनतग्रेक्षी सौम्यो दारुणवृत्तकृत् ॥6 9॥  
जिस दिन किसी भक्ष्य द्रव्य के साथ बली शकुन दिखाई दे उस दिन द्रव्य का लाभ होता है। यदि दीप्ति युत और अधोमुख दृष्टि वाला शुभ शकुन भी दिखाई दे तो भयानक वृतान्त को सूचित करता है।  
विदिशा में स्थित शकुन के वश फल  
विदिशः शकुनो दीप्तो वामस्थेनानुवाशितः ।

स्त्रिया संग्रहणं प्राह तद्विगाख्यातयोनितः ॥7 0॥  
यदि विदिशा में स्थित दीप्त शकुन वाम भाग में स्थित अन्य शकुन के द्वारा शब्द करे तो उस दिशा में उक्त पुरुष के द्वारा किसी स्त्री का संयोग सूचित करता है।

शान्त और दीप्त के सम्बन्ध से फल  
शांतः पञ्चमदीप्तेन विरुतो विजयावहः ।  
दिग्नरागमकारी वा दषकृतद्विपर्यये ॥7 1॥

शांत शकुन अपने से पाँचवीं दीप्त दिशा में स्थित दीप्त शकुन द्वारा शब्दायमान हो तो उस दिशा में स्थित पुरुष का आगमन करता है उससे विपरीत (दीप्त शकुन

अपने से पाँचवीं शांत दिशा में रिथत शान्त शकुन द्वारा शब्दायमान) हो तो दोष करने वाला होता है।

मध्यस्थ शकुन के द्वारा फल  
वामसव्यगतो मध्यः प्राहस्वपरयोर्भयम् ।  
मरणं कथयन्त्येते सर्वे समविराविणः ॥72॥

मध्य रिथत शकुन वाम पाश्व गत शकुनके द्वारा शब्दायमान हो तो आत्मीय जनों से और दक्षिण पाश्व गत शकुन के द्वारा शब्दायमान हो तो शत्रुओं से भय करता है। तथा वे सब समकाल में बराबर शब्द करें तो मरण को सूचित करते हैं।

वृक्षाग्र आदि पर स्थित शकुन का फल  
वृक्षाग्रमध्यमूलेषु गजाश्चरथिकागमः।  
दीर्घाङ्गमुषिताग्रेषु नरनौशिविकागमः ॥73॥

यदि वृक्षाग्र पर शकुन बैठा हो तो गजारुढ़ मनुष्य का, वृक्ष के मध्य में शकुन बैठा हो तो अश्वारुढ़ मनुष्य का और वृक्ष के मूल में शकुन बैठा हो तो रथारुढ़ मनुष्य का आगमन सूचित करता है। यदि लम्बी वस्तु पर शकुन बैठा हो तो नरारुढ़ मनुष्य का, कमल पुष्प पर बैठा हो तो नाव का और छिनाग्र वाले वस्तु पर बैठा हो तो पालकी का आगमन सूचित करता है।

पर्वतादि पर स्थित शकुन का फल  
शकटे नोन्नतस्थेवा छायास्थे छत्रसंयुते ।  
एकत्रिपञ्चसप्ताहात् पुर्वाध्यास्वन्तरासु च ॥74॥

किसी उच्च प्रदेश (पर्वत आदि) पर शकुन बैठा हो तो शकटारुढ़ मनुष्य का और छाया में शकुन बैठा हो तो छत्र संयुक्त पुरुष का आगमन सूचित करता है। पूर्व आदि दिशा और आग्नेय आदि विदिशा में पूर्वोक्त शकुन बैठे हों तो कम से एक, तीन, पाँच और सात रोज में शुभाशुभ फल देते हैं। जैसे पूर्व दिशा में शकुन बैठे हों तो एक दिन में, दक्षिण दिशा में बैठे हों तो तीन दिन में, पश्चिम दिशा में बैठे हों तो पाँच दिन में तथा उत्तर दिशा में बैठे हों तो सात दिन में शुभाशुभ फल देते हैं। एवं आग्नेय कोण में बैठे हों तो एक दिन में, नैऋत्य कोण

में बैठे हों तो तीन दिन में, वायव्य कोण में बैठे हों तो पाँच दिन में और ईशान कोण में शकुन बैठे हों तो सात दिन में शुभाशुभ फल देते हैं।

यहाँ पर विशेष

सुरपतिहुतवहयमनिर्ऋतिवरुणपवनेन्दुशङ्कराः क्रमशः ।  
प्राच्याद्यानां पतयो दिशः पुमांसोऽङ्गना विदिशः ॥75॥

इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, वायु, चन्द्रमा, शिव ये क्रम से पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी हैं। उनमें पूर्व आदि दिशा पुरुष संज्ञक और आग्नेय आदि विदिशा स्त्री संज्ञक है।

लेख का परिज्ञान

तरुतालीविदलाम्बरसलिलजशरचर्मपट्टलेखाः स्युः ।  
द्वात्रिशत्रविभक्ते दिक्खके तेषु कार्याणि ॥76॥

अग्रिम अध्याय के 'नैऋत्यां स्त्रीलाभस्तुरगालङ्कारपूतलेखाति' इत्यादि आठवें लोक में लेख की प्राप्ति कहा है वहाँ उस लेख की प्राप्ति किस तरह के पत्र पर होती है उसको यहाँ स्पष्ट कर रहे हैं। पूर्व दिशा में शकुन हो तो वृक्ष की त्वचा पा पत्ते पर, आग्नेय कोण में शकुन हो तो ताल वृक्ष के पत्ते पर, दक्षिण कोण में शकुन हो तो खण्डित पत्ते पर, नैऋत्य कोण में शकुन हो तो वस्त्र पर, पश्चिम में शकुन हो तो कमल के पत्ते पर वायव्य कोण में शकुन हो तो काण्ड पर उत्तर कोण में शकुन हो तो काण्ड पर, उत्तर कोण में शकुन हो तो चमड़े पर और ईशान कोण में शकुन हो तो पट्ट पर लेख की प्राप्ति होती है। बत्तीस भाग किये ए दिक्खक में जो शकुन कहे गये हैं और जो आगे कहेंगे वे सब अपने-अपने लोक में होते हैं।

संयोग स्थान

व्यायामशिखिनिकूजितकलहाभ्योनिगडमन्त्रगोशब्दाः ।

वर्णास्तु रक्तपीतककृष्णसिताः कोणगा मिश्राः ॥77॥

पूर्व आदि दिशाओं में इष्ट शकुन का शुभाशुभ फल किस देश में होगा उसको लेख करते हैं। पूर्व दिशा में इष्ट शकुन का फल युद्धादि में, आग्नेय दिशा में इष्ट शकुन का फल अग्नि के समीप में, दक्षिण दिशा में इष्ट शकुन का फल

किसा प्रकार के शब्द युत देश में, नैऋत्य कोण में इष्ट शकुन का फल लड़ाई के स्थान में, पश्चिम दिशा में इष्ट शकुन का फल जल स्थान में, वायव्य कोण में इष्ट शकुन का फल बन्धनादि प्रदेश में, उत्तर दिशा में इष्ट शकुन का फल वेदध्वनि स्थान में और ईशान कोण में दृष्ट शकुन का फल गायों के शब्दों से युत स्थान में प्राप्त होता है। पूर्व में लाल, दक्षिण में पीला, पश्चिम में काला और उत्तर में सफेद वर्ण समझना चाहिये। तथा विदिशा में मिथ्रित वर्ण होते हैं। जैसे-आग्नेय कोण में रक्तपीत, नैऋत्य कोण में पीतकृष्ण, वायव्य में कृष्णसित और ईशान कोण में सितरक वर्ण समझना चाहिये।

### अन्य शुभ शकुन में स्थान का निर्देश

चिह्नं ध्वजो दग्धमय शमशानं दरी जलं पर्वतज्ञाघोषाः।  
एतेषु संयोगभयानि विद्यादन्यानि वा स्थानविकल्पितानि ॥७८॥

पूर्व दिशा में शकुन हो तो ध्वज चिह्न विशिष्ट स्थान में, आग्नेय कोण में हो तो अग्नि दग्ध स्थान में, दक्षिण में हो तो शमशान मैं, नैऋत्य में हो तो गुहा में, पश्चिम में हो तो जलप्राय स्थान में, वायव्य कोण में हो तो पर्वत पर और उत्तर में शकुन हो तो गढ़र में संयोग (शुभ शकुन में संयोग) तथा भय (अशुभ शकुन में भय) कहना चाहिए। अथवा शुभ शकुन संसूचित शुभ स्थान में अशुभ संसूचित कार्य अशुभ स्थान में होते हैं।

### अन्य प्रकार से स्थान का निर्देश

स्त्रीणां विकल्पा वृहती कुमारी व्यङ्गा विगन्धा त्वथ नीलवस्त्रा ।  
कुस्त्री प्रदीर्घा विधवा च ताश्च संयोगचिन्तापरिवेदिकाः स्युः ॥७९॥

पूर्व में बड़ी, आग्नेय कोण में कुमारी, दक्षिण में अंग हीन, नैऋत्य कोण में दुर्गन्धा, पश्चिम में नील वस्त्र वाली, वायव्य कोण में निन्दनीय, उत्तर में लम्बी और ईशान कोण में रण्डा स्त्री रहती है। विदिशा स्त्री संज्ञक है अतः कोई आचार्य ईशान कोण में लम्बी कुमारी आग्नेय कोण में अंग हीन दुर्गन्धवाली, नैऋत्य कोण में नील वस्त्र वाली निन्दनीय और वायव्य कोण में लम्बी विधवा स्त्री रहती है, ऐसा अर्थ करते हैं। प्रयोजन पूर्व आदि दिशाओं में शुभ समागम होने पर उन स्त्रियों के साथ चिन्ता उत्पन्न करती है, किसी वरतु की चोरी होने पर चोरी भी यही होती है।

### प्रश्नकालिक शकुन का विचार

पृच्छासु रुप्यकनकातुरभामिनीनां मेषाव्ययानमखगोकुलसंश्रयासु ।  
न्यग्रोधरकत्तुरोध्रककीचकाख्याश्चूतद्वुमाः खदिरविल्वनगार्जुनाश्च ॥  
प्रश्न काल में शकुन या प्रश्नकर्ता पूर्व दिशा में हो तो रजत, आग्नेय कोण में सुवर्ण, दक्षिण में पीड़ित, नैऋत्य में स्त्री, पश्चिम में बकरा वायव्य में सवारी, उत्तर में यज्ञ और ईशान कोण में शकुन या प्रश्नकर्ता हो तो गोकुल सम्बन्धी प्रश्न कहना चाहिए। पूर्व में बड़, आग्नेय कोण में लालवृक्ष, दक्षिण में लोध, नैऋत्य में छिद्र सहित बाँस, पश्चिम में आम, वायव्य कोण में खेर, उत्तर में बेल और ईशान कोण में अर्जुन वृक्ष होता है। प्रयोजन-पूर्व आदि दिशा में स्थित शुभ शकुन हो तो पूर्वोक्त स्थानों में रजत आदि का लाभ और अशुभ हो तो हानि होती है।

### ‘उत्पात-विज्ञान’

उत्पात होनेका कारण

अपचरेण नराणामुपसर्गः पापसञ्चयाद्वति ?  
संसूचयन्ति दिव्यान्तरिक्षभौमास्त उत्पाताः ॥२॥

(वृहत्संहितायां अ. ५५)

मनुष्यों के अविनय से पाप इकट्ठे होते हैं, उन पापों से उपद्रव होते हैं। दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम उत्पन्न उन उपद्रवों को सूचित करते हैं।

मनुजानामपचारादपरक्ता देवताः सृजन्त्येतान् ।

तत्प्रतिग्याताय नृपः शान्ति राष्ट्रे प्रयुज्जीत ॥३॥

मनुष्यों के अविनय से अप्रसन्न देवतागण उन उत्पातों को उत्पन्न करते हैं। उनके निवारण के लिए राजा शान्ति करावें।

दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम उत्पातों का लक्षण

दिव्यं ग्रहक्षर्वैकृतमुल्कानिर्धातपवनपरिवेषाः ।

गन्धर्वपुरपुरन्दरचापादि यदान्तरिक्षं तत् ॥४॥

भौमं चरस्थिरभवं तच्छान्तिभिराहतं शुकमुपैति ।

नाभसमुपैति मृदुतां शाम्यति नो दिव्यमित्येके ॥५॥

सूर्य आदि ग्रह और नक्षत्रों के विकार युक्त होने का नाम दिव्य, उल्का, निर्धात, विकार युत वायु, सूर्य चन्द्र का परिवेष, गन्धर्व नगर, इन्द्र धनुष आदि (रोहत, ऐरावत, दण्ड और परिघ) से हुए उत्पातों का नाम आन्तरिक्ष, चलायमान वर्सु के स्थिर और स्थिर के चलायमान होने का नाम भौम उत्पात है। यह भौम उत्पात शान्ति से आहत होकर नष्ट हो जाता है, आन्तरिक्ष उत्पात शान्ति से कम हो जाता है और दिव्य उत्पात शान्ति से भी नष्ट नहीं होता। यह किसी आचार्य का मत है।

**दिव्यमपि शमसुपैति प्रभूतकनकान्गोमहीदानैः ।**

**रुद्रायतने भूमौ गोदोहात् कोटिहोमाच्च ॥६॥**

अधिक सुवर्ण, अन्न, गाय और पृथ्वी दान करने से दिव्य उत्पात भी शान्त हो जाता है, आन्तरिक्ष और भौम की बात ही क्या। अर्थात् वे दोनों तो शान्त होते ही हैं तथा शिवालय में भूमि पर, गोदोहन और कोटि संख्यक हवन में दिव्य उत्पात शान्त हो जाता है।

**दैव उत्पात के फल का स्थान**

**आत्मसुतकोशवाहनपुरदारपुरोहितेषु लोके च ।**

**पाकमुपयाति दैवं परिकल्पितमष्टधा नृपतेः ॥७॥**

अपना शरीर, पुत्र, खजाना, वाहन, नगर, स्त्री, पुरोहित, जनपद इन आठों में राजा दैव-कल्पित उत्पातों का फल पाता है।

**उत्पातों का प्रदर्शन**

**अनिमित्तभङ्गचलनस्वेदाश्रुनिपातजल्पनाद्यानि ।**

**लिङ्गार्चार्यतनानां नाशाय नरेशदेशनाम् ॥८॥**

शिवलिङ्ग, देव मूर्ति और देव स्थानों का बिना कारण फटना, कम्पन होना उनमें पसीना आना, उनका रोना, गिरना, उनमें शब्द होना आदि (उनका वमन करना और खिसकना) राजा और देश के नाश के लिए होता है।

**दैवतयात्राशकटाक्षचक्रयुगकेतु भङ्गपतनानि ।**

**सम्पर्यासनसादनसङ्गश्च न देशनृपशुभदाः ॥९॥**

देव स्थानों में यात्रा के समय गाड़ी की धुरी, पहिया, युग (जुआ) या ध्वजा

का भङ्ग होना, गिरना, उलटना, सादने या कहीं पर चिपट जाना देश और राजा के लिए शुभकारी नहीं हैं।

**विकृत वस्तु द्वारा फल प्रदर्शन**

**ऋषिधर्मपितृब्रह्मप्रोद्भूतं वैकृतद्विजातीनाम् ।**

**यद्गुद्रलोकपालोद्भवं पशूनामनिष्टं तत् ॥१०॥**

**गुरुसितशनैश्चरोत्थं पुरोधसां विष्णुं च लोकानाम् ।**

**स्कन्दविशाखसमुत्थं माण्डलिकानां नरेन्द्राणाम् ॥११॥**

**वेदव्यासे मन्त्रिणि विनायके वैकृतं चमूनाथे ।**

**धातरि सविश्वकर्मणि लोकाभावाय निर्दिष्टम् ॥१२॥**

**देवकुमार कुमारीवनिताप्रेष्येषु वैकृतं यत्स्यात् ।**

**तन्नरपतेः कुमारकुमारिकास्त्रीपरिजनानाम् ॥१३॥**

**रक्षः पिशाचगुहाकनागामे वमेव निर्दिष्टम् ।**

**मासैश्चाप्यष्टाभिः सर्वेषामेव फलपाकः ॥१४॥**

मुनि, धर्म, पिता, और ब्रह्मा में उत्पन्न विकृति ब्राह्मणों को, महादेव और लोकपालों (इन्द्र आदियों) में उत्पन्न विकृति पशुओं को, बृहस्पति, शुक्र और शनैश्चर में उत्पन्न विकृति पुरोहितों की, विष्णु में उत्पन्न विकृति मनुष्य को, कार्तिकेय और विशाख देव में उत्पन्न विकृति मण्डलाधिप राजाओं, वेदव्यास में उत्पन्न विकृति मन्त्री को, गणेश में उत्पन्न विकृति मनुष्यों को सेनापति को, ब्रह्मा और विश्वकर्मा में उत्पन्न विकृति मनुष्यों को देवकुमारों में उत्पन्न विकृति राजकुमारों को, देवकुमारी में उत्पन्न विकृति राजकुमारियों को, देवाङ्गनाओं में उत्पन्न विकृति राज-पत्नियों को, देवताओं के दास में उत्पन्न विकृति राजाओं के सेवकों को, इसी प्रकार राक्षसों में उत्पन्न विकृति राजकुमारों को, पिशाचों में उत्पन्न विकृति राजकुमारियों को, यक्षों में उत्पन्न विकृति राजकुमारों को और नागों में उत्पन्न विकृति राजसेवकों को अशुभ फल देने वाली होती हैं। इन उत्पातों का फल आठ महीनों में होता है।

देवता में विकृति जानकर पवित्र, संयत, स्नान किया हुआ, तीन दिन तक

ब्रती पुरोहित विकार चुक्त देवताओं का स्नान, पुण्य, चन्दन, वरत्र, दही मिला हुआ भोजन पदार्थ और बलियों से विधिपूर्वक पूजन करें। तथा स्थालीपाक (चरु) का उस देवता का मन्त्र पढ़कर अग्नि में हवन करें।

पूर्वोक्त देव विकार होने पर राजा सात रात्रि तक ब्राह्मण और देवताओं की पूजा, गीत, नृत्य रात्रि जागरण आदि उत्सव करें। इस प्रकार जिन राजाओं से किया जाता है उनको पूर्वोक्त शान्ति और दक्षिणा से रुद्र उत्पात का अनिष्ट फल नहीं होता है।

### अग्निविकृति और उत्पात

राष्ट्रे यस्यानाग्ने: प्रदीप्ते दीप्ते च नेन्धनवान्।  
मनुजेश्वरस्य पीड़ा तस्य च राष्ट्रस्य विज्ञेया ॥18॥

जिस राजा के राज्य में विना अग्नि की ज्वाला दिखाई दे और काष्ठ युक्त अग्नि प्रज्वलित हो तो उस राजा और देश को पीड़ा होती है।

जलमांसार्ज्जलने नृपतिवधः प्रहरणे रणो रौद्रः ।  
सैन्यग्रामपुरेषु च नाशो वहैर्भयं कुरुते ॥19॥

जल, मांस और गीली वरत्र में अकारण जलन पैदा हो तो राजा की मृत्यु खड़ा आदि में जलन पैदा हो तो भयंकर युद्ध और सेनाओं या नगर में अग्नि नहीं मिले तो अग्नि का भय होता है।

प्रासाद भवन तोरण के त्वादिघ्वननलेन दर्थेषु ।  
तडिता वा षण्मासात् परचक्रस्यागमो नियमात् ॥20॥

प्रासाद (देव गृह), घर, तोरण या ध्वज अग्नि के बिना या विजली से दग्ध हो जायें तो ऐ मास बाद निश्चय दूसरे राजाओं की सेनाओं का आगम होता है।

धूमोऽनग्निसमुत्थो रजस्तमश्चाहिंजं महाभयदम् ।  
व्यभ्रे निश्युद्गुनाशो दर्शनमपि चाहि दोषकरम् ॥21॥

अग्नि के बिना धूम अथवा दिन में धूली या अन्धकार दिखाई दे तो अधिक भय होता है। तथा रात्रि के समय मेघ रहित आकाश में नक्षत्रों का अदर्शन और दिन में दर्शन हो तो अधिक भयकारी होता है।

नगरचतुष्पादण्डजमनुजानां भयंकर ज्वलनमाहुः ।

धूमाग्निविस्फुलिङ्गैः शस्याभ्वरकेशगैर्मृत्युः ॥22॥

नगर, पशु, पक्षी या मनुष्यों में अग्नि के बिना जलन पैदा हो तो अधिक भयकारी होता है। शस्या, वरत्र या केशों में धूम, अग्नि की ज्वाला या अग्नि की चिनगारियाँ दिखाई दे तो स्वामी की मृत्यु होती है।

आयुधज्वलनसर्पणस्वनाः कोशनिर्गमनवेपनानि वा ।

वैकृतानि यदि वायुधेऽपराण्याशु रौद्ररणसङ्कलं वदेत् ॥23॥

खड़ आदियों में जलन पैदा होना, उनका चलायमान होना, उनमें शब्द होना, उनका म्यान से निकल आना अथवा शरत्र में अन्य किसी प्रकार का विकार पैदा होना ये सब राज्य में शीघ्र भयंकर संग्राम करते हैं।

पूर्वोभवतः उत्पातों का शान्ति प्रकार

मन्त्रैराग्नेयैः क्षीरवृक्षात्समिद्धिर्होत्त्वयोऽग्निः संष्पैः सर्पिषा च ।

अग्न्यादीनां वैकृते शांतिरेव देयं चास्मिन् काञ्चनं ब्राह्मणेभ्यः ॥24॥

इसी अध्याय के 18वें श्लोक से लेकर यहाँ तक अग्नि विकार जनित जो अशुभ फल कहे हैं। उनकी शान्ति के लिए आक की लकड़ी, सरसों और वृत्त से अग्नि में हवन करना चाहिये। इस तरह अशुभ फल की शान्ति होती है। इस उत्पात में ब्राह्मणों को सुवर्ण दक्षिणा देनी चाहिये।

वृक्ष वैकृत जन्य उत्पातों का लक्षण और फल

शाखामङ्गेऽकस्माद्वृक्षाणां निर्दिशेद्रणोद्योगम् ।

हसने देकेभ्रंशं रुदिते च व्याधिवाहुल्यम् ॥25॥

अचानक वृक्ष की शाखा टूटने से युद्ध की तैयारियाँ, वृक्षों के हँसने से देश का नाश और वृक्षों के रोने से व्याधि की अधिकता होती है।

राष्ट्रविभेदस्त्वनृतौ वालवधोऽतीव कुसुमिते वाले ।

वृक्षात् क्षीरस्त्रावें सर्वद्रव्यक्षयो भवति ॥26॥

ऋतु वर्जित काल में वृक्षों में पुष्प और फलों की उत्पत्ति होने से राज्य में विभेद, छोटे वृक्ष में वहुत पुष्प आने से बालकों का नाश और वृक्षों से दृध निकलने पर द्रव्यों का नाश होता है।

मध्ये वाहननाशः सङ्ग्रामः शोणितेमधुनि रोमः ।  
स्नेहे दुर्भिक्षभयं महद्ययं निःस्त्रुते सलिले ॥२७॥

वृक्ष से मध्य निकलने पर वाहनों (अश्वादिकों) का नाश, रक्त निकलने पर युद्ध, शहद निकलने पर रोग, तेल निकलने पर दुर्भिक्ष का भय और वृक्ष से जल निकलने पर अधिक भय होता है।

शुष्कविरोहे वीर्यान्सङ्घयः शोषणे च विरुजानाम् ।  
पतितानामुत्थानेस्वयं भयं दैवजनितं च ॥२८॥

सुखे हुए वृक्षों में विरोह (पुनः अंकरा) होने से बल और अन्न का नाश तथा गिरे हुए वृक्षों के अपने आप उठने से दैव जनित भय होता है।

पूजितवृक्षे स्यन्तृतौ कुसुमफलं नृपवधाय निर्दिष्टम् ।  
धूमस्तरिम्नज्यालाऽथता भवेन्तृपवधायैव ॥२९॥

पूजित (प्रधान) वृक्ष में पुष्प और फलों की उत्पत्ति राजा के नाश के लिए और उस (प्रधान वृक्ष) पर धूप या अग्नि की ज्याला भी राजा के नाश के लिये होती है।

सर्पत्सु तरुषु जल्पत्सु वापि जनसङ्गेविनिर्दिष्टिः ।  
वृक्षाणां वैकृत्ये दशभिर्मासैः फलविपाकः ॥३०॥

वृक्षों की चलने या उनसे किसी प्रकार के शब्द निकलने पर मनुष्यों का नाश होता है। सब वृक्षों के विकारजन्य फल दश मास में पकते हैं।

#### पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति का प्रकार

इस उत्पात में सुगन्ध द्रव्य, धूप और वस्त्रों से पूजित विकार युक्त वृक्ष के ऊपर छत्र रख कर एकादश रुद्रों के मन्त्रों का जप करें, 'रुद्रेभ्यः स्वाहा' इस मन्त्र से केवल युक्त युक्त पायस से ब्राह्मणों को भोजन करावें और इस वृक्ष विकार जन्य उत्पात में प्राणियों के हित विन्तक मुनियों ने दक्षिण में पृथ्वी देने को कहा !

सस्य जन्य उत्पातों का लक्षण और फल

नाले ऽव्ययवादीनामेकस्त्रिं द्वित्रिसम्भवोमरणम् ।

कथयति तदधिपतीनां यमलं जातं च कुसुमफलम् ॥३३॥

कमल, जो आदि (गेहूँ और कौरी) के एक नाल में दो या तीन बाल की उत्पत्ति हो तो क्षेत्र के अधिपति का मरण होता है। तथा यमल पुष्प या फलों की उत्पत्ति हो तो भी उसके अधिपति का मरण होता है।

अतिवृद्धिः सस्यानां नानाफलकुसुमसम्भवो वृक्षे ।

भवति हि यद्येकस्मिन् परचक्रस्यागमो नियमात् ॥३४॥

यदिधानों की अधिक वृद्धि तथा एक वृक्ष में अनेक प्रकर के फल और पुष्पों की उत्पत्ति हो तो निश्चय पर चक्र का आगम होता है।

अर्घेन यदा तैलं भवति तिलानामतैलता वा स्यात् ।

अन्नस्यचैरस्यं तदा तु विन्द्याद्ययं सुमहृत ॥३५॥

यदि तिल के परिमाण से आधे तेल का परिमाण हो या तिल से बिलकुल तेल नहीं निकलता ही और अन्न से विरसता हो तो अति भय होता है।

पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति प्रकार

विकृतकुसुमं फलं वा ग्रामादथवा पुराद्विः कार्यम् ।

सौम्योऽत्रः चरुः कार्यो निर्वाप्यो वा शान्त्यै ॥ ३६॥

सस्ये च दृष्टा विकृतिं प्रदेयं तत्क्षेत्रमेव प्रथमं द्विजेभ्यः ।

तस्यैव मध्ये चरुमत भौमं कृत्वा न दोषं समुपैति तज्जम् ॥३७॥

विकार युक्त पुष्प और फलों को गाँव से बाहर कर देना चाहिये। तथा सोम देव की चरु बनावे और शान्ति के लिए दान करना चाहिए धान्यों में पूर्वोक्त विकार देखकर पहले उस क्षेत्र को ही ब्राह्मण के लिए दे देना चाहिए और उसी क्षेत्र के मध्य में पार्थिव चरु बनाने से भूमि से उत्पन्न दोष स्वामी को नहीं होता है।

दृष्टि सम्बन्धी उत्पात का लक्षण और फल

दुर्भिक्षमनावृष्टावतिवृष्टौ क्षुद्रयं परभयं च ।

रोगो द्वन्द्वुभवायां नृपतिवधोऽनभ्रजातायाम् ॥३८॥

अनावृष्टि हो तो दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि हो तो दुर्भिक्ष तथा शत्रु भय, वर्षा कृतु से भिन्न ऋतु में वृष्टि हो तो रोग और बिना मेघ वृष्टि हो तो राजा की मृत्यु

होती है।

ऋतु सम्बन्धी उत्पात का लक्षण और फल  
श्रीतोष्णावपर्यासो नो सम्प्रगृतुषु च सम्प्रवृत्तेषु ।  
पृष्मासाद्राष्ट्रभयं रोगभयं दैवजनितं च॥३९॥

श्रीत और ऊण में व्यत्यय होने से अर्थात् गर्मी के समय में ठण्डी और ठण्ड के समय में गर्मी के पड़ने से तथा जिस क्रतु का जो धर्म है वह ठीक-ठीक नहीं होने से छः मास बाढ़ राष्ट्र भय और दैव-जनित (पूर्व-जन्मार्जित पाप के द्वारा) रोग भय होता है।

अन्यतौं सप्ताहं प्रबन्धवर्षे प्रधाननृपमरणम् ।  
रक्ते शस्त्रोद्योगो मांसास्थिवसादिभिरकः॥४०॥  
धान्यहिरण्यात्वक्फलकुसुमाद्यैर्वर्षितैर्भयं विन्द्यात् ।  
अङ्गरपांसुवर्षे विनाशमायाति तन्नगरम्॥४१॥

वर्षा से भिन्न में लगातार एक सप्ताह तक वृष्टि होने पर प्रधान राजा का मरण, रक्त की वृष्टि होने पर युद्ध और मांस, हड्डी, वसा आदि (धृत और तेल) की वृष्टि होने पर मरी (मरकी) पड़ती है। धान्य, सोना, वृक्ष की छाल, फल, पुष्प, आदि (पत्र आदि) की वृष्टि हो तो भय, कोयले और धूली की वृष्टि हो तो नगर का नाश होता है।

उपला विना जलधरैर्विकृता वा प्राणिनो यदा वृष्ट्याः ।  
छिद्रं वाप्यतिवृष्टौ सस्यानामीतिसञ्जननम्॥४२॥

यदि मेघ के बिना ओलों की वृष्टि, विकार युत प्राणियों की वृष्टि या अति वृष्टि होने पर भी कहाँ-कहाँ पर छिद्र (अवृष्टि हो तो धान्यों को ईति, अति वृष्टि आदि) का भय होता है।

क्षीरधृतक्षौद्राणां दहनो रुधिरोष्णवारिणां वर्षे ।  
देशविनाशो ज्ञेयोऽसुखर्षे चापि नृपयुद्धम्॥४३॥

दृध, धी, शहद, रुधिर या गर्म जल की वृष्टि हो तो देश का नाश और रक्त की वृष्टि हो तो राजाओं में युद्ध होता है।

यद्यमलेऽके छाया दश्यते दश्यता प्रतीपा वा ।

देशस्य तदा सुमुहद्यमायातं विनिर्देश्यम्॥४४॥

निर्मल सूर्य किरण होने पर भी यदि वृक्ष आदि द्रव्यों की छाया नहीं दिखाई दे या उल्टी दिखाई दे तो देश में अति भय उत्पन्न होता है।

इन्द्र-धनुष सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल

व्यधे न भसीन्द्रनुर्दिवा यदा दश्यतेऽथवा रात्रौ ।

प्राच्यामपरस्यां वा तदा भवेत्कुद्यं सुमहत्॥४५॥

मेघ रहित आकाश में दिन या रात्रि में इन्द्रधनुष पूर्व या पश्चिम दिशा में दिखाई दे तो अत्यन्त दुर्भिक्ष होता है।

पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति प्रकार

सूर्य, चन्द्रमा, मेघ और वायु के विकारजन्य उत्पात के समय यज्ञ करना चाहिये। तथा शाली धान्य, भोज्यान, गाय और सोना की दक्षिणा ब्राह्मणों को देनी चाहिये तब पाप की शान्ति होती है।

नदी सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल

अपसर्पणं नदीनां नगरादचरेण शून्यतां कुरुते ।

शोषश्चाशोष्याणामन्येषां वा हृदादीनाम्॥४७॥

स्नेहासुइमांसवहाः सङ्कलकलुषाः प्रतीपगाश्चापि ।

परचक्रस्यागमनं नद्यः कथयन्ति षण्मासात्॥४८॥

यदि नगर के मध्य या पास में बहती हुई नदियाँ दूर चली जाये या नहीं सूखने वाले हृद आदि सूख जावें तो शीघ्र प्राणियों से शून्य नगर हो जाता है। यदि नदियों में तेल, रुधिर या मांस वहने लगे या खल्प और मलिन जल हो जाये तो छः मास बाढ़ परचक्र का आगम होता है।

कूप सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल

ज्वालावूमक्वाथारुदितोल्कुष्टानि चैव कूपानाम् ।

गीतप्रजल्पितानि च जनमरणकायोपदिष्टानि॥४९॥

कूपमें अग्नि की ज्वाला, धुआँ, जल का खोलना, रोने का शब्द, गीत या और

किसी प्रकार के शब्द लोगों की मृत्युके लिए होते हैं।

जलाशय सम्बन्धि उत्पातों का लक्षण और फल  
सलिलोत्पत्तिरखाते गन्धरसविपर्यये च तोयानाम् ।  
सलिलाशयविकृतौ वा महद्वयं तत्र शांतिमिमाम् ॥५०॥

बिना खोटी हुई जमीन में जल निकलना, जल की गन्ध और रसों में विपर्यय होना तथा जलाशयों में विकार पैदा होना अग्नि भय करने वाला होता है इसकी शान्ति का प्रकार आगे कहते हैं।

पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति प्रकार  
सलिलविकारे कुर्यात्पूजां वरुणस्य वारुणैर्मन्त्रैः।  
तैरेव च जपहोमं शममेवं पापमुपयाति ॥५१॥

जल विकार होने पर वरुण के मन्त्रों से पूजा, जप और हवन करे। इस तरह करने से अशुभ फल का निवारण होता है।

प्रसव सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल  
प्रसवविकारे स्त्रीणां द्वित्रिचतुः प्रभृतिसम्प्रसूतौ वा ।  
हीनातिरिक्तकाले च देशकुलसङ्क्षयो भवति ॥५२॥

स्त्रियों में किसी प्रकार का प्रसव विकार (घोड़ा, हाथी, बैल, सर्प आदि जन्तु की तरह जातक) होने पर अथवा एक साथ दो, तीन, चार आदि बच्चे होने पर या प्रसवकाल (तत्कालीमन्दुसहितो द्विरसांशको इत्यादि से निर्णितकाल) से पहले या पीछे प्रसव होने पर देश ओर कुल का नाश होता है।

पशु के प्रसव सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल  
बड़वोष्ट्रमहिषगोहस्तिनीषु यमलोद्धवे मरणमेषाम् ।  
षष्मासात् सूतिफलं शांतौ श्लोकौ च गर्गोत्कौ ॥५३॥

घोड़ी, ऊँटनी, भैंस, गाय और हाथिनी को एक साथ दो बच्चे हों तो उन (घोड़ा आदि) का नाश होता है। छ: मास बाद प्रसव विकार का फल होता है। इसकी शान्ति के लिए आगे गर्गोक्त दो श्लोक दिए गये हैं।

प्रसव शान्ति का गर्गोक्त प्रकार

अपना हित चाहने वाला मनुष्य विकार युत स्त्रियों को अन्य देश में जाकर

छोड़ आवे, इच्छानुसार ब्राह्मणों को प्रसन्न करे और इस उत्पातकी शान्ति भी करे। विकार युत चतुष्पदों को समृह से अलग अन्य स्थान पर जाकर छोड़ आवे। अन्यथा नगर, नगर के स्वामी और समृह का नाश करता है।

चतुष्पद सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल  
परयोनावभिगमनं भवति तिरश्चामसाधु धेनूनाम् ।  
उक्षाणो वान्योन्यं पिवतिश्चा वा सुरभिपुत्रम् ॥५६॥  
मासत्रयेण विन्यात्तास्मिन्निः संशयं परागमनम् ।  
तत्रतिधातायैतौ श्लोकौ गर्गेण निर्दिष्टौ ॥५७॥

एक जाति के पशु दूसरे जाति के पशु के साथ मैथुन करें, गाय या बैल परस्पर एक दूसरे का स्तन पीवे तो तीन मास बाद निःसंशय पर चक्र का आगम होता है। इसके निवारण के लिए आगे गर्गोक्त दो श्लोक हैं।

पूर्वोक्त उत्पातों में शान्ति के प्रकार  
त्यागी विवासनं दानं तत्स्याशु शुभं भवेत् ।  
तर्पयेद्वात्मणांश्चात्र जपहोमांश्च कारयेत् ॥५८॥  
स्थीलीपाकेन धातारं पशुना च पुरोहितः ।  
प्राजापत्येन मन्त्रेण यजेद्वह्ननदक्षिणाम् ॥५९॥

विकार युक्त पशुओं को छोड़ देने से या दूसरी जगह कर देने से शीघ्र चतुष्पद जन्य उत्पातों की शांति हो जाती है। इस उत्पात में ब्राह्मणों को संतुष्ट, जप और हवन करे। तथा चरु, पशु, प्रजापत्य मन्त्रों से ब्रह्मा का यज्ञ करे और बहुत अन्न की दक्षिणा देवें।

वायव्य उत्पातों का लक्षण और फल  
यानं वाहवियुक्तं यदि गच्छेन्न व्रजेच्च वाहेयुतम् ।  
राष्ट्रभयं भवति तदा चक्राणां सादभद्रे च ॥६०॥

यदि अश्व आदि वाहन, वाह (सवार) से अलग होकर भागे, सवार के साथ नहीं चले और रथ का पहिया जमीन में गड़ जाये चा टूट जाये तो राष्ट्र को भय होता है।

वाय सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल  
गीतखत्यूर्यशब्दा नभसि यदा वा चरस्थिरान्यत्वम् ।

मृत्युस्तदा गदा वा विस्वरत्यै पराभिभवः ॥६ १ ॥

यदि आकाश में गीत या तुरही का शब्द सुनाई पड़े या स्थिर पदार्थ चर और चर पदार्थ स्थिर दिखाई दे तो मरण और रोग होता है अथवा तुरही बजने से विकार युत शब्द हो तो शत्रुओं से पराजय होती है।

तुरही के शब्द जन्य उत्पातों का लक्षण और फल  
अनभिहतत्यूर्यनादः शब्दो वा ताडितेषु यदि न स्यात् ।

व्युत्पत्तौ वा तेषां परागमो नृपतिमरणं वा ॥६ ॥

यदि बिना बजाये तुरही से शब्द होवे और बजाने से शब्द न निकले या अनेक प्रकार के शब्द निकले तो शत्रु सेनाओं का आगम और राजा का मरण होता है।

गृह सामग्री आदि जन्य उत्पातों का लक्षण और फल  
गोलाङ्गलयोः सङ्गे दर्वीशूर्पाद्युपस्करविकारे ।  
क्रोष्टुकनादे च तथा शस्त्रभयं मुनिवचश्चेदम् ॥६ ३ ॥

बैल और हल का अचानक संयोग हो जाने, दर्वी (चमचा-करौछ), शूर्प (सूप=छाज) आदि गृह सामग्री में विकार उत्पन्न होने और शृंगाल (गोदड़) के विकार युत शब्द होने से भय होता है। यह मुनि का वचन है।

पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति प्रकार  
वायव्येष्वेषु नृपतिर्वायुं शक्तुभिरर्चयेत् ।  
आवायोरिति पञ्चर्चोजप्तव्याः प्रयतैद्विजैः ॥६ ४ ॥  
ब्रात्मणान् परमान्नेन दक्षिणभिश्च तर्पयेत् ।  
बह्नन्दक्षिणा होमाः कर्तव्याश्च प्रयत्नतः ॥६ ५ ॥

इन पूर्वोक्त वायव्य विकार में सतू (सतुआ) से वायु देवता की पूजा करे। नियम युक्त होकर ब्रात्मण 'आवायोः' इत्यादि पाँछ ऋचाओं का जप करे। पायस से ब्रात्मणों को तृप्त करे और प्रयत्न पूर्वक बहुत अन्न की दक्षिणा देकर हवन करें।

पशु पक्षी आदि जन्य उत्पातों के लक्षण और फल  
पुरपक्षिणो वनचरा वन्या वा निर्भया विशन्ति पुरम् ।

नक्तं वा दिवस चराः क्षपाचरा वा चरन्त्यहनि ॥६ ६ ॥  
सन्ध्याद्वयेऽपि मण्डलमावधन्तो मृगा विहङ्गा वा ।

दीप्तायां दिश्यथवा क्रोशन्तः संहता भयदाः ॥६ ७ ॥

यदि नगर में रहने वाले पक्षी वन में और वन में रहने वाले पक्षी निर्भय होकर नगर में प्रवेश करें या दिन में चलने वाले पक्षी रात्रि में और रात्रि में चलने वाले पक्षी दिन में चले एवं सूर्य के उदय और अस्त समय में वन में रहने वाले पशु और पक्षी सूर्याभिमुख होकर मण्डल बाँधकर बैठें या सब इकट्ठे होकर अधिक शब्द करते हुए दिखाई दें तो भय देने वाले होते हैं।

श्येनाः प्रसुदन्त इव द्वारे क्रोशन्ति जम्बुकाः दीप्ताः ।  
प्रविशेन्नरेन्द्रभवने कपोतकाः कौशिको यदि वा ॥६ ८ ॥

यदि श्येन (बाज) अधिक रोते हुए की तरह दिखाई दे, सूर्य की तरफ मुख करके शृङ्गाल (गोदड़) पुरद्वार पर शब्द करे तथा राजभवन में कबूतर या उल्लू प्रवेश करे तो भय देने वाला होता है। कहीं-कहीं पर श्यानः की जगह श्वानः पाठ मिलता है।

कुकुटरुतं प्रदौषे हेमन्तादौ च कोकिलालापाः ।  
प्रतिलौमण्डलचराः श्येनाद्याश्चाम्बरे भयदाः ॥६ ९ ॥  
गृहचैत्यतोरणेषु द्वारेषु च पक्षिसङ्गसम्पातः ।  
मधुवल्मीकाभ्योरुहसमुद्धवश्चापि नाशाय ॥७ ० ॥

यह प्रदोष समय में मुर्गा और हेमन्त ऋतु के आदि में कोयल बोले तथा आकाश में बाज आदि माँस भक्षण करने वाले पक्षी वृत्ताकार मार्ग में प्रदक्षिणा क्रम से चले तो भय देने वाला होता है। घर, प्रधान, वृक्ष, तोरण (पुरद्वार) या गृहद्वार पर पक्षियों के समुदाय गिरें तथा इन्हीं घर आदि पर मधु (शहद) का छत्ता वल्मीक (वर्मई) और कमलों की उत्पत्ति नाश के लिए होती है।

श्वामिरस्थशवावयवप्रवेशनं मन्दिरेषु मरकाय ।  
पशुशस्त्रव्याहारे नृपमृत्युर्मुनिवचश्चेदम् ॥७ १ ॥

यदि कुत्ते हड्डी या शव के कोई अङ्ग घर में ले आवें तो मरी पड़ती है। तथा पशु या शरव मनुष्य की तरह बोले तो राजा की मृत्यु होती है। ऐसा मुनियों का वचन है।

पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति प्रकार

मृगपक्षिविकारे षु कुर्याद्वोमान् क्षिणान् ।

देवाः कपोत इति च जप्तव्याः पञ्चभिर्द्विजैः ॥७२॥

सुदेवा इति चैकेन देया गावः सदक्षिणाः ।

जपेच्छाकुनसूक्तं वा मनो वेदशिरांसि च ॥७३॥

मृग और पक्षियों में पूर्वोक्त विकार होने पर दक्षिणा के साथ हवन करें, पाँच ब्रात्मणों के द्वारा 'देवाः कपोत' इत्यादि मन्त्र का तथा एक ब्रात्मण के द्वारा 'सुदेवा' इत्यादि मन्त्र का जप करावें, दक्षिणा के साथ गोदान करे और शकुन सूक्त या वेदशिरांसि इत्यादिमन्त्र का जप करें।

इन्द्रध्वज सम्बन्धी उत्पातों का लक्षण और फल

शक्र ध्वजे न्द्र कीलस्तम्भद्वार प्रपात भङ्गेषु ।

तद्वक्षपाटोरणकेतूनां नरपतेर्मरणम् ॥७४॥

इन्द्रध्वज, इन्द्रकील और स्तम्भद्वार के गिरने या टूटने से तथा कपाट, तोरण और ध्वज के गिरने या टूटने से राजा का मरण होता है।

अक्समात् तेज आदि उत्पातों के लक्षण और फल

सन्ध्याद्वयस्य दीपिर्धूमोत्पतिश्च काननेऽनग्नौ।

छिद्राभावे भूमेर्दरणं कम्प्यश्च भयकारी ॥७५॥

दोनों सन्ध्याओं में तेज का होना, वन या अग्नि रहित स्थान में धूम की उत्पत्ति होना, छिद्राभाव वाली भूमि का फट जाना या कम्पन होना भयकारी होता है।

राजा के व्यवहार से देश का नाश

पाखण्डानां नास्तिकानां च भक्तः साध्वाचारप्रोज्जितः क्रोधशीलः।

ईष्युः कूरो विग्रहासत्कचेता यस्मिन् राजा तस्य देशस्य नाशः ॥७६॥

जिस देश में पाखण्डी और नास्तिक मनुष्यों का भक्त, सज्जनों के आचरणों

रहित, क्रोधी, पर छिद्रान्वेषी, खल तथा सदा युद्ध की इच्छा रखने वाला राजा ही उस देश का नाश होता है।

बालकों की चेष्टाजन्य उत्पातों का फल  
प्रहर हर छिन्द भिन्दीत्यायुधकाष्ठाशमपाणयो बालाः ।

निगदन्तः प्रहरन्ते तत्रापि भयं भवत्याशु ॥७७॥

जिस स्थान पर शरव, काठ (छड़ी आदि) और पथर हाथ में लेकर मारो छीन लो, काटो, तोड़ डालो इत्यादि कहते हुए बालक गण एक दूसरे के ऊपर प्रहार करे तो वहाँ शीघ्र भय होता है।

गृहस्वामी के चित्रजन्य उत्पातों का फल  
अङ्गारगैरिकादैविकृतप्रेताभिलेखनं यस्मिन् ।

नायकचित्रितमथवा क्षये क्षयं याति नचिरेण ॥७८॥

जिस घर की दीवार पर कोयले गेरू आदि (पीले और नीले) रङ्गो से विकृत पृत पुरुषों के चित्र बनाये जायें या कोयले आदि से बनाये हुए गृहस्वामी के चित्र दिखाई दें तो वह घर शीघ्र नष्ट हो जाता है।

गृह विकार जन्य उत्पातों का लक्षण और फल  
लूतापटाङ्गशब्दलं न सन्ध्ययोः पूजितं कलहयुक्तम् ।

नित्योच्छिष्टस्वीकं च यद्गृहं तत् क्षयं याति ॥७९॥

जो घर मकरियों के जाल से व्याप्त हो, दोनों सन्ध्याओं में देवादि के पूजन रहित हो, प्रतिदिन कलह युक्त हो और अपवित्र स्त्रियों से युक्त हो उसका नाश हो जाता है।

राक्षस दर्शन का फल

दृष्टेषु यातुधानेषु निर्दिशेन्मरकमाशु सम्प्राप्तम् ।

प्रतिधातायै तेषां गर्गः शान्तिं चकरेमाम् ॥८०॥

यदि प्रत्यक्ष में राक्षस दिखाई दे तो बहुत शीघ्र मरी पड़ती है। इन पूर्वोक्त उत्पातों के नाश के लिए गर्ग मुनि ने आगे कथित प्रकार की तरह शान्ति कही है।

पूर्वोक्त उत्पातों का शान्ति प्रकार

महाशान्त्योऽथ वलयो भोज्यानि सुमहान्ति च ।

कारयेत महेन्द्रं च माहेन्द्रिं च समर्चयेत् ॥८१॥

पूर्वोक्त उत्पातों की अधिक शांति करनी चाहिए। बलि, नैवेद्य से पूजा करनी चाहिए। तथा इन्द्र और इन्द्रणी का अधिक पूजन करना चाहिये।

फल रहित उत्पातों का काल

नरपतिदेशविनाशे केतोरुदयेऽथवा ग्रहेऽर्केन्द्रोः ।

उत्पातानां प्रभवः स्वर्तुभवश्चाप्यदोषाय ॥८२॥

राजा के विनाश, देश के ऊपर आपत्ति, केतु के उदय और सूर्य, चन्द्र के ग्रहण के समय उत्पन्न उत्पात तथा आगे कथित की तरह अपने ऋतु में उत्पन्न उत्पात दोष के लिये नहीं होते हैं।

ऋतु स्वभाव से उत्पन्न उत्पात

ये च न दोषान् जनयन्त्युत्पातास्तानृतुस्वभावकृतान् ।

ऋषिपुत्रकृतैः श्लौकैर्विद्यादेतैः समासोक्तैः ॥८३॥

जो उत्पात ऋतु स्वभाव जनित दोष को नहीं पैदा करता है ! संक्षेप में कहे हुये ऋषिपुत्र कृत आगे कथित पद्यों के द्वारा उनको जानना चाहिए !

वसन्तमें स्वाभाविक उत्पात

वज्राशनिमहीकम्पसन्ध्यानिर्धातिनिः स्वनाः ।

परिवेषजोधूमरक्तार्कस्तमयोदयाः ॥८४॥

द्रुमेभ्योऽन्नरसरस्नेहबहुपुष्प फलोद्गमाः ।

गोपक्षिमद्वृद्धिश्च शिवाय मधुमाधवे ॥८५॥

वज्र (विजली), अशनि (पथरों की वर्षा या उल्कापात), भूकम्प, दीप्ता, सन्ध्या, निर्धात, शब्द, सूर्य-चन्द्र का परिवेष, धूली, धूम, रक्त वर्ण के रवि का उदयारत, वृक्षों से भोजन, मधुरादि रस और तेल आदि की उत्पत्ति गाय और पक्षियों में काम की वृद्धि ये सब उत्पात चैत्र और वैशाख में कल्याण के लिये होते हैं।

ग्रीष्म ऋतु में स्वाभाविक उत्पात

तारोल्कापातकलुषं कपिलार्केन्दुमण्डलम् ।

अनग्निज्वलनस्फोटधूमे ष्वनिलाततम् ॥८६॥

रक्तपद्मारुणा सन्ध्या नभः क्षुद्धार्णवोपमम् ।

सरितां चाम्बुसंशोषं द्वष्ट्वा ग्रीष्मे शुभं वदेत ॥८७॥

सदा उल्कापात से मलिन आकाश, सूर्य-चन्द्र के पीले मण्डल, अग्नि के बिना ताला का शब्द, धूप, धूली और वायु से आहत रक्त, कमल की तरह लोहित वर्ण की सन्ध्या, तरङ्ग युक्त समुद्र की तरह आकाश, नदियों में जल सूखना ये सब उत्पात, ग्रीष्म (ज्येष्ठ और आषाढ़) में शुभ होते हैं।

वर्षा ऋतु में स्वाभाविक उत्पात

शक्तयुधपरीवेषविद्युच्छुष्कविरोहणम् ।

कम्पोदूर्तनवैकृत्यं रसनं दरणं क्षितेः ॥८८॥

सरोनद्युदपानानां वृद्ध्यूर्ध्वतरणप्लवाः ।

सरणं चाद्रिगेहानां वर्षासु न भयावहम् ॥८९॥

इन्द्र धनुष, सूर्य चन्द्र का परिवेष, बिजली और सूखे वृक्षों में अड़कुर निकलना, पृथ्वी का काँपना, उलटना स्वरूप बदलना, शब्द करना, फटना सरोवरों का बढ़ जाना, नदियों का ऊपर आना, वाषी, कूप, तालाब आदि में अधिक जल होना, पर्वत और गृहों का चलायमान होना ये सब उत्पात वर्षाऋतु में शुभ हैं।

शरद ऋतु में स्वाभाविक उत्पात

दिव्यस्त्रीभूतगन्धर्व विमानाभ्दुतदर्शनम् ।

ग्रहनक्षत्रताराणां दर्शनं च दिवाऽम्बरे ॥९०॥

गीतवादित्रनिर्धोषा वनपर्वतसानुषु ।

सस्यवृद्धिरपां हानिरपापाः शरदि स्मृताः ॥९१॥

दिव्य स्त्री, गन्धर्व, रथ तथा आश्चर्य करने वाली वस्तुओं का दर्शन, दिन के समय ग्रह नक्षत्र आदि का दर्शन, वन तथा पर्वतों में गीत और वाद्यों की ध्वनि, धान्य की वृद्धि और जल की हानि से सब शरद ऋतु में अपाप (शुभ) है।

हेमन्त ऋतु में स्वाभाविक उत्पात

शीतानिलतुषारत्वं नर्दनं मृगपक्षिणाम् ।

रक्षोयक्षादिसत्त्वानां दर्शन वागमानुषो ॥९२॥

दिशो धूमान्धकारश्च सनभोवनपर्वताः ।  
उच्चैः सूर्योदयास्तौ च हेमन्ते शोभनाः स्मृताः ॥९३॥

बायु तथा तुषार (बर्फ) में ठण्डापन, मृग और पक्षियों का शब्द, राक्षस, यक्ष आदि प्राणियों का दर्शन, मनुष्य के बिना वाणी, अन्धकार युत आकाश, वन, पर्वत और दिशा तथा उच्च में सूर्य उदयास्त होना ये सब हेमन्त में शुभ हैं।

शिशिर ऋतु में स्वाभाविक उत्पात  
हिमपातानिलोत्पाता विरुपाद्रुतदर्शनम् ।  
कृष्णाञ्जनाभमाकाशं तारोल्कापातपिञ्जरम् ॥९॥।।  
चित्रगर्भोद्घवाः स्त्रीषु गोऽजाश्वमृगपक्षिषु ।  
पत्राङ्कुरलतानां च विकाराः शिशिरे शुभाः ॥९५॥

हिमपात, बायु सम्बन्धी उत्पात, भयानक प्राणियों का आश्चर्य करने वाला दर्शन, काले अञ्जन की तरह रात और उल्कापात से पीला आकाश, स्त्रियों के गर्भ से नाना प्रकार के (घोड़ा आदि के अङ्ग सदृश) प्राणियों की उत्पत्ति, गाय, बकरी, घोड़ा, मृग और पक्षियों के गर्भ से विजातीय प्राणियों की उत्पत्ति, पत्र, लता और अंकुरों में विकार ये सब शिशिर ऋतु में शुभ होते हैं।

विशेष- ऋतुस्वभावजा व्येते दृष्ट्याः स्वर्तो शुभप्रदाः ।  
॥ ऋतोरन्यत्र चोत्पाता दृष्टास्ते चातिदारुणाः ॥९६॥

ये ऋतु स्वभाव जनित उत्पात अपने ऋतु में शुभ फल देने वाले होते हैं। पर अन्य ऋतु में दिखाई दें तो अति कष्ट देने वाले होते हैं।

सत्य बोलने वाले प्राणी  
उन्मत्तानां च या गाथाः शिशूनां यज्च भाषितम् ।  
स्त्रियो यद्य प्रभाषन्ते तस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥९७॥

पागलों की गाथा (गीत आदि), बालकों का वचन और स्त्रियों की वाणी का उल्लंघन नहीं होता अर्थात् जो बोलते हैं सब सत्य होते हैं।

सत्य वाणी बोलने में कारण  
पूर्वं चरति देवेषु पश्चाद्यरति मानुषान् ।  
नाचोदिता वाग्वदति सत्या व्येषा सरस्वती ॥९८॥

बिना प्रेरणा के नहीं बोलने वाली यह सत्य रूप सरस्वती पहले देवताओं में विचरण करती थी, बाद में मनुष्यों को प्राप्त हुई।

“सूर्य से शकुन-विज्ञान”  
विकार युक्त रवि का फल-

अप्राप्य मकरमकों विनिवृत्तो हन्ति सापरां याम्याम् ।  
कर्कटकमसम्प्राप्तो विनिवृत्तश्चोत्तरां सैन्द्रीम् ॥४॥

यदि मकर में नहीं प्रविष्ट होकर सूर्य दक्षिण तरफ लौट जाये तो पश्चिम और दक्षिण दिशा में रिथ्त जनों का नाश करता है। यदि कर्क में प्रविष्ट नहीं होकर सूर्य उत्तर तरफ लौट जाए तो पूर्व और उत्तर दिशा में रिथ्त जनों का नाश करता है।

(बृहत्संहिता, पृष्ठ-१७)

सीमातिक्रमण में शुभ फल-

उत्तरमयनमतीत्य व्यावृतः क्षमेसस्यवृद्धिकरः ।  
प्रकृतिस्थश्चाप्येवं विकृतगतिर्भयकृदुष्णांशुः ॥५॥

यदि सूर्य उत्तर अयन को अतिक्रमण करके (मकर में प्रविष्ट होकर) उत्तर तरफ लौटे तो लोगों का कल्याण और धान्य की वृद्धि करता है। यहाँ पर उत्तरायण का ग्रहण उपलक्षण है, किन्तु दक्षिणायन में भी इसी तरह का फल कहना चाहिये अर्थात् कर्क में प्रविष्ट होकर सूर्य दक्षिण तरफ लौटे तो लोगों का कल्याण और सत्य की वृद्धि करता है। प्रकृतिरिथ्त (गणितागत अयननिवृत्ति और पूर्वकथितवेधीय अयनवृत्ति एक काल में) होने पर ही पूर्वकथित फल ठीक घटता है। तथा विकारयुक्त गति होने पर सूर्य लोगों में भय उत्पन्न करता है।

सतमस्कं पर्व विना त्वष्टा नामार्कमण्डलं कुरुते ।

स निहन्ति सप्त भूपान् जनांश्च शस्त्राग्निदुर्भिक्षैः ॥६॥

पर्व से भिन्न काल में त्वष्टा नाम का ग्रह सूर्यमण्डल को अन्धकारयुक्त करता हो तो सात राजाओं का नाश करता है और शस्त्र, अग्नि, दुर्भिक्ष, इन से लोगों का नाश करता है।

तामस कीलक से आच्छादित सूर्य का फल-

तामसकीलकसंज्ञा राहुसुताः केतवस्त्रर्यास्त्रिंशत् ।  
वर्णस्थानाकारैस्तान् दृष्ट्याऽर्के फलं द्रूयात् ॥७॥

राहु के पुत्र तैतीसख्यंक केतु हैं, ये तामस, कीलक आदि नाम से प्रसिद्ध हैं। इनको सूर्य(ग्रहणकालि सूर्य) में देखकर वर्ण, स्थान और आकृति से फल कहे।

ते चार्कमण्डलगताः पापफलाश्चन्द्रमण्डले सौम्याः।  
ध्वाङ्ककवन्धप्रहरणरूपाः पापाः शशाङ्केऽपि ॥८॥

ये तामस-कीलक-संज्ञक राहुपुत्र सूर्यमण्डल में अशभ और चन्द्रमण्डल में प्रविष्ट होने पर शुभ फल देते हैं। पर ध्वांक (काक), कवन्ध (छिन्नमस्तक पुरुष) या प्रहरण (खड़ादि) के समान उनकी आकृति देखने में आवे तो चन्द्रमण्डल में प्रविष्ट होने पर भी वे पाप फल देते हैं।

तामस कीलक आदि के उदय के कारण

ते षामुदये रुपाण्यम्भः कलुषं रजोवृतं व्योम।  
नगतस्तिखरामर्दी सशर्करो मारुतश्चण्डः ॥९॥  
ऋतुविपरीतास्तर-वो दीप्ता मृगपक्षिणो दिशा दाहाः।  
निर्धातमहीकम्पादयोभवन्त्यत्र चोत्पाताः ॥१०॥

इन तामस-कीलक आदि के उदय होने से पहले विकारयुक्त जल, धूलि से व्याप्त आकाशमण्डल, पर्वत, वृक्ष, शिखर इन सब का नाश करने वाला मिट्टी के कणों से युक्त भयङ्कर वायु, ऋतु के विपरीत वृक्षों में फल-फूल, सूर्य की गर्मी से पशु-पक्षी आदि जानवरों में व्याकुलता, दिशाओं में जलन, निर्धात, भूकम्प ये उत्पात होते हैं।

उत्पातों का निष्फलत्व-

न पृथक् फलानि तेषां शिखिकीलकराहुदर्शनानि यदि ।  
तदुदयकारणमेषां केत्वादीनां फलं ब्रूयात् ॥११॥

यदि केतु, तामस, कीलक, राहु इनका उत्पात होने के बाद सात रोज के अन्दर दर्शन हो जाये तो पूर्ववर्णित उत्पात का कोई अलग फल नहीं होता ये उत्पात हन केतु आदि के उदय के कारण होते हैं। अर्थात् पूर्व में इन उत्पातों का दर्शन हो जाने से केतु आदि का दर्शन निश्चित होता है। यदि किसी समय किसी कारण से उत्पातों का दर्शन होने पर भी तामस, कीलक आदि का दर्शन न हो तो इन उत्पातों के वश ही फल कहना चाहिये।

तामस-कीलक आदि के दर्शन का फल—  
यस्मिन् यस्मिन् देशे दर्शनमायान्ति सूर्यविम्बस्थाः।  
तस्मिंस्तस्मिन् व्यसनं महीपतीनां परिज्ञेयम् ॥१२॥  
क्षुत्प्रम्लानशरीरा मुनयोऽप्युत्सृष्टधर्मसच्चरिताः  
निर्मासवालहस्ताः कृच्छ्रेणायान्ति परदेशम् ॥१३॥  
तत्करविलुप्तवित्ताः प्रदीर्घनिः श्वासमुकुलिताक्षिपुटाः।  
सन्तःसन्नशरीराः शोकोद्भववाष्परुधदृशः ॥१४॥  
क्षामा जुगुप्समानाः सनृपतिपरचक्रपीडिता मनुजाः।  
स्वनृपतिचरितं कर्म न पुराकृतं प्रबुवन्त्यन्ये ॥१५॥  
गर्भेष्वपि निष्पन्ना वारिमुचो न प्रभूतवारिमुचः।  
सरितो यान्ति तनुत्वं कर्वाचित्क्वचिज्जायते सस्यम् ॥१६॥

जिन-जिन देशों में सूर्यविम्ब स्थित तामस-कीलक आदि का दर्शन हो उन-उन देशों में राजाओं को दुःख होता है। क्षुधा से पीड़ित मुनि लोग भी स्वधर्म एवं उत्तम घरियों से हीन होकर दुर्बल बालक को हाथ में लेकर दूसरे देश में जाते हैं। सञ्जनों के धन को चोर अपहरण कर लेते हैं। अतः वे सञ्जन दीर्घ निश्वास छोड़ने से संकुचित नेत्र वाले, खिन्न शरीर वाले और शोक से उत्पन्न अश्रुप्रवाह से बन्द नेत्र वाले होते हैं। अपना राजा और परराष्ट्र से पीड़ित दुर्बल मनुष्य निन्दा करते हुये पूर्वकृत अपने राजा के कर्तव्य को दूसरे से कहते हैं। गर्भ-युक्त होने पर भी मेघ अधिक जल नहीं देते, नदियाँ कृश (अल्प-जल वाली) हो जाती हैं और धान की उत्पत्ति बहुत कम होती है।

तामस-कीलक आदि की आकृति से फल—  
दण्डे नरेन्द्रमृत्युर्व्याधिभयं स्यात् कवन्धसंस्थाने ।  
ध्वाङ्केचतस्करभयं दुर्भिक्षं कीलकेऽकंस्थे ॥१७॥

सूर्य के मण्डल में दण्ड की तरह केतु दिखाई दे तो राजा की मृत्यु, छिन्न-मस्तक पुरुष की तरह दिखाई दे तो व्याधि का भय, काक की तरह दिखाई दे तो चोर का भय और कील की तरह दिखाई दे तो दुर्भिक्ष होता है।

राजोपकरणसूपैश्छत्रध्वजचामरादिभिर्विद्धः ।

राजान्यत्वकृदक्षः स्फुलिङ्गधूमादिभिर्जनहा ॥18॥

यदि सूर्यमण्डल राजा के उपकरणसूप छत्र, ध्वजा, चामर आदि से वेधित हो तो राजा को परिवर्तन होता है और अग्निकण, धूप आदि से हो तो लोगों का नाश करता है।

एको दुर्भिक्षकरो द्वाधाः स्वर्णरपतेर्विनाशाय ।

सितरक्तपीतकृष्णस्तैविद्वोऽनुवर्णधनः ॥19॥

यदि पूर्वोक्त सूर्यमण्डल के वेध करने वालों में से एक से सूर्य वेधित हो तो दुर्भिक्ष, दो आदि से वेधित हो तो राजा का नाश और सफेद, लाल, पीला, काला इन वर्णों से वेधित हो तो क्रम से वर्णों का नाश करता है, जैसे सफेद वर्ण से वेधित होने पर ब्रात्मणों का, लाल वर्ण से वेधित होने पर क्षत्रियों का, पीले वर्ण से वेधित होने पर वैश्यों का और काले वर्ण से वेधित होने पर शूद्रों का नाश करता है।

दृश्यन्ते च यतस्ते रविविष्वस्योत्थिता महोत्पाताः ।

आगच्छति लोकानां तेनैव भयं प्रदेशेन ॥20॥

ये पूर्वकथित ध्वांक आदि महा उत्पात सूर्य मण्डल में जिस तरफ दिखाई देते हैं, उस दिशा में स्थित देशों के लोगों को भय होता है। जैसे – यदि उत्पात सूर्यबिष्व में पूर्व तरफ हो तो पूर्वीय देश में, दक्षिण तरफ हो तो दक्षिणीय देश में, पश्चिम तरफ हो तो पश्चिमीय देश में और उत्तर तरफ हो तो उत्तरीय देश में स्थित लोगों को भय होता है।

सूर्य की रश्मिवशा शुभाशुभ फल-

ऊर्ध्वकरो दिवसकरस्ताप्रः सेनापतिं विनाशयति ।

पीतो नरेन्द्रपुत्रं स्थेतस्तु पुरोहितं हन्ति ॥21॥

चित्रोऽथवापि धूम्रो रविरश्मिर्व्याकुलं करोत्यूर्ध्वम् ।

तस्करशस्त्रनिपातैर्यदिसलिलं नाशु पातर्यति ॥22॥

सूर्य के ऊपरी भाग की किरणें ताप्र वर्ण की हों तो सेनापति का, पीले वर्ण की हों तो राजा के पुत्र का और श्वेत वर्ण की हों तो पुरोहित का नाश होता

है। तथा चित्र या धूम्र वर्ण की हों तो चारों या शरत्र-प्रहारों से लोग व्याकुल होते हैं। यदि उक्त उत्पात देखने के बाद जल्दी वृष्टि न हो तो पूर्वोक्त फल होता है। यदि वृष्टि हो जाये तो पूर्वोक्त फल न होकर लोगों का कल्याण होता है।

ऋतुवश सूर्य के वर्णों का फल—

ताप्रः कपिलो वार्कः शिशिरे हरिकुड़कुमच्छविश्च मधौ ।

आपाण्डुकनकवर्णों ग्रीष्मे वर्षासु शुक्लश्च ॥23॥

शरदि कमलोदराभो हेमन्ते रुधिरसंनिभः शस्तः ।

प्रावृट्काले स्तिनाथः सर्वतुनिभोऽपि शुभदायी ॥24॥

यदि सूर्यमण्डल शिशिर ऋतु में ताप्र या पीला, वसन्त ऋतु में हरा या कुड़कुम के समान, ग्रीष्म ऋतु में पाण्डु (कुछ-कुछ सफेद) या सुवर्ण के समान, वर्षाकाल में सफेद, शरद ऋतु में कमल के गर्भ के समान और हेमन्त में रुधिर के समान हो तो शुभ होता है। यदि वर्षाकाल में स्वच्छ या अन्य सब ऋतुओं के समान वर्ण हो तो भी शुभ फल देने वाला होता है।

सूर्य के वर्ण के और फल—

रुक्षः श्वेतो विप्रान् रक्ताभः क्षत्रियान् विनाशयति ।

पीतोवैश्यान् कृष्णस्ततोऽपरान् शुभकरः स्तिनाथः ॥25॥

यदि सूर्यमण्डल रुखा या सफेद हो तो ब्रात्मणों का, लाल वर्ण का हो तो क्षत्रियों का, पीत वर्ण का हो तो वैश्यों का और कृष्ण वर्ण का हो तो शूद्रों का नाश करता है। यदि पूर्वोक्त वर्ण स्तिनाथ हों, तो ब्रात्मण आदि वर्णों का शुभ करने वाला होता है।

ऋतुओं में रवि के अशुभ वर्ण—

ग्रीष्मे रक्तो भयकृद्वर्षास्यसितः करोत्यनावृष्टिम् ।

हेमन्ते पीतोऽर्कः करोति न चिरेण रोगभयम् ॥26॥

ग्रीष्म ऋतु में रक्त वर्ण का रविमण्डल भय करने वाला होता है, वर्षाक्रितु में काला रविमण्डल अनावृष्टि करता है और हेमन्त ऋतु में पीत वर्ण का रविमण्डल शीघ्र रोग भय करता है।

सुरचापपाटिततनुर्नपतिविरोधप्रदः सहस्रांशुः ।

प्रावृट्काले सद्यः करोति विमलद्युतिवृष्टिम् ॥27॥

यदि इन्द्रधनुष से सूर्यमण्डल खण्डित होता हो तो राजाओं में विरोध करता है। यदि वर्षा काल में निर्मल कान्तियुक्त हो तो सद्यः (उसी रोज) वृष्टि करता है।

**वर्षाकाले वृष्टिं सद्यः शिरीषपुष्पाभः ।**

**शिखिपत्रनिभः सलिलं न करोति द्वादशाब्दानि ॥२८॥**

यदि वर्षाकाल में शिरीष पुरुष पुष्प की कान्ति के समान कान्ति वाला सूर्य-मण्डल हो तो उसी रोज वृष्टि करता है। यदि मधूरपंख की तरह कान्ति वाला दिखलाई दे तो बारह वर्ष पर्यन्त वृष्टि नहीं होती।

**श्यामर्केकीटभयं भस्मनिभे भयमुशन्ति परचक्रात् ।**

**यस्यक्षें सच्छिद्रस्तस्य विनाशः क्षितीशस्य ॥२९॥**

यदि सूर्यबिम्ब श्याम वर्ण का दिखलाई दे तो कीड़े का भय और भस्म की कान्ति की तरह दिखलाई दे तो परराष्ट्र से भय होता है। जिस राजा के जन्म नक्षत्र में सूर्यमण्डल में छिद्र दिखाई दे तो उस राजा का नाश होता है।

**शशरुधिरनिभे भानौ नभस्तलस्थे भवन्ति सङ्ग्रामाः ।**

**शशिसदृशो नृपतिवधः क्षिप्रं चान्यो नृपो भवति ॥३०॥**

यदि आकाश में खरहे के रुधिर के समान रक्त वर्ण का सूर्यमण्डल दिखलाई दे तो युद्ध होता है। यदि चन्द्र के समान वर्ण का सूर्यमण्डल दिखलाई दे तो वर्तमान राजा का नाश होकर दूसरा राजा होता है।

**क्षुन्मारकृद्वटनिभः खण्डो जनहा विदीधितिर्भयद् ।**

**तोरणरूपः पुरहा छत्रनिभो देशनाशाय ॥३१॥**

जिस देश में घड़े की आकृति के समान सूर्यमण्डल दिखाई दे उस देश में क्षुधा से पीड़ित होकर मनुष्य प्राण-विसर्जन करते हैं, यदि खण्डाकार दिखाई दे तो लोगों का नाश करता है, यदि तेज से हीन दिखाई दे तो भय देने वाला होता है, यदि फाटक की तरह दिखाई दे तो पुरों का नाश करता है और छत्र के समान दिखाई दे तो देश का नाश करता है।

**ध्वजचापनिभे युद्धानि भास्करे वेपने च रुक्षे च ।**

**कृष्णरेखा सविर्तारि यदि हन्ति ततो नृपं सचिवः ॥३२॥**

यदि सूर्यमण्डल ध्वजा या चाप की तरह काँपता हुआ रुखा दिखाई दे तो युद्ध होता है। यदि सूर्यमण्डल में काली रेखा दिखाई दे तो मन्त्री के द्वारा राजा मारा जाता है।

**दिवसकरमुदयसंस्थितमुल्काशनिविद्युको यदाहन्युः ।**

**नरपतिमरणं विन्द्यात्तदा न्यराजप्रतिष्ठा च ॥३३॥**

यदि उल्का, वन्न, विजली उदयकालिक सूर्य पर गिरे तो वर्तमान राजा की मृत्यु और उस पर दूसरे की प्रतिष्ठा होती है।

**प्रतिदिवसमहिमकिरणः परिवेषी सन्ध्याद्वयोरथवा ।**

**रक्तोऽस्तमेति रक्तोदितश्च भुपं करोत्यन्यम् ॥३४॥**

यदि प्रत्येक रोज दोनों संध्या (उदय और अस्त) में परिवेषयुक्त सूर्यमण्डल होता हो या रक्त वर्ण का होकर उदय अस्त होता हो तो निश्चय ही दूसरा राजा होता है।

**प्रहरणसदृशैर्जलदैः स्थगितः सन्ध्याद्वयेऽपि रणकारी ।**

**मृगमहिषविहगखरकरभसदृशरूपैश्च भयदायी ॥३५॥**

यदि दोनों संध्याओं में शस्त्र के समान स्वरूप वाले मेघ से सूर्यमण्डल आच्छादित हो तो युद्ध करने वाला होता है और हरिण, महिष, पक्षी, गधे या हस्ती के समान स्वरूप वाले मेघ से आच्छादित हो तो भय देने वाला होता है।

**अर्काक्रान्त नक्षत्र के संतापशोधन**

**दिनकरकराभितापादृक्षमवाप्नोति सुमहतीं पीडाम् ।**

**भवति तु पश्चाच्छुद्धं कनकमिव हुताशपरितापात् ॥३६॥**

अग्नि के परिताप से पीड़ित होकर जिस तरह सोना शुद्ध होता है उसी तरह सूर्य के परिताप से पीड़ित होकर नक्षत्र शुद्ध होता है।

**प्रतिसूर्य का फल-**

**दिवसकृतः प्रतिसूर्यो जलकृदुदगदक्षिणे स्थितोऽनिलकृत ।**

**उभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा ॥३७॥**

यदि सूर्यमण्डल की उत्तर दिशा में प्रतिसूर्य दिखलाई पड़े तो वृष्टि होती है, दक्षिण

दिशा में प्रतिसूर्य दिखलाई पड़े तो आँधी आती है, दोनों तरफ दिखलाई पड़े तो राजा का और नीचे की तरफ दिखलाई पड़े तो लोगों का नाश करता है।

सूर्योदय के बाद एक पहर तक जब एक छोटा मेघ का टुकड़ा आ जाता है तब वह सूर्य की किरणों से चमकता हुआ द्वितीय सूर्य के समान लक्षित होता है, उसी को प्रतिसूर्य कहते हैं।

**सूर्य के वर्ण का और फल-**

रुधिरनिभो वियत्यवनिपान्तकरो न चिरात् ।  
पुरुषरजोऽरुणीकृततनुर्यदि वा दिनकृत् ॥३८॥

आकाश में रुधिर के समान लाल वर्ण का या धूलि के समुदाय से लाल वर्ण का सूर्यमण्डल राजा का बहुत जल्दी नाश करता है।

असितविचित्रनीलपुरुषो जनधातकरः ।  
खगमृगभैरवस्वररूतैश्च निशाद्युमुखे ॥३९॥

यदि सूर्यमण्डल कृष्ण, विचित्र या नील वर्ण का होकर भयंकर देखने में आवे या संध्याकाल में पक्षी, जंगली जानवरों के भयंकर शब्द सुनाई दें तो लोगों का नाश होता है।

**सूर्य के शुभ लक्षण-**

अमलवपुरवक्रमण्डलः स्फुटविपुलामलदीर्घदीधितिः ।  
अविकृततनुवर्णचिह्नभृज्जगति करोति शिवं दिवाकरः ॥४०॥

स्वच्छ, अखण्डित, स्पष्ट, अतिशय स्वच्छ, दीर्घ किरण वाला, निर्विकार शरीर, वर्ण और चिह्न वाला सूर्यमण्डल संसार का मङ्गल करने वाला होता है।

**‘प्रतिसूर्य (परिवेष) से शकुन-विज्ञान’**

प्रतिसूर्य के वर्ण और शुभाशुभ फल-  
प्रतिसूर्यकः प्रशस्तो दिवसकृद्वतुवर्णसप्रभः स्तिंधः ।  
वैदूर्यनिभः स्वच्छः शुक्लश्च क्षेमसौभिक्षः ॥१॥

(वृ. सं. 222)

सूर्य के ऋतु वर्ण के सदृश वर्ण का प्रतिसूर्य होता है। यदि वह निर्मल, वैदूर्यमणि

की तरह स्वच्छ और श्वेत हो तो क्षेम और सुभिक्ष करता है।

पीतो व्याधि जनयत्यशोभकरुपश्च शस्त्रकोपाय ।  
प्रतिसूर्याणां माला दस्युभयातङ्नपहन्त्रो ॥२॥

पीत वर्ण का प्रतिसूर्य व्याधि करता है। अशोक पुष्प के समान लोहित वर्ण का प्रतिसूर्य शस्त्रकोप के लिए होता है। यदि प्रतिसूर्य की माला दिखाई दे तो चोर का भय तथा उपद्रव और राजा का नाश करता है।

दिवसकृतः प्रतिसूर्यो जलकृदुदग्दक्षिणे स्थितोऽनिलकृत् ।

उभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा ॥३॥

यदि सूर्य मण्डल की उत्तर दिशा में प्रतिसूर्य दिखाई पड़े तो वृष्टि होती है, दक्षिण दिशा में प्रतिसूर्य दिखाई दे तो वायु करता है। दोनों तरफ दिखाई दे तो राजा का और नीचे की तरफ दिखाई पड़े तो लोगों का नाश होता है।

**अंतरिक्षिय हलचलें व उनका प्रभाव**

पृथ्वी पर उसके निवासी मनुष्यों, प्राणियों तथा वृक्ष वनस्पतियों पर सौर मण्डल की उथल-पुथल का विशेष प्रभाव पड़ता है। उनमें से कुछ सामयिक होते हैं, तो कुछ का प्रभाव स्थायी रूप से लम्बे समय तक बना रहता है। उदाहरण के लिए समुद्र में उठने वाले ज्वार-भाटों का चन्द्रमा की घट-बढ़ के साथ तारतम्य बैठता है। इन्हीं दिनों लोगों की मानसिकता एवं स्वास्थ्य में विशेष परिवर्तन आँके जाते हैं। सूर्य मण्डल की हलचलों का प्रभाव सीमित न होकर व्यापक क्षेत्र को अपनी चपेट में लेता है। ज्योतिषियों के इस कथन में कोई दम नहीं कि जन्म काल के समय कि स्थिति के आधार पर मनुष्य का भाग्य और भविष्य बनता है, परन्तु यह सत्य है कि सौर प्रवाहों अन्तर्ग्रही प्रभावों एवं ब्रह्माण्डीय बिना नहीं रहता। यह सुखद दोनों प्रकार का हो सकता है।

वृहत् संहिता में उल्लेख है कि सूर्य में होने वाले परिवर्तनों एवं अन्य ग्रहों के प्रभाव से मनुष्य का स्वास्थ्य एवं व्यवहार प्रभावित होता है। शास्त्रों में ग्रहण काल में कुछ खाने-पीने की मना ही इसीलिए की गई है कि उस अवधि में निसृत अवांछनीय ब्रह्माण्डीय किरणों से खाद्य पदार्थ दृष्टि हो उठते हैं और रोगोत्पत्ति का निमित्त कारण बन सकते हैं। इनक्लुएंजा, प्लेग, कॉलरा जैसी महामारियों को उस अवधि में अधिक उग्र रूप धारण करते हुए देखा गया है।

इस सन्दर्भ में येल यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के सुविभ्यात वैज्ञानिक प्रोफेसर हंटिंग्टन ने गम्भीर खोजें की हैं और पाया है कि सौर मण्डल में उत्पन्न हलचलों एवं बढ़ते हुए सूर्य कलंकों से हमारी धरती सबसे अधिक प्रभावित होती है। उससे निस्तृत हानिकारक किरणें पर्यावरण का सन्तुलन बिगड़ती और प्राकृतिक सुरक्षा कवच तक को तोड़कर रख देती हैं। इनके कारण जीव-जन्तु एवं पेड़-पौधे तो प्रभावी होते हैं, बुद्धिमान समझे जाने वाले मानव समुदाय भी अवांछित प्रवाहों में बहते और आपदाग्रस्त होते हैं।

खगोलशास्त्रियों एवं ज्योतिषविज्ञानियों ने इसी शोध शृंखला में अपने अध्ययन निष्कर्षों की अगली कड़ी और जोड़ते हुए कहा है कि सूर्य कलंकों के सर्वाधिक सक्रिय काल में कभी-कभी मानवी मरितिष्क युद्धोन्मादग्रस्त हो उठता है। लड़ाइयाँ छिड़ जाती हैं, गृह-चुद्ध भड़क उठते हैं। असाधारण राजनीतिक उथल-पुथल होती और महाक्रान्तियाँ फूट पड़ती हैं। कार्ल सांगा एवं जॉन नेल्सन जैसे प्रभ्यात ज्योतिर्विदों का कहना है कि इतिहास प्रसिद्ध घटनाएँ प्रायः इन्हीं अवसरों पर घटित हुई हैं। तूफानी प्रवाहों तथा बनने वाले धब्बों सौर-कलंकों की बढ़ोत्तरी के साथ ही बढ़ जाता है।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय (अमेरिक) के सुप्रसिद्ध खगोल विज्ञानी डॉ. राबर्ट नोयस ने अपने अनुसन्धान निष्कर्ष में बताया है कि सूर्य के केन्द्र से असंख्य शक्तियों की धाराएं सतत् प्रवाहित होती रहती हैं। जब कभी इनकी बहुलता हो जाती है तो उस वक्त पृथ्वी पर अनेकानेक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। इन परिवर्तनों में ध्वंस और सृजन दोनों ही सम्मिलित होते हैं। इनके अनुसार सौर मण्डल में होने वाले परिवर्तनों से धरती के आयन मण्डल का सीधा सम्बन्ध होने के कारण उसमें भी भारी उथल-पुथल होने लगती है। फलतः मानवी मरितिष्क भी असाधारण सीमा तक प्रभावित होते हैं। अपने वर्षों के अनुसन्धान अध्ययन के आधार पर उसने बताया है कि सन् 1990 के जून माह से लेकर सन् 2000 तक सौर सक्रियता अपनी चरम सीमा पर होगी। इस मध्य पृथ्वी पर वातावरण एवं मौसम सम्बन्धी अनेकों परिवर्तन तो होंगे ही, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक महाक्रान्तियों जैसे ऐतिहासिक महापरिवर्तन भी होंगे। सूर्य की प्रचण्ड शक्ति अपने प्रबल प्रवाह से सब कुछ उलट-पुलट कर रख देगी।

सविता देवता की भारतीय अध्यात्म में बड़ी महत्ता बतायी गयी है। गायत्री मन्त्र सविता की उपासना का ब्रह्म तेजस के अभिवर्धन का, सौर ऊर्जा के आध्यात्मिक अंश को ग्रहण करने की प्रेरणा देने वाला मन्त्र है। अगले दिनों सूर्य मण्डल में भारी उथल पुथल की सम्भावना है ऐसे में सविता साधना का आश्रय लेना चाहिए।

(अखण्ड ज्योति, जून 1990)

### परिवेष का स्वरूप प्रदर्शन—

संमूर्छिता रवीन्द्रोः किरणाः पवनेन मण्डलीभूताः।

नानावर्णाकृतस्यस्तन्वभ्रे व्योम्नि परिवेषाः ॥1॥

वायु के द्वारा मण्डलीभूत सूर्य और चन्द्र के किरण स्वरूप, मेघ वाले आकाश में प्रतिबिम्बित होकर अनेक वर्ण के दिखाई देते हैं, उसी का नाम परिवेष है।

### परिवेषों के वर्ण और उनके अधिपति—

ते रक्तनीलपाण्डुरकपोताभ्राभवशबलहरितशुक्लाः ।

इन्द्र्यमवमुण्डिर्विश्वसनेश पिता महानिकृताः ॥2॥

वे परिवेष इन्द्र, यम, वरुण, निर्विति, वायु, शिव, ब्रह्मा और अग्नि कृत क्रम से रक्त, नील, थोड़ा-सा श्वेत, कबूतर के रंग, मेघ वर्ण, शबल (कृष्णश्वेत), हरे और श्वेत वर्ण के होते हैं। जैसे-इन्द्र कृत रक्त, यम कृत नील, वरुण कृत थोड़ा श्वेत, निर्विति कृत कबूतर के रंग, वायु कृत मेघ वर्ण, शिव कृत शबल, ब्रह्मा कृत हरा और अग्नि कृत श्वेत वर्ण का होता है।

धनदः करोति मेचकमन्योन्यगुणाश्रयेण चाप्यन्ये ।

प्रविलीयते मुहुरल्प फलः सोऽपि वायुकृतः ॥3॥

कुबेर मेचक (मयूर कण्ठ सदृश नील) वर्ण का परिवेश करता है। अन्य (इन्द्र आदि) मिले हुए रंग के परिवेश करते हैं। जो परिवेश बार-बार उत्पन्न होकर नष्ट हो जाए, वह वायु कृत थोड़ा फल देने वाला होता है।

### ऋतु के वश परिवेश का शुभ फल—

चाषशिखिरजततैलक्षीरजलाभः स्वकालसम्भूतः।

अविकलवृतः स्निग्धः परिवेशः शिवसुभिक्षकरः ॥4॥

नीलकण्ठ, मयूर, चांदी, तेल, ढूध और जल के समान कान्तिवाला परिवेष



ताराग्रह और नक्षत्रों का अलग-अलग परिवेष फल-  
ताराग्रहस्य कुर्यात् पृथगेव समुथितो नरेन्द्रवधम्।  
नक्षत्राणामथवा यदि केतोर्नोदयो भवति ॥18॥

यदि केतु का उदय न हुआ हो तब तारा ग्रह या नक्षत्र अलग-अलग परिवेष युत हों तो राजा का नाश करते हैं।

तिथि क्रम से परिवेष का फल-

विप्रक्षत्रियविट्शूद्रहा भवेत् प्रतिपदादिषु क्रमशः।  
श्रेणीपुरकोशानां पञ्चम्यादिष्वशुभकारी ॥19॥  
युवराजस्याष्टम्यां पतस्त्रिषु पार्थिवस्य दोषकरः।  
पुररोधो द्वादश्यां सैन्यक्षोभस्त्रयोदश्याम् ॥20॥  
नरपतिपत्नीपीडां परिवेषोऽभ्युत्थितश्चतुर्दश्याम्।  
कुर्यात् पञ्चदश्यां पीडां मनुजाधिपस्त्यैव ॥21॥

प्रतिपदा आदि चार तिथियों में यदि परिवेष दिखाई दे तो ब्राह्मणआदि चार वर्णों का नाश होता है। जैसे-प्रतिपदा में परिवेष दिखाई दे तो ब्राह्मणों का, द्वितीया में दिखाई दे तो ब्राह्मणों का, द्वितीया में दिखाई दे तो क्षत्रियों का, तृतीया में दिखाई दे तो वैश्यों का और चतुर्थी में दिखाई दे तो शूद्रों का नाश होता है। यदि पश्चिम में परिवेष दिखाई दे तो श्रेणी (समान जातियों के संघ)का, षष्ठी में दिखाई दे तो नगर का और सप्तमी में दिखाई दे तो कोश का अशुभ करने वाला होता है। यदि अष्टमी में परिवेष दिखाई दे तो राजा का अशुभ करने वाला होता है। द्वादशी में नगर का अवरोध और त्रयोदशी में सेवाओं में आकुलता होती है। यदि चतुर्दशी में परिवेष दिखाई दे तो रानी को और पूर्णिमा में राजा को पीड़ा होती है।

परिवेष में रेखा के वश शुभाशुभ फल-  
नागरकाणामभ्यन्तरस्थिता यायिनां बाह्यस्था।  
परिवेषमध्यरेखा विज्ञेयक्रन्द साराणाम् ॥22॥  
रक्तःश्यामो रुक्षश्च भवति येषां पराजयस्तेषाम्।  
स्तिंधःश्वेतो युतिमान् येषां भागो जयस्तेषाम् ॥23॥

यदि परिवेष के अन्दर रेखा दिखाई दे तो नगरवासियों का, बाहर दिखाई दे तो गमन करनेवाले विजयेच्छु राजाओं का और परिवेष के मध्य में रेखा दिखाई दे तो आक्रन्द (आक्रन्दो दारुणे रणे इत्यमरः। भयङ्कर युद्ध) की सार वस्तुओं (सेनाओं) का शुभाशुभ करने वाली होती है। जिसके भाग में लाल, काला या रुक्ष वर्ण का परिवेष हो उसकी पराजय होती है। जैसे-परिवेश के अन्दर लाल, काला, रुक्ष हो तो नगरवासियों की, बाहर में हो तो गमन करने वाले विजयेच्छु राजाओं की और परिवेष के मध्य में लाल, काला या रुक्ष दिखाई दे तो सेनाओं की पराजय होती है तथा जिसका भाग निर्मल, श्वेत और कान्ति युक्त हो उनकी विजय होती है। (बृहत्संहिताया-पृष्ठ-213)

‘चन्द्र से शकुन-विज्ञान’

चन्द्र में शुक्लाशुक्ल का निर्णय-

नित्यमधःस्येन्द्रोभार्भिर्भानोः सितं भवत्यद्वम् ।  
स्वच्छाययान्यदसितं कुम्भस्येवाऽतपस्थस्य ॥1॥

जिस तरह धूप में स्थित घड़े का सूर्य की तरफ का आधा भाग शुक्ल और विरुद्ध दिशा में स्थित दूसरा आधा भाग अपनी छाया से ही कृष्ण देखने में आता है, उसी तरह सदा सूर्य के अधोभाग में स्थिथ चन्द्र का सूर्य की तरफ का आधा भाग शुक्ल और विरुद्ध दिशा में स्थित अर्धभाग अपनी छाया से ही कृष्ण होता है।

(बृहत्संहिता, पृष्ठ-26)

चन्द्र में अपने प्रकाश का अभाव-

सलिलमये शशिनि रवेदर्दीधितयो मूर्च्छितास्तमो नैशम्।  
क्षपयन्ति दर्पणोदरनिहिता इव मन्दिरस्यान्तः ॥2॥

जिस तरह दर्पण पर गिरे हुए सूर्य की किरणों के प्रतिबिम्ब से घर के अन्दर का अन्धकार नष्ट होता है, उसी तरह जल पिण्डात्मक चन्द्र के ऊपर गिरी हुई सूर्य की किरणों के प्रतिबिम्ब से रात्रि सम्बन्धी अन्धकार नष्ट होता है।

चन्द्र के पश्चिम भाग से शुक्ल वृद्धि का कारण-

त्यजतोऽर्कतलं शशिनः पश्चादवलम्बते यथा शौकल्यम्।  
दिनकरवशात्तथेन्दोः प्रकाशतेऽघःप्रभृत्युदयः ॥3॥

सूर्य के अधः प्रदेश को छोड़ते हुए चन्द्र का शुक्ल जिस तरह नीचेकी तरफ लटकता है उसी तरह चन्द्र का उदित अधोभाग सूर्यवश क्रम से प्रकाशित होता है।

**प्रत्यह चन्द्रगोल में शुक्ल की वृद्धि-**

**प्रतिदिवसमेवमर्कात्थानविशेषेण शौकन्यपरिवृद्धिः।**

**भवति शशिनोऽपरान्हे पश्चाद् भागे घटस्येव ॥4॥**

अपराह्न काल में आत्प में स्थित घड़े के पश्चिम भाग में जिस तरह शुक्ल बढ़ती है उसी तरह प्रतिदिन रवि से स्थानविशेष (दूर-दूर) में गमन करने से चन्द्र का शुक्ल बढ़ता है।

**चन्द्र के नक्षत्रों में गमन से शुभाशुभ फल-**

**ऐन्द्रस्य शीतकरणो मूलाषाढाद्वयस्य चायातः ।**

**यायेन वीजजलचरकाननहा बहिभयदश्च ॥5॥**

जिस समय चन्द्रमा ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा इन चार नक्षत्रों के दक्षिण में होकर जाता है उस समय बीज, जलचर और वन का नाश होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि उक्त नक्षत्रों में होकर यदि चन्द्र जाता है तो शुभ होता है।

**दक्षिणषाश्वेन गतः शशी विशाखानुराधयोः पापः।**

**मध्येन तु प्रशस्तः पितृदेवविशाखयोश्चापि ॥6॥**

यदि विशाखा और अनुराधा के दक्षिण भाग में होकर चन्द्रमा जाता हो तो पाप फल देने वाला होता है। यदि मधा और विशाला के मध्य में होकर चन्द्रमा जाता हो तो शुभ फल देने वाला होता है।

**चन्द्रमा के नक्षत्रों का संयोग-**

**षडनागतानि पौष्णाद् द्वादशरौद्राच्य मध्ययोगीनि।**

**ज्येष्ठायानि नवर्क्षाण्युद्गुपतिनातीत्य युज्यन्ते ॥7॥**

रेवती से छः नक्षत्र (रेवती, अश्वनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिर) अनागतं (अप्राप्त) होकर चन्द्र से मिलते हैं। आर्द्रा से ब्यरह नक्षत्र (आर्द्रा पुनर्वसु, अनागतं (अप्राप्त) होकर चन्द्र से मिलते हैं। आर्द्रा से ब्यरह नक्षत्र (आर्द्रा पुनर्वसु,

पृथ्य, आश्लेषा,, मधा, पूर्वाषाढाल्युनी, उत्तराषाढाल्युनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा) मध्यसंयोगी होकर चन्द्रमा से मिलते हैं और ज्येष्ठा से नव नक्षत्र (ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा) अतिक्रान्त (प्राप्त) होकर चन्द्रमा से मिलते हैं। इसका आशय यह है कि जब चन्द्र उत्तराभाद्रपदा में जाता है उसी समय चन्द्र का रेवती नक्षत्र से संयोग हो जाता है। इसी तरह रेवती में जाने पर अश्वनी से, अश्वनी में जाने पर भरणी से, भरणी में जाने पर कृतिका से, कृतिका में जाने पर रोहिणी से और रोहिणी में जाने पर मृगशिर से संयोग हो जाता है। आर्द्रा आदि बारह नक्षत्रों में से प्रत्येक नक्षत्र विभाग के बीच में चन्द्र के जाने से संयोग होता है। ज्येष्ठा से नव नक्षत्रों में प्रत्येक नक्षत्र के अगले नक्षत्र में जाने पर ही पिछले नक्षत्र से संयोग कर लेता है, जैसे मूल में जाने पर मृगशिर से संयोग हो जाता है। आर्द्रा आदि बारह नक्षत्रों में से प्रत्येक नक्षत्र विभाग के बीच में चन्द्र के जाने से संयोग होता है। ज्येष्ठा से नव नक्षत्रों में प्रत्येक नक्षत्र के अगले नक्षत्र में जाने पर ही पिछले नक्षत्र से संयोग कर लेता है, जैसे मूल में जाने पर ज्येष्ठा से, पूर्वाषाढा में जाने पर मूल इत्यादि से..... चन्द्र का संयोग हो जाता है। इन्हीं नक्षत्रों को गांग आदि आचार्य अर्द्धभोगी, अध्यर्द्धभोगी और समभोगी नाम से पठित हैं।

**चन्द्र के दशविध संस्थानों में से नौ संस्थान का लक्षण और फल-**

**उन्नतमीष्ठच्छङ्गं नौसंस्थाने विशालता चोक्ता ।**

**नाविकपीडा तस्मिन्भवति शिवं सर्वलोकस्य ॥8॥**

चन्द्र का शृङ्ग कुछ उन्नत होकर नाव की तरह विशालता को प्राप्त होता हो तो नौ नाम का संस्थान होता है। इस में नाविक लोगों को पीडा और सबका शुभ होता है।

**लाङ्गलसंस्थान का लक्षण और फल-**

**अर्द्धोन्नते च लाङ्गलमिति पीडा तदुपजीविनां तस्मिन् ।**

**प्रीतिश्च निर्निमित्त मनुजपतीनां सुभिक्षं च ॥9॥**

यदि चन्द्र का शृङ्ग आधा उन्नत ही लाङ्गलसंस्थान होता है। इसमें हल से

जीवनयत्रा चलाने वाले को पीड़ा होती है। राजाओं में बिना कारण स्नेह होता है और सुभिक्ष होता है।

दुष्टलाङ्गल संस्थान का लक्षण और फल—  
दक्षिणविषाणमर्द्धोन्तं यदा दुष्टलाङ्गलाख्यं तत् ।  
पाण्ड्यनरेश्वरनिधनकृद्योगकरं वलानां च ॥10॥

जब चन्द्र का दक्षिण शृङ्ग अर्द्धोन्त देखने में आवे तब दुष्टलाङ्गल नाम का संस्थान होता है। इसमें पाण्डय देश के राजा की मृत्यु होती है और यह सेनाओं की यात्रा में उद्यम करता है।

समदण्ड संस्थान का लक्षण और फल—  
समशशिनि सुभिक्षेमवृष्ट्यः प्रथमदिवससदृशाः सु ।  
दण्डवदुदिते पीड़ा गवां नृपश्चोग्रदण्डोऽत्र ॥11॥

यदि चन्द्र का शृंग समान हो तो प्रथम दिन की तरह सुभिक्ष, क्षेम (कुशल) और वृष्टि होती है अर्थात् प्रतिपदा के दिन जिस तरह सुभिक्ष, क्षेम और वृष्टि होती है उसी तरह एक महीने तक सुभिक्ष, क्षेम और वृष्टि होती रहेगी। यदि दण्डाकार चन्द्रमा दिखलाई दे तो गौ को पीड़ा होती है और राजा बहुत कठोर दण्ड देने वाला होता है।

कार्मुक और युगसंस्थान का लक्षण और फल—  
कार्मुकसूपे युद्धानि यत्र तु ज्या ततो जयस्तेषाम् ।  
स्थानं युगमिति याम्योत्तरायतं भूमिकम्पाय ॥12॥

यदि चन्द्र की आकृति धनुष के समान हो तो उसको कार्मुकसंस्थान कहते हैं। इसमें युद्ध होता है तथा जिस तरफ धनुष की जीवा रहती है उस दिशा के राजा की जीत होती है।

यदि चन्द्र के शृंग दक्षिणोत्तर विस्तीर्ण हों तो उसको युग संस्थान कहते हैं। इसमें भूकम्प होता है।

पाश्वशायी संस्थान के लक्षण और फल—  
युगमेव याम्यकोट्यां किञ्चित्तुङ्ग स पाश्वशायीति ।  
विनिहन्ति सार्थवाहान् वृष्टेश्च विनिग्रहं कुर्यात् ॥13॥

पूर्वकथित युग संस्थान में दक्षिण शृंग का अग्रभाग कुछ ऊँचा हो तो पाश्वशायी

संस्थान होता है। इसमें धनी व्यापारियों का और वृष्टि का नाश होता है।

आवर्जित संस्थान का लक्षण और फल—  
अभ्युच्छायादेकं यदि शशिनोऽवाङ्मुखं भवेच्छृङ्गम् ।  
आवर्जितमित्यसुभिक्षकारि तद्वेधनस्यापि ॥14॥

अतिशय उन्नत होने के कारण चन्द्र का एक शृंग यदि अधोमुख हो तो आवर्जित नाम का संस्थान होता है। इसमें मनुष्य, पशु वीनों के लिये दुर्भिक्ष होता है।

कुण्डाख्य संस्थान का लक्षण और फल—  
अव्युच्छिन्ना रेखा समन्ततो मण्डल च कुण्डालख्यम् ।  
अस्मिन्माण्डलिकानां स्थानत्यागो नरपतिनाम् ॥15॥

यदि चन्द्र के चारों तरफ अव्युच्छिन्न (अखण्डित) गोलाकार रेखा दिखलाई तो कुण्डाख्य संस्थान होता है। इसमें माण्डलिक राजाओं का स्थान छूट जाता है।

चन्द्र के समान लक्षण

प्रोक्तस्थानाभावादुदगुच्छेमवृद्धिवृष्टिकरः ।  
दक्षिणतुङ्गश्चन्त्रो दुर्भिक्षभयाय निर्दिष्टः ॥16॥

पूर्वकथित संस्थानों के अभाव में यदि चन्द्र का शृंग उत्तर दिशा में उन्नत हो क्षेम, सख्य की वृद्धि और वृष्टि को करता है। यदि दक्षिण दिशा में उन्नत हो तो दुर्भिक्ष और भय करता है।

शृङ्गेणकेनेन्दुर्विलीनमथवाऽप्यवाङ्मुखं शृङ्गम् ।  
सम्पूर्ण चाभिनवं दृष्टैवको जीविताद् भ्रश्येत् ॥17॥

यदि चन्द्र का एक शृंग विलीन (बिल्कुल नहीं हो), अधोमुख हो, या सब नये प्रकार के हों तो देखने वालों में से एक मनुष्य की मृत्यु होती है।

चन्द्र के स्वरूप का फल—

संस्थानविधिः कथितो रूपाण्यस्माद्वन्ति चन्द्रमसः ।  
स्वल्पो दुर्भिक्षकरो महान् सुविक्षावहः प्रोक्तः ॥18॥

संस्थान प्रकार कहने के बाद चन्द्र के स्वरूप और उनके फल को कहते हैं। यदि चन्द्रविम्ब छोटा हो तो दुर्भिक्ष और बड़ा हो तो सुभिक्ष होता है।

मध्यतनुर्वज्राख्यः क्षुद्रयदः सम्भ्रमाय राजां च ।  
चन्द्रो मृदङ्गरूपः क्षेमसुभिक्षावहो भवति ॥19॥  
ज्ञेयो विशालमूर्तिं नरपतिलक्ष्मीविवृद्धये चन्द्रः ।  
स्थूलः सुभिक्षकारी प्रियधान्यकरस्तु तनुभूर्तिः ॥20॥

यदि चन्द्रबिम्ब मध्यम हो तो वज्रसंज्ञक होता है। यदि क्षुधा और भय को देने वाला और राजाओं में उद्यम पैदा करने वाला होता है। यदि चन्द्रबिम्ब मृदङ्ग की तरह देखने में आवे तो कल्याण और सुभिक्ष होता है। यदि अति विस्तृत मूर्ति हो तो राजलक्ष्मी की वृद्धि होती है। यदि मोटी मूर्ति हो तो सुभिक्ष करने वाला और पतली मूर्ति हो तो प्रियधान्य (सुभिक्ष) करने वाला होता है।

कुज आदि ग्रहों से खण्डित चन्द्रशृङ्ग का फल—

प्रत्यन्तान् कुनृपांश्च हन्त्युडुपतिः श्रृङ्गे कुजेनाहते ।  
शस्त्रक्षुद्रयकृद्यमेन शशिजेनावृष्टिदुर्भिक्षकृत् ॥  
श्रेष्ठान् हन्ति नृपान् महेन्द्रगुरुणा शुक्रेण चाल्पान्ह पान् ।  
शुक्ले याप्यमिदं फलं ग्रहकृतं कृष्णे यथोक्तागमम् ॥21॥

यदि चन्द्रशृङ्ग मङ्गल से वेधित हो तो दूर में रहने वाले बड़े राजाओं का नाश करने वाला होता है, शनि से वेधित होने पर शस्त्र और क्षुधा का भय करने वाला होता है। बुध से वेधित होने पर अनावृष्टि और दुर्भिक्ष करने वाला होता है। बृहस्पति से वेधित होने पर श्रेष्ठ राजाओं का नाश करने वाला होता है। तथा शुक्र से वेधिक होने पर छोटे राजाओं का नाश करने वाला होता है। यह पूर्वोक्त ग्रहकृत फल शुक्रपक्ष में अल्प और कृष्णपक्ष में सम्पूर्ण होता है।

शुक्र से खण्डित चन्द्रबिम्ब का फल—

भिन्नः सितेन मगधान् यवनान् पुलिन्दान् ।  
नेपालभृङ्गिमसुकच्छ सुराष्ट्रमद्रान् ।  
पाञ्चालकै कयकुलूतकपूरुषादान् ।  
हन्यादुशीनरजनानपि सप्तमासान् ॥22॥

यदि चन्द्रबिम्ब शुक्र से वेधित हो तो मगध, यवन, पुलिन्द, नेपाल, भृङ्गि, मसुदेश, कच्छ, सूरत, मद्रास, पञ्जाब, काश्मीर, कुलूतक, पुरुषाद, उशीनर इन देशों में

सात महीने तक भयानक मृत्यु होती है।

बृहस्पति से खण्डित चन्द्रबिम्ब का फल—

गान्धारसौवीरकसिन्धुकीरान् धान्यानि शैलान् द्रविडाधिपांच्च ।  
द्विजांश्च मासान् दश शीतरशिमः सन्तपयेदाक्षतिना विभिन्नः ॥23॥

यदि चन्द्रबिम्ब बृहस्पति से वेधित हो तो कन्धार, सौवीरक, सिन्धु, कीर, पर्वतीय, द्रविड इन देशों के ब्रात्मणों और धान्यों का दश महीनों तक नाश करता है।

मङ्गल से वेधित चन्द्रबिम्ब का फल—

उद्युक्तान् सह वाहनैरपतींस्त्रैगर्तकान् मालवान् ।

कौलिन्दान् गुणपुङ्गवानथ शिवीनायोध्यकान् पार्थिवान् ॥

हन्यात्कौरवमत्स्यशुक्त्यधिपतीन् राजन्यमुख्यानपि ।

प्रालेयांशुरसृग्रहे तनुगते षण्मासमर्यादया ॥24॥

यदि मङ्गल से चन्द्रबिम्ब वेधित हो तो अश्व आदि वाहनों के द्वारा योद्धाओं का नाश होता है तथा त्रिगर्त, मालवा, कौलिन्द गणों में प्रधान शिवि और अयोध्या में उत्पन्न जन और राजाओं का नाश करता है इसी तरह कुरु, मत्स्य, शुक्ति इन देशों के जनों और राजाओं का छः महीने के अन्दर नाश करता है।

शनैश्चर से भिन्न चन्द्रबिम्ब का फल—

योधेयान् सचिवान् सकौरवान् प्रागीशानथ चार्जुनायनान् ।

हन्यार्दक्जभिन्नमण्डलः शीतांशुर्दशमासपीडया ॥25॥

यदि शनैश्चर से चन्द्रमा वेधित हो तो दश महीने तक पीड़ित करके योद्धाओं, मन्त्रियों, कुरुवंशियों, पूर्व दिशाओं में स्थित राजा और अर्जुनायन (पाण्डुवंशीय) जनों का नाश करता है।

बुध से वेधित चन्द्र का फल—

मगधान् मथुरां च पीडयेद्वेणायाश्च तटं शशाङ्कजः ।

अपरत्र कृतं युगं वदेयदि भित्वा शशिनं विनिर्गतः ॥26॥

यदि चन्द्रमा को वेधित करके बुध निकला हो तो मगध, मथुरा और वेणा नदी के तट पर स्थित देशों के मनुष्यों को पीड़ित करता है तथा पश्चिमी देशों में स्थित मनुष्यों के लिए सत्युग के समान समय करता है, अर्थात् उन देशों में

मनुष्य सब प्रकार से सम्पन्न होते हैं।

केतु से वेधित चन्द्र का फल—

क्षेमारोग्यसुभिक्षविनाशी शीतांशुः शिखिनायदि भिन्नः।  
कुर्यादायुधजीविविनाशं चौराणामधिकेन च पीडाम् ॥२७॥

यदि केतु से चन्द्रमा वेधित हो तो सब प्रकार के मंगल, आरोग्य, सुभिक्ष इनका और शर्व से जीवनयात्रा चलाने वाले मनुष्य का नाश करता है तथा चोरों को विशेषकर पीड़ा देता है।

ग्रहणकाल में उल्का से हत चन्द्र का फल—

उल्कया यदा शशी ग्रस्त एव हन्यते ।  
हन्यते तदा नृपो यस्य जन्मनि स्थितः ॥२८॥

यदि ग्रहणकालिक चन्द्र के ऊपर उल्कापात हो तो उस समय जिस राजा के जन्म नक्षत्र में चन्द्रमा बैठा हो उसका नाश करता है।

चन्द्र के वर्ण का लक्षण और फल—

भस्मनिभः परुषोऽरुणमूर्तिः शीतकरः किरणैः परिहीणः ।  
श्यावतनुः स्फुटिः स्फुरणो वा क्षुड्भरामयचौरभयाय ॥२९॥

यदि चन्द्रबिम्ब भ्रम के समान रुक्ष, रक्त वर्ण, किरणों से हीन, कृष्ण वर्ण, खण्डित या काँपता हुआ हो तो दुर्भिक्ष, कलह, रोग और चोरों को भय देने वाला होता है।

चन्द्र के और शुभ लक्षण—

प्राते यकु न्दकु मुदस्फटि कावदातो  
यत्नादिवाद्रिसुतया परिमृज्य चन्द्रः ।  
उच्चैः कृतो निशि भविष्यति मे शिवाय  
यो दृश्यते स भविता जगतः शिवाय ॥३०॥

मानो शिव जी के लिये पार्वती जी ने साफ करके हिम, कुन्दपुष्प या स्फटिक मणि के समान स्वच्छ अत्यन्त सुन्दर चन्द्र बनाया हो, ऐसे चन्द्र को जो मनुष्य रात्रि में देखता है उसके लिये वह कल्याणकारी होता है अर्थात् हिम आदि के समान स्वच्छ चन्द्र को रात्रि में जो देखता है उसका सर्वथा मंगल होता है।

शुक्ले पक्षे सम्प्रवृद्धे प्रवृद्धिं ब्रह्मक्षतं याति वृद्धिं प्रजाश्च।

हीने हानिस्तुल्यता तुल्यतायां कृष्णे सर्वं तत्कलं व्यत्ययेन ॥३१॥

यदि शुक्ल पक्ष में कोई तिथि बढ़ जाए तो ब्रात्मण, क्षत्रिय और प्रजागण अत्यन्त बढ़ते हैं, घट जाने पर उनकी हानि होती है और समान रहने पर उनको साधारण फल मिलता है।

चन्द्र के फल—

यदि कुमुदमृणालहारगौरस्थितिनियमात् क्षयमेति वर्द्धते वा।

अविकृतगतिमन्डलांशुयोगी भवति नृणां विजयाय शीतरशिमः ॥३२॥

यदि विकाररहित गति और विकार रहित किरण वाला चन्द्र कुमुद, मृणाल या मुक्ताहार के समान वर्ण का होकर तिथि के अनुसार घटता-बढ़ता हो तो मनुष्यों की विजय के लिए होता है।

‘उल्कापात से शकुन-विज्ञान’

उल्का के भेद—

प्रेतप्रहरणखरकरभनक्रकपिदंष्टिलाङ्गलमृगाभाः ।

गोधाहिधूमरूपाः पापा या चोभयशिरस्का ॥९॥

यह प्रेत, शर्व, गधा, ऊँट, नाक, बन्दर, दंष्ट्री (सुअर आदि), हल, मृग, गोह, सांप, धूम के समान या दो शिर वाली होती है। वे सब पाप फल देने वाली होती हैं। (बृहत्संहिता, पृष्ठ-208)

ध्वजझषगिरिकरिकमलेन्दुतुरगसन्तप्तरजतंहसाभाः।

श्रीवृक्षवज्रशङ्खस्वस्तिकरूपाः शिवसुभिक्षाः ॥१०॥

ध्वज, मत्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, घोड़ा, तपी हुई धूली, हंस, श्री वृक्ष (नारियल), वज्र (हीरा या शर्व), शंख या स्वस्तिक (राज-गृह की तरह) रूप वाली उल्का दिखाई दे तो लोगों का कुशल और सुभिक्ष करती है।

उल्का का भी लक्षण—

अम्बरमध्याद्वृद्ध यो निपतन्त्यो राजराष्ट्रनाशाय ।

व्रम्भमती गगनोपरि विभ्रममाख्याति लोकस्य ॥११॥

आकाश मध्य में बहुत तरह की होकर गिरती हुई उल्का राजा और राष्ट्र

के नाश के लिए होती है। तथा जो उल्का आकाश में बार-बार भ्रमण करती है, वह लोगों की विपंति को कहती है।

संस्पृशती चन्द्राकौ तद्विसृता वा सभूप्रकम्पा च ।

पौरचक्रागमन्त्रपभयदुर्भिक्षावृष्टिभयजननी ॥1 2 ॥

जो उल्का सूर्य या चन्द्र को स्पर्श करती है अथवा सूर्य या चन्द्र से निकलकर भूकम्प करती हुई गिरती है वह दूसरे राजा का आगमन, राजभय, दुर्भिक्ष और अवृष्टि करती है।

पौरेतरन्धमल्कापसव्यकरणं दिवाकरहिमांश्वोः ।

उल्का शभदा पुरतो दिवाकरविनि:सुता यात् ॥1 3 ॥

यदि उल्का सूर्य और चन्द्रमा के प्रदक्षिण क्रम से गमन करे तो क्रम से पुर में रहने वाले और बाहर रहने वाले का नाश करती है। जैसे—सूर्य के प्रदक्षिण क्रम से गमन करे तो पुरवासियों का और चन्द्र के प्रदक्षिण क्रम से गमन करे तो बाहर रहने वालों का नाश करती है जो उल्का सूर्य किरण से निकल कर गमन करने वालों के आगे गिरती है वह शभ फल देने वाली होती है।

शक्ला रक्ता पीता कृष्णा चोल्का द्विजादिवर्णन्धी ।

क्रमशः चैतान् हन्तुर्मूर्धोरः पाश्वपुच्छस्थाः ॥14॥

सफेद, लाल, पीली और काली उल्का क्रम से ब्रात्मण आदि वर्णों का नाश करने वाली होती है। जैसे-सफेद उल्का ब्रात्मणों का, लाल क्षतियों का, पीली वैश्यों का और काली शूद्रों का नाश करती है तथा जो धिर से ठहरती है वह वैश्यों का जो पंछ से ठहरती है वह शूद्रों का नाश करती है।

उत्तरदिगादिपतिता विप्रादीनामनिष्टदा रुक्षा ।

ऋग्वी स्निग्धाखण्डा नीचोपगता च तद्भद्र्यै ॥5॥

उत्तर आदि दिशाओं में पतित उल्का क्रम से ब्राह्मण आदि वर्णों को अशुभ फल देती है। जैसे-उत्तर दिशा में गिरे तो ब्राह्मणों को, पूर्व में गिरे तो क्षत्रियों को, दक्षिण में गिरे तो वैश्यों को और पश्चिम में गिरे तो शूद्रों को अशुभ फल देती है। यदि वह उल्का सीधी, चिकनी अखण्ड और आकाश के नीचे भाग में जाने वाली हो तो ब्राह्मण आदि वर्णों की वह्नि करती है।

श्यावारुणनीलासुगदहनासितभस्मसन्निभा रुक्षा ।

सन्ध्यादिनजा वक्रां दलिता च परागमभ्याय ॥ १६ ॥

श्याव (वानर के समान), रक्त, नील, रुधिर के समान, अग्नि के समान, काली, भस्म की तरह रुक्ष, संध्याकाल में उत्पन्न, दिन में उत्पन्न वक्र या खण्डित उल्का पूरवासियों को शत्रु के आगमन से भय कराती है।

नक्षत्रग्रहधातैस्तद्वत्नां क्षयाय निर्दिष्टा ।

उदये धन्ती रवान्दु पौरेतरमृत्युवेऽस्ते वा ॥17॥

यदि उल्का नक्षत्र या ग्रह का उपघात करे तो नक्षत्र व्यूह में उक्त उस नक्षत्र या ग्रह के भक्तियों का नाश करती है। यदि सूर्य या चन्द्र को उदय या अस्त समय में हनन करे तो क्रम से पुरवासियों का और बाहर रहने वालों का नाश करती है। जैसे—सूर्य हत हो तो पुरवासियों का ओर चन्द्र हत हो तो बाहर रहने वालों का नाश करती है।

## उल्का से हत नक्षत्रों का फल-

भाग्यादित्यधनिष्ठामूलेषु काहतेषु युवतीनाम् ।

विप्रक्षत्रियपीडा पुष्यानिलविष्णुदेवेषु ॥१८॥

ध्रुवसौम्येष न्रपाणामग्रेषु सदारुणेषु चौराणम् ।

क्षिप्रेषु कलाविदृष्टां पीडा साधारणे च हते ॥19॥

पूर्वफल्नुनी, पुनर्वसु, धनिष्ठा या मूल नक्षत्र की योग तारा यदि उल्का से हत तो युवती स्त्रियों को पीड़ा होती है। पुष्य, स्वाती या श्रवण नक्षत्र की योग तारा यदि उल्का से हत हों तो ब्रात्मण और क्षत्रियों को पीड़ा होती है।

उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपदा, रोहिणी, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा या रेवती नक्षत्र की योगतारा यदि उल्का से हत हो तो राजाओं को पीड़ा होती है। पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपदा, शत्रुघ्नी, मधा, आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र की योग तारा यदि उल्का से हत हो तो द्योरों को पीड़ा होती है तथा अश्विनी, हस्त, अभिजित, कृत्ति तथा विशाखा नक्षत्र की योग तारा यदि उल्का से हत हो तो कलाओं को जानन तथा को पीड़ा होती है।

देव मूर्ति आदि पर उल्का गिरने का फल—  
 कुर्वन्येता पतिता देवप्रतिम सु राजराष्ट्रभयम् ।  
 शक्रोपरि नृपतानां गृहषु तत्स्वामिनां पीडाम् ॥२०॥  
 आशाग्रहोपधाते तदेश्यानां खले कृषिरतानाम् ।  
 चैत्यतरौ सम्पत्तिता सत्कृतपीडां करोत्युल्का ॥२१॥  
 द्वारि पुरस्य पुरक्षयमथेन्द्रकीले जनक्षयोऽभिहितः ।  
 ब्रह्मायतने विप्रान् विनिहन्याद्वोमिनो गोष्ठे ॥२२॥

उल्का यदि देवता की मूर्ति पर गिरे तो राजा और राष्ट्र को भय, इन्द्र के ऊपर गिरे तो राजाओं को भय और घर पर गिरे तो गृहपति को पीड़िक करता है। दिक्पति ग्रह यदि उल्का से हत हो तो उस दिशा में रहने वाले मनुष्यों को, खलिहान में गिरे तो किसानों को और छोटे मंदिर के पास के वृक्ष पर उल्का गिरे तो पूज्य व्यक्तियों को पीड़ित करता है। पुरद्वार पर यदि उल्का गिरे तो पुर का, द्वार के किवाड़ पर गिरे तो पुरवासियों का, ब्रह्मा के मन्दिर पर गिरे तो ब्राह्मणों का और गोष्ठ (गायों के स्थान) पर गिरे तो गायों को पालन करने वालों का नाश करती है।

#### यहाँ पर विशेष—

क्षेदास्फोटितवादितगीतोल्कुष्टस्वना भवन्ति यदि ।  
 उल्कानिपातसमये भयाय राष्ट्रस्य सनृपस्य ॥२३॥

यदि उल्कापात के समय में क्षेठा (वीरों का गर्जन), आस्फोटिन (छाती पर एक भुजा रखकर दूसरे हाथ से ताड़न का शब्द), वाय और गान का उद्घोषित शब्द हो तो राजा और राष्ट्र दोनों को भय के लिए होता है।

यस्याश्चिरं तिष्ठति लेऽनुषङ्गे दण्डाकृतिः सा नृपते भर्याय ।

या चोह्यते तनुधृतेव खस्था या वा महेन्द्रध्वजतुल्यरूपा ॥२४॥

जिस उल्का की स्थिति आकाश में अधिक देर तक रहे, जो दण्डाकार दिखाई दे, जो आकाश में डोरी से बँधी हुई की तरह स्थिर हो, जो इन्द्रधनुष की तरह दिखाई दे वह सब राजभय के लिए होती है।

श्रेष्ठिनः प्रतीपगा तिर्यगा नृपाङ्गनाम् ।  
 हन्त्यधोमुखी नृपान् ब्राह्मणानथोर्धगा ॥२५॥  
 वर्हि पुच्छु रुपिणी लोसक्षयावहा ।  
 सर्पवत् प्रसर्पती योषितामनिष्टदा ॥२६॥  
 हन्ति मण्डला पुरं छत्रवत् पुरोहितम् ।  
 वंशगुल्मवत् स्थिता राष्ट्रदोषकारिणी ॥२७॥  
 व्यालसूकरोपमा विस्फुलिङ्गमालिनी ।  
 खण्डशोऽथवा गता स्वना च पापदा ॥२८॥

विपरीत (जहाँ से आयी हो वहाँ ही लौट) जाने वाली उल्का सेठों का, तिरछी चलने वाली रानियों का, नीचे मुख वाली राजाओं का और ऊपर जाने वाली उल्का ब्राह्मणों का नाश करती है। जो उल्का मोर पूछ की तरह वह लोगों का नाश करती है और जो सर्प की तरह चलती है वह स्त्रियों को अशुभ फल देने वाली होती है। मण्डलाकृति वाली उल्का नगर का और छत्राकृति वाली पुरोहित का नाश करती है। तथावंशागुल्माकारा (बांस की बीड़ के समान वाली) उल्का राष्ट्रभय करती है। सर्प या सुअर की तरह चिनगारियों की माला पहनी हुई (चिनगारियों से व्याप्त शरीर वाली), खण्ड-खण्ड और शब्द सहित उल्का पाप फल देने वाली होती है।

सुरपतिचापप्रतिमा राज्यं नभसि विलीना जलदान् हन्ति ।  
 पवनविलोमा कुटिलं याता न भवति शस्ता विनिवृत्ता वा ॥२९॥

इन्द्र धनुष की तरह तथा आकाश में उत्पन्न होकर शीघ्र विलीन होने वाली उल्का मेघों का नाश करती है तथा वायु के प्रतिकूल टेढ़ी होकर चलने वाली और उत्पन्न होकर नीचे की तरफ नहीं चलने वाली शुभ नहीं होती है।

अभिभवति यतः पुरं बलं वा भवति भयं तत एव पार्थिवस्य ।

निपतति च यया दिशा प्रदीप्ता जयति रिपूनचिरात्त्या प्रयातः ॥३०॥

जिस ओर से आकर उल्का पुर या सेना के ऊपर गिरती है उसी दिशा से राजा को भय होता है और जिस दिशा को प्रकाशित करती हुई गिरती है उस दिशा में गमन करने वाला राजा शीघ्र शत्रुओं का नाश करता है।

### ‘निर्धात से शकुन-विज्ञान’

निर्धात का लक्षण—

पवनः पवनाभिहतो गगनादवनौ यदा समापत्ति ।

भवति तदा निर्धातः स च पापो दीप्तविहगरुतः ॥1॥

जब पवन से टकरा कर पवन आकाश से पृथ्वी पर गिरता है उस समय उसके गिरने से जो शब्द होता है उसका नाम निर्धात है। यदि वह सूर्याभिमुख स्थित पक्षियों के शब्द से युक्त हो तो दुष्ट फल देने वाला होता है।

काल के द्वारा निर्धात का लक्षण—

अर्कोदयेऽधिकरणिकनृपथनियोऽङ्गनावणिग्वेश्याः ।

आप्रहरांशेऽजाविकमुपहन्याच्छूद्रपौरांश्च ॥2॥

आमध्याह्नद्राजोपसेविनो ब्राह्मणांश्च पीड्यति ।

वैश्यजलदांस्तृतीये चौरान् प्रहरे चतुर्थं तु ॥3॥

अस्तं याते नीचान् प्रथमे यामे निहन्ति सस्यानि ।

रात्रौ द्वितीययामे पिशाचसङ्घान् निपीड्यति ॥4॥

तुरगकरिणस्तृतीये विनिहन्याद्यायिनश्चतुर्थं च ।

भैरवजर्जरशब्दो याति यतस्तां दिशं हन्ति ॥5॥

यदि सूर्योदय काल में निर्धात हो तो अधिकरणिक, राजा, धनी, शूर, स्त्री, व्यापारी और वेश्याओं का नाश करता है। यदि दिन के प्रथम प्रहर में निर्धात हो तो छाग, आविक (भेड़ पालने वाले), शूद्र और पुरवासियों का नाश करता है। द्वितीय प्रहर में राजा, सेवक और ब्राह्मणों को पीड़ा होती है। तृतीय प्रहर में व्यापारी और मेघ का नाश करता है। चतुर्थ प्रहर में चोरों को पीड़ित करता है। रात्रि के प्रथम प्रहर में धान्यों का नाश करता है। द्वितीय प्रहर में पिशाच समूहों को पीड़ित करता है। तृतीय प्रहर में हाथी और घोड़ों का नाश करता है। यदि रात्रि के चतुर्थ प्रहर में निर्धात हो तो गमन करने वालों का नाश करता है। तथा जिस दिशा में भग्न भाण्ड की तरह भयङ्कर शब्द हो जाता है उस दिशा का नाश करता है। (वृहद्संहिता, पृष्ठ-224)

### ‘धूलि से शकुन-विज्ञान’

धूलि के लक्षण द्वारा राजा का नाश—

कथयन्ति पार्थिववधं रजसा घनतिमिरसश्चयनिभेन ।

अविभाव्यमानगिरिपुरखतः सर्वा दिशश्छन्नाः ॥1॥

जब घने अन्धकार की तरह धूलि से पर्वत, पुर, वृक्ष और सब दिशायें व्याप्त हो जाने से कुछ भी नहीं दिखाई देता है, उस समय राजा का नाश कहना चाहिये।

(वृहद्संहिता, पृष्ठ-223)

धूलि की उत्पत्ति और नाश के द्वारा फल—

यस्यां दिशि धूमचयः ग्राक् प्रभवति नाशमेति वा यस्याम् ।

आगच्छति सप्ताहात् तत्रैय भयं न सन्देह ॥2॥

पहले जिस दिशा में धूलि की उत्पत्ति हो और जिस दिशा में नाश हो उन दोनों दिशाओं में सात दिन के अन्दर निःसन्देह भय होता है।

सघन धूलि के वर्ण का फल—

श्वेते रजोधनौधे पीडा स्यान्मन्त्रिजनपदानां च ।

न चिरात्रकोपमुपयाति शस्त्रमतिसङ्कुला सिद्धिः ॥3॥

सघन धूलि का समूह यदि श्वेत वर्ण का हो तो मंत्री तथा राष्ट्र को पीड़ा, शीघ्र शस्त्र का प्रकोप और अति कठिनता से कार्य की सिद्धि होती है।

एक या दो दिन धूलि से आच्छादित आकाश का फल—

अर्कोदये विजृम्भति यदि दिनमेकं दिनद्वयं वाऽपि ।

स्थगयन्निवगगनतलं भयमप्युग्रं निवेदयति ॥4॥

यदि सूर्यास्त के समय उत्पन्न होकर धूलि एक या दो दिन तक आकाश को ढकी हुई रहे तो वह उग्र भय को कहती है।

एक रात्रि तक धूलि से व्याप्त आकाश का फल—

अनवरतसञ्चयवहं रजनीमेकां प्रधाननृपहन्त् ।

क्षेमाय च शेषाणां विचक्षणानां नरेन्द्राणाम् ॥5॥

यदि वराबर इकट्ठी होकर धूलि एक रात्रि तक स्थित रहे तो प्रधान राजा

की मृत्यु और शेष बुद्धिमान् राजाओं को शुभ करती है।

धूलि से परचक्रागम का योग—  
रजनीद्वयं विसर्पति यस्मिन् राष्ट्रे रजोधनं वहुलम्।  
परचक्रस्यागमनं तस्मिन्नपि सन्निबोद्धव्यम् ॥6॥

जिस देश में दो रात्रि तक बराबर धनीभूत धूलि फैलती है उस देश में निश्चय करके दूसरे राजा का आगमन कहना चाहिये ।

तीन आदि रात्रि तक धूलि गिरने का फल  
निपतति रजनीत्रितयं चतुष्कमप्यन्नरसविनाशाय।  
राजां सैन्यक्षोभो रजसि भवेत् पञ्चरात्रभवे ॥7॥

यदि तीन या चार रात्रि तक बराबर धूलि गिरती रहे तो अन्न और रस के विनाश के लिये होती है। यदि पाँच रात्रि तक धूलि गिरे तो राजाओं की सेनाओं में खलबली मचती है।

केतुदय के बाद धूलि गिरने का फल—  
केत्याद्युदयविमुक्तं यदा रजो भवति तीव्र भयदायि।  
शिशिरादन्यत्रतौ फलमविकलमाहुराचार्याः ॥8॥

यदि केतु आदि के उदय के बाद धूलि गिरे तो तीव्र भय देने वाली होती है। आचार्यों का मत है कि शिशिर ऋतु के अतिरिक्त अन्य सब ऋतुओं में ठीक-ठीक फल देती है।

### इन्द्रधनुष से शकुन-विज्ञान (इन्द्र धनुष का स्वरूप)

सूर्यस्य विविधवर्णाः पवनेन विघट्तिः कराः साभ्रे।  
वियति धनुः संस्थाना ये दृश्यन्ते तदिन्द्रधनुः ॥1॥

(पृष्ठ 218 वृहत्संहिताया)

मेघ युक्त आकाश में वायु से सूर्य किरण टकराकर अनेक वर्ण-युक्त धनुषाकार जो दिखाई देता है, लोग उसी को इन्द्रधनुष कहते हैं। यदि इसको सम्मुख करके राजा लोग गमन करें तो उनकी पराजय होती है।

इन्द्रधनुष के वर्ण से फल—

अच्छिन्नमवनिगाढं द्युतिमत् स्तिंगं धनं विविधवर्णम् ।  
द्विसूदितमनुलोमं च प्रशस्तमम्भः प्रयच्छति च ॥3॥

अखण्ड, पृथ्वी में लगा हुआ, उच्चल, निर्मल, अविकाल, अनेक वर्ण युक्त, दो बार उठित या पश्चिम में स्थित इन्द्रधनुष दिखाई दे तो शुभ फल और बहुत वृष्टि करने वाला होता है।

यहाँ पर कोई-कोई अनुलोम का अर्थ एक दक्षिण दिशा में और उत्तर दिशा में दूसरा स्थित है ऐसा कहते हैं।

विदिशा में स्थित इन्द्र धनुष का फल—

विदिगुद्भूतं दिक्स्वामिनाशनं व्यभ्रजं मरककारि ।

पाटलपीतकनीतैः शस्त्राग्निक्षुकृता दोषा ॥4॥

विदिशा (ईशान, आग्नेय, नैऋत्य और वायव्य) में यदि इन्द्रधनुष दिखाई दे तो उस दिशा के स्वामी का नाश होता है। थोड़ा लाल, पीला और नीला इन्द्रधनुष हो तो क्रम से शरव दोष, अग्नि दोष और दुर्भिक्ष करता है। जैसे थोड़ा लाल हो तो शस्त्रदोष, पीला हो तो अग्नि दोष और नीला हो तो दुर्भिक्ष करता है।

जल आदि में स्थित इन्द्रधनुष का फल—

जलमध्येऽनावृष्टिर्भुवि सस्यवधस्तरौ स्थिते व्याधिः ।

वल्मीके शस्त्रभयं निशि सचिवधाय धनुरैन्द्रम् ॥5॥

यदि जल में इन्द्रधनुष दिखाई दे तो अनावृष्टि, पृथ्वी पर दिखाई दे तो धान्यों का नाश, वृक्ष पर दिखाई दे तो व्याधि, दीवार की भीड़ पर दिखाई दे तो शस्त्रभय और रात्रि में दिखाई दे तो मन्त्री का मरण होता है।

दिशा के वश फल—

वृष्टिं करोत्यवृष्ट्यां वृष्टि वृष्ट्यां निवारयत्यैन्धाम् ।

पश्चात्सदैव वृष्टि कुलिशभृतश्चापमाचष्टे ॥6॥

यदि अनावृष्टि के समय पूर्व दिशा में इन्द्रधनुष दिखाई दे तो वृष्टि और वृष्टि के समय दिखाई दे तो अनावृष्टि करता है। तथा पश्चिम दिशा में स्थित इन्द्रधनुष सदा वृष्टि को करता है।

चापं मधोनः कुरुते निशायामाण्डलायां दिशि भूपीडान् ।

याम्यापरोदक्प्रभवं निहन्यात्सेनापतिं नायक मन्त्रिणौ च ॥

यदि रात्रि के समय इन्द्रधनुष पूर्व दिशा में दिखाई दे तो राजा को पीड़ित

करता है। तथा उत्तर दिशा में दिखाई दे तो सेनापति, पश्चिम में प्रधान पुरुष और उत्तर में इन्द्रधनुष दिखाई दे तो मन्त्री का नाश होता है।

**निशि सुरचापं शितवर्णाद्यं जनयति पीडां दिजपूर्वाणाम्।**

**भवति च यस्यां दिशा तद्वेश्यं नरपतिषुख्यं न चिराद्बन्यात्॥**

यदि रात्रि के समय श्वेत आदि (श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण) वर्ण का इन्द्रधनुष दिखाई दे तो ब्राह्मण आदि वर्णों का नाश करता है। जैसे— श्वेत वर्ण का हो तो ब्राह्मणों का, रक्त वर्ण का हो तो क्षत्रियों का, पीत वर्ण का हो तो वैश्यों का और कृष्ण वर्ण का हो तो शूद्रों का नाश करता है। तथा जिस दिशा में इन्द्रधनुष दिखाई देता है उस दिशा का प्रधान राजा का शीघ्र नाश करता है।

**गन्धर्वनगर से शकुन-विज्ञान**

**दिशा के वश गन्धर्वनगर का फल-**

**उदगादिपुरोहितनृपबलपतियुवराजदोषदं खपुरम्।**

**सितरक्तपीत कृष्णं विप्रादीनामभावाय ॥**

(पृष्ठ 220 बृहत्संहिताया)

यदि उत्तर दिशाओं में गन्धर्व नगर दिखाई दे तो क्रम से पुरोहित, राजा, सेनापति, और युवराज का अशुभ करता है। जैसे, उत्तर दिशा में दिखाई दे तो पुरोहित, पूर्व दिशा में राजा, दक्षिण में सेनापति और पश्चिम में दिखाई दे तो युवराज का अशुभ करता है। तथा श्वेत वर्ण का हो तो ब्राह्मणों का, रक्तवर्ण का हो तो क्षत्रियों का, पीत वर्ण का हो तो वैश्यों का और कृष्ण वर्ण का हो तो शूद्रों का नाश करता है। आकाश में बादल के जो विभिन्न आकार दिखाई देते हैं उसे गन्धर्व नगर कहते हैं।

**उत्तर दिशा और विदिशाओं में स्थित गन्धर्व नगर का फल-**

**नागरनृपतिजयावहमुदग्विदिक्स्यं विवर्णनाशाय।**

**शान्ताशायां दृष्टं सतोरणं नृपतिविजयाय ॥**

यदि उत्तर दिशा में गन्धर्व नगर स्थित हो तो राजाओं की विजय देने वाला होता है। विदिशा (ईशान, आग्नेय, वायव्य और नेर्कृत्य) में स्थित हो तो (संकर) नीच जाति का नाश होता है। तथा शान्त दिशा में तारायुत दिखाई दे तो राजा के विजय

के लिए होता है।

सब दिशाओं में सदा उत्पन्न गन्धर्व नगर का फल-

**सर्वदिगुप्त्यं सततोत्थितं च भयदं नरेन्द्रराष्ट्राणाम्।**

**चौराटविकान् हन्यादधूमानलशक्तचापाभम् ॥**

यदि प्रतिदिन सब समय में गन्धर्वनगर दिखाई दे तो राजा, राष्ट्र दोनों को भय देने वाला होता है तथा यदि धूम, अग्नि या इन्द्रधनुष की तरह कन्ति वाला हो तो चोर और वनवासियों का नाश करता है।

**श्वेत वर्ण युक्त और दीप्ति दिशा में स्थित गन्धर्व नगर का फल-**

**गन्धर्वनगरमुत्थितमापाण्डुरमशनिपातवात् करम् ।**

**दीप्ते नरेन्द्रमृत्युर्वामिदरिभयं जयः सव्ये ॥**

पाण्डुर श्वेत-शुक्ल-शुभ्र-शुचि-श्वेत-विशद- (श्वे-पाण्डुरा इत्यमर:) वर्ण का गन्धर्व नगर दिखाई दे तो वज्रपात के साथ वायु करता है। दीप्त दिशा में स्थित हो तो उस दिशा में स्थित राजा का मरण होता है तथा वाम में शत्रु का भय और दक्षिण में जय करता है।

**पताका आदि के समान गन्धर्वनगर का फल-**

**अनेकवर्णाकृति खे प्रकाशते पुरं पताकाध्वजतोरणान्वितम् ।**

**यदा तदा नागमनुष्यवाजिनां पिवत्यसृग्भूरि रणे वसुन्धरा ॥**

जिस समय आकाश में अनेक वर्णयुक्त पताका, ध्वजा या पुरद्वार की तरह गन्धर्व नगर दिखाई देता है उस समय चुन्द में हाथी, मनुष्य और घोड़ों का रक्त पृथ्वी अधिक पान करती है।

**प्रकृति और मानव परस्पर अन्योन्याश्रित**

मानवी जीवन और प्राकृतिक परिवेश एक-दूसरे से घनिष्ठतापूर्वक जुड़े हैं। एक की गड़बड़ी से दूसरा प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। व्यवहार विज्ञानियों ने इन दिनों एक नए आयाम की खोज की है। उनके अनुसार समृद्ध संसार में फैले मानव समाज की व्यावहारिक गड़बड़ियों का एक महत्वपूर्ण कारण पर्यावरणीय असन्तुलन है। इनका मानना है कि अच्छे समाज, अच्छे आदमियों के लिये जरूरी है कि सम्पन्न और समृद्ध हो। यह बात भी सही है। आजकल

प्रकृति एवं समाज की पारस्परिक अन्तक्रिया इतनी व्यापक है कि उससे समूची मानव जाति प्रभावित हो रही है। पर्यावरणीय बिगड़ का कारण औद्योगिकरण, नगरीकरण, ऊर्जा और कच्चे माल के पारस्परिक साधनों की घटोत्तरी, प्राकृतिक सन्तुलनों के विघटन, विभिन्न जानवरों व पेड़, पौधों के खाने-पीने के साधनों के विनाश को बताया जाता है। स्वच्छन्द वैज्ञानिक प्रगति तथा तकनीकी सामर्थ्य ने मनुष्य को काफी ताकत दे दी है। हम पर्वतों को हटा सकते हैं, नदियों का मार्ग बदल सकते हैं। नए सागरों का निर्माण कर सकते हैं। मतलब यह कि हम प्राकृतिक जगत में काफी फेर बदल कर सकते हैं। परन्तु कौन-सी फेर बदल उचित है, कौन सी अनुचित ? क्या करने से सत्य परिणाम सामने आयेगे, क्या करने से दुष्परिणाम ? इसे बिना सोचे-विचारे कोई काम करने लग जाय तो इसे मूर्खता के सिवा और क्या कहा जाएगा ? अमेरिकन विद्वान् जे.एम.हाक ‘वैहैविवरल इकालॉजी’ में कहते हैं कि आज यह जाहिर हो गया है कि हम प्राकृतिक जगत पर अपने अन्तर्हीन आक्रमण तथा वैगैर सोचे विचारे उसमें बड़े फेर बदल करके इस अधिकार का अविवेकपूर्ण उपयोग नहीं कर सकते और हमें करना भी नहीं चाहिए क्योंकि इसके परिणाम हानिकारक होंगे। आधुनिक अनुसंधानों से मालूम हुआ है कि जैव मण्डल पर मनुष्य के अनवरत एकतरफा और काफी हद तक अनियमित प्रभाव से हमारी सभ्यता एक ऐसी सभ्यता में तब्दील हो सकती है, जो मरुभूमियों को मरुद्यानों में रूपान्तरित करने के स्थान पर मरुद्याना को रेगिस्तानों में प्रस्थापित कर देगी। व्यवहार विज्ञानी जे.स्टैनले के अनुसार जहाँ-जहाँ इस तरह वातावरण अस्त-व्यस्त हुआ है वहाँ के निवासियों की मानसिक स्तर की अस्तव्यस्तता प्रत्यक्ष दिखाई देती है। उनके व्यवहार में चिड़चिड़ाहट, झल्लाहट, मारपीट, आक्रामकता को स्पष्टतः देखा जा सकता है। स्टैनले ने अपनी किताब ‘माइण एण्ड इकोलॉजी’ में इसे समझाते हुए कहा है कि व्यवहार के बीज मनुष्य के मन में रहते हैं। मानसिकता के अनुरूप ही शरीर की विभिन्न गतिविधियाँ, क्रिया-कलाप संचालित होते हैं। परिवेश की गड़बड़ियों का सीधा असर चेतन और अवचेतन मन पर पड़ता है। श्रीमद्भगवद् गीता में इस बात को और अधिक ढंग से समझाया गया है। इसमें प्रकृति के आठ अंग बताये गये हैं। इन्हें अष्टधा कहा गया है। पहले पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि आदि

पांच बाहरी और मन, बुद्धि, अहंकार तीन आंतरिक। ये बाहरी और आन्तरिक पटक आपस में खूब जुड़े हैं। बाहरी प्रकृति की हलचलें आन्तरिक प्रकृति को लिलाए हुलाए बिना नहीं रहतीं। इसी सब को मदे भजर रखते हुए ए क्लाइट का “डिट्यू मनाइजेशन ऑफ मैन” में कहना है कि प्रकृति पर अपनी मानवीय विजयों के कारण हमें आत्म प्रशंसा में विभोर नहीं हो जाना चाहिये क्योंकि ऐसी हर विजय हमें अमानव बनाने वाली होती है। यह सही है कि हरेक विजय से पहले ये ही परिणाम मिलते हैं जिनका हमने भरोसा किया था। पर दूसरी और तीसरी बार में उसके बिलकुल भिन्न तथा अप्रत्याशित परिणाम होते हैं, जिनसे अवसर पहले परिणाम का असर जाता रहता है। पिछली सदी तथा मौजूदा सदी के पूर्वान्दृ में मनुष्य का लालच इतना बढ़ा-चढ़ा नहीं था जो सारी मानव जाति के अस्तित्व की आवश्यक शर्त के रूप में सोचने को विवश करता। यह तकाजा करता कि समाज और उत्पादन के सिलसिले में प्रकृति पर हमारे हस्तक्षेप के दूरगामी परिणामों पर विचार किया जाये। लेकिन अब यह कौरी और आवश्यक हो गया है। अब यह साफ जाहिर हो गया है कि मनुष्य द्वारा भौतिक चीजों के लिये प्रकृति के शोषण की शैली जीवन जीने की शैली को भी बरबाद करती है और यह ऐसे बड़े पैमाने पर होता है कि समूची मानव जाति तथा अन्य जीवधारी उसकी चपेट में आ जाते हैं। हमारा जीवन सरल, सौम्य और मृदुल बने इसके लिये जरूरी है कि हम पृथ्वी पर जीवन प्रणाली के विभिन्न तत्त्वों पर अपने प्रभाव को सावधानीपूर्वक देखें, समझें और सुधारें। पर्यावरण को मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप रूपान्तरित करना एक सीमा तक तो ठीक है। विनाशक प्राकृतिक शक्तियों जैसे भूकम्प, टाइफूनों, चक्रवातों बाढ़ व सूखा, चुम्बकीय और आंधियों से भी संघर्ष करना पड़ेगा। परन्तु यह केवल उन नियमों के अनुसार ही किया जा सकता है जिनके द्वारा जैव मण्डल एक अखण्ड व स्वनियामक प्रणाली के रूप में काम करता तथा विकसित होता है। आज का पर्यावरणीय सवाल महज प्रदूषण तथा मनुष्य के आर्थिक क्रिया-कलापों के दूसरे नकारात्मक परिणामों तक सीमित नहीं है। यह हमारी जीवन शैली को गढ़ने से भी सम्बन्धित है। विशेषज्ञों का कहना है कि इस शताब्दी के उत्तरार्ध में पहले के वीरान क्षेत्रों में नई-नई बरित्याँ बरस जाने, जहरीले पदार्थों के व्यापक उपयोग तथा प्रकृति के निर्मम शोषण की वजह से विभिन्न जीव जातियों के गाचब होने की दर तेजी से बढ़ गई है। जीवाश्म वेत्ताओं का मानना है कि इसके खात्मे में इनका पारस्परिक आक्रमक

व्यवहार भी एक बड़ा कारण है। पिछले 2000, वर्षों में जो जातियाँ गायब हुई हैं उनमें आधी से अधिक 1900 के बाद हुई है। जैविकीविदों की मान्यता है कि पिछले 350 सालों में प्राणियों की एक जाति या उपजाति लुप्त हो जाती है। इस समय पक्षियों और जानवरों की लगभग 1000 जातियों के गायब होने का खतरा है। इस जैविकीय दरिद्रीकरण का प्रभाव बताते हुए एक व्यवहार विज्ञानी एफ.ए. बीमान का 'बिहेवियरल एग्रेशन एण्ड एनवायरनमेन्ट' में कहना है कि वर्तमान सदी में—पर्यावरण धर्सन होने के साथ शनैः शनैः मनुष्य का व्यवहार भी अधिकाधिक आक्रामक होता गया है। इससे पहले के मानवीय इतिहास के पृष्ठ सिर्फ कुछ व्यक्तियों की व्यवहारिक विकृतियों को ही बताते हैं। इन कुछ को छोड़कर शेष दुनिया के आदमियों ने पारस्परिक सरलता और सौम्यता ही पसन्द की है। पर अब बदलते माहौल में सभ्य दुनिया के हर कोने में मानवीय व्यवहार के अमानवीयकरण को हटाने के लिये जरूरी है कि प्रकृति के साथ मनुष्य जाति के तौर तरीके बदलें। इसके लिये उस नीति को बदलना होगा, जिसके अन्तर्गत प्रकृति पर विजय प्राप्त करने, उसके विभिन्न साधन स्रोतों से मनचाही लूट-खसोट करने को ही सामाजिक लक्ष्य मान लिया गया है। हम हँसी-खुशी की जिन्दगी जी सकें, इसके लिये संतुलित रीति हर हालत में अधित्यार करनी ही होगी। इसके प्रयोग के तौर तरीके स्थान परिवेश और उसकी अवस्थाओं व आवश्यकताओं के अनुरूप अवश्य भिन्न हो सकते हैं। सहयोग, संरक्षण, सद्भाव का यह प्रवाह हमारे व्यवहारिक विकारों को धीरे-धीरे दूर कर निर्मल करता जाएगा। इसके लगातार बने रहने के लिए जरूरी है। हम सभी का एक जुट प्रयास जो एक दूसरे में निरन्तर इसके लिए प्रेरणा भरता रहेगा। यही 'डीप इकॉलॉजी' का तत्त्व दर्शन है। (अखण्ड ज्योति 41-42)

## ‘वनस्पति से शक्ति-विज्ञान’

किस वस्तु से किसकी वृद्धि होती है-

शालेन कलमशाली रक्ताशोकेन रक्तशालिश्च ।

पाण्डुकः क्षीरिक्या नीलाशोकेन सकरकः। (२)।

शाल वृक्ष पर फल और फूलों की वृद्धि से कलम शाली (जड़हन धान्य आदि), रक्त अशोक से रक्त धान्य, दृधी से पाण्डुक और नील अशोक पर फल, फूलों

की वृद्धि से सुकरक (धान्य विशेष) की वृद्धि जाननी चाहिये

(वृहत्संहिताया, अ-२१, पृष्ठ-१८८)

यव आदि धान्यों की वृद्धि—

न्यग्रोधेन तु यवकस्ति न्दुकबृद्धया च षष्ठिको भवति ।

अश्वत्थेन ज्ञेया निष्पत्तिः सर्वसस्यानाम् । (3) ।

वट वृक्ष से यव, तिन्दुक (तेंदुआ) ने साठी धान्य और पीपल से सब धान्यों की बन्दू देखनी चाहिये ।

तिल, माष आदि धान्यों की वृद्धि-

जम्बुभिस्तिलमाषा शिरीषवद्वया च कड़गनिष्पत्तिः।

गोधमाः च मधीकैर्यववद्धिः सप्तपर्णन् । (4) ।

जामुन से तिल, माष आदि, शिरीष (शिरस) से प्रियद्वृ (ककुनी=कौनी) महुँए गेहूं और सप्तवर्ण वृक्ष पर फल, फल की बन्दि से यव की बन्दि जानना चाहिये।

कपास आदि की बढ़ि-

अतिमवक्तककन्दाभ्यां कर्पासं सर्पपान वदेदशनैः ।

बदरीभिश्च कलत्यांश्चिचरविल्वेनादिशेऽन्तगदान् ॥५॥

बासन्ती लता और कुन्द पुष्पों में फल पुष्पों की वृद्धि से कपास, असना से सरसों, वेरे से कुलया और करंच में फल-पुष्पों की वृद्धि से मूँग की वृद्धि जाननी चाहिये।

अलसी आदि की वृद्धि-

अतसी वेतसपृष्ठैः पलाशकसमैश्च कोद्रवा ज्ञेयाः ।

तिलकेन शङ्खमौकितकरजतान्यथ चेष्टदेन शणाः । (६॥

वेसत वृक्ष में फल-पुष्पों की वृद्धि से अलसी (तीसी), पलास से कोदों, तिलक से शंक, मोती ओर चाँदी की तथा इहुदी वृक्षों में फल-पुष्पों से सन की वृद्धि जाननी चाहिये।

हाथी आदि की वस्त्र-

करिण॑च हस्तिकणैरादेश्या वाज्ञिनोऽश्वकर्णेन ।

गावश्च पाटलाभिः कुटलीभिरज्ञाविकं भवति। (७)।

हरितकर्णा वृक्ष पर फल-पुष्पों की वृद्धि से हाथी, अश्वकर्ण से घोड़ा; पाटली से आय और कठली वृक्ष पर फल-पुष्पों की वृद्धि से बकरी, भेड़ आदि की वृद्धि होती है।

#### सोना आदि की वृद्धि-

चम्पककुसुमैः कनकं विद्वुमसम्पद्य वन्धुजीवेन ।  
कुरवकवृद्ध्या वज्रं वैदूर्यं नन्दिकावर्तैः ॥(8)॥

चम्पा फूल की वृद्धि से सोना, बन्धुजीव से मूंगा, कुरवक से वज्र और नन्दिकावर्त से वैदूर्य मणि की वृद्धि होती है।

विन्याच्च सिन्धुवारेण मौक्तिकं कारुकाः कुसुम्भेन ।  
रक्तोत्पलेन राजा मन्त्री नीलोत्पलेनोक्तः ॥(9)॥

सिन्धुवास से मोती, कुसुम्भ से केशर, रक्त कमल से राजा और नील कमल से मन्त्री की वृद्धि देखनी चाहिये।

#### ब्यापारादि की वृद्धि-

श्रेष्ठी सुवर्णपुष्पात्पर्यै विप्राः पुरोहिताः कुमुदैः ।  
सौगन्धिकेन बलपतिरकैण हिरण्यपरिवृद्धिः ॥(10)॥

सुवर्ण पुष्प से व्यापारी, कमल से ब्राह्मण, कुमुद से पुरोहित, सुगन्ध वस्तु से सेनापति और आक से सोने की वृद्धि देखनी चाहिये।

#### मनुष्य आदि का कुशल-

आपैः क्षेमं भल्लातकैर्भयं पीलुभिस्तथारोग्यम् ।  
खदिरशमीभ्यां दुर्भिक्षमज्जुनैः शोभना वृष्टिः ॥(11)॥

आम की वृद्धि से मनुष्यों का कुशल, भल्लातक से भय, पीलु से आरोग्य, खैर तथा शमी से दुर्भिक्ष और अर्जुन वृक्ष से सुन्दर वृष्टि कहनी चाहिये।

#### सुभिक्ष आदि का ज्ञान-

पिचुमन्दनागकुसुमः सुभिक्षमय मारुतः कपित्येन ।  
निचुलेनावृष्टिभयं व्याधिभयं भवति कुटजेन ॥(12)॥

निम्ब और नागकेसर पर पुष्पों की वृद्धि से सुभिक्ष, कपित्य से वायु, निचुल

ए अवृष्टि का भय और कुटज से व्याधि भय का ज्ञान करना चाहिये।

दूर्वाकुशकुसुमाभ्यामिक्षुर्वृद्धिश्च कीविदारेण ।

श्यामालताभिवृद्ध्या वन्धक्यो वृद्धिमायान्ति ॥(13)॥

दूब और कुश के पुष्पों की वृद्धि से ईख (गन्ना) कचनार से आग, और श्यामलता की वृद्धि से वेश्या, व्यभिचारिणी आदि स्त्री की वृद्धि होती है।

#### वृक्ष के पत्तों से वृष्टि ज्ञान-

यस्मिन् काले स्निग्धनिश्छिद्रपत्रः सन्हश्यन्ते वृक्षगुल्ला लताश्च ।

तस्मिन्चृष्टिः शोभना सम्प्रदिष्टा रुक्षैश्छिद्रेरत्पमम्भः प्रदिष्टम् ॥(14)॥

जिस समय वृक्ष गुल्म (फैली लता) और लताओं के पत्ते चिकने तथा छिद्र रहित दिखाई दें उस समय सुन्दर वृष्टि होती है। यदि वे (पत्ते) रुक्ष और छिद्र पूत हो तो थोड़ी वृष्टि होती है।

#### ‘सन्ध्या से शकुन-विज्ञान’

##### सन्ध्या का लक्षण-

अर्द्धास्तमितानुदितात् सूर्योदस्पष्टभं नभो यावत् ।

तावत् सन्ध्याकालश्चैद्वैरतैः फलं चास्मिन् ॥1॥

अर्द्धास्त सूर्य बिम्ब के बाद आकाश में नक्षत्र गण अच्छी तरह नहीं दिखाई देने तक एक संध्या (सायं सन्ध्या) और नक्षत्रों के स्वल्प कान्ति होने के बाद अर्द्धास्त सूर्यबिम्ब होने तक दूसरी (सायं संध्या) होती है। लक्षणों के द्वारा इसका फल आगे कहते हैं। (वृहत्संहितायां, अ.-30, पृष्ठ-191)

##### फलादेश के आधार वस्तु-

मृगशकुनिपवनपरिवेषपरिधिपरिधाभ्रवृक्षसुरचापैः ।

गन्धर्वनगररविकरदण्डरजः स्नेहवर्णश्च ॥2॥

अरण्यवासी पशु, पक्षी, वायु, रवि चन्द्र के परिवेष, प्रतिसूर्य, परिधि, मेघरेखा वृक्षाकार मेघ, इन्द्रधनु, गन्धर्वनगर, सूर्य की रश्मि, दण्ड (रविकिरण, जल और वायु का संवात), धूली इन सभी के सन्ध्या कालिक स्नेह और वर्णों से फल कहना चाहिये।

मृग के लक्षण से फल—

भैरवमुद्यैर्विरुद्धं मृगोऽसकृद् ग्रामधात्माचष्टे।  
रविदीपो दक्षिणतो महास्वनः सैन्यधातकरः ॥३॥

बार-बार ऊँचा भयंकर शब्द करने वाला मृग ग्रामों के नाश का सूचक है तथा सेना के दक्षिण भाग में स्थित सूर्याभिमुख होकर भयंकर शब्द करे तो सेनाओं को नष्ट करता है।

अपसव्ये सङ्ग्रामः सव्ये सेनासमागमः शान्ते।

मृगचक्रे पवने वा सन्ध्यां मिश्रो वृष्टिः ॥४॥

यदि संध्या काल में सेनाओं के बाम भाग में सूर्याभिमुख होकर मृग-समूह या वायु हो तो संग्राम, दक्षिण में सूर्याभिमुख नहीं होकर स्थित हो तो सेनाओं का समागम और दोनों तरफ स्थित हो तो वृष्टि होती है।

संध्या का लक्षण और फल—

दीप्तमृगाण्डजविरपूता प्राक् सन्ध्या देशनाशमाख्याति ।

दक्षिणदिक्सैविरुता ग्रहणाय पुरस्य दीप्तास्यैः ॥५॥

सूर्याभिमुख हुए मृग और पक्षियों के शब्द युक्त प्रातःसंध्या देश का नाश करती है तथा सूर्याभिमुख होकर दक्षिण दिशा में रिथत मृग और पक्षियों के शब्द युक्त संध्या शत्रुओं से नगर के ग्रहण को कराती है।

संध्याकाल में वायु का लक्षण और फल—

गृहतरुतोरणमथने सपांसुलोष्टोत्करेऽनिले प्रवले ।

भैखरावे रुक्षे खगपातिनि चाशुभा सन्ध्या ॥६॥

गृह, वृक्ष और तोरण (पुरद्वार) को कम्पित करती हुई, धूली और मृत्खण्डों से युक्त, प्रबल, भयंकर, रुक्ष तथा आकाश से पक्षियों को गिराती हुई संध्या समय की हवा अशुभ फल देने वाली होती है।

शुभ-संध्या काल का लक्षण—

मन्दपवनावधृतचलितपलाशद्रूमा विपवना वा ।

मधुरस्वरशान्तविहङ्गमृगरुता पूजिता सन्ध्या ॥७॥

मन्द-मन्द चलती हुई हवा से कम्पित पत्रों से युक्त वृक्ष, वायु से रहित, या

वृष्टि शकुन—

सन्ध्याकाले स्निधा दण्डतिन्मत्यपरिधिपरिवेषाः।

सुरपतिचापैरावतरविकिरणश्चाशुवृष्टिकराः ॥८॥

दण्ड, विद्युत, मछली की आकृति वाला मेघ, प्रतिसूर्य, परिध, इन्द्रधनुष, ऐरावत, सूर्यकिरण ये सब यदि संध्या काल में निर्मल हो तो वृष्टि करने वाले होते हैं।

संध्याकाल में सूर्यकिरण का लक्षण और फल—

विच्छिन्नविषमविधस्तविकृतकुटिलापसव्यपरिवृताः ।

तनुहस्वविकलकलुषाश्च विग्रहावृष्टिदाः किरणाः ॥९॥

संध्याकाल में खण्ड-खण्ड, विषम, वर्ण रहित, विकृत, कुटिलस अप्रदक्षिण क्रमसे परिवेष्टित, सूक्ष्म, छोटा, शक्ति रहित तथा मलिन सूर्य की किरण हो तो मनुष्यों में परस्पर विरोध और वृष्टि को करता है।

उद्धयोतिनः प्रसन्ना ऋजवो दीर्घाः प्रदक्षिणावर्ता ।

किरणाः शिवाय जगतो वितमस्के नभसि भानुमतः ॥१०॥

यदि अन्धकार रहित आकाश में तेज युक्त, निर्मल, स्पष्ट और दीर्घ दक्षिणावर्त क्रम से परिवेष्टित सूर्य की किरण हो तो संसार का कल्याण करने वाला होता है।

शुक्लाः करा दिनकृतो दिवादिमध्यान्तगामिनः स्निधाः।

अव्युच्छिन्ना ऋजवो वृष्टिकरास्ते त्वमोघाख्याः ॥११॥

सम्पूर्ण आकाश को व्याप्त करने वाले, निर्मल, अखण्डित और स्पष्ट सूर्य के किरण अमोघ संज्ञक (शुभ फल देने वाले) हैं।

कल्माषबध्रुकपिला विचित्रमाज्जिष्ठहरितशावलाभाः ।

त्रिदिवानुबन्धिनोऽवृष्ट्येऽल्पभयदास्तु सप्ताहात् ॥१२॥

कल्माष (पीला, श्वेत और काला वर्ण मिश्रित), थोड़े पीले, पीले, विचित्र, मंजिष्ठ (मंजीठ) की तरह हरे, काले-श्वेत दोनों मिले हुए और सम्पूर्ण आकाश मण्डल को व्याप्त करके स्थित सूर्य की किरण दिखाई दें तो उसके सात दिन बाद

से वृष्टि और घोड़ा भय करते हैं।

ताभ्रा वलपतिमृत्युं पीतारुणसन्निमाश्च तद्यसनम् ।  
हरिताः पशुसस्यवधं धूमसर्णा गवां नाशम् ॥३॥  
माजिष्ठाभाः शस्त्राणिसभ्रमं वभ्रवः पवनवृष्टिम् ।  
भरमसदशास्त्रवृष्टिं तनुभावं शबलकलमाषा ॥४॥

सूर्यकिरण यदि ताप्तवर्ण की हो तो सेनापति की मृत्यु, पीले और लाल रंग सदृश हो तो सेनापति को कष्ट, हरे रंग के समान हो तो पशु तथा धान्य का नाश, धूमवर्ण की हो तो गायों का नाश, मंजीठ वर्ण की हो तो शस्त्र तथा अग्नि से भय, पीले हो तो वायु के झकोरों में युक्त वर्षा, भरम समान हो तो अनावृष्टि, सफेद, काले, नीले, पीले ये सब मिले हुए वर्ण की तरह हो तो बहुत ही कम वर्षा होती है।

सन्ध्या-कालिक धूलि का लक्षण और फल-

वन्धूकपुष्पाज्जनचर्णसन्निभं सान्ध्यं रजोऽध्येति यदा दिवाकरम् ।  
लोकस्तदा रोगशैतैनिपीड्यते शुक्लं रजो लोकविवृद्धशान्तये ॥५॥

यदि बन्धूक पुष्प या अञ्जन की तरह होकर धूली सूर्य की तरफ जाये तो लोग सैंकड़ों रोगों से पीड़ित होते हैं, तथा श्वेत वर्ण की होकर धूली सूर्य की तरफ जाय तो लोगों की वृद्धि और शान्ति के लिए होती है।

दण्ड का लक्षण और फल-

रविकिरणजलमदमरुतां सङ्घातो दण्डवत्स्थितो दण्डः ।  
स विदिविस्थतो नृपाणाशुभो दिशु द्विजादीनाम् ॥६॥

सूर्यकिरण, मेघ, वायु, तीनों मिल कर दण्ड की तरह स्थित हो तो उसको दण्ड कहते हैं, यह दण्ड कोणों में स्थित हो तो राजाओं का और दिशाओं में स्थिर हो तो चारों वर्णों का अशुभ करता है।

शस्त्रभयातङ्करो दृष्टः प्राद्मध्यसन्धिषु दिनस्य ।  
शुल्काद्यो विप्रादीन् यदाभिमुखस्ता निहन्ति दिशम् ॥७॥

यदि यह दण्ड सूर्योदय, मध्याह्न या सूर्यास्त काल में दिखाई दे तो शस्त्र भय और उपद्रव करता है। तथा श्वेत वर्ण का हो तो ब्राह्मणों का, रक्तवर्ण का हो

तो धन्त्रियों का, पीत-वर्ण का हो तो वैश्यों का और कृष्ण वर्ण का हो तो शूद्रों का नाश करता है। एवं यह जिस दिशा के समुख स्थित हो उस दिशा का नाश करता है। सूर्य के समीप का इसका भाग मूल और दूसरी तरफ मुख होता है॥

मेघ वृक्ष का लक्षण और फल-

दधिसदृशाग्रो नीलो भानुच्छादी खमध्यगोऽभ्रतसः ।  
पीतचुरिताश्च घना घनमूला भूरिवृष्टिकराः ॥८॥

दही के समान अग्रभाग वाले, नील वर्ण के भाग से सूर्य को अच्छादित करने वाले, आकाश के मध्य में स्थित, पीले रंग से रंगे और मूल ली तरफ सघन मेघवृक्ष हों तो अधिक वृष्टि करता है।

मेघवृक्ष के द्वारा गमन करने वाले राजा का शुभाशुभ फल—  
अनुलोमगोऽभ्रवृक्षे शमं गते यायिनो नृपस्य वधः।

बालतसुप्रतिरूपिणि युवराजामत्ययोर्मृत्युः ॥९॥

शनु के ऊपर चढ़ाई करने वाले विजयेच्छु राजा के पीछे-पीछे कुछ दूर जाकर यदि मेघवृक्ष नष्ट हो जाए तो उस राजा का मरण होता है। यदि वही मेघवृक्ष बाल (छोटे) वृक्ष की तरह हो तो युवराज और मन्त्री का मरण होता है।

फिर सन्ध्या का लक्षण और फल-

कुवलयवैदूर्याम्बुजकिञ्जल्काभा प्रभञ्जनोन्मुक्ता ।  
सन्ध्या करोति वृष्टिं रविकिरणोद्भासिता सद्यः ॥१०॥

नील कमल, वैदूर्य मणि या कमल के केशर की तरह कान्ति वाली, वायु से रहित और सूर्य के किरणों से प्रकाशिक सन्ध्या हो तो उसी रोज वृष्टि करती है।

अशुभाकृतिघनगन्धर्वनगरनीहारधूमपांसुयुता ।

प्रावृषि करोत्यवग्रहमन्यर्ता शस्त्रकोपकरी ॥११॥

गन्धर्व नगर, हिम, धूम और धूली से युक्त सन्ध्या वर्षाकाल में अवृष्टि तथा अन्य ऋतु में शस्त्र-कोप करती है।

शिशिर आदि ऋतुओं में सन्ध्या का लक्षण और फल—

शिशिरादिषु वर्णाः सोणपीतसितचित्रपद्मरुधिनिभाः ।

प्रकृतिभवाः सन्ध्यायां स्वर्ता शस्ता विकृतिरन्या ॥१२॥

शिशिर आदि ऋतु में लाल, बसन्त ऋतु में पीला, ग्रीष्म ऋतु में श्वेत, वर्षा ऋतु में चित्र, शरद् ऋतु में कमल की तरह और यदि हेमन्त ऋतु में रुधिर की तरह सन्ध्या का वर्ण हो तो शुभ अन्यथा अशुभ फल होता है।

मेघ आदि के द्वारा फल—

आयुधभृन्नरुपं छिनाभ्नं परभयाय रविगामि ।  
सितखपुरेऽकाक्रान्ते पुरलाभो भेदने नाशः ॥२३॥

यदि सन्ध्याकाल में शस्त्र लिये हुए पुरुष की तरह मेघखण्ड दिखाई दे तो शत्रु का भय, सूर्य से आच्छादित और श्वेत वर्ण का गन्धर्व-नगर दिखाई दे तो पुर का लाभ और सूर्य से भेदित गन्धर्व-नगर हो तो पुर का नाश होता है।

मेघ के वर्णों से फल—

सितसितान्तधनवारणं रवेर्भवति वृष्टिकरं यदि सव्यतः ।  
यदि च वीरणगुल्मनिभैर्धनैर्दिवसभत्तरदगीप्तदिगुद्ध्वैः ॥२४॥

शुल्क और शुभ्र (स्वच्छ) किरण वाले या वीरण (गांडर) के समान कान्ति वाले शान्त दिशा में उत्पन्न मेघ सूर्य के दक्षिण भाग को आच्छादित करे तो वृष्टि करता है।

परिध के वश शुभाशुभफल—

नृपविपत्तिकरः परिधः सितः क्षतजतुल्यवपुर्बलकोपकृत् ।  
कनकरुपधरो बलवृद्धिदः सवितुरुद्दमकालसमुत्थितः ॥२५॥

सूर्योदयकाल में उत्पन्न में रेखा यदि शुल्क वर्ण की हो तो राजा का नाश, रक्तवर्ण की हो तो सेना का नाश और सुवर्ण की तरह कान्ति वाली हो तो सेनाओं की वृद्धि करती है।

उभयपाश्वर्गतो परिधी रवे: प्रचुरतोयकरौ वपुषान्वितो ।

अथ समस्तकुप्परिचारिणीः परिधयोऽस्ति कणोऽपि न वारिणः ॥२६॥

यदि सूर्य के दोनों तरफ परिधि (प्रतिसूर्य) दिखाई दे तो अधिक वृष्टि होती है। तथा यदि परिधि सब दिशाओं को व्याप्त करके स्थित हो तो जल का एक कण भी नहीं गिरता है अर्थात् अवृष्टि होती है।

संध्याकालिक मेघों का लक्षण और फल—

ध्वजातपत्रपर्वतद्विपाशवरुपधारिणः ॥२७॥

जयाय सन्ध्ययोर्धना रणाय रक्तसन्निभाः ॥२७॥

पलालधूमसञ्चयस्थितोपमा वलाहकाः ॥२८॥

वलान्यरुक्षमूर्त्यो विवर्धयन्तिक भूभृताम् ॥२८॥

विलम्बिनो द्रुमोपमाः खरारुणप्रकाशिनः ॥२८॥

घनाः शिवाय सन्ध्ययोः पुरोपमाः शुभावहाः ॥२९॥

यदि संध्याकाल में ध्वज, छत्र, पर्वत, हाथी या घोड़े की तरह रक्त वर्ण का मेघ दिखाई दे तो चुन्ड के लिये होता है। यदि पलाल, धुएँ की तरह निर्मल शरीर वाला मेघ हो तो राजाओं की सेना में वृद्धि करता है। यदि दोनों सन्ध्याओं में लटके हुये, वृक्ष की तरह, अतिलोहित वर्णों से प्रकाशित और पुर की तरह मेघ दिखाई दे तो शुभ करता है।

सन्ध्या काल का विशेष लक्षण और फल—

दीप्तविहङ्गाशवामृगधृष्टा दण्डरजः परिधादियुता च ।

प्रत्यहमकृविकारयुता या देशनरेशसुभिक्षवधाय ॥३०॥

यदि संध्याकाल में सूर्य के सम्मुख स्थित हुये पक्षी, शृंगाल और मृगों के शब्दों, दण्ड, धूलि, परिध आदि (इन्द्रधनु, गन्धर्व-नगर या हिम) से अथवा प्रतिदिन विकारयुक्त सूर्य से युक्त संध्या हो तो देश, राजा और सुभिक्ष का नाश करती है।

पूर्वोक्त फलों का समय—

प्राची तत्क्षणमेव नक्तमपरा सन्ध्या त्र्याहादा फलं,  
साप्ताहात्परिवेषरेणुपरिधाः कुर्वन्ति सद्यो न चेत् ।

तद्वत्सूर्य करे न्द्रक मर्मुक तडित्प्र करे धानिला—

स्तस्मिन्नेव दिनेऽप्यमेऽथ विहगाः सप्ताहपाका मृगाः ॥३१॥

पूर्व संध्या अपने फल को उसी समय में डेती है। सायं संध्या रात्रि या तीन दिन में, परिवेष, धूली, परिध, अमोघ, सूर्य के किरण, इन्द्रधनु, प्रतिसूर्य, मेघ और वाचु उसी समय या सात दिन में, पक्षी उसी समय या आठ दिन में और मृग सात दिन में शुभाशुभ फल करते हैं।

पूर्वोक्तत फलों का प्रदेश—

एक दीप्त्या योजनं भाति सन्ध्या विद्युद्ग्रासा षट् प्रकाशीकरोति ।

पञ्चावानां गर्जितं याति शब्दो नास्तीयत्ता केचिदुल्कानिपाते ॥३२॥

सन्ध्या अपनी कान्ति से प्रकाश करती है और उतनी ही दूर तक फल देती है। तथा विद्युत छः योजन तक और मेघों का गर्जन पाँच योजन तक प्रकाश करता है और उतनी ही दूर तक फल देता है। कोई-कोई (देवल आदि) आचार्य का मत है कि उल्कापात होने से प्रदेश की इयत्ता नहीं है किन्तु सर्वत्र फल देने वाला होता है।

**प्रत्यक्सञ्ज्ञः परिधिस्तु तस्य त्रियोजनाभः परिधिस्य पञ्च।**

**षट् पञ्चदृश्यं परिवेषचक्रं दशामरेशस्य धनुर्विभाति ॥३३॥**

प्रतिसूर्यनामक परिधि का तीन योजन तक, परिधि का पाँच योजन तक परिवेषचक्र का पाँच या छह योजन तक और इन्द्रधनुष का दश योजन तक प्रकाश जाता है और उतनी ही दूर तक ये सब फल भी देते हैं।

‘दिग्दाह से शकुन-विज्ञान’

दाहो दिशां राजभयाय पीतो देशस्य नाशाय हुताशवर्णः ।

यश्चारुणः स्यादपसव्यवायुः सस्यस्य नाशं स करोति दृष्टः ॥१॥

यदि दिग्दाह पीत वर्ण का हो तो राजभय के लिए, अग्नि वर्ण का हो तो देश-नाश के लिए और बायी तरफ लोहित वर्ण का वायु दिखाई दे तो धान्यों का नाश करता है। (वृहत्संहितायां अ.-३१, पृष्ठ-१९८)

**योऽतीव दीप्त्या कुरुते प्रकाशं छायामपि व्यञ्जयतेऽर्कवद्यः ।**

**राज्ञो महद्वेदयते भयं स शस्त्रप्रकोपं क्षतजानुरूपः ॥२॥**

जो दिग्दाह अपनी अत्यधिक कान्ति से प्रकाशित होता है और सूर्य की तरह दृश्यमान द्रव्य की छाया को भी प्रकाशित करता है वह राजा को अधिक भय देता है। तथा यदि वह रक्त वर्ण का हो तो शस्त्र का भय करता है।

**प्रावक्षत्रियाणां सनरेश्वराणां प्राणदक्षिणे शिल्पिकुमारपीडा ।**

**याम्ये सहोग्रैः पुरुषैस्तु वैष्णा दूताः पुनर्भूप्रमदाश्च कोणे ॥३॥**

**पश्चातु शुद्राः कृषिजीविनश्च चौरास्तुरङ्गेः सह वायुदिवस्थे ।**

**पीडां व्रजन्त्युत्तरतश्च विप्राः पाखणिङ्गो वाणिजकाश्च शार्वायम् ॥४॥**

यदि पूर्व दिशा में दिग्दाह दिखाई दे तो वह राजा के साथ सब धनियों को पीड़ित करता है। आग्नेय कोण में दिखाई दे तो शिल्पी (लोहार, सोनार आदि) और कुमारों को पीड़ित करता है। दक्षिण में दिखाई दे तो कूर मनुष्य, वैश्य, दूत और पुनर्भूत्स्त्री (जो अक्षतयोनि होकर दोबारा शारी करती है) को पीड़ित करता है।

**नभः प्रसन्नं विमलं नि भनि प्रदक्षिणं व ति सदागतिश्च।**

**दिशां च दाहः कनकवद तो हिताय लोकस्य सपार्थिवस्य ॥५॥**

प्रसन्न (निर्मल) आकाश, विमल (निर्मल) नक्षत्र, दक्षिणावर्त क्रम से धूमता हुआ वायु और सुवर्ण की तरह दिग्दाह हो तो राजा के साथ सब लोगों का हित करने वाला होता है।

‘भूकम्प से शकुन-विज्ञान’

भूकम्प लक्षण—

अनिलोऽनिलेन निहतः क्षितो पतन् सस्वनं करोत्यन्ये ।

केचित्वद्घटकारितमिदमन्ये प्राहुराचार्याः ॥२॥

किसी (वशिष्ठ आदि) का मत है कि वायु एक-दूसरे से टकराकर पृथ्वी पर गिरते हुए शब्द के साथ भूकम्प करता है। दूसरे (वृद्ध गर्ग आदि) का मत है कि प्रजाओं के अदृष्ट (धर्माधर्म) के द्वारा भूकम्प होता है।

(वृहत्संहितायां, अ-३२, पृष्ठ-१९९)

वायव्य कम्प के लक्षण—

चत्वार्यायेण्णायान्यादित्यं मृगशिरोऽशवयुक् चेति ।

मण्डलमेतद्वायव्यमस्य रूपाणि सप्ताहात् ॥८॥

धूमाकुलीकृताशो नभसि नभस्वान् रजः क्षिपन् भौमम् ।

विरुजन्दुमांश्च विचरति रविरपटुकरावभासी च ॥९॥

वायव्ये भूकम्पे सस्याम्बुवनौषधीक्षयोऽभिहितः ।

शवयथुश्वासोन्मादज्वरकासभयो वणिकूपीडा ॥१०॥

रुपायुधभूद्वैद्यास्त्रीक विगान्धर्वपण्यशिल्प जनाः ।

पीडयन्ते सौराष्ट्रकुरुमगधदशार्णमत्स्याश्च ॥११॥

उत्तरफलगुनी, हरत, चित्रा, स्वार्ता, पुनर्वसु, मृगशिरा, आश्वर्णी ये सात नक्षत्र वायव्य मण्डल के हैं। यदि इनमें से किसी नक्षत्र में भूकम्प हो तो इसके सात दिन पूर्व आगे कथित लक्षण होते हैं। धूम से व्याप्त दिशा वाला आकाश होता है, पृथ्वी से धूलि उड़ाती हुई और वृक्षों को तोड़ती हुई हवा चलती है और सूर्य की किरण मन्द हो जाती हैं। वायव्य भूकम्प होने से धान्य, जल और वनौषधियों का नाश होता है। तथा वनियों को शोध, ढमा, उन्माद, ज्वर और खाँसी से उत्पन्न पीड़ा होती है। वैश्या, शस्त्रजीवी, वैद्य, स्त्री, कवि, गान विद्या जानने वाले, व्यापारी, शिल्पी तथा सौराष्ट्र, कुरु, मगध, दशार्ण और मत्स्यदेशवासी मनुष्यों को पीड़ित करता है।

#### आग्नेय मण्डल के लक्षण—

पुष्पाग्नेयविशाखाभरणीपित्र्याजभाग्यसज्जानि ।  
वर्गो हौतुभुजोऽयं करोति रुपाण्यथैतानि ॥1 2 ॥  
तारोल्कापातावृतमादीप्तमिवाम्बरं सदिग्दाहम् ।  
विचरति मरुत्सहायः सप्तार्चिः सप्तदिवसान्तः ॥1 3 ॥  
आग्नेयेऽम्बुदनाशः सलिलाशयङ्ग्क्षयो नृपतिवैरम् ।  
दर्द्रविचर्चिकाज्वरविसर्पिकाः पाण्डुरोगश्च ॥1 4 ॥  
दीप्तौजसः प्रचण्डाः पीड्यन्ते चाश्माकाङ्गवाहीकाः ।  
तङ्गणकलिङ्गवङ्गविडाः शवरा अनेकविधाः ॥1 5 ॥

पुष्प, कृत्तिका, विशाखा, भरणी, मध्या, पूर्वभाद्रपदा, पूर्वफालगुनी ये सात नक्षत्र आग्नेय मण्डल के हैं। यदि इनमें से किसी नक्षत्र में भूकम्प हो तो इसके सात दिन पूर्व आगे कथित लक्षण होते हैं। सात दिन के मध्य में दिग्दाह के साथ तारा तथा उल्का के गिरने से व्याप्त अतः प्रज्ञवलित की तरह आकाश होता है तथा वायु की सहायता से अग्नि विचरण करती है। आग्नेय भूकम्प में मेघ और जलाशयों (वापी कृप और तालाब) का नाश, राजाओं में परस्पर द्वेष, दाह, विचर्चिका, ज्वर, विसर्पिका और पाण्डु रोग होता है। तेजरवी, क्रोधी मनुष्य, अश्मक, अङ्ग, वाह्यीक नङ्गण, कलिङ्ग, वङ्ग, द्रविण और शवर दशवासियों को अनेक प्रकार से पीड़ित करता है।

#### इन्द्रमण्डल के लक्षण—

अभिंजिंच्छ वणधनिष्ठाप्राजापत्यैन्द्रवैश्वमैत्राणि ।  
सुरपतिमण्डलमेतद्दवन्ति चाप्यस्य रूपाणि ॥1 6 ॥  
चलिताचलदर्षाणो गम्भीरविराविणस्तिद्विन्तः ।  
गवलालिकुलाहिनिभा विसृजन्ति पयः पयोवाहाः ॥1 7 ॥  
ऐन्द्रं स्तुतकुलजातिख्याता वनिपालगणपविधंसि ।  
अतिसारगलग्रहवदनरोकृ च्छर्दिकोपाय ॥1 8 ॥  
काशियुगन्धं पौरव किरातकीराभिसारहलमद्राः ।

अर्वुदसुराष्ट्रमालवपीडाकररमिष्टवृष्टिकरम् ॥1 9 ॥

अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, ज्येष्ठा, उत्तरषाढ़ा, अनुराधा ये सात नक्षत्र इन्द्रमण्डल के हैं। यदि इनमें से किसी नक्षत्र में भूकम्प हो तो इसके सात दिन पूर्व आगे कथित लक्षण होते हैं। जैसे पर्वत के समान शरीर वाले, गम्भीर शब्द करने वाले, विजली वाले, महिषशृंग, भ्रमरकुल और सर्पों के समान कान्ति वाले मेघ वर्षा करते हैं। ऐन्द्र कम्प में प्रधान कुल में उत्पन्न मनुष्य, यशस्वी, राजा और सद्वियों में प्रधान का नाश करता है। तथा अतिसार, कुष्ठरोग, मुखरोग और कफ के रोग होते हैं। काशी, युगन्धर, पौरव, किरात, कीर, अभिसार, हल भद्र, अर्बुद, सुराष्ट्र और मालव देशवासी मनुष्यों को पीड़ित करता है। प्रयोजन के अनुसार वृष्टि करता है।

#### वरुणमण्डल के लक्षण—

पौष्णाप्याद्राश्लेषामूलाहिर्बुध्यं वरुणदेवानि ।  
मण्डलमेतद्वारुणमस्यापि भवन्ति रूपाणि ॥2 0 ॥  
नीलोत्पलालिमिन्नाभन्त्विषो मधुरराविणो वहुलाः ।  
तडिदुद्भसितदेहा धाराङ्कुरवर्षिणो जलदाः ॥2 1 ॥  
वारुणमर्णवसरिदाश्तिधनमतिवृष्टिदं विगतवैरम् ।  
गोनर्दचेदिकुकुरान् किरातवैदेहकान् हन्ति ॥2 2 ॥  
रेवती, पूर्वापाढ़ा, आद्रा, आश्लेषा, मूल, उत्तरभाद्रपदा, शतभिषा ये सात नक्षत्र

वरुणमण्डल के हैं। यदि इनमें से किसी नक्षत्र में भूकम्प हो तो इसके सात दिन पर्व आगे कथित लक्षण होते हैं। जैसे वारुण कम्प में समुद्र और नदी के तट में रहने वालों का नाश, अतिवृष्टि, परस्पर द्वेष राहित मनुष्य तथा गोनर्द, घेदी, कुकुर, किरात और वैदेह उश में रहने वाले मनुष्यों का नाश करता है।

#### फलप्रदान काल का नियम-

घड्भिर्मासैः कम्पो द्वाभ्यां पाकं च याति निर्धातः।

अन्यानप्युत्पातान् जगुरन्ये मण्डलैरेतै ॥२३॥

भूकम्प का फल छ: महिने में और निर्धात का फल दो महिने में होता है। गर्ग आदि मनुष्यों का मत है कि अन्य (निर्धात, उल्कापात आदि) उत्पातों का फल मण्डल के साथ ही होता है।

#### उल्का आदि उत्पातों के फल का नियम-

उल्काहरिश्चन्द्रपुरं रजश्च निर्धातभूकम्पकुप्रदाहाः ।

वातोऽतिचण्डो ग्रहणं रवीन्द्रोर्नक्षत्रतारागणैकृतानि ॥२४॥

व्यधे वृष्टिवैकृतं वातवृष्टिर्धूमोऽनग्निविंस्फुलिङ्गाचिंषो वा ।

वन्यं सत्यं ग्राममध्ये विशेषा रात्रावैन्द्रं कार्मुकं हश्यते वा ॥२५॥

सन्ध्याविकारः परिवेष्यण्डा नद्यः प्रतीपा दिवि तूर्यं नादः ।

अन्यच्च यत्प्रकृतेः प्रतीपं तन्मण्डलैरेव फलं निगाध्यम् ॥२६॥

उल्का, गध्वर्लपुर, धूलि, निर्धात, भूकम्प, दिग्दाह, भयद्वार, वायु, सूर्य-चन्द्र का ग्रहण, विकारयुत नक्षत्र और तारागण, बिना बादल की वर्षा, विकारयुक्त वायु के साथ वृष्टि, अग्नि की चिनगारीदार लपट, वन में रहने वाले पशुओं का गाँव में आना, रात्रि में इन्द्रधनुष त्रिखाई देना, संध्या में विकार, परिवेष्यण्ड, नदियों की गति में वैपरीत्य, आकाश में तुरही का बजना, और भी प्रकृति के विरुद्ध लक्षण होना, इन सबों का फल उसके मण्डल से ही कहना चाहिये।

#### बेला मण्डल के वश से कम्पों का निष्फलत्व-

हन्त्यन्द्रो वायव्यं वायुश्चायैन्द्रमेवमन्योन्यम् ।

वारुणहौतभुजावपि वेलानक्षत्रजाः कम्पाः ॥२७॥

इन्द्र के मण्डल में उत्पन्न कम्प वायव्य कम्प का, वायव्य मण्डल में उत्पन्न

कम्प इन्द्र कम्प का, वारुण मण्डल में उत्पन्न कम्प अग्नि कम्प का, अग्नि मण्डल में उत्पन्न कम्प वारुण कम्प का, वेलाजात कम्प नक्षत्र कम्प का और नक्षत्रजात कम्प वेलाजात कम्प का नाश करता है। यदि वायव्य मण्डलान्तर्गत वायव्य वेला में कम्प हो तो अपने फल को पुष्ट करता है, इसी प्रकार मण्डल का अन्य भी फल जानना चाहिये। अन्यथा नहीं।

बेला मण्डल के वश कम्पोक्त फल में विशेषता-

प्रथितनरेश्वरमरणव्यसनान्याग्नेयवायुमण्डलयोः ।

क्षुद्रयमरकावृष्टिभिरुपताप्यन्तेजनाशचापि ॥२८॥

यदि आग्नेय मण्डल और वायव्य वेला में या वायव्य मण्डल और आग्नेय वेला में भूकम्प हो तो विग्नात राजाओं का मरण या मरण तुल्य कष्ट होता है तथा मनुष्यगण दुर्भिक्ष, मृत्यु और अवृष्टि से पीड़ित होते हैं।

वारुणपौरन्दरयोः सुभिक्षशिववृष्टिहार्दयो लोके ।

गावोऽतिभूरिपयसो निवृतवैराश्च भूपालाः ॥२९॥

यदि वारुण मण्डल और ऐन्द्र वेला में या ऐन्द्र वेला और वारुण मण्डल में भूकम्प हो तो लोगों में सुभिक्ष, कुशल, वृष्टि और चित्त में शान्ति होती है। तथा गौ अधिक दूध देती है और राजा लोग परस्पर द्वेष राहित होते हैं।

#### अनुकृत फल काल का निर्णय-

पक्षैश्चतुर्भिरनिलस्त्रिभिरग्निदेवराद् च सप्ताहात् ।

सत्यः फलति च वरुणो तेषू न कालोऽद्भूतेषूक्तः ॥३०॥

अङ्गस्फुरण आदि उपद्रवों में जिसका फलकाल नहीं कहा गया है वह यदि वायव्य मण्डल में हो तो दो मास में, आग्नेय मण्डल में हो तो तीन पक्ष (डेढ़ मास) में, इन्द्र मण्डल में हो तो सात दिन में और वारुण मण्डल में हो तो उसी रोज फल देता है।

मण्डल के वश भूकम्प का प्रदेश-

चलयति पवनः शतद्रयं शतमनलो दशयोजनान्वितम् ।

सलिलपतिरशीतिसंयुतं कुलिशधरोऽभ्यधिकं च षष्ठितः ॥३१॥

यदि वायुमण्डल में भूकम्प हो तो दो सौ योजन तक, अग्नि मण्डल में हो तो

दश योजन तक, वारुण मण्डल में हो तो एक सौ अरसी योजन तक और ऐन्द्र मण्डल में भूकम्प हो तो साठ से अधिक योजन तक पृथ्वी को कम्पित करता है।

**भूकम्प होने के बाद फिर आसनकाल में भूकम्प का फल प्रदर्शन—**

**त्रिचतुर्थसप्तमदिने मासे पक्षे तथा त्रिपक्षे च ।**

**यदि भवति भूमिकम्पः प्रधाननृपनाशनो भवति ॥३२॥**

यदि भूकम्प होने के बाद तीसरे, चौथे, सातवें, तीसवें, पन्द्रहवें या पैंतालीसवें दिन में फिर भूकम्प हो तो प्रधान राजा का नाश करता है।

### **पौधे निर्णय केसे लेते हैं**

जिस प्रकार हमारा शरीर असंख्य कोशिकाओं का बना है उसी प्रकार पौधा भी करोड़ों कोशिकाओं से मिलकर बना है। वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार एक फूल देने वाले पौधों में लगभग 20,000 प्रकार की कोशिकाएँ होती हैं जिनका कार्य भिन्न-भिन्न होता है जैसे पत्तियों की कोशिकाएँ प्रकाश की उपस्थिति में पौधे के लिए भोजन बनाती हैं यानि पत्तियाँ ‘‘पौधे का रसोईघर है’’ इस प्रकार जड़ों को कोशिकाएँ मिट्टी से पोषक तत्व व जल अवशोषित करके पौधे के स्थान विशेष में होती हैं और अपनी विशिष्ट क्रियाओं द्वारा पौधे को हरा-भरा व फलता फूलती रखती हैं। कोशिकाओं का विभेदीकरण (सैलिंडिफरेंसिएशन) बहुत पहले से ही वैज्ञानिकों के शोध का विषय रहा है। इसके रहस्य को जानने के दो मुख्य कारण हैं :

(1) वैज्ञानिक यह समझना चाहते हैं कि विभेदीकरण में कोशिका के जीन से अथवा गुणसूत्र समूह में कोई परिवर्तन न होते हुए भी कोशिका की क्रियाओं में क्यों परिवर्तन आ जाता है।

(2) कोशिका अपने मूल कार्य करती हैं? एक विशिष्ट क्रिया को करने के लिए अपनी व्यवस्था में परिवर्तन किस प्रकार लाती है और किस प्रकार एक जीवित ऊतक संगठित कार्य करता है? पिछले वर्षों में व्याप्त साधन उपलब्ध न होने पर वैज्ञानिकों को शोध कार्य में कठिनाई आती रहती थी। किन्तु अब आधुनिक साधनों की उपलब्धि से द्रव माध्यम में विभेदीकरण प्रक्रिया का एक एकाकी (आइसोलेटेड) कोशिका में अध्ययन सम्भव हो गया है।

लेकिन यह अभी भी ज्ञात नहीं हो पाया है कि पौधे कोशिका के स्थान विशेष से इसकी कार्य विशिष्टता निर्धारित होती है तथा कोशिका विभेदीकरण कैसे नियन्त्रित होता है? जैसे पौधों के जिन भागों पर प्रकाश पड़ना सम्भव है केवल उन्हीं अंगों में क्लोरोफिल पाया जाता है जो प्रकाश संश्लेषण में समक्ष है। इसी तरह के अन्य उदाहरणों से सिद्ध होता है कि कोशिका रचना व व्यवस्था इतनी गहन तथा संगठित होती है कि हर अंग में विशेष प्रकार की कोशिकाएँ विशिष्ट संरचनाओं में पायी जाती हैं। इसका कारण सीधा-सा है। किसी कोशिका का स्थान परिवर्तन नहीं होता। अतः यह सम्भव नहीं है कि किसी एक वर्ग की कोशिका किसी विशेष स्थान पर पहुँच सके। अतएव कोशिका की स्थिति विशेष ही यह नियन्त्रित करती है कि कोशिका किस वर्ग की होनी चाहिए और उसे कौन-सा कार्य करना है? यद्यपि अभी तक वैज्ञानिकों के पास कोई ठोस प्रमाण नहीं है लेकिन कुछ वैज्ञानिकों के मतानुसार एक समिश्र ऊतक में एक कोशिका पर निकटवर्ती कोशिकाओं का प्रभाव नियन्त्रित करता है कि उसे किस प्रकार का कार्य करना होगा। इस मत को नाकारात्मक ढंग से सिद्ध भी किया गया है। लगभग सभी पौधों में यह देखा गया है कि यदि किसी कोशिका को अपने स्थान से हटाकर प्रयोगशाला में कल्वर माध्यम से रखा जाए तो वह एक संगठित कैलस का रूप ले लेती है। जबकि कुछ स्थितियों में ऊतक कल्वर द्वारा एक कोशिका से अनेक सुसंगठित ऊतक भी बनाये जा सकते हैं। जो टिसु कल्वर द्वारा पौधों के बहुगुणन का आधार सिद्धान्त है। किन्तु ऐसी जातियाँ, जिनमें टिशु बहुगुणन सम्भव है बहुत कम है और इनका यह विशेष गुण किसी ही जाति में मिलता है। टिशु कल्वर, जितनी कोशिकाओं में सफल होता है उनकी प्रतिशत लगभग नगण्य होती है टिशु कल्वर में प्रत्युक्त कोशिका के आस-पास के अन्य कोशिकाओं की परस्पर क्रियाओं पर नियन्त्रण सम्भव नहीं हो पाता किन्तु जाइलम विभेदीकरण से वैज्ञानिकों को एक आशा की किरण दिखाई देती है।

जाइलम एक कठोर ऊतक है जो पौधों के तने में होता है यह जड़ों में पहुँचाता है। जाइलम में एक विशेष प्रकार की कोशिका जिसे ट्रेकिएरी अथवा वाहिनी

नालिका कहते हैं, होती हैं। इसकी झिल्ली मोटी व ढृढ़ होती है। एक प्रयोग में पौधे के तने से जाइलम काटकर उसके निकटवर्ती ऊतकों के विभेदीकरण के लिये प्रेरित किया गया। उनमें से कुछ कोशिकाएँ जाइलम और कुछ वाहिनी नालिका में परिवर्तित हो गयी। किन्तु इन परीक्षणों में सफलता का प्रतिशत बहुत कम था।

अभी हाल ही में, जैन इन संस्थान, नारविच, में कार्यरत डॉ. जेरेमी बर्नोसी को इस कार्य में सफलता मिली है। उन्होंने जीनिया के कोमल पत्तियों को कूटकर द्रव माध्यम से धोलकर खण्डित कोशिकाओं तथा सैल आर्गेनेला का शुद्ध तैयार किया। इस घोल में उपरित सभी कोशिकाएँ अलग—अलग जीवित इकाई थीं। इनको दो हारमोनों, औलिसन व साइटोकिनिन, से प्रेरित करने पर तीसरे दिन ५५ प्रतिशत जीवित कोशिकाओं की मोटाई बढ़नी आरम्भ हो गयी और अगले ३६ घंटों में वे पूर्णतः वाहिनी नालिका में परिवर्तित हो गयी यह पहला प्रशिक्षण था जिसमें जितना अधिक कोशिका विभेदीकरण पाया गया। जब इसकी तुलना अखण्डित पत्तियों से की गयी तो दोनों में समता, विषमता दोनों ही पायी गयी। उदाहरण के लिये साइटोप्लाज्म में माइक्रो ट्यूब्यूल्स का वितरण मोटाई पर एक समान था, किन्तु कोशिका की झिल्ली की जलीय—संलयन (हाइड्रोलिसम) क्षमता अखण्ड ऊतक से भिन्न थी। इस प्रशिक्षण से यह सिद्ध हो गया है कि कोशिका में दो विशेष प्रोटीनों का लुप्त होना व दो अन्य विशिष्ट प्रोटीनों का प्रगट होना, विभेदीकरण की प्रक्रिया को आरम्भ करता है और कोशिकाएँ विभेदीकरण का मार्ग परिवर्तियों के अनुसार चुनती है। डॉ. जेरेमी बर्गेस के प्रयोग में इस क्षेत्र में शोध की और दिशाएँ भी खुल गई हैं और वैज्ञानिक आशा करते हैं कि, “विभेदीकरण के आदेश कोशिका को कैसे प्राप्त होते हैं?” जैसे प्रश्नों के उत्तर, एकाकी कोशिकाएँ विभेदीकरण तथा उसमें आये परिवर्तनों के विस्तार पूर्वक अध्ययन से मिलने सम्भव हो जायेंगे। शायद भविष्य में वैज्ञानिक कोशिकाओं को विशिष्ट कार्य करने के लिये आदेश देने में सक्षम हो जाये।

(वैज्ञान प्रगति)

क्या पशु-पक्षी भूकम्प के वक्ता होते हैं?

पिछले कई दशकों से यह बात भूकम्प विशेषज्ञों (वैज्ञानिक) के बीच अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा का विषय बनी रही है कि क्या पशु—पक्षी भूकम्पों के भविष्य वक्ता होते हैं? किन्तु मैक्रिस्को की घटना के बाद अब इस बात को नये सिरे से विश्लेषण किया जाने लगा है, क्योंकि अब तक बहुत से वैज्ञानिक इन बातों को कपोलकल्पित या अन्ध—विश्वास मानते रहे हैं। वर्ष १९७५—७६ में चीन के फुकीयन और हायचिंग प्रांतों में आये भयंकर भूचालों के दो दिन पहले वहाँ के लोग चीनी वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी पर अपना सारा सामान लेकर घरों से बाहर आ गये। इससे विश्व के सभी वैज्ञानिकों को महान् आश्चर्य हुआ और उन्हें अपनी भूकम्प नीतिपर पुनर्विचार करना पड़ा। आश्चर्य का कारण यह था कि तकनीकी टष्टि से यह पिछड़ा देश है, उसके पास भूकम्पों की भविष्यवाणी करने के लिए आवश्यक आधुनिक चन्द्र भी नहीं है। (जो भूकम्पमापी चन्द्र बने भी है वे अपर्याप्त हैं) ऐसी स्थिति में किसी देश का दो दिन पहले भूकम्प की भविष्यवाणी करना एक आश्चर्यजनक उपलब्धि थी।

इस आश्चर्यजनक भविष्यवाणी के बारे में जानकारी एकत्रित करने के लिए अमेरिका के वैज्ञानिकों का एक दल चीन गया। चीनी भूगर्भ शास्त्रियों ने इस दल को बताया कि हायचिंग में भूचाल आने से दो दिन पहले पशु—पक्षी की प्रवृत्ति में परिवर्तन देखा गया। जिससे उन्हें भूकम्प का अहसास हो गया। उदाहरण के तौर पर उन्होंने बताया कि पुलिस के प्रशिक्षित कुत्तों ने आज्ञा मानना बन्द कर दिया, सुअरों ने आपस में एक—दूसरे को काटना शुरू कर दिया, चूहा तथा साप अपने बिलों से निकलकर बाहर भागने लगे। मछलियाँ जल की तली में चली गयी। किसानों के पालतू जानवर रसिस्याँ तोड़कर भागने लगे आदि।

हायचिंग क्षेत्र के आस—पास जमीन में भी कई परिवर्तन देखे गये। जैसे पहाड़ों की ढलानों से हल्का सा उतार—चढ़ाव नजर आया। कुओं का जल स्तर ऊपर उठने लगा उसमें रेडियोधर्मी गैस—रेडान की मात्रा बढ़ने लगी।

अब तक भू—परिवर्तन और पशु—पक्षी की आदतों में बदलाव देखकर चीनी भू—वैज्ञानिकों ने ग्यारह प्रमुख भविष्यवाणियाँ की हैं। सबसे पहले चीनी वैज्ञानिक ने पीकिंग में आये भयंकर भूकम्प की भविष्यवाणी की थी। इसमें भूकम्प आने

से पहले पीकिंग चिड़ियाघर के जानवरों को एक अन्नीब वृत्ताकार नृत्य करते देखा गया।

वर्ष 1966 में पीकिंग में आए भूकम्प से हजारों लोगों की मृत्यु हुई थी। तब माओत्से तुंग ने वैज्ञानिकों को आदेश दिया था कि भूकम्प को भविष्यवाणियों को राष्ट्रीय लक्ष्य मानें। तभी से चीनी-भू-वैज्ञानिक ने उन धारणाओं की जाँच शुरू कर दी थी जिस पर चीनी जनता भूचाल का पूर्वानुमान लगाती है। पशु-पक्षियों की आडतों में एकाएक परिवर्तन होना भूकम्प के आने के संकेत है—ऐसा चीनी लोग मानते हैं। चीनी भू-विशेषज्ञों ने इसको जाँचा परखा और उनकी कसौटियों पर यह विश्वास खरा उत्तरा और तभी से उन्होंने इसका प्रयोग करना शुरू कर दिया।

अब तक भूकम्पों की भविष्यवाणियाँ करने में चीन सबसे आगे रहा है। वहाँ भूचालों की भविष्यवाणी करने के लिए बिराटन्त्र स्थापित किया गया है। वहाँ पाँच हजार से अधिक भूगर्भ विशेषज्ञ, चीनी लोगों को भूगर्भीय परिवर्तनों के पहचानने का प्रशिक्षण देते हैं, और गाँव-गाँव में जाकर कुओं और नदियों के जल में रेडान गैस की मात्रा नापते रहते हैं।

इतना सब होते हुए भी कभी-कभी ये भविष्यवाणियाँ झूठी साबित हो जाती हैं या भूचाल आ जाता है और किसी को पता नहीं चलता। 1975-1976 में तांग-शांग क्षेत्र में आये भूकम्प का कोई अनुमान भी नहीं लगा पाया। कुछ के बारे में भू-वैज्ञानिकों ने व्यापक भविष्यवाणियाँ की, पर वे कभी नहीं आये।

केवल चीन में ही नहीं वरन् विश्व के अन्य देशों में भी पशु-पक्षियों की आडतों में विचित्र परिवर्तन की घटनाएँ भूकम्प के पूर्व देखने में आयी हैं। 1974 में कैलीफोर्निया में आये भूकम्प के बाद वहाँ कुछ भूगर्भ-शास्त्रियों ने वहाँ दौरा किया। तो वहाँ एक घुड़साल के मालिक ने बताया कि भूकम्प आने से पहले उसका एक घोड़ा गिर पड़ा, एक ने चारा नहीं खाया और तीसरा प्रशिक्षित घोड़ा रास्ते में अड़कर बैठ गया। ये घोड़े सभी पूर्ण स्वस्थ थे।

इटली से आये भयंकर भूचाल के बाद पश्चिमी जर्मनी के भूगर्भ शास्त्री हैल्मूढ़ ट्रीबुय ने आल्पस पर्वत के आस-पास बस गाँवों की यात्रा की तो वहाँ के लोगोंने विचित्र दारतानें सुनाई। इन्होंने बताया कि भूकम्प आने से बिल्लियाँ अपने बद्दों

को मुँह में दबाकर घरों से भाग गयीं। पिंजड़े में बन्द पक्षी पिंजड़े को तोड़ते हुए शोर मचाने लगे। हिरनों के झुंड-झुंड पहाड़ियों के नीचे उत्तर आये। झीलों के जल में तैरते हुए पक्षी शोर मचाकर आसमान में उड़ गये।

विश्व के समरत देशों में इस तरह के अनुभव के आधार पर अब पाश्चात्य भू-गर्भशास्त्री भी इस तथ्य को स्वीकार करने लगे हैं। अमेरिका के भू-वैज्ञानी कालोन्स ऐलन का कहना है कि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि पशु-पक्षियों की आडतों में परिवर्तन भूकम्प की भविष्यवाणियों का आधार हो सकता है। क्योंकि पशु-पक्षी भौतिक प्रभावों के प्रति वैज्ञानिक यन्त्रों व मनुष्यों से ज्यादा संवेदनशील होते हैं। उनका कहना है कि कुत्ते हमसे ज्यादा सुन व सूंघ सकते हैं। पक्षी हल्के से हल्का कम्पन अच्छी तरह महसूस करते हैं। इसीलिए यह सम्भव है कि भूचाल आने से पहले जमीन के परिवर्तनों को भापकर इस संकट से बचने के लिए वे छट-पटाते हैं और विचित्र हरकतें करते हैं।

एक जर्मन वैज्ञानिक के अनुसार धरती के अन्दर की चट्टानें अपने ऊपर की चट्टानों पर भूकम्प आने से पूर्व बहुत अधिक दबाव डालती हैं। जिससे पृथ्वी की सतह पर विद्युत चुम्बकीय प्रभाव आ जाता है। इससे सारा वातावरण आवेशित हो जाता है और आवेशित होते ही जानवरों के रोयें खड़े हो जाते हैं और बेचीनी अनुभव करते हैं।

हाल में ही टोकियो इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के प्रोफेसर त्युनेजी रिकीवाका ने जापान व अन्य देशों में आये भूकम्पों में पशु-पक्षियों की आडतों में परिवर्तन के 157 मामलों के अध्ययन-विश्लेषण के बाद घोषणा की कि पशु-पक्षी भूकम्पों के सही भविष्यवक्ता होते हैं। वैज्ञानिक रूप से अविश्वसीय प्रतीत हुए भी भूकम्प की भविष्यवाणी में ये बहुत सहायक होते हैं।

सितम्बर 1978 एवं जनवरी 1979 में उत्तर पूर्वी इरान में भयंकर भूचाल से वहाँ क्रमशः 15000 (पन्द्रह हजार) व सवा सौ लोगों की जाने गयी थीं। उस भूकम्प के झटके इतने तेज थे कि खुरासान प्रान्त के कई शहर देखते ही देखते मलबे का ढेर बन गये। पर इरान अपनी आन्तरिक कलह में उलझा होने के कारण इस ओर ध्यान नहीं दे पाया और इसी कारण विदेशी भूगर्भ वैज्ञानिक वहाँ जाकर अमूल्य जानकारी का विश्लेषण नहीं कर सके।

इन सब तथ्यों को देखते हुए ज्ञान होता है कि पशु-पक्षियों की आदतों में होने वाले विचित्र परिवर्तनों के आधार पर 'मी भूकम्पों की भविष्यवाणियाँ' की जा सकती है। अन्ततः भू-विज्ञानी गम्भीरता से अध्ययन करके इसका विश्लेषण करने के लिए उद्यत है। (विज्ञान-प्रगति)

### लोमड़ी से शकुन

उस राग जयजयवंती की वंदिश भी कितनी अनूठी थी।

'दामनी दमके डर मोहे लागे  
सगुन विचारो रे मोरे वगना  
शुभ दिन शुभ घड़ी आई आज'

हमारे जीवन में शकुन और अपशुकन अपने-अपने मापदण्ड बना चुके हैं। गोरखामी तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' में इनका वर्णन जगह-जगह किया है। जब सीता जी गौरी माँ से राम को मन ही मन वरण करती हैं तब कहा है—

मंजुल मंगल मूल वाम अंग फरकन लगे

स्त्री का वाम—अंग फड़कना शुभ सूचक है। पुरुष का वाम—अंग फड़कना युद्ध-प्रेरक है। अच्छे शकुनों का बखान करते हुये वे कहते हैं—

दाहिन काग सुखेत सुहावा ।

नकुल दरसु सब काहू पावा॥

जहाने हाथ पर स्थित खेत में बैठे कौएँ का दर्शन शुभ है तो नेवला भी इस क्षेत्र में मान्य है इसी प्रकार लोमड़ी का दर्शन और गाय के थनों से दृढ़ पीता बछड़ा भी शुभ सूचक है। हिरन का झुंड और श्याम चिरैया दिखायी देना भी सुलक्षण है। सामने दही, मछली और हाथ में पुस्तक लिये दो ब्राह्मण भी अत्यन्त शुभ माने गये हैं। तुलसीदास जी कहते हैं—

नेवला फिरि फिरि दरस दिखावा।

सुरभि सनमुख सिसुहि पिआवा

मृगमाला फिरि दहिनि आई ।

सनमुख आयउदधि अरु मीनाः,

कर पुस्तक दुई विप्र प्रवीना ।

इनके अतिरिक्त और भी कई अच्छे शकुन माने गये हैं। सामने से शब दिखायी देना बहुत शुभ माना गया है। हाथी का दर्शन होना भी अच्छा माना गया है। सामने जल से भरा पात्र या कृड़े से भरी टोकरी भी शुभ माने गये हैं। मंगला-मुखी (वेश्या) का दर्शन भी बहुत अच्छा माना गया है।

अपशुकन का बखान भी 'रामचरितमानस' में दिया है। विजटा अपना स्वप्न सीता माता के सामने सब राक्षसियों को सुनाती है—

खर आरुड़ नगन दससीसा ।

मुडिंत सिर खंडित भुज वीसा ।

एहि विधि सो दच्छिन दिसि जाई ।

गधे पर सवारी बुरी मानी गयी है तो किसी को स्वप्न में नग्न दिखायी देना भी अशुभ है। कटा सर और बाहों को देखकर विजटा को लंका के विनाश का आभास होने लगता है।

इसी प्रकार जब रावण युद्ध के लिये चलता है तब—

"भट गिरत रय से बाजि गज चक्ररत भाजहि साथ ते"

के अतिरिक्त उसे बुरे स्वर भी सुनाई पड़ते हैं—

"गोमाय गीध कराल स्वर रवति रवान बोलहि अदि घने"

"जनु कालदूत उलूकबोलहिं वचन परम भयावने ।"

हमारे यहाँ कुत्ते का रोना, सामने आते काने व्यक्ति का दर्शन, तेल से भेरे पात्र का दिखायी देना, खाली बर्तन सामने आ जाना और गधे को लोट लगाते देख लेना भी अपशुकन माना गया है। भारत के अतिरिक्त विदेशों में भी यह विश्वास एवं अन्धविश्वास पनप रहा है। बतलाते हैं कि जब जूलियस सभा जाने के लिये देहरी पार कर रहा था तब किसी ने छींक दिया था। इस पर उसकी पत्नी ने उसे बार-बार रोका पर वह नहीं माना। फलस्वरूप इसी सभा में वह अपनी रखैल के पुत्र ब्रृतस के हाथों मारा गया। कट्टर मजहबी औरंगजेब शकुन-अपशुकन बहुत मानता था। कुछ करने से पहले वह अपने नज़्मियों (ज्योतिषियों) से साइज निकलवाता था और उनके कहने पर ही कार्यवाही करता था।

स्वप्न विचार नामक पुस्तक में स्वप्न में दिखायी देने वाली वस्तुओं की भी

शुभ-अशुभ संकेतों में बाँटा गया है। उदाहरणार्थ-स्वप्न में मल दिखायी देना धन आने का सूचक है। किसी को मरते देखना अच्छा माना गया है। साँप का दर्शन पुत्र-प्राप्ति का सूचक है। इसी प्रकार लाल रंग के वस्त्र पहनकर किसी को देखना, पानी की बाढ़ देखना, मरे हुवे व्यक्ति को नाचते-गाते देखना ये सब बुरे माने गये हैं।

कथित शकुन-अपशकुन पर बीसवीं शताब्दी की जनता को कितना विश्वास है यह बहुत विवादास्पद हो गया है। नवी रोशनी के युवक इस बात पर हंसते हैं तो उनके बुजुर्ग आज भी पुराने चलन मानते हैं। (बाला दुबे)

### पशु-पक्षियों का अपना संकेत-

मानव बुद्धिमान है, पर यह नहीं कि उसकी बुद्धिमानी की कहानी किसी और की जुबानी नहीं कही जा सकती है।

यदि प्रेम-सद्भाव, सहयोग-सहकार जैसे गुणों की दृष्टि से देखा जाए तो पशु-पक्षी इस संदर्भ में मनुष्य से भी आगे हैं। भगवानने उनमें जितनी क्षमता का समावेश किया है, वह अपने आप में एक आश्चर्य है। सुख के समय वे प्रसन्नता जाहिर करते हैं, एवं विषाद के समय दुःख व्यक्त करते हैं। संसार में जितने भी जीव-जन्तु हैं, वे सब अपनी अपनी तरह से अपनी अभिव्यक्ति प्रकट करते हैं, जिस प्रकार हमारे बीच के गृणे-बहरें अपने संकेतों के द्वारा बात-चीत कर लेते हैं, इसी प्रकार जीव-जन्तु भी अपनी बात अपने ढंग से एक-दूसरे के पास पहुँचाते हैं। आजकल शोधकर्मी इस क्षेत्र में कार्यरत हैं। स्मरण, संकेत और विशेष गुणों की प्रचुरता पक्षियों में अधिक होती है। वैज्ञानिक, पक्षियों के इस विशिष्ट ज्ञान को समझने की कोशिश कर रहे हैं।

### पक्षियों के हाव-भाव में जानकारियाँ-

मिशिगन विश्वविद्यालय के पक्षी विशेषज्ञ डॉ. ब्राड़ाक ने अनेक वर्षों तक इनके व्यवहार का अध्ययन किया है। उनका विचार है कि ये भी परस्पर विचारों को उसी प्रकार आदान-प्रदान करते हैं: जैसे मनुष्य ! उनकी चहचहाट, फुदकन जो हमें निरथक जान पड़ती है, उनमें अनेकानेक प्रकार की सूचनाएँ एवं जानकारियाँ होती हैं। इसके अतिरिक्त उनकी नाना प्रकार की भाव-भंगिमाएँ होती हैं, जो पृथक्-पृथक् जानकारियाँ प्रकट करती हैं। यदा-कदा ऐसी सूचनाएँ अपने समुदाय

के अन्य पक्षियों को देने के लिये, वे विशेष प्रकार की सांकेतिक ध्वनियों का प्रयोग करते हैं, जिन्हें सुनकर साथी सावधान हो जाते हैं। डॉ. ब्राड़ाक का कहना है कि मनुष्यों की तरह पक्षियों में भी भाव-संवेदनाएँ होती हैं। वे कहते हैं कि यदि ऐसा नहीं होता, तो विपत्ति के समय वे किसी प्रकार की ध्वनि अथवा भाव-प्रदर्शन करने की आवश्यकता नहीं समझते हैं। उड़कर अपनी जान बचा लेने तक में ही इसकी इतिहासी मानते परन्तु ऐसा नहीं होता। संभवतः इसका कारण यह हो कि शत्रु के चुंगल में फँस जाने के उपरान्त की कठिन स्थिति का उन्हें ज्ञान रहता हो। ऐसी स्थिति में पङ्ककर कोई साथी जान न गंवा बैठे, इस हेतु मोह उमड़ पड़ने के कारण प्रेम-सहानुभूति के प्रतीक सूचना होती हो। भारत के मूर्धन्य पक्षीविद् डॉ. सलीम अली जीवन पर्यन्त चिड़ियों के व्यवहार एवं विशेषताओं का अध्ययन करते रहे। अपने लम्बे अध्ययन और अनुभव के आधार पर उन्होंने बताया कि पक्षियों में यदि विभिन्न प्रकार की मुद्राओं, हावभावों, संकेतों द्वारा विचार-संप्रेषण की क्षमता प्रकृति ने न दी होती तो संभवतः वे अपने अस्तित्व की रक्षा न कर पाते। वे आगे कहते हैं कि अस्तित्व-रक्षा का एक अन्य आधार उनका चंचल जीवन है इसमें जहाँ एक के सावधान रहने पर पूरे समूह की रक्षा हो जाती है, वहाँ दूसरी ओर उनकी संगठित-शक्ति, शत्रु पक्ष का मुकाबला करने में सक्षम होती है।

### समय और ऋतु के हिसाब से—

इस प्रकार के अध्ययन विश्व के अनेक वैज्ञानिक ने भी किये हैं। फ्रांस स्थित लेबोरेटरी ऑफ बर्ड्स एण्ड इट्स विहेवियर' (Laboratory of birds and its behaviour) के मूर्धन्य वैज्ञानिकों जे.सी. ब्रेमोइट लम्बे समय से चिड़ियों की बोली एवं संकेतों का अध्ययन करते आ रहे हैं। उन्होंने विभिन्न जाति-प्रजातियों की लागभग 1300 बोलियों व संकेत अभिप्रायों को रिकॉर्ड किया है। इनमें कुछ पक्षी तो ऐसे हैं, जो अपनी जातिगत ध्वनि तो निकालते ही हैं, साथ में अन्य दर्जनों प्रकार की आवाजें भी पैदा करते हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षी की बोलियों से लेकर मशीनों की आवाजों की नकल भी सम्मिलित हैं। इनमें ऐसी विशेषता क्यों पायी जाती है और इसका उद्देश्य क्या है ? इस बारे में ब्रेमोइट का विचार है कि संभवतः शत्रु पक्ष को भ्रमित करने के प्रयोजन से ही प्रकृति

उन्हें यह विशिष्टता प्रदान की। अपनी 'बर्ड्स एण्ड नेचर' (Birds and nature) पुस्तक में एक घृणाप्रयन रोबिन का विवरण देते हुए वे लिखते हैं, इस चिड़िया की समय-समय पर टेप की गयी ध्वनियों को वसंत ऋतु में सुनकर नर रोबिन उड़-उड़कर आक्रमण करने के लिये एकत्रित होने लगे, किंतु कुछ समय पश्चात् जब उन्हें यह आभास मिला कि वह आवाज किसी शरारती रोबिन द्वारा की गयी है, तो निर्भय होकर वे सभी अपनी उदरपूर्ति में पुनः जुट पड़े। इसी प्रकार का प्रयोग जब पतझड़ ऋतु में दोहराया गया, तब रोबिन पक्षियों की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखायी पड़ी। वे निर्दृन्द विचरण करते रहे। इस आधार पर उसने निष्कर्ष निकाला कि पक्षियों की ध्वनियों में विभिन्न प्रकार के आशय प्रकट करने वाले संकेत रहते हैं, जो समय और ऋतु के हिसाब से कभी संघर्षात्मक तो कभी रागात्मक स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं।

#### बगीचे की रखवाली—

आजकल पशु-पक्षियों द्वारा व्यक्त इन संकेतों का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में उन्हीं को डराने-भगाने के लिये किया जा रहा है। जर्मन स्थित 'शाराब का नगर' कहे जाने वाले शहर आपेन हेम में पतझड़ के दौरान अंगूर की खेती जोरों पर होती है। जब अंगूर परिपक्व हो जाते हैं, तब आकाश में तैनिपियर जाति के पक्षियों के झुँड के झुँड इन खेतों के ऊपर मंडराने लगते हैं और मौका पाकर जैसे ही किसी कुंज में उतरना चाहते हैं वैसे ही मचान पर बैठा चौकीदार टेप रिकार्डर का बटन दबा देता है, जिससे त्रस्त एवं क्षुद्ध पक्षी अपनी जान बचाकर आकाश में ऊँचे उड़ जाते हैं। जब वे वहाँ से उड़कर किसी दूरस्थ कुंज पर टूटते हैं, तो पुनः उनके साथ वहाँ बैठा रक्षक पुनः वैसा ही व्यवहार करता है।

#### विमान दुर्घटना से बचा—

इसी प्रकार की तरकीब अब हवाई अड्डों में भी उपयोग में लायी जा रही है। घटना सन् 1977 की है। न्यूयार्क सिटी के हवाई अड्डे पर उत्तरते हुए एक परिवहन विमान पर गल जाति के एक विशालकाय पक्षीने विध्वंसक झपट्टा मारा। चालक ने किसी प्रकार उसके आक्रमण को बचाकर विमान सुरक्षित हवाई पट्टी पर उतार लिया, मगर अभी दो और विमान वहाँ उतरने वाले थे और गल पक्षियों का झुँड ऊपर मंडरा रहा था। विमान कहीं दुर्घटनाग्रस्त न हो जाए—यह सोचकर

अधिकारियों ने पक्षी ध्वनि-संकेत विशेषज्ञ जॉन कैडलैक को बुलाया, जो इस प्रकार को दुर्घटनाओं को रोकने में दक्ष माने जाते थे और उन्होंने उन्हीं पक्षियों की संकट सूचक ध्वनि बजाकर नभचरों को भगाकर संभावित दुर्घटनासे बचा लिया।

जन्तुओं की भी भाषा होती है—

मनुष्य जीव-जन्तुओं में सर्वाधिक विकसित प्राणी है। वह ज्ञान की अभिव्यक्ति, अप्ट भाषा और ध्वनि के माध्यम से कर लेता है। परन्तु अनेक अन्य जीव जन्तु भी अपने भाव अपनी जाति के अन्य जीवों तक पहुँचाने में समर्थ होते हैं। आपने भूख लगने पर बछड़ों को रम्भाते देखा होगा, वारतव में इस प्रकार की क्रियाओं की जन्तुओं की 'सम्पर्क भाषा' कहा जाता है, अनेक जीवों में एक विशिष्ट संचार व्यवस्था होती है।

जन्तुओं और मनुष्यों में संदेश प्रेषित करने के अलग-अलग किन्तु विशिष्ट तरीक होते हैं। मनुष्य संवेदी कोशिकाओं द्वारा सिर्फ एक प्रतिशत संकेत ही प्रेषित करते हैं जबकि जन्तुओं में संकेत के मुख्य साधन ये संवेदी कोशिकायें ही हैं। जन्तुओं को संकेत देने का तरीका इस बात पर निर्भर करता है कि जन्तु विशेष का तांत्रिका तन्त्र कितना विकसित हैं क्योंकि तांत्रिका तन्त्र ही जन्तुओं के स्वभाव को निर्धारित करता है। कीड़ी, मछलियों, चिड़ियों, चूहों, बंदरों आदि पर किये गये अध्ययनों ने जीवों पर आपसी संचार के नवे आयोग प्रस्तुत किये हैं।

#### विभिन्न प्रकार के संकेत—

पहले केवल दो प्रकार के संकेतों, यथा प्रकाशीय और ध्वनि संकेतों के विषय में अध्ययन किये गये। किन्तु आजकल रासायनिक संकेतों, जन्तुओं द्वारा उत्पन्न की जाने वाली विशिष्ट प्रकार की गन्ध अथवा श्रवित किये जाने वाले विशिष्ट रासायनिक पदार्थों आदि पर भी शोध कार्य किये जा रहे हैं और उनके आशाजनक परिणाम भी सामने आये हैं।

ध्वनि संकेत अन्य संकेतों की अपेक्षा बेहतर होते हैं और अधिक प्रभावी भी। जनवरों द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले ध्वनि संकेत अनेक प्रकार के होते हैं। तरंग गति माडुलन और टोन की शुद्धता ध्वनि संकेत को प्रभावित करने वाले कारक हैं, जिनके बीच प्रत्येक जन्तु के लिये तालमेल विशिष्ट होता है। यही कारण है

कि एक जन्तु द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले ध्वनि संकेत उसी वंश और उसी जाति के उत्पन्न समझे जाते हैं। ये संकेत मुख्यतः दो कार्यों के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं। नर या मादा से प्रणय निवेदन हेतु अथवा अपनी टोली या समूह को आगामी खतरे का अभ्यास कराने हेतु।

चिड़ियों का गाना सम्पर्क संकेत का अच्छा उदाहरण हैं। किन्तु जब चिड़ियाँ समूह बनाकर शेर मचाती हैं तो उसका कारण या तो कोई सम्भावित खतरा होता है। या उनके क्षेत्र में किसी का अनाधिकार प्रवेश। अफ्रीकी बंदरों पर वैज्ञानिक सर्वेक्षण करने पर पाया गया कि वे 36 या उससे भी अधिक ध्वनि संकेत उत्पन्न करते हैं, जिन में से तीन विशिष्ट प्रकार के 'सचेतक' संकेत होते हैं।

कुछ जीव ऐसे भी होते हैं जिनमें स्वर-इन्द्रियाँ उपस्थित नहीं होती। ऐसे जीव अपने अंगों को पटककर या रगड़कर ध्वनि उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार उत्पन्न ध्वनि ही उनके द्वारा प्रेषित संकेत होते हैं। चीटियाँ और केकड़े पिछले भाग को रगड़कर ध्वनि उत्पन्न करते हैं। मछलियाँ आवाज उत्पन्न करने के लिए गलफड़े को आपस में रगड़ करती हैं। कुछ छोटे कीट या झिंगुर, आँख फोड़वा आदि पैरों को पंखो से रगड़कर ध्वनि उत्पन्न करते हैं।

कुछ पक्षी विकसित स्वर इन्द्रियों के होते हुए भी अन्य अंगों के द्वारा ध्वनि उत्पन्न कर संदेश भेजते हैं। कुछ अपने पंखों को फैलाकर जोर-जोर से फड़फड़ाते हैं। कठफोड़वा अपने साथी को खुश करने के लिए पेढ़ के तनों से अपने पंखों को रगड़ते हैं। कुछ पक्षी चलते समय अजीब आवाज उत्पन्न करते हैं।

हाल में ही बरमूदा के समुद्री क्षेत्र में व्हेल की ऐसी प्रजाति का पता चला है जो संगीत के समय सुरमय ध्वनि निकालती है। अमेरिका के राकफेयर विश्वविद्यालय के कुछ वैज्ञानिकों ने सूक्ष्म जाँच करने पर पाया कि ये आपस में सम्पर्क रिथापित करने के लिए "गाना" गाती हैं। परीक्षणों से यह भी पता चला है कि वे इस गायन से तीस-चालीस किमी के दायरे में एक दूसरे से सम्पर्क स्थापित कर लेती हैं।

इसी प्रकार डाल्फिनों को काफी बुद्धिमान जन्तु समझा जाता है। कुछ सर्कसों में तो डाल्फिनों से तरह-तरह के करतब कराये जाते हैं। ये आपस में विभिन्न ध्वनि संकेतों से सम्पर्क तो कायम करती ही हैं, प्रशिक्षण देकर इनसे संकेत भाषा

में बातें भी की जा सकती हैं। मार्गरेट होब ने तो इन डाल्फिनों को अंग्रेजी शब्दों का पाठ भी रटा दिया है। जिसे यह संकेत की भाषा में बताता है।

### गंध-संदेश-

जन्तुओं में संदेश देने की एक अन्य विधि प्रचलित है— "गंध संदेश देना और प्रहण करना"। आजकल संदेश देने की इस रासायनिक विधि का विस्तृत वर्णन किया जा रहा है। संदेश देने की यह विधि केवल जन्तु ही नहीं बल्कि बैकटीरिया, फर्फूट, कवक आदि भी अपनाते हैं। ये रासायनिक संकेत भी अन्य संकेतों की तरह भोजन की खोज के लिए, साथी को बुलाने के लिए या अपने दूसरे साथियों को भावी संकेतों को देने के लिए होता है।

जानवरों में गन्ध विशेष को पहचानने के लिए और उसे 'याद' रखने की विलक्षण शक्ति होती है। आपने पुलिस के किसी खोजी कुत्ते को किसी घटनाक्रम में चीजों को सूँघकर अपराधी की खोज करते हुए देखा होगा। गन्ध को पहचानने की अपनी विलक्षण शक्ति के कारण ही वे ऐसा कर पाते हैं। प्रत्येक जन्तु की एक विशेष गन्ध होती है जिसके आधार पर वे अपनी जाति के अन्य जन्तु से सम्बन्ध स्थापित करता है। जैसे बिल्लियाँ अपने पीछे एक गन्ध छोड़ देती हैं जिसे सूँघकर उनकी साथी उन तक पहुँच सकती हैं।

कभी-कभी कुछ जन्तु अपनी रक्षा के लिए भी हथियार के रूप में भी गन्ध का उपयोग करते हैं। खतरे में पड़ जाने पर कुछ के रासायन स्रवित करते हैं। जिनकी गन्ध (दुर्गन्ध) इतनी तेज होती है कि दुश्मन उनसे दूर हटने पर मजबूर हो जाते हैं। गोवरैला ऐसा ही करता है। इसी प्रकार प्रणय निवेदन या अन्य सम्बन्धों के लिए भी रासायन स्रवित किये जाते हैं। 'बाम्बाकाल' (हेक्सडित-10, 12 डायन-1 आल) नामक फिरोमन मादा रेशन कीट द्वारा स्रावित किया जाता है जो हवा द्वारा संवाहित होता है। इस रासायन की गन्ध 3 किमी तक के दायरे नर रेशम को आकृष्ट कर सकती है। ज्योंही कोई रेशन कीट सम्पर्क में आ जाता है तो मादा और अधिक गन्ध बिखेरना छोड़ देती हैं जिससे अन्य नर कीट उसके सम्पर्क में नहीं आते।

### प्रकाशीय संकेत-

ऐसे कुछ विशेष रूप से कीट भी होते हैं जिनमें स्वर इन्द्रियों नहीं होती। अपने

उद्गारों को प्रकट करने के लिए या अपने साथियों तक संदेश पहुँचाने के लिए वे प्रकाशीय संकेतों का सहारा लेते हैं। जन्तुओं में खुद को पर्यावरण के अनुरूप दालने की प्रवृत्ति होती है। इसीलिए कुछ जन्तुओं में प्रकाशीय तन्त्रों का उद्विकास हुआ किन्तु बाढ़ में वे इसका उपयोग मंकृत प्रसारण में भी करने लगे। सन्देश देने की यह विधि शब्द या रासार्थिक विधि की अपेक्षा अधिक प्रभावी इसीलिए भी है कि इसमें संकेत भेजने वाले जीव की स्थिति का विल्कुल सही ज्ञान हो जाता है। ये प्रकाशीय संकेत रंग, आकार, गति और समय पर निर्भर करते हैं। जुगनू, कड़लपुच्छ और गोपमक्खी में स्ननदीर्जिका गुण होता है। प्रकाश की इस भाषा से आमतौर से नर अपनी संगिनी को बुलाते हैं। प्रकाश उत्पन्न करने का यह वैकटीरिया, फर्फूट, मोटोजोआ स्पंज आदि में पाया गया है।

प्रकाश उत्पन्न करने की क्रियायें कुछ जीवों में शरीर के बाहरी भाग में होती हैं और कुछ जीवों में आन्तरकोशिकीय। कुछ जीव प्रकाश उत्पन्न करने के लिए वैकटीरिया का सहार लेते हैं।

इन सब संकेतों से अलग कुछ जीव विशिष्ट आकृतियों या स्थितियों के माध्यम से भी संकेत भेज देते हैं। जैसे—चिपांजी, गोरिल्ला और बन्दर अपना गुस्सा, दुःख, स्नेह—सब अपने चेहरे के भावों से ही प्रकट कर देते हैं। हिरन अपने समृद्ध को आने वाले खतरों की सूचना देने के लिए अपनी पृष्ठ को ऊँचा उठा लेते हैं। कुत्ते भी संभावित खतरे को भापकर अपने दोनों कान ऊँचे कर लेते हैं।

इस प्रकार हर जाति के जन्तु आपस में संचार माध्यम की व्यवस्था बनाये हुए हैं, जिन पर गहन अध्ययन किये जाने की आवश्यकता है।

संदेश प्रसारण हेतु मधुमक्खियाँ नृत्य करती हैं—

प्रसिद्ध जीवविज्ञानी कालेबान फ्रिश ने 1945 में, सर्वप्रथम यह खोज कि मधुमक्खी संदेश प्रसारण हेतु नृत्य करती है। जब कोई मधुमक्खी किसी स्थान पर पराग का पता लगा लेती है तो इसकी सूचना वह अपने साथियों को नृत्य द्वारा देती है। यदि पराग का स्रोत लगभग 100 मीटर क्षेत्र के अन्दर होता है तो वह वृत्ताकार नृत्य (राउन्ड डॉस) करने लगती है। यदि स्रोत 100 मी. से अधिक दूरी पर होता है तब वह कम्पन नृत्य (वैगिंग डॉस) करती हैं।

वृत्ताकार नृत्य में जब मधुमक्खी पराग के स्रोत की खोज पाकर वापस अपने

एतों में आती है तब वह एक ही स्थान पर वृत्ताकार घेरों में घूमने लगती है। तब अन्य मधुमक्खियाँ उसके शरीर के झड़े परागकों को अपने सर्परक्षकों की सहायता से उठाकर पराग के स्रोत की खोज में निकल पड़ती हैं।

कम्पन नृत्य में मधुमक्खी नाचती हुई पहले अंग्रेजी के अंक 8 की आकृति बनाती है। फिर उसके बीच से दाहिनी या बायी ओर सीधे अपने उंदर को एवं अपनी पृष्ठ को तेजी से कम्पन करती हुई तथा पंखों को फड़फड़ाती हुई उसी दिशा में उड़ान भरती हैं जिसमें पराग का स्रोत होता है। अध्ययनों में पाया गया कि मधुमक्खी के कम्पन की दर और पराग के स्रोत दूरी के बीच सम्बन्ध होता है। इस प्रकार एक विशिष्ट प्रकार के नृत्य से मधुमक्खी अपनी साथियों को अपने छत्ते से पराग के स्रोत की दूरी और दिशा का संकेत देती है।

### प्रशिक्षण शिविर (डालग्राम) में आचार्य श्री कनकनन्दीजी संसंघ



## 2

### छाया प्रतिच्छाया से ज्ञापक शुभाशुभ

दृष्ट्वा यस्य विजानीयात्पन्नरूपां कुमारिकाम् ।  
प्रतिच्छायामयीमध्योर्नेनमिच्छिकिंत्सितुम् ॥

(चरक संहिता (2) भा. 1 पृष्ठ 506)

चिकित्सक जिसके नेत्रों में देखकर उसकी प्रतिच्छाया रूप कुमारिका को नष्ट जाने उसकी चिकित्सा की अभिलाषा न रखें। कुमारिका पुतली को कहते हैं। यदि आँख में पुतली न दिखायी दे तो उसे मुमूर्षु जानें।

ज्योत्स्नायामातपेदीपे सलिलादर्शयोरपि ।  
अङ्गेषु विकृता यस्य छाया प्रेतस्तथैव सः ॥३॥

जिस पुरुष की छाया चाँदनी, धूप, दीपक के प्रकाश जल अथवा दर्पण में विकृत अङ्ग वाली दिखायी दे तो उसे मरे हुए के सदृश ही जानना चाहिए।

छिन्ना भिन्नाऽकुला छाया हीना वाऽप्यर्थिकाऽपि वा ।  
नष्टा तन्यी द्विधा छिन्ना विशिरा विकृता च या ॥  
एताश्चान्याश्च याः काश्चप्रतिच्छाया विगर्हिताः ।  
सर्वा मुमूर्षतां ज्ञेया न चेल्लक्ष्यनिमित्तजाः ॥

ऊपर कहे गये चाँदनी आदि में यदि शरीर की छाया या प्रतिबिम्ब छिन (दो टुकड़ों में विभक्त) भिन्न (विवीर्ण) आकुल (जिसमें अन्य प्रतिबिम्ब मिले दिखायी दे) हीन (किसी अङ्ग से हीन) अधिक (किसी अङ्ग का अधिक होना) दिखायी दे अथवा छाया वा प्रतिबिम्ब ही न दिखायी दे अथवा अत्यन्त सूक्ष्म हो, दो स्थानों से विभक्त हो, शिर हीन हो और जो विकृत हो आकृति वा रूप के अनुसार न हो, ये और इसी प्रकार के जो कोई भी अन्य प्रतिबिम्ब हों वे सब निन्दित वा अशुभ हैं। ये सब मुमूर्षु पुरुषों के प्रतिबिम्ब जानने चाहियें। यदि ये लक्षण के निमित्त से उत्पन्न न हों अर्थात् अकारण उत्पन्न होने वाल विकृति प्रतिबिम्ब पुरुष की मुमूर्षता के ज्ञापक हैं। यदि दर्पण आदि में कोई दोष हो और उससे प्रतिबिम्ब

विकृत दिखायी दे तो वह मुमूर्षु का लक्षण नहीं।

संस्थानेन प्रमाणेन वर्णेन प्रभया तथा ।

छाया विवर्तते यस्य स्वरथोऽपि प्रेत एव सः ॥

यदि आकृति शरीर का परिमाण, वर्ण, प्रभा आदि में जिस पुरुष की छाया में परिवर्तन या विपरीतता हो, उस स्वरथ पुरुष को भी मरा हुआ ही जानना चाहिए, अर्थात् वह शीघ्र ही मर जायेगा।

संस्थानेनाकृतिर्ज्ञेया सुषमा च विषमा या ।

मध्यमल्पं महद्योक्तं प्रमाण त्रिविधं नृणाम् ॥

संस्थान शब्द का अर्थ आकृति है। यह आकृति दो प्रकार की हो सकती है—  
(1) सुषमा (सुन्दर) (2) विषमा (अशोभन, जो सुन्दर न हो)। देह का प्रमाण तीन प्रकार का है— 1. मध्य, 2. अल्प, 3. महान् ।

प्रतिप्रमाणसंस्थाना जलादर्शात्पादिषु ।

छाया या सा प्रतिच्छाया वर्णप्रभाश्रया ॥

देह के प्रमाण और आकृति के अनुसार जल, दर्पण, धूप आदि में जो छाया पड़ती है वह प्रतिच्छाया या प्रतिबिम्ब कहलाता है। छाया, वर्ण और प्रभा पर आश्रित है।

छाया के भेद

खादीनां पञ्चानां छाया विविधलक्षणाः ।

नाभसी निर्मला नीला सस्नेहा सप्रभेव च ॥

पाँचों आकाश आदि महाभूतों की विविध प्रकार के लक्षणों वाली पाँच छाया हैं— 1. आकाश सम्बन्धी, 2. वायु सम्बन्धी, 3. अग्नि सम्बन्धी, 4 जल सम्बन्धी, 5. पृथ्वी सम्बन्धी ।

नाभसी छाया—निर्मल, नीलवर्ण की, रिनाथ, प्रभायुक्त होती है। नाभसी छाया का अर्थ आकाशीय छाया है।

रुक्षा श्यामाऽरुणा या तु वायसी सा हत प्रभा ।

विशुद्धरक्तात्वानेयी दीप्ताभा दर्शन प्रिया ॥

वायवी छाया—रुक्ष, श्याम वा अरुणवर्ण की, प्रभारहित होती है।

आग्नेयी छाया- विशुद्ध रक्तवर्ण की चमकदार आभा वाली और देखने में प्रिय होती है।

शुद्धवैदूर्यविमला सुस्निग्धा चाम्भसी मता।  
स्थिरा स्निग्धा घना श्लक्षणा श्यामा श्वेतच पार्थिवी।

जलीय छाया- शुद्ध वैदूर्य मणि के समान विमल तथा अत्यन्त स्निग्ध होती है।

पार्थिवी छाया- स्थिर, स्निग्ध, घनी, श्लक्ष्म (चिकनी), श्यामवर्ण और श्वेत होती है।

वायवी मर्हिता त्वासां चतस्रः स्युः शुभोदया।  
वायवी तु विनाशाय क्लेशाय महतेऽपि वा॥

इसमें से वायवी (वायु सम्बन्धी) छाया निर्दित है। शेष चार छायायें शुभ फल देने वाली होती हैं। वायवी छाया मृत्यु अथवा महाक्लेश का कारण होती है।

### प्रभा की उत्पत्ति कारण और भेद

स्यात्तैजसी प्रभा सर्वा सा तु सप्तविधा स्मृता ।  
रक्ता पीता सिता श्यामा हरिता पाण्डुराङ्सिता॥

सब प्रभा तैजसी होती है- तेज से उत्पन्न होती है। प्रभा सात प्रकार की मानी गयी है- 1. लाल, 2. पीली, 3. श्वेत, 4. श्याम, 5. हरित(हरा), 6. पाण्डुर, (ईप्त् पीत), 7. असित (काली)। तेज के बिना कोई प्रभा नहीं हो सकती, अतः तैजसी कहा गया है।

### शुभाशुभ छाया

तासां या स्युकिसिन्यः स्निग्धाश्च विपुलाश्च याः।  
ताः शुभारूक्षमलिनाः सक्षिप्ताश्चाशुभोदयाः ॥

उन सात प्रकार की प्रभाओं में से जो लिखी हुई स्निग्ध और विपुल (बहुत सा विस्तृत) हों, वे शुभ होती हैं। 'विपुलाश्च' के स्थल पर यदि विमलाश्च यह पाठान्तर हो तो उसका अर्थ निर्मल है। जो रुखी हो, मलिन हो, संक्षिप्त (शुभ मोटी वा थोड़ी) हों, वे अशुभ फल के देने वाली होती हैं।

छाया और प्रभा में अन्तर

वणमाक्रामतिच्छाया भास्तु वर्णप्रकाशिनी ।

आसन्ना लक्ष्यते छाया भा: प्रकृष्टा प्रकाशते ॥

छाया वर्ण पर छा जाती है और प्रभा वर्ण को प्रकाशित करती है। छाया पास से दिखायी देती है व जाती है और प्रभा दूर से भी प्रकाशित होती है। यही दोनों में भेद है। इसके अतिरिक्त छाया का पञ्चभूतात्मक होना और प्रभा का तैजसी होना भी एक भेद है।

नाच्छयी नप्रभः कश्चिद्विशेषाश्चिन्हयन्ति ।

नृणां शुभाशुभोत्पत्तिं काले छाया प्रभाश्रयाः ॥

कोई भी पुरुष छाया और प्रभा से रहित नहीं है किन्तु समय पर छाया और प्रभा के आश्रित भेद ही शुभ एवं अशुभ की उत्पत्ति के ज्ञापक होते हैं।

### छाया पुरुष दर्शन

स्वरूप रिष्ट के भेद-

छायापुरिसं सुपिणं पच्चखं तह य लिंगणिदिँ ।

पण्हगय पुणभणियं रिँ रिडागमन्नेहि ॥6 9॥

छाया पुरुष, स्वनदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य, और प्रश्न के द्वारा रिष्ट हो, उसे रिष्ट विज्ञानवेत्ता रिष्ट ही कहते हैं।

रूपरथ रिष्ट को देखने की विधि-

पक्खालिऊण देहं सिअवच्छादीहि भूसिओ सम्म ।

एगंतम्मि णियच्छु छाया मंतेवि णियअंगं ॥7 0 ॥

स्नान कर रवच्छ और सफेद वस्त्रों में सुसज्जित हो अपने शरीर को निम्न मन्त्रों से मन्त्रित कर एकान्त रथान में अपनी छाया का दर्शन करें।

ॐ हीं रक्ते २ रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूप्यांडी देवि मम शरीरे अवतर अवतर छायां सत्यां कुरु २ हीं स्वाहा ॥

इय मंतिअ सबगों मंती जोएउ तत्थवरघाया ।

सुहदियहेदुव्यण्हेजलहर-पवणेण परिहीणो ॥7 1 ॥

‘ओ हीं रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूप्यांडे देवि मम शरीरे

अवतर-२ छायां सत्यां कुरु—कुरु हीं स्वाहा ॥ इस मन्त्र से अपने शरीर को मन्त्रित कर शुभ दिन—सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार के पूर्वान्ह—दोपहर के पहले के समय में वायु और मेघरहित आकाश के होने पर ।

समसुद्धभूमिए से जल—तुस—अंगार—चम्पपरिहीणे ।

इअरच्छायारहिए तिअरणसुद्धीए जीएह ॥७२॥

मन, वचन और काय की शुद्धता के साथ समतल और पवित्र जल, भूसा, कोयला चमड़ा या अन्य किसी प्रकार की छाया से रहित भूपृष्ठ पर छाया का दर्शन करें ।

छाया के भेद—

णियछाया परछाया छायापुरिसं च तिविहछाया वि ।

णयबा सा पयडा जहागमं णिविअप्येण ॥७३॥

निश्चय ही पूर्व शास्त्रों के अनुसार छाया तीन प्रकार की मानी गई है । एक अपनी छाया, दूसरी अन्य की छाया और तीसरी छाया पुरुष की छाया ।

निजच्छाया का लक्षण—

जा नरशरीर छाया जोइज्जइ तत्थ इयविहाणेण ।

सा भणिया णिअछाया णियमा सत्थत्थ दरिसीहि ॥७४॥

शास्त्र के यथार्थ अर्थ को जानने वालों के द्वारा वह छाया नियमतः निजच्छाया कही गई है, जो इस प्रकार से दिखलाई पड़े ।

जइ आरो ण पिच्छई णियछाया तथ संठिओ णूणं ॥

ता जीवइ दह दियहे इय भिण्यं सयलदरिसीहि ॥७५॥

सर्व टृष्टाओं के द्वारा यह कहा गया है कि यदि कोई रूण व्यक्ति जो वहाँ खड़ा हो, अपनी छाया न देखे तो निश्चय से दस दिन जीवित रहता है ।

छाया दर्शन द्वारा दो दिन शेष आयु के चिन्ह—

दो छाया हु णियच्छइ दोणिण दिणे होइ तस्स वरजीयं ।

अद्वच्छायं पिच्छई तस्स विजाणेह दो दियहं ॥७६॥

जो व्यक्ति अपनी छाया को दो रूपों में देखता है, वह दो दिन जीवित रहता है, और जो आधी छाया का दर्शन करता है वह भी दो दिन जीवित रहता है ।

छाया द्वारा एक दिन शेष आयु को ज्ञात करने की विधि—  
जस्स न पिच्छई छाया मंती वि य संणियच्छमाणो वि ।

तस्स हवइ वरजीयं एगदिणं कि वियप्येण ॥७७॥

इसमें सन्देह या विकल्प का कोई स्थान नहीं कि यदि रोगी पुरुष उपर्युक्त मन्त्र का जाप कर छाया पर दृष्टि रखते हुए भी उसे न देख सके तो उसका स्थूल जीवन एक दिन का समझना चाहिए ।

छाया द्वारा तत्काल मृत्यु के चिन्ह—

वसह—करि—काय—रासह—महिसो हयजे (हिंय) विविहस्तवेहि ।

जो पिच्छई णिअछाया लहुमरणं तस्स जाणेह ॥७८॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को बैल, हाथी, कौआ, गधा, भैंसा और घोड़ा इत्यादि अनेक रूपों में देखता है, तो उसका तत्काल मरण जानना चाहिए ।

अह पिच्छई णिअछायां अहोमुहं च विक्षितं ॥

तस्स लहु होइ मरणं णिद्विं सत्थइत्तेहि ॥७९॥

शास्त्रों के ज्ञाताओं का कथन है कि यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को नीचे की ओर मुख किये, पीछे की ओर धुमते हुए या अव्यवस्थित रूप में देखता है, तो उसका मरण समझना चाहिए ।

छाया द्वारा लघु मरण ज्ञात करने की अन्य विधि

धूमतं पजलतं छायाविम्बं णियच्छए जो हु ।

तह य कवंधं पिच्छई लहु मरणं तस्स णियमेण ॥८०॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को धूएँ से आच्छादित, अग्नि से प्रज्वलित और बिना सिर के केवल छाया का धड़ ही देखता है तो उसका नियम से जल्दी ही मरण समझना चाहिए ।

तीन, चार, पाँच और छः दिन के भीतर मृत्यु घोतक छाया चिन्ह—

नीला पीया किण्हा अह रत्ता जो णिअछए छाया ।

दिहयतयं च चउङ्ग पणां च छरत्तियं तस्य ॥८१॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को नीली, पीली, काली और लाल देखता है, तो वह क्रमशः तीन, चार, पाँच और छः दिन—रात जीवित रहता है ।

जिस व्यक्ति को अपनी छाया दिखलाई नहीं पड़ती है वह उस दिन और जिसे अपनी दो छायाएँ दिखाई पड़ती हैं वह दो दिन जीवित रहता है। छिन्न-भिन्न आकुल, हीन या अधिक, विभक्त, मरतकशून्य, विस्तृत और प्रतिच्छया रहित छाया मुर्मृषु मरणासन व्यक्ति को दिखाई पड़ती है।

जिस व्यक्तिको छाया दर्शन में अपने शरीर की कान्ति विपरीत दिखलाई पड़े और जिसे छाया में नीचे का ओठ ऊपर को फैला हुआ दिखलाई दे; जिसके दोनों ओठ जामुन की तरह काले वर्ण के दिखलाई पड़ें, ओढ़ों के मध्य भाग की छाया विकृत दिखलाई दे, वह 10 दिन के भीतर मृत्यु को प्राप्त करता है।

जिसकी जीभ काली निश्चल, अवलित, मोटी, कर्कश और विकृत हो, तथा जीभ की छाया दिखलाई नहीं पड़ती हो, अथवा जिद्धा की छाया बीच में फटी-टूटी मालूम होती हो वह शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है। जो रोगी व्यक्ति सोते समय इधर-उधर पैर फटकारे तथा जिसके हाथ-पैर ठण्डे हो गये हों और श्वास रुक गई हो अथवा काक की तरह श्वास चलती हो, उसकी शीघ्र मृत्यु समझनी चाहिए। ऐसे व्यक्ति की छाया द्वारा मृत्यु ज्ञात करने की विधि यह है कि रात को दर्घण में नाक का जितने अंगुल का प्रतिविम्ब दिखलाई दे, उसे सात से गुणाकर तीन का भाग देने पर जो लक्ष्य आवे उतने ही दिन या घड़ी प्रमाण आयु समझनी चाहिए।

ग्रीक ज्योतिष में छाया पथ के दर्शन द्वारा मृत्यु चिन्हों का वर्णन किया गया है। वे लोग छाया पथको गैलाक्सिसयन अर्थात् दुग्ध वर्त्म बतलाते हैं जिसे यह छाया पथ सम या नील वर्ण का दिखलाई पड़े, उसकी मृत्यु उस दिन में, जिसे काला दिखलाई पड़े उसकी आठ दिन में, पीला दिखलाई पड़े उसकी 5 दिन में, और जिसे अनेक वर्ण मिश्रित दिखलाई पड़े, उसकी 2 दिन में मृत्यु होती है। प्राचीन ग्रीक ज्योतिष में इस छाया-पथ के दर्शन के कारण का निरूपण करते हुए बतलाया है कि जूनोदेवी, जो छाया-पथ की अधिष्ठात्री है, प्रत्येक व्यक्ति को उसके शुभाशुभ कृत्वों के अनुसार भविष्य की सूचना देती है।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने छाया-पथ का दृसरा नाम निहारिका बतलाया है। उनका मत है कि मेघ शून्य रात्रि में आकाश में असंख्य तारिका पंक्ति के साथ उत्तर से दक्षिण दिशा तक विस्तृत शुभ वर्ण का कुहरा जैसा पदार्थ दिखलाई पड़ता है, यही छाया-पथ है। इसके विकृत दर्शन से उर्शक केन्द्र की ज्ञान हीनता का आभास

मिलता है। जब मरितष्क संचालन यन्त्र में डिलाई आ जाय, उस समय जीवन शक्ति का हास समझना चाहिए। ग्रीक ज्योतिष में छाया-पथ के निरीक्षण द्वारा जो अरिष्ट दर्शन की प्रणाली बताई गई है उसके मूल में यही रहस्य है।

भारतीय ज्योतिष और वैद्यकशास्त्र में छाया दर्शन द्वारा मृत्यु को ज्ञात करने की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं। विकृत छाया दर्शन के अतिरिक्त निमित्त ज्ञान में छाया के गणित द्वारा भी मृत्यु समय को ज्ञात किया गया है। ज्योतिषशास्त्र में तो प्रधान रूप से ग्रहचाल और ग्रह-स्थिति द्वारा आयु सम्बन्धी रिष्टों का निरूपण किया गया है। ग्रह-स्थिति द्वारा बच्चे के जन्म क्षण में ही आयु का ज्ञान किया जा सकता है।

छाया द्वारा एक दिन की आयु ज्ञात करने की विधि—  
जो णियष्ठायाविम्बं कट्टिज्जंतं गिएऽपुरिसहिं ।

कसणेहिं तस्साऊ एगदिणं होइ णिभंतं ॥82॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को काले मनुष्यों द्वारा काटते हुए देखें तो निःसन्देह उसका जीवन एक दिन समझना चाहिए।

छाया द्वारा सात दिन की आयु ज्ञात करने की विधि—

सर-सूल-सव्वलेहिं य कोंत-णारायछुरिअभिन्नं वा ।

छिन्नं खग्गाईहिं अ कचचुण्णंमुग्गराईहिं ॥83॥

सो णियइ सत्त दियहा छायाविम्बं ठियच्छए णूणं ।

रोवन्तं जो पिच्छइ लहु मरणं तस्स णिद्विट्टं ॥84॥

कोई व्यक्ति अपनी छाया को तीर, भाला, बर्छी और सुरे से टुकड़े किए जाते हुए देखे या अपनी छाया को तलवार से बिन्दू किये जाते हुए देखे अथवा मुग्दर-मोगरे के द्वारा छाया को काटते हुए देखे तो वह व्यक्ति सात दिन जीवित रहता है, और यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को रोते हुए देखे तो उसका निकट मरण समझना चाहिए।

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को पूर्व दिशा की ओर से तीर, भाला, बर्छी और सुरे द्वारा टुकड़े करते हुए काले मनुष्य को देखे तो उसका 5 दिन जीवन, दक्षिण दिशा की ओर से टुकड़े करते हुए देखे तो 4 दिन तक जीवन, पश्चिम

दिशा की ओर से टुकड़े करते हुए देखे तो 7 दिन जीवन और उत्तर दिशा की ओर टुकड़े करते हुए देखे तो 11 दिन जीवन शेष समझना चाहिए। तलवार का बार छाया के ऊपर आग्नेय कोण से किया जाता हुआ दिखलाई पड़े तो 2 दिन में मृत्यु, वायव्य कोण से किया जाता हुआ दिखलाई पड़े तो 6 दिन में मृत्यु नैत्रत्य कोण से किया जाता हुआ दिखलाई पड़े तो 9 दिन में मृत्यु एवं ईशान कोण से बार किया जाता हुआ दिखलाई पड़े तो 7 दिन में मृत्यु समझनी चाहिए।

#### निजच्छाया दर्शन का उपसंहार-

इदि भणिया णियछाया परछाया वि अ हवेइ णियरुवा।

किन्तु विसेसो दीसइ जो सिट्ठो सत्थइत्तेहि ॥85॥

इस प्रकार निजच्छाया दर्शन और उसके फलाफल का वर्णन किया है। परछाया दर्शन का फल भी निजच्छाया दर्शन के समान ही समझना चाहिए। किन्तु शास्त्र के मर्मज्ञों ने जो प्रधान विशेषताएँ बतलाई हैं, उनका वर्णन किया जा सकता है।

भारतीय वैद्यक और ज्योतिषशास्त्र में विभिन्न वस्तुओं के छायादर्शन द्वारा मृत्यु चिन्हों का वर्णन करते समय, पंचमहाभूतों की छाया का वर्णन किया है। आकाश की छाया निर्मल, नील वर्ण, स्निग्ध और प्रभायुक्त, वायु की छाया सूक्ष्म, अरुण वर्ण और निष्प्रभ, जल की छाया निर्मल, वेडूर्य के सट्टश नीलवर्ण और सुस्निध, अग्नि की छाया विशुद्ध, रक्तवर्ण, उज्जवल और रमणीय एवं पृथ्वी की छाया रिथर, स्निग्ध, श्याम और श्वेत वर्ण की बताई गई है। इन पाँचों प्रकार की छायाओं में वायु की छाया अनिष्टकर तथा मृत्यु घोतक है। लेकिन ये पाँचों छायाएँ सभी प्राणियों को दिखलाई नहीं देती। जिन व्यक्तियों की शुद्ध आत्मा है, जिनका चरित्र और ज्ञान ऊँचे दर्जे का है, वे उन पाँचों भूतों की सूक्ष्म छाया का दर्शन कर छः मास पहले से अपने मृत्यु समय को ज्ञात कर लेते हैं। साधारण कोटि के व्यक्ति इन पञ्चमहाभूतों की पृथक्-पृथक् छाया को न देख इनके समुदाय से उत्पन्न हुई छाया का दर्शनकरते हैं। क्योंकि साधारण व्यक्ति स्थूल पञ्चभूतात्मक पदार्थ की छाया का दर्शन करने में ही असमर्थ हो सकते हैं।

आचार्य ने इस स्थूलपञ्चभूतात्मक छाया के ही निजच्छाया अपने शरीर की छाया, परछाया-अन्य व्यक्ति या अन्य पदार्थों की छाया के दर्शन द्वारा ही मृत्यु

चिन्हों का वर्णन किया है। आदिपुराण, कालावली, मार्कण्डेयपुराण, लिंगपुराण, ब्राह्मणपुराण, मधूरचित्र, वसन्तराग, शकुन, हरिवंशपुराण, पद्मपुराण आदि ग्रन्थों में कई स्थलों पर, निजच्छाया दर्शन का सुन्दर कथन किया गया है। उपर्युक्त ग्रन्थों में दो-चार स्थलों पर शीर की छाया के गणित का भी कथन किया है। जेन ज्योतिष के ग्रन्थ केवलज्ञान होरा में छाया गणित द्वारा मृत्यु ज्ञात करने की अनेक विधियाँ बतलाई गई हैं, नीचे एक सरल विधि दी जा रही है।

रवि या मंगलवार को प्रातः काल सूर्योदय के समय में 21 बार णमोकार मंत्र पढ़कर अपनी छाया को हाथों से नाप लें। जितने हाथ प्रमाण छाया आवे उसे लिख लें। इस प्रकार शनिवार को प्रातः काल भी अपनी छाया का हस्तात्मक प्रमाण ज्ञात कर लें। इन दोनों दिनों की छाया को जोड़कर 10 से गुणा करें, उन गुणनफल में 3 का भाग देने से सम शेष में वह वर्ष निर्विघ्न और विषम शेष में उसी वर्ष मृत्यु होगी, ऐसा समझना चाहिए। इस विधि में इतनी विशेषता समझनी चाहिए कि जिस मास की जिस तिथि में व्यक्ति का जन्म हुआ हो, उस मास की उस तिथि के आस-पास पड़ने वाले रवि या सोमवार को अपनी छाया लेनी चाहिए। यह विधि एक प्रकार से अपनी छाया द्वारा वर्षफल ज्ञात करने का साधन है।

#### परच्छाया दर्शन की विधि-

अइरुवो हि जुवाणो ऊणाहियमणवज्ञियो णूणं।

पक्खालाविय देहं लेविङ्गइ सेय गन्धेण ॥86॥

एक अत्यन्त सुन्दर युवक को जो न नाटा हो, न लम्बा हो, स्नान करा के उज्जवल सुगन्धित पाउडर से गन्धयुक्त करें।

अहिमतिझण देहं पुवत्थमहीयलभ्म वरपुरिसा ।

दंसेह तस्य छाया धरिझण आउरस्सेह ॥87॥

हे उत्तम पुरुष ! तुम पूर्वोक्त व्यक्ति के शरीर को मन्त्र से मन्त्रित कर रोगी मनुष्य को पूर्व दिशा में बैठाकर उसकी छाया का दर्शन करगाओ।

आचार्य परच्छाया दर्शन की विधि बतला रहे हैं कि किसी सुन्दर खरूप, मध्यम उम्र के व्यक्ति को स्नान आदि से पवित्र कर “ॐ हीं रक्ते-रक्ते रक्तप्रिय सिंहमस्तकसमाख्ये कृष्णाण्डी त्रेवि मम शरीरे अवतर अवतर छायां सत्यम् कुरु-

कुरु हीं स्वाहा॥ इस मन्त्र का उस व्यक्ति से जिसकी छाया द्वारा रोगी की मृत्यु तिथि ज्ञात की जा रही है, 108 बार जाप करवाना चाहिए। जाप करने की विधि जैन तन्त्र शास्त्रानुसार यह है कि लाल रंग के आसन पर बैठकर एकाग्रचित्त से कूष्माण्डी देवी का ध्यान करते हुए एक बार मन्त्र पढ़ने के अनन्तर अग्नि में धूप क्षेपण करना चाहिए तथा धूप के साथ-साथ रक्त और पीत वर्ण के पुण्य भी चढ़ाना चाहिए। इस प्रकार जब 108 बार जाप पूरा हो जाये, तब उत्तर दिशा की तरफ मुँह कर उस व्यक्ति से, जिसकी छाया का दर्शन किया जा रहा है “ओं हीं क्षाँ क्षीं क्षूँ क्षें क्षौं क्षः पाश्वर्वनाथ सेविका पद्मावती देवी मम शरीर अवतर अवतर छाया सत्यां कुरु-कुरु हीं स्वाहा” इस मन्त्र का 21 बार पूर्वोक्ता विधि के अनुसार जाप करवाना चाहिए। इसके बाद सूर्योदय काल में उस व्यक्ति को खड़ा कर और रोगी व्यक्ति को पूर्व दिशा की ओर बैठाकर उसकी छाया का दर्शन करना चाहिए। रोगी व्यक्ति उसकी छाया को जिस प्रकार देखे, उसी प्रकार का फल अवगत करना चाहिए।

परच्छाया दर्शन द्वारा दो दिन की आयु ज्ञात करने की विधि-

वक्तां अहवइ अद्वा अहोमुहा परमुहा हु जइ छाया ।

पिछेइ आउरो सो नो दियहा जियइ णिथंतो ॥88॥

यदि रोगी व्यक्ति जिसकी छाया का दर्शन कर रहा है, उसकी छाया दो वक्त टेढ़ी अर्ध-आधी, अधोमुखी और पराङ्मुखी देखता है, तो वह रोगी निश्चित रूप से 2 रोज जीवित रहता है।

कालावाली में परच्छाया दर्शन द्वारा मृत्यु चिन्हों का निरूपण करते हुए बताया गया है कि अगर रोगी मनुष्य जिसकी छाया का दर्शन कर रहा है, उसकी छाया में शिर, भुजा और घुटनों का दर्शन न करे या इन अंगों को विकृत रूप में देखे तो 10 रोज में मृत्यु को प्राप्त होता है। जो रोगी परच्छाया में छिद्र, धाव व रक्तरक्त्राव देखता है, वह 3 रोज के भीतर मृत्यु को प्राप्त होता है। जिसे पर की छाया चलती हुई दीखे, जो उसे इन्द्रधनुष के रंग की दीखे, जिसे परच्छाया के अनेक रूप दिखलाई पड़े, वह व्यक्ति 2 दिन के भीतर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। मध्यरचित्र में परच्छाया दर्शन द्वारा आयु अवगत करने के कई नियम बतलाये गये हैं, इनमें से अनेक नियम तो उपर्युक्त नियमों के समान ही हैं, पर कुछ ऐसे

भी नियम हैं जो इनसे भिन्न हैं। इन नियमों में प्रधानरूप से परच्छाया में हाथ, पैर और नाक के अभाव का दर्शन मृत्यु द्योतक बताया है। यदि मध्यान्ह समय रोगी परच्छाया को अधिक बड़ी देखे तथा उस छाया में मिश्रित अनेक वर्गों का दर्शन करे तो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है। जिस व्यक्ति को परच्छाया चलती हुई या चलती-चलती छाया का अकरमात् गिरती हुई देखती है और जिसे छाया का शब्द सुनाई पड़ता है, वह व्यक्ति शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है। परच्छाया दर्शन से मृत्यु चिह्न ज्ञात करने का एक यही प्रबल नियम है कि वर्ण संस्थान और आकार विकृति जब छाया में दिखलाई पड़े, तभी निकट मृत्यु समझनी चाहिए।

परच्छाया द्वारा अन्य मृत्यु के चिन्ह-

हसमाणा इ रोवंती धावंती एयचरण-इगहन्था ।

कण्णचिहुरेहि रहिआ परिहीणा जाणु-वाहेहि ॥89॥

कडि-सिर णासाहीणा कर-चरणविवज्जिया तहाचेव ।

रुहिर-वस-तेल्ल-पूयं-मुंचती अहव सलिलं वा ॥90॥

अहवइ अग्निकुलिंगे मुंचती जो णिएइ परच्छाया ।

तस्य कुणिज्जइ एवं आएसं सत्यदिट्टीए ॥91॥

यदि कोई रोगी व्यक्ति परच्छाया को हँसते, रोते, दौड़ते, एक हाथ और एक पैर की, बिना कान, बाल, नाक, घुटने, बाहु, जंगा, कमर, सिर, पैर, हाथ के देखता है, तथा रक्त चर्बी तेल पीव जल या अग्निकण परच्छाया को उगलते हुए देखता है, उसका मृत्यु-समय शास्त्रानुसार निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए।

हसमाणीइ छमासं दो दियहा तह य तिण्णि चत्तारि ।

दो इग वीरस छमासं एगदिणं दोणि वरिसाइ ॥92॥

परच्छाया को हँसती हुई देखने से 6 मास, रोती हुई देखने से 2 दिन, दौड़ती हुई देखने से 3 दिन, एक हाथ या एक पैर से रहित देखने से 4 दिन, कान रहित देखने से एक वर्ष, बाल रहित देखने से छः मास, घुटने रहित देखने से एक दिन और बाहु रहित देखने से 2 वर्ष की शेष आयु समझनी चाहिए।

दो दियहा य दियटूं छमासा तेषु पवरयणेसु ।

एयं दो तिण्णि दिणे तह य दिणद्वं तह च पंचेय ॥93॥

यदि कोई गंगी व्यक्ति परच्छाया को कमर रहित देखे तो दो दिन, सिर रहित

देखे तो आठ दिन, नाक रहित देखे तो छः मास, एवं हाथ पैर रहित परच्छाया का दर्शन करे तो भी छः मास उसकी शेष आयु समझनी चाहिए। इसी तरह परच्छाया को सूधिर उगलती हुई देखने से एक दिन, चर्बी उगलती हुई देखने से दो दिन तेल उगलती हुई देखने से तीन दिन, जल उगलती हुई देखने से आधा दिन और अग्नि उगलती हुई देखने से पाँच दिन शेष आयु समझनी चाहिए।

यदि कोई रोगी परच्छाया को अंगुली रहित देखता है, तो वह आठ दिन, स्कन्ध रहित देखता है तो सात दिन, गर्दन रहित देखता है तो एक मास, ठोंडी रहित देखता है तो नौ या चारह दिन, नेत्र रहित देखता है तो दस दिन, उटर रहित देखता है तो पाँच या छः मास, हृदय को समिद्र देखता है तो चार मास, सिर रहित देखता है तो दो पहर, पाँव की अंगुली रहित देखता है तो छः दिन, डॉत रहित देखता है तो नौ दिन और चर्म रहित देखता है तो आधा दिन जीवित रहता है। जो रोगी परच्छाया के भौंहे, नख, घुटना नहीं देखता अथवा इन अंगों को दुगने-तिगुने रूप में देखता है, वह पाँच दिन जीवित रहता है।

### “छाया पुरुष से प्राप्त भविष्य विज्ञान”

छाया पुरुष का लक्षण—

मय—मयण—मायहीणो पुब्वविहाणेण जं णियच्छेइ।

मंती णियवरछायं छायापुरिसो हु सो होइ ॥१६॥

वह मंत्रित व्यक्ति निश्चय से छाया पुरुष है जो अभिमान, विषय-वासना और छल-कपट से रहित होकर पूर्वोक्त कूप्याण्डी देवी के मंत्र का जाप द्वारा पवित्र होकर अपनी छाया देखता है।

समभूमियले ठिज्ञा सयचरणजुओ पलंवभुअजुअलो।

वाहारहिए धम्मे विवज्जिए खुद्वजतुंहि ॥१७॥

जो समतल-बराबर चौरस भूमि में खड़ा होकर पैरों को समानान्तर करके हाथों को लटकाकर, बाधा रहित और छोटे जीवों से रहित (सूर्य की धूप में छाया का दर्शन करता है, वह छाया पुरुष कहलाता है।)

नासगो थणमज्जे गुज्जे चलरातिदेस—गयणयले ।

भाल छायापुरिसं भणिअं सिरिजिणवरिंदेण ॥१८॥

श्री जिनेन्द्र ! भगवान के द्वारा वह छाया पुरुष कहा गया है, जिसका सम्बन्ध

नाक के अग्र भाग से, दोनों रुतन के मध्य भाग से, गुप्ताङ्गों से, पैर के कोने से, आकाश से अथवा ललाट से हो।

छाया पुरुष की व्युत्पत्ति कोष में “छायावां दृष्टः पुरुः पुरुषाकृतिविशेषः” की गई है अर्थात् आकाश में अपनी छाया की भाँति दिखाई देने वाला पुरुष छाया पुरुष कहलाता है। तन्त्र में बताया गया है:- पार्वती ने शिवजी से भावी घटनाओं को अवगत करने के लिए उपाय पूछा था: उसी के उत्तर में शिवजी ने छाया पुरुष के स्वरूप का वर्णन किया कि मनुष्य शुद्ध चित्त होकर अपनी छाया आकाश में देख सकता है। उसके दर्शन से पापों का नाश और छः मास के भीतर होने वाली घटनाओं का ज्ञान किया जा सकता है। पार्वती ने पुनः पूछा मनुष्य कैसे अपनी भूमि की छाया को आकाश में देख सकता है, और कैसे छः मास आगे की बात मालूम हो सकती है? महादेवजी ने बताया कि आकाश के मेयाशून्य और निर्मल होने पर निश्चय चित्त से अपनी छाया की ओर मुँह कर खड़ा हो, गुरु के उपदेशानुसार अपनी छाया में कण्ठ देखकर निनिमेष नवनों से सम्मुखरथ गगन तल को देखने पर स्फटिक मणिवत् स्वच्छ पुरुष खड़ा दिखाई देता है। इस छाया पुरुष के दर्शन विशुद्धचरित्र वाले व्यक्तियों को पुण्योदय के होने पर ही होते हैं। अतः गुरु के वचनों का विश्वास कर उनकी सेवा सूश्रुता द्वारा छाया पुरुष सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर उसका दर्शन करना चाहिये। छाया पुरुष के देखने से छः मास तक मृत्यु नहीं होती है। लेकिन छाया पुरुष को मस्तक शून्य देखने से छः मास के भीतर मृत्यु अवश्यभावी है। छाया पुरुष के पैर न दिखने से स्त्री की मृत्यु और हाथ न दिखलाई पड़ने से भाई की मृत्यु होती है। यदि छाया पुरुष की आकृति मलिन दिखलाई पड़े तो ज्वर पीड़ा लाल दिखलाई पड़े तो ऐश्वर्य प्राप्ति और समिद्र दिखलाई पड़े तो शत्रुओं का नाश होता है।

णियच्छाया गयणायले विएइ पडिविंविया फुडं जाम।

तावच्चिय सो जीवइ दिद्वीए विविहसत्थाण ॥१९॥

अनेक शारद्वारों की दृष्टि से विचार करने पर यही निष्कर्ष निकलता है कि अपनी छाया को आकाश में पूर्णप्रतिविम्बित छाया पुरुष के रूप में जितना स्पष्ट देखता है उतना ही वह अधिक संसार में जीवित रहता है।

‘ॐ हीं रक्ते-रक्ते’ इत्यादी मंत्र का 108 बार जाप करें। विशुद्ध और

निष्कपट चित्त होकर स्वच्छ आकाश में अपनी छाया के दर्शन करें। यदि भूमि पर पड़ने वाली छाया आकाश में स्पष्ट मालूम पड़े तो अपनी आयु अधिक समझनी चाहिए। इस छाया का दर्शन का बड़ा भारी प्रभाव बतलाया है, लेकिन इस छाया का दर्शन कुछ समय के अभ्यास के अनन्तर होता है। योगठिपिका में बताया है कि रविवार और मंगलवार को उपर्युक्त मन्त्र का 108 बार जाप कर सूर्योदय काल में छाया पुरुष का दर्शन करना चाहिए। छः मास तक लगातार अभ्यास करने पर भी छाया पुरुष के दर्शन नहीं हो तो अपने अशुभ कर्म का उदय समझना चाहिए। इस छाया पुरुष का जितना स्पष्ट दर्शन होता है, उतनी ही दीर्घायु समझनी चाहिए।

छः मास की आयु ज्ञात करने की विधि—

जइ पिच्छइ गयणायले छायापुरिसिरेणपरिहीणं।  
जस्सत्थे जोइज्जइ सो रोई जियइछम्मासं ॥1 0 0 ॥

यदि मंत्रित पुरुष आकाश में छाया पुरुष को बिना सिर के देखे तो जिस रोगी के लिए छाया पुरुष का दर्शन किया जा रहा है, वह छः मास जीवित रहता है।

दो और तीन वर्ष की आयु का निश्चय—

चलणविहीणो दिड्डे वरिसीतयंजीविअं हवे तस्स ।  
णयणविहीणो दिड्डे वरिसजुअणिविअप्पेणा ॥1 0 1 ॥

मंत्रित पुरुष को छाया पुरुष बिना पैर के दिखलाई पड़े तो जिसके लिए देखा जा रहा है वह व्यक्ति तीन वर्ष तक जीवित रहता है और यदि बिना आँखों के छाया पुरुष दिखलाई पड़े तो उसका जीवन दो वर्ष का अवगत करना चाहिए।

एक वर्ष अद्वाईस मास और पन्द्रह मास की आयु का निश्चय—

जाणुविहीणो भणिअं इगवरिसं तह जंघापरिहीणो।  
अद्वावीसं मासे कडिहीणो पंचदह ते वि ॥1 0 2 ॥

यदि छाया पुरुष घुटनों के बिना दिखलाई पड़े, तो रोगी का जीवन एक वर्ष, जंघा के बिना दिखलाई पड़े तो अद्वाईस महीने और क्रमर के बिना दिखलाई पड़े तो 15 महीने शेष जीवन समझना चाहिए।

आठ मास और छः दिन की आयु का निश्चय—

अटेठव मुणह मासेहिअयपरिवज्जिएणं दिटेठण।

णज्ञति (य) णिवियप्पे छदियहे गुज्जारहिएण ॥1 0 3 ॥

यदि छाया पुरुष बिना हृदय के दिखलाई पड़े तो जीवन आठ महीने, बिना गृह अंगों के दिखलाई पड़े तो छः दिन का शेष जीवन समझना चाहिए।

चार दिन, दो दिन और 1 दिन की आयु का निश्चय—

करजुअहीणो जाणहदियहचउकं च वाहीणेण ।

दो दियहे एगदिण असंयरहिएण जाणेह ॥1 0 4 ॥

यदि छाया पुरुष बिना हाथों के दिखलाई पड़े, तो चार-दिन, बाहुओं के बिना दिखलाई पड़े तो दो-दिन और बिना कंधों के दिखलाई पड़े तो एक दिन उसका जीवन शेष समझना चाहिए।

दीर्घायु ज्ञात करने की विधि—

जइ दीसइ परिपुण्णुं अंगोवंगेहि छायवरपुरिसं ।

ताजीवइबहुकालं इय सिट्टं मुणिवरिदेहि ॥1 0 5 ॥

यदि मंत्रित व्यक्ति छाया पुरुष को सभी प्रधान एवं अप्रधान अंगों से परिपूर्ण बेखता है, तो उसकी या जिस व्यक्ति के लिए वह छाया पुरुष का दर्शन कर रहा है, उसकी श्रेष्ठ मुनियों के द्वारा दीर्घायु बतलाई गई है।

तन्त्र शास्त्र में बताया गया है कि मन्त्र पढ़कर मन्त्राराधक व्यक्ति छाया पुरुष का दर्शन आकाश में करता है। यदि वह अपने सम्बन्ध में इष्टानष्टि जानना चाहता है तो उसे अपने शुभा-शुभ फलों का आभास मिल जाता है और अन्य किसी रोगी पुरुष के विषय में जानना चाहता है तो उसे सामने बैठाकर तब दर्शन करना चाहिए। उस अन्य व्यक्ति को सामने बैठाने का रहस्य यह है कि आकाश में उस व्यक्ति की छाया दिखलाई पड़ने लगती है जिससे छाया के विकृत या अविकृत होने के कारण शुभा-शुभ फलों से अवगत करने की अनेक विधियाँ तन्त्र शास्त्र में बतलाई गई हैं। उसके विभिन्न मन्त्रों की आराधना द्वारा नाना रूपों में छाया पुरुष का दर्शन किया गया है। जैन मन्त्र शास्त्रों में भी छाया पुरुष के दर्शन करने के अनेक मंत्र प्रचलित हैं। एक स्थान पर लिखा है कि चक्रेश्वरी देवी की लगातार 21 दिन पूजा करने से अनन्तर “ॐ ह्ली ह्ली हूँ हैं असि आ उ सा नमः स्वाहा”

इस मंत्र का सवा लाख जाप करके स्वरथ और स्वच्छ चित्त होकर छाया पुरुष का दर्शन करना चाहिए। इस विधि से जिस छाया पुरुष के दर्शन होंगे, उसके द्वारा भूत, भविष्यत् और वर्तमान इन तीनों कालों की घटनाओं का स्पष्ट पता लग जायेगा। परन्तु इस छाया पुरुष की आराधना सबके द्वारा संभव नहीं, किन्तु जो छलकपट से रहित हों परम ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हों और जिन्होंने स्वन्न में भी परस्ती की इच्छा नहीं की है, उन्हीं व्यक्तियों को वह छाया पुरुष दिखलाई पड़ेगा। छाया पुरुष के दर्शन के लिए किसी तालाब या नदी के किनारे जाना चाहिए और वहाँ एकान्त में बैठकर कुछ समय तक अभ्यास करना चाहिए। अभ्यास बल से जब भावनाएँ बलवती होकर अभिव्यक्ति की अवस्था में आ जायेगी तो छाया पुरुष का दर्शन अच्छी तरह सरलता पूर्वक किया जा सकता है। आयु के अतिरिक्त अन्य विषयों के फलों का विवेचन निम्न प्रकार किया गया है— जो व्यक्ति छाया पुरुष के गाते या हँसते हुए दर्शन करते हैं उन्हें छः मास के भीतर अतुलित धन-राशि की प्राप्ति होती है। जिन व्यक्तियों को सभी स्वरथ अंगों से पूर्ण छाया पुरुष दिखाई पड़ता है, वे अवश्य कहीं से धन प्राप्त करते हैं। छाया पुरुष का रोना, क्रन्दन करना, और गिड़गिड़ाना इत्यादि देखने से उस व्यक्ति को साधारण धन लाभ अवश्य होता है। ज्योतिष शास्त्र में इस प्रकार के छाया पुरुष का स्वरूप एवं फल बहुत कम जगह बतलाया गया है।

अन्य लाभालाभ आदि ज्ञान-

अच्छउ जीविय—मरणंलाहालाहं सहासहं तह य ।

अण्णं पि जं जि कज्जं तं जोयह छायापरिसम्मि ॥106॥

जीवन और मरण के अतिरिक्त अन्य अभीष्ट लाभ और हानि, शुभ और अशुभ, सुख और दुःख इत्यादि सभी जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले का भी छाया पुरुष में देख सकते हैं।

यदि छाया पुरुष स्वस्थ और प्रसन्न दृष्टिगोचर हो तो धन की प्राप्ति, रोते हुए या उदास दिखलाई पड़े तो धन हानि, नाक या कान छाया पुरुष के दिखलाई न पड़े तो विपत्ति, सिर के बाल धूँधराले दिखलाई पड़े तो, सन्तान प्राप्ति, मित्र समागम और घर में उत्सव अथवा मांगलिक कार्यों का होना, पुरुष की दाढ़ी घनी और सफेद रंगकी लम्बी दिखलाई पड़े तो विपुलमात्रा में कहीं से धन की

प्राप्ति होगी। ऐसा समझना चाहिए। यदि छाया पुरुष का मुख मलिन दिखाई पड़े तो घर में किसी की मृत्यु का होना, मुख प्रसन्न दिखाई पड़े तो घर में किसी का विवाह होना, छाया पुरुष का पेट बड़ा मालूम पड़े तो देश में सुभिक्ष का होना या देश में अन्य तरह की विपत्तियों का आना, एवं छाया पुरुष के स्तन सुन्दर और सुडौल आकार के दिखाई पड़े, तो देश को धन-धान्य से परिपूर्ण होना फल समझना चाहिए। दर्शक जो छाया पुरुष का दर्शन कर रहा है, यदि वह दर्शन करते समय सांसारिक भावनाओं वासनाओं और विचारों से रहित होकर छाया पुरुष को देखता है तो उसे समस्त कार्यों में सफलता तथा उपर्युक्त वासना और भावनाओं के सहित दर्शन करता है, तो उसे उस कार्यों में प्रायः असफलता मिलती है। छाया पुरुष जमीन के भीतर रखे गये धन की भी सूचना देता है। जो व्यक्ति पृथ्वी के नीचे रखे हुए धन को निकलवाते हैं, वे पहले छाया पुरुष के दर्शन द्वारा उस धन के स्थान और परिमाण की सूचना प्राप्त कर लेते हैं। एक बार मेरे मित्र ने, जिन्होंने दो एक जगह पृथ्वी स्थित धन को निकलवाया है, बतलाया था कि इस कार्य के लिए मध्य रात्रि में दीपक के प्रकाश में मंगलवार और इत्वार को छाया पुरुष का दर्शन करना चाहिए। इसके दर्शन की विधि यह है कि मंगलवार या रविवार के प्रातः काल को ही जिस स्थान में धन रहने का सन्देह हो चौमुखी धी का दीपक जलाकर रख दे। पर इतनी विशेषता है कि उस स्थान को पहले गाय के गोबर से लीप कर धूप, अगरबत्ती आदि सुगन्धित द्रव्यों के हवन से पवित्र कर ले। फिर छाया पुरुष का विशेषज्ञ जिसे पृथ्वी स्थित धन की सूचना प्राप्त करनी है, वह स्नानादि से पवित्र हो लाल रंग की धोती और चादर पहनकर लाल रंग के आसन पर बैठकर लाल फूलों से पुलिंदिनी देवी की आराधना करें और किसी अभीष्ट मंत्र का दिन भर में जितना सम्भव हो उतना जाप करें। इस दिन अन्य काम का त्याग कर देना चाहिए। आवश्यक बाधाओं को दूर कर (पेशाब, मलत्याग आदि) हाथ पैर धोकर मंत्र जाप के कपड़ों को पहिनकर पुनः मंत्र जाप करना चाहिए। इस विधि से रात के एक बजे तक जाप करते रहना चाहिए। अनन्तर सफेद फूलों पर “ओं ह्रीं विश्वमालिनी विश्वप्रकाशिनी मध्ये रात्रौ छायापुरुषं प्रकट्य प्रकट्य ओं ह्रीं ह्रीं ह्रौ हैः ह्रुँ फट् स्वाहा” इस मंत्र का 21

वार उस अखण्ड दीपक के प्रकाश में छाया पुरुष का दर्शन करना चाहिए। यदि छाया पुरुष हँसता हुआ डिखलाई पड़े तो धन मिलेगा और रोता हुआ या आवाज करता हुआ डिखाई पड़े तो धन नहीं मिलेगा। छाया पुरुष का सिर जिस दिशा में हो उसी दिशा में पृथ्वी स्थित धन को समझना चाहिए। जिन व्यक्तियों को छाया पुरुष देखने का अभ्यास नहीं है वे साधारण व्यक्ति उपर्युक्त विधि से छाया पुरुष का दर्शन कर सकते हैं। मंत्र जाप में किसी प्रकार की त्रुटि न हो तो वह छाया पुरुष धन के बारे में किस प्रकार प्राप्ति होगी और कब होगी आदि समस्त बातें धीरे-धीरे आराधक के कान में कह देता है। यदि कारण वश साधारण व्यक्तियों को छाया पुरुष के दर्शन नहीं भी हों तो उपर्युक्त विधि से जाप करने पर धन के मिलने का आभास अवश्य मिल जाता है।

### संगोष्ठी में उपस्थित विशाल महिला समुदाय



3

### मद्रबाहु संहिता में वर्णित मृत्यु लक्षण

अरिष्ट उत्पन्न का समय

जिस व्यक्ति का शीश्र ही मरण होने वाला है उसके शरीर में पिण्डस्थ, पदरथ, और रूपस्थ ये तीन प्रकार के अरिष्ट उत्पन्न होते हैं।

पिण्डस्थ अरिष्ट

शरीर में अप्राकृतिक रूप से अनेक प्रकार की विकृति होने को शास्त्र के जानने वालों ने पिण्डस्थ अरिष्ट कहा है।

सात दिन में मृत्यु होने का लक्षण

सुकुमारं करयुगलं कृष्णं कठिनमवेद्यदायस्य ।

न स्फुटन्ति वाङ्गुलयस्तस्यारिष्टं विजानीहि ॥1 3 ॥

यदि किसी के दोनों सुकुमार हाथ अकारण ही कठोर और कृष्ण हो जाएँ तथा अंगुलियाँ सीधी न हों तो उसे अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् उक्त लक्षण वाले व्यक्ति का मरण सात दिन में ही होता है।

स्तव्धं लोचनयोर्युग्मं विवर्णः काष्ठवत्तनुः।

प्रस्वेदो यस्य भालस्थः विकृतं वदनं तथा ॥1 4 ॥

जिसके दोनों नेत्र स्तव्ध अर्थात् विकृत हो जायें और शरीर विकृत वर्ण और काठ के समान कठोर हो जाये और मर्तक के ऊपर अधिक पसीना आवें तथा मुख विकृत हो तो अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् सात दिन में मृत्यु होती है।

निर्निमित्तं मुखे हासः चक्षुभ्या जलविन्दवः।

अहोरात्रं स्वन्त्येव नखरोमाणि यान्ति च ॥1 5 ॥

बिना किसी कारण के अधिक हँसी आवें, आँखों में आँसू व्याप्त रहें और नख और रोम के छिद्रों से पसीना निकलता हो तो सात दिन में मृत्यु समझनी चाहिए।

सुकृष्णा दशना यस्य न घोषाकर्णनं पुनः ।

एतैश्चिह्नस्तु प्रत्येकं तस्यायुर्दिनसप्तकम् ॥1 6 ॥

जिसके दांत काले हो जाये तथा कर्ण छिंदों को बन्द करने पर भीतर से होने वाली आवाज सुनाई न पड़े तो सात दिन की आयु समझनी चाहिए।

### 15 आदि दिनों में मृत्यु होने का लक्षण

निर्गच्छं स्तुष्यते वायुस्तस्य पक्षैकजीवनम् ।

नेत्रयोर्मीलनाज्योतिरहस्यौ दिनसप्तकम् ॥17॥

यदि शरीर से निकलती हुई वायु बीच में टूट-सी जाये तो पन्द्रह दिन की आयु शेष समझनी चाहिए अथवा बाहर निकलने में श्वास तेज हो तो पन्द्रह दिन आयु समझनी चाहिए। दोनों नेत्रों के अग्रभाग को थोड़ा-सा बन्द करने पर उनमें से जो ज्योति निकलती है यदि वह ज्योति निकलती हुई दिखलायी न पड़े तो सात दिन की आयु समझनी चाहिए।

भूर्मध्ये नासिका जिह्वा दर्शने च यथाक्रमम् ।

नवज्येकदिनान्येव सरोगी जीवति ध्रुवम् ॥18॥

यदि भौंह के मध्यभाग को न देख सके तो नौ दिन, नासिका न दिखलायी पड़े तो तीन दिन और जिह्वा न दिखलायी पड़े तो एक दिन की आयु होती है, अर्थात् उस रोगी की पूर्वोक्त दिनों में मृत्यु हो जाती है।

पाणिपादोपरि क्षिप्तं तोयं शीघ्रं विशुष्यति ।

दिनत्रयं च तस्यायुः कथितं पूर्वसूरिभिः ॥19॥

पैरों के ऊपर डाला गया जल यदि शीघ्र ही सूख जाय तो उसकी तीन दिन की आयु समझनी चाहिए ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है।

### शीघ्र मृत्यु का लक्षण

निविश्रामो मुखात्स्वासो मुखाद्रक्तं पतेद्यदा ।

यदृहस्तिः स्तब्धः निष्पन्दा वर्णचैतन्यहीनता ॥20॥

जिसके मुख से अधिक श्वास निकलती हो, मुख से रक्त गिरता हो, दृष्टि स्तब्ध और निष्पन्द हो तथा मुख विवर्ण और चैतन्यहीन दिखलायी पड़े तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए।

स्थिरा ग्रीवा न यस्याति सोत्स्वासोहदि रुध्यते ।

नासावदनगृह्येभ्यः शीतलः पवनो वहेत् ॥21॥

जिसकी गर्दन टेढ़ी हो जाय या श्वास का हृदय में रुक जाना तथा मुख, नाक और गुप्तेन्द्रिय से शीतल वायु का निकलना शीघ्र मरण सूचक है।

न जानाति निजं कार्यं पाणिपादौ च पीड़ितौ ।

प्रत्येकमेभिस्त्वरिष्टं स्तस्य मृत्युभवेल्लघुः ॥22॥

हाथ, पैर आदि के पीड़ित करने पर भी जिसे पीड़ा का अनुभव न हो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है।

एक माह में मृत्यु का लक्षण

स्थूलो याति कृशत्वं कृशोऽप्यकस्माच्च जायते स्थूलः ।

स्थगस्थगति यस्य कायः कृतशीर्षहस्तो निरन्तरं शेते ॥23॥

अकरमात् स्थूल शरीर का कृश हो जाना तथा कृश शरीर का स्थूल हो जाना और शरीर का काँपने लगना एवम् अपने शरीर पर हाथ रखकर सोना एक मास की आयु का द्योतक है।

ग्रीवोपरि करवन्ध्यो गच्छत्यङ्गुलीभिर्द्वन्धं च ।

क्रमणोदयमहीनस्तस्यायुर्मासपर्यन्तम् ॥24॥

गाढ़ बन्धन करने के लिए जिसकी अंगुलियाँ गले में डाली जायें पर अंगुलियों से हड़ बन्धन न हो सके तो ऐसे व्यक्ति की आयु एक महीना अवशेष रहती है।

युग्मं अधरनखदशनरसनाः कृष्णा भवन्ति विना निमित्तेन ।

षड्भेद भवेता तस्यायुर्मासपरिमाणम् ॥25॥

बिना किसी निमित्त के ओठ, नख, दन्त और जिह्वा आदि काली हो जाय तथा पड़रस का अनुभव न हो तो उसकी आयु एक महीना शेष होती है।

ललाटे तिलकं यस्य विद्यमानं न दृश्यते ।

जिह्वा यस्यातिकृष्णत्वं मासमेकं स जीवति ॥26॥

जिसके मस्तक के ऊपर लगा हुआ तिलक किसी को दिखलायी न पड़े तथा जिह्वा अत्यन्त काली हो जाय तो उसकी आयु एक महीने की होती है।

चार माह में मृत्यु होने का लक्षण

धृतिमदनविनाशो निद्रानाशोऽपि यस्य जायेत ।

भवति निरन्तरं निद्रा मासचतुष्कन्तु तस्यायुः ॥27॥



हो, हाथ पैर नहीं चलते हों तो उस व्यक्ति को मृत समझना चाहिये ।

‘निकट मृत्यु के चिह्न’

वयणेण पड़इ रुहिं वयणेण अनिगमेइ अइसासो ।

विस्सामेण विहीणो जाणह मच्छु लहुं तस्स ॥२६॥

यदि मुख से खून निकलता हो, मुख से ही तेजी से श्वास निकलती हो और खूब छटपटा रहा हो तो मृत्यु निकट समझनी चाहिये ।

‘एक मास अवशेष आयु के चिह्न’

अहर—नहा तह दसणा करुणा जइ हुँति कारणविहीणा ।

मासाध्वंतर आं निदिदुं तस्स सत्थम्मि ॥२७॥

आचार्य यहाँ बतलाते हैं कि पूर्व शास्त्रों में बताया गया है कि बिना किसी कारण के यदि नख ओठ और दाँत काले पड़ जायें तो एक मास की आयु अवशिष्ट समझनी चाहिए ।

निकट मृत्यु ज्ञात करने के अन्य चिह्न

मुह—जीहं चिअ किण्हं गीवा लहु पटइ कारणं णत्थि ।

रुभइ हिअइ सासो लहु मच्छु तस्स जाणेह ॥२८॥

यदि किसी व्यक्ति का मुख और जीभ काली पड़ जाये, गर्दन बिना किसी कारण के झुक जाये तथा बार—बार सांस रुकने लगे तो उसका शीघ्र मरण समझना चाहिये ।

‘सात दिन की अवशेष आयु के चिह्न’

कर—चरण अंगुलीणं संधिपएसा (य) णेह कुद्वृति ।

न सुणेइ कण्णधोंस तस्साऊ सत्त दिअहाइ ॥२९॥

जिसके हाथ और पैर की अंगुलियों के जोड़े न कड़के और जो कानों के भीतर होने वाली आवाज को नहीं सुन सके उसकी सात दिन की आयु होती है ।

‘एक मास अवशेष आयु वाले के चिह्न’

अरिष्ट शास्त्र के मर्मज्ञों का कथन है कि जिसकी जीभ की नोंक (अग्रभाग) विल्कुल काली हो जायें और ललाट पर की बढ़ी रेखाएँ मिट जायें वह एक मास जीवित रहता है ।

‘तीस दिन अवशिष्ट आयु वाले चिह्न’

कर—चरणेपु अ तोयं दिनं परिसुअइ जस्स निवृत्तं ।

सो जीवइ दिअहतयं इइ कहिअं पुब्सुरीहि ॥३१॥

जिसके हाथ और पैरों पर जल रखने से सूख जायें वह निःसन्देह तीस दिन जीवित रहता है, ऐसा पूर्वाचार्यों का कथन है ।

‘निकट मृत्यु प्रकर्त करने वाले अन्य चिह्न’

वयणम्भ नासिआए तहगुज्जे जस्स सीयलो पवणो ।

तस्स लहु होइ मरणं पुब्यायरियेहि णिदिदुं ॥३२॥

पूर्वाचार्यों के द्वारा यह भी कहा गया है कि जिसके मुख, नाक तथा गुप्त इन्द्रिय से शीतल वायु निकले वह शीघ्र ही मरता है ।

‘पन्द्रह दिन की आयु व्यक्त करनेवाले शारीरिक रिष्ट’

देहं तेयविहीणं निस्सरमाणो हु उद्गुए सासो ।

पंचदस तस्स दियहे णिदिदुं जीविअं इत्थ ॥३३॥

यह कहा जाता है कि यदि शरीर कंतिहीन हो और बाहर निकलने में श्वास तेज हो तो वह इस संसार में 15 दिन तक जीवित रहता है ।

‘आयु के सात दिन अवशिष्ट रहने के शारीरिक चिह्न’

अनिमित्तं जलविंदु नयणेसु पडंति जस्स अणवरयं ।

देसणा हवंति कण्णाजो जीवइ सत्त दिअहाइ ॥३४॥

यदि अकारण ही नेत्रों से अनवरत पानी निकलता रहे और दाँत काले पड़ जायें तो सात दिन की आयु अवशिष्ट समझनी चाहिये ।

‘मृत्यु के दो दिन पहले प्रकट होने वाले शारीरिक चिह्न’

दिद्वै चप्पियाए ताराविं ण जस्स भमडेइ ।

दिण जुअमज्जे मरणं णिदिदुं तस्स निवृत्तं ॥३५॥

यदि नेत्रों के संचालन के साथ पुतलियाँ नहीं धूमती हों तो निःसन्देह दो दिन के भीतर मरण होता है ।

मृत्यु के चार माह पूर्व होने वाले शारीरिक मरणचिन्ह  
धिदिणासो सदिणासो गमणविणासो हवेइ इह जस्स।  
अइणिदणासो मासचउक्तउ सो जियइ॥३६॥

जिस व्यक्ति के धैर्य और स्मृति नष्ट हो जाये और जो चलने से असमर्थ हो जाये जिसे अत्यन्त नींद आती हो अथवा नींद ही नहीं आती हो तो वह चार मास जीवित रहता है।

‘शारीरिक चिन्हों द्वारा एक दिन, तीन दिन और नौ दिन की आयु को ज्ञात करने के नियम’

ए हु पिच्छइ णियजीहा एयदिणं होइ तस्स इह आऊ ।  
नासाए तिणि दि अहा णव दि अहा भमुहमज्ज्ञेण ॥३७॥

यदि कोई अपनी जिह्वा न देख सके तो एक दिन, नाक न देख सकने पर तीन दिन और भौंह के मध्य भाग न देख सकने पर नौ दिन जीवित रहता है।

‘सात दिन एवं पाँच दिन की आयु को ज्ञात करने के नियम’  
कण्णा धोसे सत्त यलोयणताराअंद सणे पंच।  
दिअहाई हवइ आऊ इय भणिअं सत्थइत्तेहि॥३८॥

कानों के भीतर होने वाली ध्वनि को न सुनने पर सात दिन और आँखों के तारा—आँखों के भीतर रहने वाले मसूर के समान प्रकाश को, जो नाक के पास के कोनों के ढबाने से प्रकट होता है, न देख सकने पर पाँच दिन की आयु अवशेष रहती है, ऐसा शास्त्र मर्मज्ञों का कथन है।

बद्धं चिअ कर जुअलं न हु लग्गइ संपुडेण निव्वंतं ।  
विहडेइ अइसएणं सत्त दिणाइं उ सो जियइ ॥३९॥

यदि हाथ, हथेली को मोड़ने पर इस प्रकार न सट सके, जिससे चूल्हा बन जाये और एक बार ऐसा करने पर अलग करने में देर लगे तो सात दिन की आयु समझनी चाहिये।

इदि रिडगणं भणित्वं जिणमयणसारेण ।  
णिसुणिज्जहु स्पयत्वं कहिज्जमाणं समासेण ॥४०॥

जिनदेव के उपदेशानुसार निर्णीत पिण्डस्थ शारीरिक रिष्टों का कथन किया गया है। अब संक्षेप में कथित पदस्थ-बाह्य निमित्तों के द्वारा संकेतिक रिष्टों का वर्णन किया जाता है।

### ‘पदस्थ रिष्टका लक्षण’

ससि—सूर—दीवयाई अरिदुरुवेण पिच्छाए जं जं ।  
तं उ भणिज्जइ रिदुं पयत्थस्वं मुणिदेहि ॥४१॥

यदि कोई अशुभ लक्षण के रूप में चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु को देखता है तो ये सब रिष्ट मुनियों के द्वारा पदस्थ-बाह्य वस्तुओं से सम्बन्धित कहलाते हैं।

### ‘पुनः पिण्डस्थ रिष्ट की परिभाषा’

णाणाभेऊ विभिन्नं तं पि हवे इत्थ विवियप्पेण ।  
णाणासत्थमएण भणिज्यमाणं निसामेह ॥४२॥

इसमें सन्देह नहीं कि अनेक प्रकार की वस्तुओं के द्वारा इसकी पहचान हो सकती है। नाना शास्त्रों के द्वारा जिनका वर्णन किया गया है उनका यहाँ कथन किया जाता है, ध्यान से सुनो।

### ‘पदस्थ रिष्टज्ञान करने की विधि’

पक्खालिऊण देहं सियवत्थवि लेवणो सियाहरणो ।  
युजित्ता जिणनाहं अहमंतिअ णियसुहं पच्छा ॥

ऊँ हीं णमो अरिहंताणं मले—२ विमले—२ उदरदेवी इटि मिटि पुलिंहिणी स्वाहा ।

प्रक्षाल्य देहं सितवस्त्रविलेपनः सिताभरणः ।  
पूजयित्वा जिननाथमभिमन्त्रं निजमुखं पश्चात् ॥४३॥

स्नान कर, श्वेत वस्त्र धारण कर सुगन्धित द्रव्य तथा आभृषणों से अपने को सजाकर एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजा कर “ओं हीं णमो अरिहंताणं कमले—२ विमले—२ उदरदेवी इटिमिटि पुलिंहिणी स्वाहा ।” इस मंत्र का—

इअ मंतेण मंतिय णियवयणं एयवीस वाराओ ।  
पुण जोएउ पयत्वं रिदुं जिणासासणे भणियं ॥४४॥

इक्तीस बार उच्चारण कर अपने मुख को पवित्र कर जिन शास्त्रों में वर्णित पिण्डस्थ वाह्य वस्तु सम्बन्धी रिष्टों का दर्शन करना चाहिये ।

‘पिण्डस्थ रिष्टों द्वारा एक वर्षकी आयु का निश्चय’

एकको वि जए चंदो वहुविहस्त्वेहि जेणियच्छेइ ।

छिद्रोह तस्स आऊ इगवरिसं होइ निव्भन्तं ॥४५॥

जो कोई संसार में एक चन्द्रमा को नाना रूपों में तथा छिद्रों से परिपूर्ण देखता है, उसकी आयु निश्चित रूप से एक वर्ष की होती है।

तह सूरस्स व विम्ब णिएइ छिद्रं अणेयस्त्वेहि ।

तस्स भणिज्जइआऊ वरिसेगं सत्थइत्तेहि ॥४६॥

निमित्त शास्त्र के मर्मज्ञ विद्वानों का कथन है कि जो व्यक्ति सूर्य विम्ब को छिद्रपूर्ण और अनेक रूपों में देखता है, वह एक वर्ष जीवित रहता है।

रवि चंद्रं तह तारा विच्छाया वहुविहा य छिद्रा य ।

जो णियइ तस्स भणियं वरिसेगं जीविअं इत्थ ॥४७॥

जो सूर्य, चन्द्र एवं तारों को कान्तिस्वरूप परिवर्तन करते हुए एवं नाना प्रकार से छिद्रपूर्ण देखता है, उसका जीवन एक वर्ष का कहा गया है।

‘पदस्थ रिष्टों द्वारा निकट मृत्यु का ज्ञान’

दीवयसिहा हु एगा अणेगरूवा हु जो णियच्छेइ।

तस्स लहु होइ मरणं किं बहुणा इह पलावेण ॥४८॥

जो व्यक्ति दीपक के प्रकाश की लों को अनेक रूप में देखता है, वह तुरन्त मर जाता है। इस सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं।

उत्तमदुमं हि पिच्छइ हिमद्वृढमिवाणलेण वा नूणं ।

लहु होइ तस्स मरणं पर्यंपियं मुणिवरिदेहि ॥४९॥

त्रेष्ठ मुनियों का कथन है कि जो व्यक्ति अत्यधिक उन्नत वृक्ष ताढ़ वृक्ष को अग्नि या शीत से जलते हुए देखे तो उसकी मृत्यु निकट समय में होती है।

“पदस्थ रिष्टों द्वारा तीन मास की आयु के चिह्न”

सत्त दिणाइँ णियच्छइ रवि-ससि-विम्ब जो सुहं विम्बं ।

भ्रममाणं तस्साऊ होई तिमासं न सन्देहः ॥५०॥

यदि सात दिनों तक रवि, शशि एवं ताराओं के विम्बों को नाचता हुआ देखें तो निसंदेह उसका जीवन केवल तीन मास का होता है।

‘सूर्य, चन्द्र दर्शन, द्वारा चार दिन एवं घटिका शेष आयु के ज्ञात करने के चिह्न’

रवि-चंदाणं पिच्छइ चउसु विदिसासु विम्बाइं ।

चउघडिआ चउदिणाइँ चउदिसौं तह य चउषिद्वं ॥५१॥

जो सूर्य या चन्द्रमा के चार विम्बों को चारों विदिशाओं के कोणों पर देखे वह चार घटिका एक घण्टा छत्तीस मिनिट जीवित रहेगा और दोनों के चार टुकड़े चारों दिशाओं में देखें वह चार दिन जीवित रहेगा।

‘छः मास, दो मास, एक मास और पन्द्रह दिन के आयु-योतक-चिह्न’

पञ्जाम्मि तहा छिद्रं मासेकं छत्ति तह य जुगलं च ।

जह कमसो सो जीवइ दह दिअहाइं पबोदवा (य पञ्चं वा) ॥५२॥

यदि कोई व्यक्ति सूर्य और चन्द्र के चारों दिशा के टुकड़ों या छिद्र दर्शन करे तो वह क्रमशः एक मास, छः मास, दो मास और दस या पन्द्रह दिन जीवित रहता है। पूर्व दिशा में सूर्य या चन्द्रमा के टुकड़े या छिद्र देखने से एक मास आयु पश्चिम दिशा में सूर्य या चन्द्रमा के टुकड़े या छिद्र देखने से छः मास आयु, उत्तर दिशा में सूर्य या चन्द्रमा या टुकड़े या छिद्र दर्शन करने से दस या पन्द्रह दिन की आयु समझनी चाहिये ।

‘वारह दिन की आयु योतक रिष्ट’

बहुछिद्वं निवडंतं रवि-ससि-विम्ब निअच्छए जोहु ।

भूमीए तस्साऊ वारस दियहाइ णिद्विद्वो ॥५३॥

यदि कोई व्यक्ति रवि और चन्द्रमा के विम्बों को अनेक छिद्रों से पूर्ण या गिरते हुए देखे तो उसकी आयु पृथ्वी पर 12 दिन की कही गयी है।

‘चार दिन की अवशेष आयु के रिष्ट’

ताराओं रवि-चन्द्र नीलं पिच्छइ जोहु तस्साऊ ।

दियहचउकं दिद्वो इय भणिअं मुणिवरिदेहि ॥५४॥

यदि सूर्य, चन्द्रमा और तारा विम्ब नीले दिखलाइ पड़ें तो मुनियों के द्वारा

उसका जीवन चार दिन का कहा गया है।

‘छः दिन की अवशेष आयु के रिष्ट’  
धूमायंतं पिछइ रवि-ससि विम्बं च अहव पजलंतं ।  
सो छह दिणाइ जीवइ जल-सहिरं चिँ पमुच्वंतं ॥५५॥

यदि कोई व्यक्ति सूर्य और चन्द्र बिम्ब में से धुआँ निकलता हुआ देखे, सूर्य और चन्द्र बिम्ब को जलते हुए देखे अथवा सूर्य और चन्द्र बिम्ब में से जल या रूप निकलते हुए देखे तो वह छः दिन जीवित रहता है।

चन्द्र (ससि) सूराण (ण) पिछइ कज्जलरेह व्य मज्जदेसमि।  
जो जीवइ छम्मासं सिँ दुं सत्थागु सारेण ॥५६॥

प्राचीन शास्त्रों में बताया गया है कि जिसे सूर्य और चन्द्रमा के मध्य भाग में काले रंग या सुरमई रंग की रेखा दिखलायी पड़े वह छः मास जीवित रहता है।

भिन्नं सरैसि पिछइ रवि ससि विम्बं च अहव खण्डं च।  
तस्स छम्मासं आऊ इअ सिँ दुं पुव्वपुरिसेहिं ॥५७॥

पूर्वाचार्यों का कथन है कि जो व्यक्ति सूर्य या चन्द्रमा के बिम्ब को वाणों से विन्दू देखे या उनका कोई अंश देखे तो वह छः महीने जीवित रहता है। उसकी छः महीने की आयु शेष रहती है।

‘निकट मरण घोतक चिह्न’  
पभणेइ निसा दिअहं दिअहं रयणी हु जो पर्यपेइ ।  
तस्स लहुहोइ मरणं किं वहुण इय वियपेहिं ॥५८॥

यदि किसी व्यक्ति को दिन की रात और रात का दिन दिखलाई पड़े और वह वैसा ही कहे भी तो, उसकी मृत्यु निकट समझनी चाहिए, इसमें सन्देह करने का स्थान ही कहाँ है?

‘तत्क्षण के मृत्यु चिह्न’  
दिव्वसिही पजलन्तो न मूणइ पभणेइ सीचलो एसो ।  
सो मरइ तामे काले जइ रक्खइ चियसणाहो वि ॥५९॥

जो चमकते हुए सूर्य का अनुभव नहीं करता, बल्कि उल्टा उसे ठण्डा बतलाता है, वह

इन्द्र के द्वारा रक्षा किये जाने पर भी उसी क्षण मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

‘सात दिन की आयु के घोतक चिन्ह’  
कुच्चसुवरिभ्म जलं दीयतं दीणतयं च परिसुसई।  
सो जीवइ सत्तदिणं किण्हे सुकम्मि विवरीए ॥६०॥

जिसकी मूँछों पर पानी रखने से तीन दिन के अन्त तक सूख जाता है वह सात दिन जीवित रहता है, यह रिष्ट प्रक्रिया कृष्ण पक्ष की है। शुक्ल पक्ष में इससे विपरीत अर्थात् तीन दिन तक पानी के नहीं सूखने पर सात दिन की आयु समझना चाहिये।

भरिणं तंदुलाणं रज्जई कूरं (य) अंजली तस्स।  
ऊणे अहि आपुणं जइ भत्तो होइ लहु मच्चू ॥६१॥

एक अंजली चावल लेकर भात बनाया जाय, यदि पक जाने के अनन्तर भात उस अंजली परिणाम से कम या अधिक हो तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिये।

भोअण—सयण—गेहे व हड्डं मिल्हंति जस्स रिट्ट्याऊ ।  
धावन्ति हु गहिएगं कुणंति गेहं व लगु मच्चू ॥६२॥

यदि किसी के रसोई घर या शयन गृह में हड्डी रखी हो, या हड्डी लेकर कोई भागता हुआ टष्टिगोचर हो तो वह व्यक्ति या उसके परिवार का कोई अन्य व्यक्ति अवश्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

‘एक मास की आयु अवगत करने के रिष्ट’  
अहिमंतिझण सुतं चलणं मविझण तेण संझाए ।  
पुणरवि पहायमविए ऊणे सुतम्मि जियइमासिकं ॥६३॥

मन्त्र “ओं ही णमो अरंहताणं कमले-कमले विमले-विमले उदरदेवि इटिमिटि पुलिंदिनि स्वाहा” से सूत को मंत्रित कर उससे सायंकाल में अपने सिर से लेकर पैर तक नापा जाये और प्रातःकाल पुनः उसी सूत से सिर से पैर तक मापा जाये, यदि प्रातः काल नापने पर सूत छोटा हो तो वह व्यक्ति एक मास जीवित रहता है।

‘निकट मृत्यु घोतक अन्य चिन्ह’

असिय—सिय—रत्त—पीया दसणा अन्नस्य अप्पणो अहवा।

पेच्छइ दप्पणयंमि य लहु मरणं तस्स निदिट्ठं ॥6 4 ॥

यदि कोई व्यक्ति दर्पण में अपने या अन्य व्यक्ति के दांतों को काला, सफेद, लाल या पीले रंग का देखे तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिये।

वी आए ससिविंबंणिअइ तिसंगं च सिंग परिहीण।

उवरम्मि धूमछायं अडरखंडं सो न जीवेइ ॥6 5 ॥

शुक्ल पक्ष की द्वितीया को यदि कोई चन्द्रमा के बिंब तीन कोण के साथ या बिना कोण के देखे या धूमिल दिखलाई पड़े तो वह व्यक्ति दिन के कुछ ही अंश तक जीवित रहता है।

‘एक मास की अवशेष आयु के रिष्ट’

अहव मयंकविहीणं मलिणं चंदं च पुरिससारिच्छं।

सो जिअइ मासमेगं इय दिट्ठं पुब्सूरीहिं ॥6 6 ॥

प्राचीन आचार्यों द्वारा कहा गया है कि यदि कोई चन्द्रमा की मृग चिन्ह से रहित, धूमिल और पुरुषाकार में देखे तो वह एक मास जीवित रहता है।

### बिल्ली - जिसने एक रानी को बचा लिया

मेरी गैलेन्ट के फ्रान्सीसी गर्वनर की 3 वर्षीय पुत्री — फ्रैन्कोइस डि-ऑविग्ने— एक द्वीप की यात्रा के दौरान वीच समुद्र में मृत घोषित कर दी गई और उसके शव को एक बोरी में सी लिया गया — समुद्र में गिराने के लिये। अन्तिम संस्कार के दौरान “म्यूं” की एक आवाज से यह पता चला कि बच्ची का पालतू जीव बिल्ली का बच्चा बोरी में कुलवुला रहा है, तभी कप्तान को याद आया कि बिल्लियाँ शव से दूर रहती हैं, उसने बच्ची की पुनः जाँच करायी और वह जीवित पाई गई। बच्ची आखिरकार ठीक हो गई और फ्रांस के किंग लुईस चौदहवे की रानी बनकर 84 वर्ष की उम्र तक जीवित रही, जो इतिहास में ‘मारकुईस डि मेन्टेनॉन’ के रूप में प्रसिद्ध है।

### चरक संहिता में वर्णित रिष्ट (मृत्यु का ज्ञापक लक्षण)

4

#### विभिन्न रिष्ट

इन्द्रियस्थान का विषय— इस स्थान में वर्ण, स्वर, गन्ध, रस, स्पर्श, चक्षु, श्रोत्र, ग्राण, रसन, स्पर्शन, भवित्ति,(इच्छा) शौच, (पवित्रता) शील, (सहज स्वभाव) आचार, (शास्त्र विहित कर्म का पालन)स्मृति, आकृति, बल, ग्लानि, तन्द्रा, आरम्भ, (रोग का आरम्भ) गौरव, लाघव गुण, आहार का परिणाम, उपाय (रोगों का होना) अपाय (रोगका नाश) रोग पूर्वरूप वेदना, उपद्रव, छाया (देह की छवि) प्रतिच्छाया (छाया) स्वप्नों का देखना दूताधिकार तथा मार्ग में उत्पात सम्बन्धी भाव रोगिकुल में शुभाशुभ सूचक भावों की विविध अवस्थाएँ, भेषजसंवृत्ति (वैद्य द्वारा प्रयुक्त औषध का रोगी के शरीर पर प्रभाव) भेषजविकारयुक्ति (क्या औषधि विशेष किसी रोग विशेष में प्रयोग कराया जा सकता है। इन परीक्ष्य भावों की आयु के प्रमाणों द्वारा परीक्षा करनी चाहिए। इन सब भावों से सम्बन्ध रखने वाले रिष्ट लक्षण इस स्थान में कहे जायेगे।

#### स्वाश्रित पराश्रित रिष्ट

इन परीक्ष्य विषयों में से कुछ एक तो पुरुष में (जिसकी आयु का प्रमाण जानता है) आश्रित नहीं होते और कुछ एक आश्रित होते हैं। जैसे दूताधिकार वा मार्ग के उत्पातकर भाव आदि जिस आतुर की आयु का प्रमाण जानना है उस पुरुष में आश्रित नहीं। और वर्ण स्वर आदि आश्रित होते हैं। जो भाव उस पुरुष में आश्रित नहीं उनकी उपदेश और युक्ति की अनुमान द्वारा परीक्षा करनी चाहिए। और जो पुरुष में आश्रित होते हैं उन्हें प्रकृति और विकृति द्वारा परीक्षा करे।

#### प्राकृतिक रिष्ट

प्रकृति—जाति, कुल, देश, काल, उम्र तथा प्रति व्यक्ति पर आश्रित होती है। यदि मानवजाति में प्राणी का जन्म है तो उसकी मानव प्रकृति होगी। यदि जाति से ब्राह्मण आदि जातियों का ग्रहण हो तो वहाँ जन्म होने से उसकी प्रकृति ब्राह्मण आदि के सदृश होगी। इसे जातिप्रसक्ता (जाति से सम्बन्ध रखने वाली) प्रकृति

कहेंगे। जो वंशपरम्परा से मनुष्य को प्रकृति से प्राप्त होती है उसे कुलप्रसक्ता वा कुलगत प्रकृति कहते हैं। किसी देशविशेष में जन्म होने से जो विशेष प्रकृति होती है उसे देशानुपातिनी प्रकृति कहते हैं। काल से सांवत्सरिक और आवर्थिक ढांगों काल लिये जाते हैं। वसन्त आदि क्रतु वा सत्ययुग आदि काल में जो विशेष प्रकृति होती है उसे कालानुपातिनी प्रकृति कहते हैं। इसी प्रकार रोगिता और निरोगिता आदि अवस्था में जो विशेष प्रकृति होती है उसे भी कालानुपातिनी कहते हैं। बचपन, जवानी, वृद्धावस्था आदि में जो विशेष-विशेष प्रकृतियाँ होती हैं उन्हें वयोऽनुपातिनी कहते हैं। एवं प्रत्येक व्यक्ति की अपनी दो नियत प्रकृति हैं वह प्रत्यात्मनियत कहलाती है। इस प्रकार प्रकृतियाँ छह बातों पर निर्भर होती हैं। वृद्धोग्भट ने इन छह के साथ-साथ बल को भी कहा है। इस प्रकार वह प्रकृति को सात प्रकार की मानता है। अष्टाङ्गसंग्रह शरीर 8 अ. में—

तथा पुनः सप्त प्रकृतयो जातिकुलदेशकालवयोबलप्रत्यात्मसंश्रयाः ।

परन्तु बल के आश्रित प्रकृति को मानना कहाँ तक ठीक है यह विद्वानों को स्वयं तर्कणी करनी चाहिए। बल स्वयं ही जाति आदि भावों पर आश्रित है, उसको पृथक् गिनना हम तो उचित नहीं समझते ।

उन-उन पुरुषों के वे वर्ण पवित्रता शील आचार आदि जाति कुल देश काल वयस् तथा अपने-अपने (प्रति व्यक्ति) पर आश्रित देखे जाते हैं।

### विकृति रिष्ट

**विकृतिः पुनर्लक्षणनिमित्ता च लक्ष्यनिमित्ता च निमित्तानुरूपा च ॥5॥**

विकृति तीन प्रकार की है। 1. लक्षणनिमित्त, 2. लक्ष्यनिमित्त और 3. निमित्तानुरूप ।

### 1. लक्षणनिमित्त विकृति

लक्षणनिमित्त विकृति उसे कहते हैं जिसके दैव के कारण उत्पन्न शरीर में लक्षण ही हेतु हों। अभिप्राय यह है कि पूर्वजन्म के कर्मों के कारण शरीर में कई प्रकार के लक्षण होते हैं। ये सामुद्रिक शास्त्रोक्त लक्षण हो सकते हैं। अथवा छाती सिर आदि अंगों की ठीक बनावट का न होना, नाखूनों पर रेखाओं का वा पुष्पों का दिखाई देना आदि लक्षणों का भी यहाँ ग्रहण है। वस्तुतः ये लक्षण केवल भावी व्याधि के निर्देशक होते हैं कारण नहीं होते। परन्तु दैव के कारण इन लक्षणों

की उत्पत्ति होती है और ये भावी व्याधि के निर्देशक होते हैं। कुछ लक्षण शरीर से सम्बन्ध होते हैं, जो उस-उस समय वहाँ आश्रय पाकर उस-उस विकार को उत्पन्न करते हैं। जैसे छाती की बनावट का ठीक न होना कालान्तर में राजयक्षमा का हेतु हो जाता है। यह लक्षणनिमित्तविकृति कहलाती है।

### 2. लक्ष्यनिमित्त विकृति

लक्ष्यनिमित्त विकृति वह होती है जिसका उक्त निदानों (निदानरथान) में निमित्त (कारण) पाया जाता है अर्थात् जैसे एक पुरुष ने रुक्ष लघु आदि गुणयुक्त द्रव्य का उपयोग किया तो वातज विकृति हो गयी। यह लक्ष्यनिमित्त विकृति कहलाती है। गंगाधर ने इसका अर्थ यूँ किया है— जिस विकृति का व्याधि आदि निमित्त पाया जाता है यह लक्ष्यनिमित्ता विकृति कहलाती है। ये निमित्त रोगों के निदान आदियों में कहे गये हैं और आगे कहे जायेंगे। गंगाधर ने 'विकृतिः पुनर्लक्षणनिमित्ता च लक्ष्यनिमित्ता च निमित्तानुरूपा च ।' के पश्चात् 'लक्ष्यं तावनिमित्तानुमानम्' यह पाठ अधिक पढ़ा है और इसका अर्थ इस प्रकार किया है कि निमित्त (कारण) से जिसका अनुमान किया जाय वह रोग आदि लक्ष्य कहलाता है। इसी अर्थ को मानकर 'लक्ष्य निमित्ता' की व्याख्या की है।

### 3. निमित्तानुरूपा विकृति

जो निमित्त से प्रयोजन का अनुसरण करती हो वह निमित्तानुरूपा विकृति कहलाती है। अर्थात् स्वयं निमित्त (कारण) की तरह कार्य को करती है। जिस निमित्तरहित विकृति को चिकित्सक आयु के प्रमाण ज्ञान का निमित्त मानते हैं और आयु के क्षय से उत्पन्न, मूमूर्ष पुरुष के मृत्यु की ज्ञापक जिस विकृति के अन्तर्गत आयु के लिए विद्वान् लोग कहते हैं और जिस विकृति का अवलम्बन करके हम मूमूर्ष पुरुष के पुरुषाश्रित लक्षणों (दूत आदि सम्बन्धी नहीं) का उपदेश करेंगे, वह निमित्तानुरूपा विकृति कहलाती है। 'अन्तर्गत' आयु से अभिप्राय उस आयु से जो लक्षणनिमित्त वा लक्ष्यनिमित्त विकृति से नहीं जानी जाती। अथवा 'अन्तर्गतस्य' के स्थल पर 'अन्तर्गतस्य' यह पाठ होने पर उसका अर्थ 'मुमूर्ष' व्यक्ति ही यह होगा। अर्थात् उस विकृति का निमित्त (कारण) नहीं कहा जा सकता। (अव्यक्त होने से) वह यदृच्छा (अचानक) से ही उत्पन्न हो जाती है और उस विकृति से हम आयु का प्रमाण बता देते हैं— कि इसे यह घण्टे, एक दिन वा

तीन मास पर्यन्त स्रावित रहना है इत्यादि । और विकृति को ही मृत्यु का होना बताया जाता है । यह संक्षेप से कहा है । विस्तार से उपदेश करते हुए आगे इसकी व्याख्या हो जाएगी ।

### वर्ण से रिष्ट ज्ञान

सबसे पूर्व वर्ण का आश्रय करके जो मुमूर्ष के लक्षण होते हैं वे कहे जायेंगे कृष्ण (काला) कृष्णश्याम (कालेपन की ओर सांवला) श्यामावदात (श्यामगौर अर्थात् न सांवला न गोरा अथवा गोरेपन की ओर सांवला) अवदात गोरा; ये शरीर के स्वाभाविक वर्ण होते हैं । गंगाधर ने कृष्णश्याम के स्थल पर 'श्याम' ही पढ़ा है । और जिन अन्य वर्णों को वर्णज्ञ पुरुष सादृश्य द्वारा अथवा नामान्तर से निर्देश करते हैं; उन्हें भी प्रकृति वर्ण जाने । अर्थात् पुरुषों की स्वस्थावरथा में जो इस प्रकार प्रयोग होता हो कि वह दूध के समान गोरा है वा कमल के समान गोरा है वा कोयल-सा काला है इत्यादि; वह सब प्रकृति वर्ण जानना चाहिए ।

नील (नीला), श्याम (जो प्रकृतिवर्ण में 'श्याम' पढ़ते हैं वे 'नीलश्याम' से एक वर्ण का ग्रहण करते हैं अर्थात् नीला और श्याम वर्ण मिला हुआ अथवा नीलवत् श्याम, ताम्रवर्ण, हरित (हरा) वर्ण, हारिद्रवर्ण (हल्दी का सा रंग), तथा शुक्लवर्ण (श्वेत-जैसा शिवत्रियों का होता है) ये शरीर के वैकारिक वर्ण हैं— विकृति से उत्पन्न होते हैं । इनके अतिरिक्त और भी वे सब वर्ण जो विकृति से पूर्व न हों और पीछे से उत्पन्न हो अर्थात् अनिमित्त ही उत्पन्न हो जायें उन्हें भी वैकारिक जानें ।

यदि आधे शरीर का स्वाभाविक वर्ण हो और आधे शरीर का विकृत वर्ण हो ये दोनों वर्ण सीमा में विभक्त दिखाई दें, चाहे वे वाम दक्षिण विभाग से विभक्त हों, चाहे पूर्व (सम्मुख) पश्चिम (पृष्ठ) विभाग से विभक्त हों, चाहे अन्दर बाहर विभाग से विभक्त हों, चाहे ऊपर नीचे के विभाग से विभक्त हों, उसे रोगी के लिए अरिष्ट (मरणानुमापक लक्षण) जानना चाहिए ।

### मुख विकृति से रिष्ट ज्ञान

इसी प्रकार यदि रोगी के मुख के प्रकृति वर्ण और विकृतिवर्ण सीमा में विभक्त हों तो वह भी अरिष्ट हैं । अर्थात् यदि मुंह के अन्दर एक आधे में प्रकृति वर्ण हो और दूसरे आधे में विकृतिवर्ण हो तो वह रोगी मुमूर्ष होगा । यह सीमा किसी

भी दशा में हो सकती है चाहे ऊपर नीचे हो, चाहे सामने पीछे हो, चाहे बाम दक्षिण हो, चाहे अन्दर बाहर हो ।

वर्णभेद द्वारा ही ग्लानि, हर्ष, रुक्षता, स्नाधता की भी व्याख्या हो गई है ।

अर्थात् यदि शरीर वा मुख के एक ओर के आधे भाग में ग्लानि और दूसरे में हर्ष हो वा एक और भाग में रुक्षता और दूसरे में रिनाधता हो और दोनों मर्यादा में विभक्त दिखाई दें तो उन्हें भी अरिष्ट लक्षण जानना ।

यदि रोगी के मुख पर पिलु व्यञ्जितिलकालक (तिल) अथवा पिङ्काओं में से कोई एक हठात् उत्पन्न हो जाये तो उसे भी अच्छा लक्षण न जानना चाहिए । वह भी रिष्ट लक्षण है ।

जिन रोगियों का बल वर्ण तथा इन्द्रियशक्ति हीन हो गई है उनके नख, नेत्र, मुख, मूत्र, पुरीष, हाथ, पैर, होठ आदियों में भी यदि कहे हुए वैकारिक वर्णों में से किसी वर्ण का प्रादुर्भाव हो तो वह आयुःक्षय का लक्षण होता है ।

इसके अतिरिक्त जिस रोगी के बल, मांस आदि क्षीण हो रहे हैं उस पुरुष के शरीर में कोई अभूतपूर्व (जो वैकृतावरथा से पूर्व नहीं था) वर्ण सहसा अनैमित्तिक (निमित्त के बिना ही) उत्पन्न हो जाए उसे भी अरिष्ट जानें ।

### स्वर निमित्त से रिष्ट ज्ञान

स्वराधिकार-हंस क्रौञ्ज (कूँज पक्षी) नेमि (चक्र- पहिये की नाभि) दुन्दुभि कलविङ्क (पक्षिविशेष काक (कौआ) कपोत (कबूतर) झर्झर (वाद्यविशेष) इनके स्वरों के सदृश स्वर प्राकृतिक होते हैं तथा च शब्द से अन्य भी स्वर जो विवेचना से प्रकृतावरथा में देखे जाते हैं और जिनका स्वरज्ञ पुरुष सादृश्य द्वारा अथवा अन्यथा निर्देश करते हैं उन्हें भी प्रकृति स्वर जानना चाहिए ।

एडक (मेंढ़ा) सट्टश, कल (सूक्ष्म), ग्रस्त (जो स्वर निकले ही नहीं), अव्यक्त (अस्पष्ट), गदगद (रुक्के कण्ठ से बोलने के सदृश), क्षाम (रुक्ष वा क्षीण), दीन (दुःखी पुरुष जैसा बोलता है अथवा गिडगिडाने की तरह), अनुकीर्ण (ऊपर-बोलते जाना— कहीं रुकना नहीं और बोलते जाना); ये रोगियों के स्वर वैकारिक जानने चाहिए । इनके अतिरिक्त वे अन्य स्वर जिनकी विवेचना करने पर पूर्व स्वर से भिन्न तथा जो पूर्व कभी भी न रहा हो परन्तु सहसा उत्पन्न हो गया हो— जाना जाय उसे विकृति स्वर जाने । यह प्रकृति-स्वर और विकृति-स्वर



कोई विकृति हो तो उसे मृत्यु का उदय जानना चाहिए—वह मृत्यु का लक्षण है।  
(चरक संहिता, शरीर स्थान अ.1)

### स्पर्श विज्ञान मृत्यु का ज्ञान

स्पर्श की प्रधानता से (गौणरूप से यहाँ वर्ण आदि भी बताए हैं) ही रोगी की आयु के प्रमाण को जानने की अभिलाषा वाला वैध प्रकृति स्थित हाथ से उसके सारे शरीर को छुए अथवा दूसरे को छूने के लिए कहे। अर्थात् यदि अपना हाथ प्रकृति स्थित न हो अत्यन्त उष्ण हो वा अत्यन्त शीत हो वा स्पर्श शक्ति न्यून हो वा प्रमाण से अधिक हो इत्यादि अवस्थाओं में स्पर्श से ज्ञेय भावों का ठीक पता नहीं चलता। तब दूसरे को स्पर्श के लिए कहे और पूछता जाए। इसी प्रकार स्थियों के सब अंगों का स्पर्श करना आपत्तिजनक होता है, ऐसे समय में किसी विज्ञ स्वी से स्पर्श कराकर प्रश्न द्वारा वैद्य ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

रोगी के शरीर का स्पर्श करते हुए वहाँ-वहाँ (भिन्न-भिन्न शरीर देशों में) ये भाव जानने होते हैं। वैसे—वैसे निरन्तर स्पन्दन करने वाले देशों का स्तम्भ अर्थात् यहाँ स्पन्दन का न होना, जैसे हृदय वा जीवासाक्षिणी धमनी मन्या आदि का स्पन्दन न करना। नित्य ऊष्ण रहने वाले स्थानों जैसे मुख के अन्दर के भाग का ठण्डा हो जाना। चिकने देशों का खुरदरा हो जाना। कोई स्थूल अवयव पहले ही हो और फिर न रहें। जैसे अण्ड पहिले हो और पीछे लोप हो जाए, संधियों की शिथिलता भ्रंश (अपने स्थान से हिल जाना) वा च्युति (नीचे गिरना)। मांस और रक्त का क्षय। मांस आदि की कठोरता। अत्यन्त पसीना जाना, स्तम्भ अर्थात् अङ्गों का जड़वत् हो जाना अथवा सर्वथा पसीना न आना और जो भी इस प्रकार के कारण मृत्यु के लक्षण हो जाएँ वे सब भाव रोगी के शरीर में स्पर्श द्वारा जानने होते हैं। स्पर्श—ज्ञेय भावों का यह संक्षेप से लक्षण कह दिया है।

इसकी विस्तार से व्याख्या करेंगे— रोगी के पैर, जड़ा, ऊरु, स्फिक् (नितम्बचूतड़) उदर, (पेट) पीठ, रीढ़ की हड्डी, हाथ, गरदन, तालु, होठ, मस्तक; इन्हें पृथक्-पृथक् छूने से यदि यह पता लगे कि पसीना आया हुआ है, शीतल है, स्तम्भ है, जड़वत् हैं वा कोई स्पन्दन नहीं, कठोर है वा मांसरक्त आदि क्षीण हो गए हैं, तो वह गतायु है— ऐसा जाने। वह शीघ्र ही मर जायेगा— यह समझना चाहिये। अर्थात् इन देशों में से किसी एक देश में भी स्वेद शीतलता आदि लक्षण

विंध्यमान हों तो वह प्राणी मुमूर्ष है यह जानें।

यदि एक-एक करके रोगी के गुल्फ (पाद जड़ा सन्धि) घुटने वंक्षण (रान) गुदा वृषण (अण्ड कोष) मेहू (मूत्रेन्द्रिय) नाभि-अंस (बाहु और अक्षक की सन्धि) हनु (जबड़ा) पर्शका (पसलियाँ) नाक, कान, नेत्र, भौंह, शङ्ख आदि को छूने से वे शिथिल, जोड़ से पृथक् वा अपने स्थान से गिरे हुए अनुभव हों तो वह गतायु रुपुष प्रीति मृत्यु का ग्रास होगा— यह जाने।

### उच्छवास परीक्षा

रोगी के उच्छवास यदि बहुत लम्बा वा बहुत छोटा हो तो उसे मुमूर्ष जाने।

### मन्यापरीक्षा

यदि मन्याओं को स्पर्श करने से स्पन्दन न प्रतीत हो तो गतायु जाने।

### दन्त परीक्षा

यदि दाँत मैल से लिप्त हों, अतिश्वेत हों तथा दाँतों पर शर्करा उत्पन्न हो गई हों तो उसे भी मुमूर्ष जानें।

### पक्ष परीक्षा

यदि रोगी की पलकें जटाओं की तरह बँधी हुई हो तो उसे आसन मृत्यु समझें। अर्थात् पलकों के पाँच सात बाल मिल-मिलकर जटाओं की तरह हो जाएँ तो उस रोगी को मुमूर्ष जानना चाहिये।

### नेत्र परीक्षा

रोगी की आँखें यदि प्रकृति हीन हों— स्वाभाविकः न हों, विकृति युक्त हों, पिण्डाकार होकर अत्याधिक बाहर निकली हुई हों, बहुत अन्दर घुसी हुई हों, अत्यन्त वक्र हों— कुटिल हो, अत्यधिक विषम हों— एक आँख बन्द हो और एक आँख खुली हुई हो अथवा एक आँख खुली होने से छोटी प्रतीत हो और दूसरी विस्तारित होने से बड़ी प्रतीत हो, अत्याधिक आँसू या स्राव निकलता हो, बन्धन अत्याधिक खुले हुए हो अर्थात् नेत्र अत्याधिक विस्तारित हो, निरन्तर खुले रहते हों, निरन्तर बन्द रहते हैं, निमेष बहुत अधिक हो रहे हों, दृष्टि विभ्रान्त हों— कभी इधर देखे कभी उधर देखे अथवा आँखे पलट गई हों, विपरीत दृष्टि युक्त हों— एक वस्तु को देखने से यदि रोगी को वह न ज्ञात होकर दूसरी ही कोई दिखती हो दृष्टि क्षीण हो गई हो, दृष्टि विक्षिप्त हो— देखता किसी ओर है और

देखता किसी ओर हों, नकुलान्ध हो गई है— नकुलान्ध रोगी दिन में सब रूपों को श्वेत ही देखता है। कपोतान्ध हो— यह रोगी दिन में सब रूपों को काला ही देखता है, अलातवर्ण (अङ्गरे के समान वर्ण वाली) हो अथवा काला, नीला, पीला, श्याम, ताँबे के सट्टश वर्ण, हरा, हल्दी के सट्टश पीला तथा श्वेत; इन विकृतिवर्णों में से यदि कोई वर्ण अत्याधिक छा गया हो तो उसे गतायु जाने।

### केशलोम परीक्षा

अब रोगी के केश और लोमों को पकड़कर खीचे। यदि केश और लोमों को खींचने से उखड़ आयें और दर्द न हो तो उसे गतायु जाने।

### उदर परीक्षा

यदि रोगी के पेट पर सिरायें दीखें अथवा वे सिरायें श्याम ताम्रवर्ण नीली हल्दी के सट्टश वर्ण वाली का श्वेत हो तो उसे मुमूर्ष जाने।

### नख परीक्षा

यदि रोगी के नख मांस और रक्त रहित हों, पके जामुन के सट्टश वर्ण हों तो उसे गतायु जाने।

### अंगुली परीक्षा

रोगी की अंगुलियों को खींचे। यदि खींचने से अंगुलियों में स्फोटन शब्द अर्थात् सन्धि के खुलने का शब्द न हो तो उसे गतायु जानना चाहिए।

### पूर्वरूप मृत्यु-सूचक का लक्षण

वैद्यों के ज्ञान को बढ़ाने के लिये, असाध्य रोगों के पृथक्-पृथक् साधारण वा आसाधारण पूर्वरूप कहेंगे अर्थात् इस अध्याय में उन पूर्वरूपों का वर्णन होगा जिनसे हम उत्पन्न होने वाले विकार की असाध्यता को जान सकेंगे। ये पूर्वरूप सामान्य भी हो सकते हैं तथा जो हमने अन्यत्र कहा है वा नहीं कहे वे सब पूर्वरूप जिनसे मृत्यु का निश्चय होता है इसमें कहे जायेंगे। कहीं तो सब पूर्वरूप मिलकर मारक होते हैं कहीं पृथक्-पृथक्।

### ज्वर के मिलित मारक पूर्वरूप

जिस पुरुष में कहे गए सारे पूर्वरूप अत्यन्त प्रबलता से आश्रित होते हैं, उस पुरुष की ज्वर होकर मृत्यु होती है।

### रोगी के मारक पूर्वरूपों का सामान्य नियम

इसी प्रकार जिस पुरुष में किसी अन्य रोग के पूर्वरूप उत्पन्न होते हैं तो उसको

भी वह रोग होकर अवश्य मृत्यु होती है। जैसे यदि प्रमेह के समस्त पूर्वरूप अतिप्रबलता से हों तो प्रमेह होकर उसकी निश्चित मृत्यु होगी।

जब हम उन अन्य दारुण पूर्वरूपों का एक भाग कहेंगे जिनसे अनुबन्ध रूप में रोग उत्पन्न होते हैं और उन रोगों के पश्चात् मृत्यु हो जाती है। पूर्व तो मिलित पूर्वरूपों से किस प्रकार वह रोग होकर निश्चित मृत्यु होती है यह बताया है। अब कौन-कौन पूर्वरूप पृथक्-पृथक् वा कुछ एक मिलाकर असाध्य रोग को उत्पन्न करते हैं और मृत्यु का कारण होते हैं— यह बताया जाएगा।

### शोष वा यक्षमा के मारक पूर्वरूप

बलं च हीयते यस्य प्रतिश्यायश्च वर्धते।

तस्य नारीप्रसक्तस्य शोषोऽन्त्योपजायते ॥6॥

जिसका बल क्षीण हो रहा है, प्रतिश्याय (जुकाम), बढ़ रहा है— वह पुरुष साथ ही यदि मैथुन में भी आसक्त है तो उसकी यक्षमा होकर मृत्यु हो जाएगी।

### रक्तपित के मारक पूर्वरूप

लाक्षाराक्ताम्बराभं यः पश्यत्यम्बरमन्तिकात् ।

स रक्तपित्तमासाद्य तेनैवान्त्य नीयते ॥9॥

जो समीप से आकाश को लाख के रंग से रंगे वस्त्र के सट्टश देखता है वह रक्तपित का रोगी होकर उसी से मारा जाता है।

### गुल्म के मारक पूर्वरूप

शूलाटोपान्त्रकूजाश्च दौर्बल्यं चातिमात्र्या ।

नखादिषु च वैवर्ण्य गुल्मेनान्तकरो ग्रहः ॥11॥

शूल आटोप (पेट का वायु से तन जाना), अन्त्रकूज (आँतों में शब्द होना) और अत्याधिक दुर्बलता, नख आदियों में विवर्णता होना (विकृत वर्ण का होना); ये पूर्वरूप गुल्म होकर मृत्यु के ज्ञापक हैं।

### कुष्ठ के मारक पूर्वरूप

कायेऽल्पमपि संस्पृष्टं सुभृशं यस्य दीयते ।

क्षतानिचन रोहन्ति कुष्ठेर्मुत्युर्हिनस्तितम् ॥13॥

जिस पुरुष के शरीर पर तृण आदि के थोड़ा-सा छूने पर ही त्वचा आदि

विदीर्ण हो जाये और उससे उत्पन्न वा अन्य घाव रोहण न करें-भरें नहीं तो मृत्यु इन पूर्वरूपों से युक्त कुष्ठों द्वारा उसे नष्ट कर देता है। तात्पर्य यह है कि यदि ये पूर्व रूप हो तो कुष्ठ होकर उस पुरुष की मृत्यु हो जाती है।

### प्रमेह के मारक पूर्वरूप

स्नातानुलिप्तगात्रेऽपि यस्मिन् गृथन्ति मक्षिकः ।  
स प्रमेहेण संस्पर्शः प्राप्य तैनैव हन्यते ॥15॥

स्नान और शरीर पर चन्दन का अनुलेपन करने पर भी जिस पर मक्खियाँ लोभ से उड़-उड़ कर आती हैं वह प्रमेह से आक्रान्त होकर उसी से ही मर जाता है।

उन्माद के रिष्ट पूर्वरूप  
ध्यानायासौ तथाद्वेगो मोहश्चास्थानसम्भवः ।  
अरतिर्बलहानिश्च मृत्युरुन्मादपूर्वकः ॥17॥

ध्यान (चिन्ता में लगे रहना), आयास (त्रम वा थकावट), उद्वेग (ग्लानि) तथा आस्थान में उत्पन्न होने वाला मोह—जहाँ मोह का कोई कारण न हो वहाँ मोह होना, अरति (कहीं पर मन का न लगना), निर्बलता; इन पूर्वरूपों के होने पर उन्माद होकर पश्चात् मृत्यु होती है।

आहारद्वेषिणं पश्यन्त्वाप्तचित्तमुदर्दितम् ।  
विद्याद्वीरो मुमूर्षु तमुन्मादेनातिपातिना ॥18॥

आहार की इच्छा न रखने वाले, लुप्तचित्त जिसकी विज्ञान शक्ति लुप्त हो गयी हो उदर्द से युक्त अथा व्यथायुक्त पुरुष को धीर पुरुष भावी उन्माद रोग से मुमूर्ष जाने अर्थात् उन्माद रोग से उसकी मृत्यु होगी।

क्रोधनं त्रासवहुलं सकृत्प्रहसितानम् ।  
मूर्च्छापिपासावहुलं हन्त्युन्मादःशरीरिणम् ॥19॥

शीघ्र क्रुद्ध होने वाला अति त्रास युक्त (बहुत डरने वाला), एक बार जिसके मुख पर हँसी आती हो, मूर्च्छा और प्यास जिसे बहुत लगती हो उस पुरुष को उन्माद मार देता है— उन्माद रोग होकर उसकी मृत्यु होती है।

### अपस्मार के मारक पूर्वरूप

असत्तमः पश्यति यः शृणोत्प्यसतः स्वरान् ।  
बहुन् वहुविधाज्जाग्रत्सोऽपस्मारेण बध्यते ॥21॥

जो जाग्रत अवस्था में अन्धकार न होने पर भी अन्धकार को देखे और स्वरों वा शब्दों के न होने पर भी बहुत प्रकार के बहुत से स्वरों को सुने तो वह अपस्मार से मारा जाता है।

### बहिरायाम के मारक पूर्वरूप

स्तभ्येते प्रतिबुद्धस्य हनु मन्ये तथाऽक्षिणी ।  
यस्य तं बहिरायामी गृहीत्वा हन्त्यसंशयम् ॥23॥

जिस पुरुष के जागते हुए वा निद्राभङ्ग होने पर दोनों हनु दोनों मन्या तथा दोनों नेत्र स्तब्ध हो जाते हैं— जड़वत् हो जाते हैं, उसे बहिरायाम रोग पकड़ लेता है और मृत्यु का कारण होता है।

एतानि पूर्वरूपाणि यः सम्यगवबुध्यते ।  
सः एषामनुबन्धं च बलं ज्ञातुर्महति ॥25॥

जो इन पूर्वरूपों को अच्छी प्रकार समझ लेता है वह उनके अनुबन्ध और फल जानने के योग्य होता है। अर्थात् वह वैद्य वह पूर्व ही जान लेगा कि इसको वह रोग होगा और उससे उसकी मृत्यु अवश्य होगी।

### गन्ध, रस विज्ञान से मृत्यु परिज्ञान

जैसे भविष्यवत् फल का ज्ञापक पूर्वरूप अरिष्ट होता है। ऐसे फूल भी होते हैं जिनके पश्चात् फल नहीं लगता, जैसे वेतस का फूल। ऐसे भी कई फल हैं जिनसे पूर्व पुष्प नहीं होते, जैसे गूलर। परन्तु एक बार उत्पन्न हुए अरिष्ट का मृत्यु के बिना नाश नहीं होता और मृत्यु भी ऐसी कोई नहीं जिससे पूर्व अरिष्ट लक्षण न होते हैं। अर्थात् अरिष्ट लक्षण होंगे तो मृत्यु अवश्य होगी। और मृत्यु से पूर्व सर्वदा अनपवादरूप से अरिष्ट लक्षण प्रादुर्भूत हुआ करते हैं। यह हो सकता है कि योगी वा रसायनसेवी लोग रिष्ट लक्षण उत्पन्न होने पर भी मृत्यु पर विजय पा ले।

अज्ञ वैद्य जो वस्तुतः अरिष्ट नहीं है उसे अरिष्ट के सदृश यदि जानना है तो वह मिथ्याज्ञान है। अर्थात् जो चिकित्सक अरिष्ट लक्षणों को सम्यक् प्रकार से नहीं जानता वह कई बार जो अरिष्ट लक्षण नहीं होते, उन्हें भी भ्रम से अरिष्ट समझ लिया करता है अर्थात् वह अज्ञ चिकित्सक अरिष्ट लक्षणों को ही न समझे तो उसमें भी उसकी प्रज्ञा का अपराध जानना चाहिए। कभी-कभी अरिष्ट लक्षण

तो उत्पन्न होते हैं पर अज्ञ वैद्य उसे पहचान ही नहीं पाता। अभिप्राय यह है कि वैद्य की बुद्धि के दोष से कभी-कभी जो अरिष्ट लक्षण नहीं उन्हें अरिष्ट लक्षण; और अरिष्ट लक्षणों को अनारिष्ट लक्षण समझ लिया जाता है। इस मिथ्या ज्ञान में वैद्य का ही दोष है। अतः उनके ज्ञान को जगाने के लिए मृत्यु से पूर्व उत्पन्न होने वाले बहुत प्रकार के लक्षणों द्वारा बहुत से पुष्टि पुरुष का उपदेश करेंगे। मृत्यु से पूर्व उसके ज्ञापक लक्षण अनेक प्रकार के होते हैं। कई लक्षण किसी में प्रादुर्भूत होते हैं और कोई लक्षण किसी में। इस प्रकार नाना पुरुषों में नाना लक्षण हुआ करते हैं। हम उन अरिष्ट लक्षणक्रान्ति पुरुषों का वर्णन इस अध्याय में करेंगे। इससे वैद्यों की बुद्धि का विकास होगा और वे रोगी की मृत्यु वा जीवन का पूर्वकथन कर सकेंगे।

## गन्ध से मृत्यु का ज्ञान

नानापुष्पोपमो गन्धो यस्य वाति दिवानिशम् ।  
 पुष्पितस्य वनस्येव नानाद्वयलतावतः ॥७॥  
 तमाहुः पुष्पितं धीरा नरं मरणलक्षणैः ।  
 स ना संवत्सरादेहं जहातीति विनिश्चयः ॥८॥

जिनमें फूल खिले हुए हैं ऐसे नाना प्रकार के वृक्ष और लताओं से सुशोभित वन के सटश जिस पुरुष के देह से दिन-रात गन्ध निकलती रहती है उसे पण्डित लोग मृत्यु के लक्षणों से पुष्टि कहते हैं। देह से नाना प्रकार के पुष्टों की गन्धों का अनिमित्त ही आना मृत्यु का पूर्वरूप है। वह पुष्टि पुरुष एक वर्ष तक देह का अवश्य त्याग कर देगा। अर्थात् इस लक्षण से आक्रान्त रोगी की आयु एक वर्ष शेष है, वह एक वर्ष से अधिक जीवित नहीं रह सकता।

एवमेकैकशः पुष्टैर्यस्य गन्धः समो भवेत् ।  
इष्टैर्वा यदि वाऽनिष्टः स च पष्टित उच्यते ॥१॥

इसी प्रकार जिसके शरीर से एक-एक फूल के सहश सुगन्ध वा दुर्गन्ध आती हो तो वह भी पुष्पित (जातारिष्ट) कहाता है। इसकी अवशिष्ट परमायु भी एक वर्ष होती है।

समासेनाशुभान् गन्धानेकत्वेनाथ वा पुनः ।  
आजिष्ठेदस्य गात्रेषु तं विद्यात्पुष्टिं भिषक ॥१०॥

जिसके अङ्गो से अशुभ गन्धों (दुर्गन्धों) की मिश्रित वा पृथक्-पृथक् गन्ध आती हो, चिकित्सक उसे पुष्पित जानें। यह पुरुष भी वर्ष के अन्दर-अन्दर मृत्यु को प्राप्त होता है।

आप्लुतानाप्लुते काये यस्य गन्धाः शभाशभाः

व्यत्यासेनामित्ताः स्यः स च पृष्ठित उच्यते ॥1 1॥

जिस पुरुष के देह पर गन्ध द्रव्यों के लेप करने वा न करने पर सुगन्ध और दुर्गन्ध विपरीत भाव से निमित्त के बिना ही आवे तो उसे भी पुष्टि जानें अर्थात् यदि किसी ने चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्य का लेप किया है, परन्तु वह सुगन्ध न आकर उसके देह से बुरी गन्ध आती है तो उसे पुष्टि जाने। इसी प्रकार किसी दुर्गन्धित द्रव्य के लेप होने पर भी सुगन्ध आवे तो भी उसे पुष्टि जानना। इसकी आयु की परम अवधि एक वर्ष जाननी चाहिए ।

सुगन्धि और दुर्गन्धि द्रव्यों के कुछ उदाहरण—चन्दन, कुष्ठ (कुठ), तगर, अगर, मधु (शहद), चमेली आदि की मालायें ये सुगन्धि द्रव्य हैं वा इन गन्धों को शुभ गन्ध कहते हैं। मुत्र, पुरीष, पशुओं के मृत शरीर और शव (मृत नर देह) ये अशुभ गन्ध हैं। इनके अतिरिक्त जो भी विविध कारणों से उत्पन्न होने वाले विविध प्रकार के गन्ध हैं उन्हें भी इसी अनुमान से विकृति को प्राप्त जानना चाहिए अर्थात् पुष्पित शरीर में ही उन गन्धों से विपरीत गन्ध बिना निमित्त आया करती है। तात्पर्य यह है कि जिसके शरीर पर चन्दन आदि शुभ गन्ध लगाए गए हैं उसके शरीर पर उस गन्ध का विकास न होकर यदि अकारण ही मूत्र पुरीष आदि की गन्ध आवे एवं चन्दन आदि गन्ध के न लगाने पर चन्दन आदि की गन्ध आवे अथवा मूत्र पुरीष आदि अशुभ गन्ध से लिप्त होने पर उस शरीर से वह गन्ध न आकर अकारण ही चन्दन आदि की शुभ गन्ध आवे एवं मूत्रपुरीष आदि अशुभ गन्ध से आप्लुत न होने पर भी शरीर से वह—वह अशुभ गन्ध आवे तो उस व्यक्ति को पुष्पित जानना चाहिए। उसकी आय का काल भी एक वर्ष है।

वियोनिर्विद्वरो यस्य गन्धो गात्रेषु हृश्यते

इष्टो वा यदि वाऽनिष्टो न स जीवति तां समान ॥१५॥

यह भी एक अतिरेक के तौर पर गंध सम्बन्धी लक्षण कहेंगे, जिसे समझकर वैद्य मृत्यु की सूचना दे सकता है। जो अभी तक कहा नहीं गया उसके संग्रह के

लिए साधारण नियम का जानना अतिदेश कहलाता है।

जिसके अंगों में अकारण ही स्थायी इष्ट वा अनिष्ट गन्ध (सुगन्ध वा दुर्गन्ध) उत्पन्न हो जाती है वह उस वर्ष जीवित नहीं रहता अर्थात् वह गन्धोत्पत्ति से लेकर वर्ष के अन्दर-अन्दर ही काल का ग्रास हो जाता है। गन्ध से इस प्रकार रिष्ट लक्षण जाने जाते हैं।

### रस विज्ञान से मृत्यु ज्ञापक

गन्धविज्ञान के पश्चात् रोगियों के शरीर में विधि पूर्वक रस विज्ञान कहा जाएगा।

यो रसः प्रकृतिस्थानं नराणां देहसम्भवः ।  
स एषां चरमे काले विकारं भजते द्रयम् ॥1 7 ॥  
कश्चिदेवास्य वैरस्यमत्यर्थमुपपद्यते ।  
स्वादुत्वमपरश्चापि विपुलं भजते रसः ॥1 8 ॥

प्रकृतिस्थित पुरुष का जो देह का रस होता है वह इनके अन्तसमय में दो प्रकार के विकारों को प्राप्त होता है। एक तो वह है जिसमें पुरुष के देह में अत्यन्त विरसता (अनिष्टरस का होना वा रस रहित होना) हो जाती है और दूसरा वह जिसमें प्रकृत रस अत्यन्त मधुर हो जाता है।

उस विकृत रस को हम इस निम्न (पद्योक्त) अनुमान से जान सकते हैं। मनुष्य के रस को कैसे जाने? यह कहने का अभिप्राय यह है कि रस यद्यपि जिह्वा का विषय है, परन्तु रोगी के शरीर के रस को जानने के लिए वैद्य अपनी रसना का प्रयोग नहीं कर सकता क्योंकि उसका प्रयोग स्वास्थ्य की दृष्टि से उसके लिए अत्यन्त हानिकारक है। अतएव वैद्य को अपर अन्य के शरीर के रस का अनुमान ही करना होता है। यह बात विमानस्थान के चतुर्थ अ. में कही जा चुकी है—

इसका अनुमान—मक्खियाँ, जुएँ, दंश (काटनेवाली मक्खी अथवा खटमल आदि) मच्छर; ये सब मुमूर्ष प्राणी के विरस (अनिष्ट रसयुक्त वा रसरहित) शरीर से परे हट जाते हैं अर्थात् उसके शरीर पर मक्खी आदि विचरण नहीं करती।

काल से पके हुए अर्थात् आसन्नमृत्यु पुरुष का देह यदि अत्यन्त रस युक्त हो—मधुर हो तो चाहे उसे स्नान कर दें वा अन्य चन्दन आदि का अनुलेपन भी करा दें तो भी मक्खियाँ चारों ओर से उड़—उड़ कर उस पर आती हैं। इस अनुमान

से हम शरीर के माधुर्य को जानते हैं। शरीर का विरस होना वा अत्यन्त मधुर होना आयुःक्षय का लक्षण है।

### इन्द्रियों की परीक्षा से मृत्यु का निर्णय

चक्षु आदि इन्द्रियों के अनुमान द्वारा तत्व परीक्षा करें क्योंकि इन्द्रियों का सत्य वा मिथ्याज्ञान अतीन्द्रिय होता है— इन्द्रियों से जाना नहीं जा सकता। इन्द्रियों के स्वयं अतीन्द्रिय होने से उनका प्रकृति विज्ञान वा विकृतिज्ञान इन्द्रियों से नहीं जाना जा सकता। अतः प्रत्यक्ष द्वारा उपलब्धि न होने से अनुमान द्वारा ही परीक्षा करनी होती है। एक इन्द्रिय के विषय ज्ञान की सत्यता वा मिथ्यात्व को बताने में दूसरी इन्द्रियाँ समर्थ नहीं होती। रूप की सत्यता वा मिथ्यात्व में न कान बता सकते हैं, न रसना बता सकती है। इसी प्रकार अन्य विषयों के सम्बन्ध में भी यही बात है। अतएव हमें अनुमान का आश्रय लेना होता है।

### इन्द्रियज्ञान द्वारा मुमूर्षता का बोध

जिस रोगी का इन्द्रिय से उत्पन्न ज्ञान अकारण ही स्वस्थेन्द्रिय पुरुष के ज्ञान से विकृत (विपरीत भावापन्न) दिखाई दे, वह मृत्यु का लक्षण जानना चाहिए अथवा स्वस्थ इन्द्रियों से अकारण सहज विकृत ज्ञान उत्पन्न होना रिष्ट लक्षण है। यह अनुमान सब इन्द्रियों में सामान्यतः लागू होगा। यह इन्द्रियों में अशुभ (मृत्यु) सूचक लक्षण यथार्थ रूप से कह दिया है। उसे ही आगे विस्तार से ध्यान लगाकर सुनो।

### चक्षुःपरीक्षा—

घनीभूतमिवाकाशमाकाशमिव मेदिनीम् ।  
विगीतं ह्य भयं ह्ये तत्पश्यन्मरणमृच्छति ॥6 ॥

जो पुरुष शून्यमय आकाश को घनीभूत (पिण्डाकृति वा कठोर) एवं घनीभूत पृथ्वी को आकाश की तरह (शून्य वा अदृश्य) देखे वह मृत्यु को प्राप्त होता है क्योंकि ये दोनों ज्ञान विकृति ज्ञान वा विपरीत ज्ञान हैं।

यस्य दर्शनमायाति मारुतोऽम्बरगोचरः ।  
अग्निर्नायाति वा दीप्तस्तस्यायुःक्षयमादिशेत् ॥7 ॥

जिसे आकाश में सज्जार करने वाला स्पर्शनेन्द्रिय से ज्ञेय वायु दृष्टिगोचर होती है अथवा दीप्त अग्नि दिखाई नहीं देती, उसकी आयु क्षीण हो गयी है, यह जानना

चाहिए। ये सब विकृत ज्ञान हैं। अतएव अनिमित्त (प्राकृतिक) ही ऐसा ज्ञान होने पर आयुः क्षय के सूचक होते हैं।

**जले सुविमले जालमजालावतते तथा ।**

**स्थिते गच्छति वा हृष्ट्वा जीवितात्परिमुच्यते ॥८॥**

जिस में जाल नहीं फैलाया गया है ऐसे स्थिर अथवा बहते हुए अत्यन्त निर्मल जल में जो जाल को देखता है वह पुरुष मर जाता है।

**जाग्रत्पश्यति यः प्रेतान् रक्षासि विविधानि च ।**

**अन्यद्वाऽप्यद्भुतं किंचिन्च च जीवितुमर्हति ॥९॥**

जो जागते हुए, प्रेतों वा विविध प्रकार के राक्षसों को अथवा अन्य अद्भुत पदार्थ को देखता है वह जीवन से छूट जाता है— मर जाता है अर्थात् जाग्रत अवस्था में जो प्रेत राक्षस आदि को देखता है उसे मुमूर्ष जानना चाहिए।

**योऽग्निं प्रकृति वर्णस्थं नीलं पश्यति निष्प्रभम् ।**

**कृष्ण वा यदि वा शुक्लं निशां ब्रजति सप्तमीम् ॥१०॥**

जो स्वाभाविक वर्ण वाले अग्नि को नीला प्रभा रहित काला वा श्वेत देखता है तो वह सातवीं रात चल बसता है— शीघ्र मर जाता है।

**मरीचीनसतो मेघान्मेघान्वाऽप्यसतोऽम्बरे ।**

**विद्युतो वा विना मेघात् पश्यन्मरणमृच्छति ॥११॥**

जो बादलों के बिना भी बादलों की द्युति को देखता है अथवा बादलों के न होते हुए आकाश में बादलों को देखता है अथवा मेघों के बिना ही मेघों की रगड़ से उत्पन्न होने वाली बिजली की छटा देखता है, वह नष्ट हो जाता है अथवा साधारण तौर पर मरीचि का अर्थ सूर्य किरण होता है। मेघों से सूर्य किरणें नहीं प्रादुर्भूत होती। यदि मेघ से सूर्य किरणें प्रादुर्भूत होती दिखाई दें तो वह रिष्ट लक्षण है।

गङ्गाधर ने ‘असतः अमेघान्’ ऐसा सन्धिविच्छेद करके अर्थ इस प्रकार किया है— जो रोगी आकाश में मेघ न होते हुए भी मेघ ज्योति देखता है वह नष्ट होता है। अथवा जो रोगी मेघों के न होते हुए भी झूठे मेघों को देखता है, वह नष्ट होता है, अथवा जो रोगी मेघों के न होने पर भी बिजलियों को देखता है, वह

भी नष्ट होता है।

**मृण्मयीमिव यः पात्रीं कृष्णाम्बरसमावृत्ताम् ।**

**आदित्यमीक्षते शुद्ध चन्द्रं वा न स जीवति ॥१२॥**

जो पुरुष शुद्ध सूर्य वा चन्द्रमा को काले वर्ष से आच्छादित मिट्ठी की थाली की तरह देखता है वह जीवित नहीं रहता। शुद्ध कहने से अभिप्राय ग्रहणग्रस्त न होने से है। जब ग्रहण लगा होता है तब भारकर रूप आदि नहीं रहता और वे श्याम वा कृष्णवर्ण के दिखाई देते हैं अथवा इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि जो सूर्य को तो काले वर्ष से आच्छादित मिट्ठी की थाली की तरह देखता है अथवा चन्द्रमा को शुद्ध अर्थात् निष्कलंक देखता है, वह भी जीवित नहीं रहता।

**अपर्वणि यदा पश्येत्सूर्याचन्द्रमसोर्गहम् ।**

**अत्पाधितो व्याधितो वा तदन्तं तस्य जीवितम् ॥१३॥**

अमावस्या वा पूर्णिमा से अतिरिक्त काल में जो भी निरोग वा रोगी सूर्य और चन्द्रमा का ग्रहण देखता है, उस पुरुष का ग्रहण के छूटने काल तक जीवन शेष है अर्थात् ज्योतीषी पुरुष सूर्य वा चन्द्रमा को ग्रहण से मुक्त हुआ देखता है उसकी मृत्यु हो जाती है।

**नक्तं सूर्यमहश्चन्द्रम नग्नौ धूममुत्थितम् ।**

**अग्निं वा निष्प्रभं रात्रौ हृष्ट्वा मरणमृच्छति ॥१४॥**

रात्रि को सूर्य और दिन में प्रभायुक्त चन्द्रमा को देखकर पुरुष मृत्यु को प्राप्त होता है। इसी प्रकार अग्नि के बिना धूँआ और रात्रि में अग्नि को प्रभा रहित देखता हुआ पुरुष काल का ग्रास होता है अर्थात् यदि रात्रि में सूर्य दिखाई दे वा दिन में अपनी ज्योत्सना को फैलाता हुआ चन्द्रमा दीखे तो वह अरिष्ट है। रात्रि के समय अग्नि में प्रभा होती है। परन्तु यदि कोई पुरुष उस समय अग्नि में प्रभा को नहीं देखता तो उसे मुमूर्ष ही जानना चाहिए। धूँआ अग्नि के बिना नहीं होता। यदि कोई अग्निरहित स्थल से धूँआ निकलता देखे तो वह मरणसूचक चिन्ह हैं।

गङ्गाधर ‘अहश्चन्द्र’ के स्थल पर ‘असद्द्वन्द्व’ पढ़ता है। जिसके अनुसार अर्थ होगा कि जिस रात्रि में चन्द्रमा न हो या अमावस्या, उन दिन चन्द्रमा को देखे तो जानना चाहिए कि वह शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होगा।

प्रभावतः प्रभाहीनान्निष्प्रभान् वा प्रभावतः ।

नरा विलिङ्गान् पश्यन्ति भावान् प्राणाज्जिहासवः ॥15॥

प्राणों को त्यागने की इच्छा वाले मुमूर्ष वा मरणासन्न पुरुष प्रभा (चमक) युक्त भावों को प्रभा से रहित और प्रभा से रहित पदार्थों को प्रभायुक्त देखा करते हैं। मुमूर्ष इसी प्रकार अन्य भावों को भी विपरीत लिङ्गवाला देखा करता है। अर्थात् काले को श्वेत, श्वेत की काला इत्यादि विपरीत लक्षणों से देखता है।

व्याकृतानि विसंर्णानि विसंख्योपगाति च ।

विनिमित्तानि पश्यन्ति रूपाण्यायुःक्षये नराः ॥16॥

आयु के क्षीण होने पर पुरुष विपरीत आकृति वाले, विपरीत वर्ण वाले, विपरीत संख्या वाले रूपों को अकारण ही देखा करता है। किसी की सुन्दर आकृति हो उसको मुद्रा देखना, किसी की भट्टी आकृति हो उसे सुन्दर देखना, किसी के सम्पूर्ण अंग हो उसमें किसी अंग का न देखना, किसी के अंग न हो पर उसमें सब अंगों का देखना इत्यादि विपरीत आकृति अल्पायु पुरुष देखता है। विपरीत वर्ण से अभिप्राय श्वेत को काला, लाल, हरा देखना, लाल को काला, पीला, हरा, श्वेत देखना, काले को, श्वेत पीला आदि देखना है। विपरीत संख्या से अभिप्राय एक को अनेक और अनेक को एक देखना है। एक को दो तीन चार आदि देखना दो को एक तीन चार आदि देखना विरुद्ध होता है। परन्तु उसे ऐसा ज्ञान अकारण ही होना चाहिए तभी मुमूर्ष जाना जाएगा। क्योंकि कई रोगों में भी ये लक्षण हुआ करते हैं। वहाँ पर इसका कारण उपस्थित होता है, पर मुमूर्ष पुरुष में ये लक्षण अचानक और अकारण ही हो जाते हैं।

यश्च पश्यत्यहश्यमान् वै हश्यमान् यश्च न पश्यति ।

तावुभौः पश्यतः क्षिप्रं यमालयमसंशयम् ॥17॥

जो अदृश्य (वायु, आकाश आदि) वस्तुओं को देखता है और हश्य वस्तुओं को नहीं देखता वे दोनों ही शीघ्र यमपुरी को जाते हैं।

श्रोत परीक्षा

अशब्दस्य च यः श्रोता शब्दान् यश्च न बुध्यते ।

द्वावप्येतौ यथा प्रेतौ ज्ञेयौ तथा विजानता ॥18॥

जो पुरुष शब्द के न होने पर भी उसे सुनता है और जो शब्दों के होने पर भी उन्हें समझता नहीं— सुनता नहीं, विज्ञ उन दोनों को ही मुर्दे की तरह ही समझे। अर्थात् वे दोनों शीघ्र ही मर जाएंगे। ये सब लक्षण अनिमित्त होने पर ही मृत्यु के सूचक होते हैं।

संवृत्याद्वुलिभि कर्णो ज्वालाशब्दं य आतुरः ।

न शृणोति गतांसु तं बुद्धिमान् परिवर्जयेत् ॥19॥

जो रोगी कानों को अंगुलियों से बन्द कर ज्वाला के शब्द सदृश शब्द को नहीं सुनता, उसे गतायु जानकर चिकित्सा न करनी चाहिए। कानों को बन्द करने से एक प्रकार का शब्द सुनाई देता है, जो अग्नि ज्वाला के शब्द के सदृश होता है। यदि वह शब्द न सुने तो वह पुरुष मुमूर्ष होगा।

प्राण परीक्षा

विपर्ययेण यो विद्याद् गन्धानां साध्वसाधुताम् ।

नवातान् सर्वशो विद्यातां विद्याद्विगतायुषम् ॥20॥

जो पुरुष गन्धों की साधुता वा असाधुता का विपरीत भाव से जानता है अथवा गन्ध को सर्वथा नहीं सूँचता तो उत्तायु जानें। अभिप्राय यह है कि जो अकारण ही सुगन्ध को दुर्गन्ध और दुर्गन्ध को सुगन्ध समझता है अथवा चमेली की गन्ध को चन्दन की और चन्दन को गुलाब की इत्यादि समझता है, अथवा जिसे गन्धमय पदार्थ से कोई गन्ध नहीं आती, उसे मुमूर्ष जानना चाहिए।

रसना परीक्षा

यो रसान्न विजानातिन वा जानाति तत्त्वतः ।

मुखपाकादृते पक्वं तमाहुः कुशला नरम् ॥21॥

जो पुरुष मुख पाक के बिना मधुरादि रसों को नहीं पहिचानता अथवा तत्त्वतः नहीं जानता उसे कुशल पुरुष पक्वा हुआ जानते हैं अर्थात् उसकी मृत्यु समीप है। अभिप्राय यह है कि जिस पुरुष को किसी भी रस का ज्ञान नहीं होता अथवा मधुर आदि रसों को मधुर आदि न जानता हुआ अंम्ल आदि विपरीत रस समझता है वह मुमूर्ष है परन्तु यदि मुख पाक वा मुखपाक से उपलक्षित अन्य रोगों के लक्षण रूप रस ज्ञान न हो वा विपरीत रस ज्ञान हो तो वह मुमूर्ष का लक्षण नहीं।

### स्पर्शन परीक्षा

ऊष्णाऽशीतान् स्वरान् श्लक्षणामृदूनपि न दारुणान् ।

स्पृश्यान् स्पृष्ट्वा ततोऽन्यतं मुमृषुस्तेषु मन्यते ॥२२॥

मुमृष पुरुष ऊष्ण, शीत, खुरदरा, चिकना, मृदु (कोमल) दारुण (कठोर), स्पृश्य (स्पर्शज्ञेय) पदार्थों को छूकर उनमें विपरीत स्पर्श को माना करता है। जो ऊष्ण को शीतल, शीतल को ऊष्ण, खुरदरे को चिकना, चिकने को खुरदरा, कोमल को कठोर और कठोर को कोमल समझता है वह गतायु है।

### सब इन्द्रियों सम्बन्धी रिष्टलक्षण

अन्तरेण तपस्तीव्रं योगं वा विधिपूर्वकम् ।

इन्द्रियैरधिकं पश्यन् पञ्चत्वमधिगच्छति ॥२३॥

तीव्र तप वा विधिपूर्वक किये गये योग के बिना जो पुरुष इन्द्रियों से अधिक देखता है वह पञ्चता को प्राप्त होता है। अर्थात् जो विषय, इन्द्रिय ग्राह्य है उनका तो सर्वसामान्य ग्रहण करते ही हैं, परन्तु जो इन्द्रियों से ग्राह्य नहीं अतिन्द्रिय हैं उनका तपस्तीव्र योगी वा कोई-कोई मुमृष ही ज्ञान प्राप्त करता है। यदि तपस्ती वा योगी को अतीन्द्रिय ज्ञान होता है तो वह शुभ है और उसकी सिद्धि का सूचक है, परन्तु उनके अतिरिक्त सामान्य पुरुष को यदि अतीन्द्रिय ज्ञान हो तो वह अशुभ है— उसकी मृत्यु का सूचक है।

इन्द्रियाणामृते दृष्टेरिन्द्रियार्थान्नं पश्यति ।

विषयेण यो विद्यात्तं विद्याद्विगतायुषम् ॥२४॥

इन्द्रियों में से दृष्टि (चक्षु इन्द्रिय) के बिना अन्य त्वचा आदि चार इन्द्रियों से जो स्पर्श आदि विषयों को नहीं जानता और जो इन्द्रियों के विषयों को विपरीत भाव से जानता है उसे गतायु जानना चाहिए। अथवा जो चक्षु को छोड़कर शेष इन्द्रियों से स्पर्श आदि इन्द्रिय विषय का ग्रहण नहीं कर सकता, परन्तु चक्षु द्वारा ही सब विषयों को विपरीतभाव से अनुभव करता है, उसे गतायु जानना चाहिए। रूप स्वभाव से अतिरिक्त शब्द स्पर्श आदि भाव से चक्षु द्वारा विषयग्रहण करना गतायु का लक्षण है।

चक्रपाणि के पाठानुसार उस श्लोक का अर्थ यह होता है— इन्द्रियों की ज्ञान शक्ति के बिना दोष से न उत्पन्न हुए-२ इन्द्रिय के विषयों को जो पुरुष इन्द्रियों

से देखता है, वह जीवित नहीं रहता। दोष न उत्पन्न हुए कहने से यह अभिप्राय है जैसे— यदि हम आँख पर अँगुली का ढबाव डालकर किसी वस्तु को देखें तो वे २ दिखती हैं। यहाँ पर अँगुली के ढबाव से वात हट्ठि होने के कारण हमें वैसा भान होता है, परन्तु यह अदोषज इन्द्रिय का विषय नहीं समझा जाएगा। इसी प्रकार अन्य इन्द्रिय के विषय में भी समझना चाहिए।

स्वस्थाः प्रज्ञाविपर्यासैरिन्द्रियार्थेषु वैकृतम् ।

पश्यन्ति ये सुवहुशस्तेषां मरणमादिशेत् ॥२५॥

जो स्वस्थ पुरुष भी प्रज्ञापराथ के कारण इन्द्रिय के विषयों में बहुशः विकारों को देखते हैं, उनकी शीम्न मृत्यु होती है। अर्थात् जो स्वस्थ पुरुष भी बुद्धि की विपरीतता के कारण शब्द आदि इन्द्रिय विषयों में विकृति न होते हुए भी विकृति अनुभव करे वह गतायु है ऐसा जानना चाहिए।

**अष्टाङ्ग हृदय में वर्णित मरण शक्ति (रिष्ट)**

रिष्ट के लक्षण और उसके ज्ञान का प्रयोजन

पुष्टं फलस्य धूमोऽग्नेर्वर्षस्य जलदोदयः ।

तथा भविष्यतो लिङ्गं रिष्टं मृत्योतथा ध्रुवम् ॥१॥

आने वाले फल का जैसे फूल, अग्नि का धुँआ और होने वाली वर्षा का जैसे बादलों का घिरना लक्षण होता है; उसी प्रकार होने वाली मृत्यु का रिष्ट लक्षण निश्चित है।

रिष्ट— अवश्यम्भावी मृत्यु का चिन्ह उसका रिष्ट मृत्यु से पृथक् छाया रूप है, उसका स्वरूप नहीं अर्थात् रिष्ट से मृत्यु के होने का आभास (संकेत) होता है। इसी से कहा है—

‘न त्वरिष्टस्य जातस्य नाशोऽस्ति मरणादृते ।

मरणं चापि तन्नास्ति यन्नारिष्टं पुरःसरम् ॥’

ये रिष्ट नियत और अनियत भेद से दो प्रकार के हैं। चक्रपाणि ने अनियत भेद का खण्डन किया है।

आयुष्मान रोगी में भली प्रकार से प्रयुक्त की हुई सब क्रियाएँ सफल होती हैं, और वैद्य के कल्पाण के लिए होती हैं। जैसे कि कृतज्ञ राजा के लिए किये

कार्य सफल होते हैं। क्षीण आयु वाले व्यक्ति में किये सब कर्म व्यर्थ होते हैं जैसे अधम पुरुष के प्रति किये गए कर्म व्यर्थ होते हैं और अपवाद, निन्दा, मृत्यु का भय और स्वार्थ की हानि करते हैं इसलिए अब मरने वालों के लक्षण कहे जाते हैं। बुद्धिमानों ने प्रकृति की विकृति को 'रिष्ट' कहा है अर्थात् सहज प्रकृति में विकार आना 'रिष्ट' है।

### रिष्ट तथा अरिष्ट का ज्ञान

अरिष्टं नास्ति मरणं हृष्टिरिष्टं च जीवितम् ।  
अरिष्टे रिष्टविज्ञानं न च रिष्टेऽप्यनैपुणात् ॥२॥

जिस मृत्यु से पूर्व रिष्ट लक्षण उत्पन्न नहीं हुए, ऐसी मृत्यु नहीं देखी जाती, तथा जिसमें रिष्ट लक्षण दिखाई देते हैं; उसको जीता भी नहीं देखा जाता। अर्थात् सब मृत्युओं में रिष्ट लक्षण होते हैं और रिष्ट लक्षण दिखने से रोगी फिर जीवित नहीं रहता।

अकुशलता के कारण अरिष्ट में जो (रिष्ट नहीं है उसमें) रिष्ट का ज्ञान और रिष्ट में अरिष्ट का ज्ञान होता है।

अधूम व्याप में धूम का ज्ञान अज्ञान होता है। सुश्रुत से रिष्ट होने पर भी मृत्यु रोकने के उपाय लिखे हैं, यह प्रायिक है—

ध्रुव हि रिष्टे मरणं ब्राह्मणैस्तत् किलामलैः ।  
रसायनतपोदानतत्परैर्वा निर्वायते ॥

सु.अ. 28/51 ।

### अन्य के मत से रिष्ट का दैविध्य

कई आचार्य रिष्ट लक्षण को स्थायी और अस्थाई भेद से दो प्रकार का मानते हैं।

### अस्थाई रिष्ट से मरणाभाव—

दोषाणामपि बाहुल्याद्रिष्टाभासः समुद्भवेत् ॥३॥

स दोषाणां शमे शाम्येत्स्थाय वशयं तु मृत्युवे ।

दोषों की अधिकता से रिष्ट का आभास उत्पन्न हो जाता है। यह आभास दोषों के शान्त होने पर शान्त हो जाता है। स्थाई रिष्ट लक्षण निश्चित मृत्यु के लिए होते हैं।

### रिष्ट का लक्षण—

रूपेन्द्रियस्वरच्छायाप्रतिच्छायाक्रियादिषु ॥४॥

अन्येष्वपि च भावेषु प्राकृतेष्वनिमित्ततः ।

विकृतिर्या समासेन रिष्टं तदिति लक्षयेत् ॥५॥

स्वभाविक रूप, इन्द्रिय, छाया, प्रतिच्छाया और क्रिया आदि में तथा अन्य भी स्वभाविक भावों में बिना कारण के जो विकृति या उत्पन्न हो जाते हैं, उसे संक्षेप में रिष्ट जानना चाहिए।

केशों तथा रोमों में रिष्ट के चिह्न

के शरोम निरभ्यङ्ग यस्याभ्यक्तमिवेक्ष्यते ।

जिस व्यक्तिके सिर के बाल और रोम तैल के अभ्यंग के बिना भी तैलाभ्यंग किये से दिखते हैं यह रूप विकृति रिष्ट है।

### नेत्रों में रिष्ट के चिह्न—

यस्यात्यर्थ चले नेत्रे स्तव्यान्तर्गतनिर्गते ।

जिह्मे विस्तृतसङ्क्षिप्ते सङ्क्षिप्तविनतभूणी ॥६॥

उद्भ्रान्तदर्शने हीनदर्शने नकुलोपमे ।

कपोताभे अलाताभे सुते लुलितपक्षणी ॥७॥

जिस रोगी के नेत्र अतिशय इधर-उधर धूमते हों, या स्तव्य हों, या अन्दर को धुसे हों, या बाहर को निकल आये हों, कुटिल हों, फैले हुए हों, या संकुचित हों, जिसके भ्रू अतिशय चढ़े या झुके हुए हैं, जिसकी दृष्टि विभ्रान्त हों, अल्पदृष्टि या हीनदृष्टि हो, नेवले के समान आँखे हों, कबूतर के समान आँखे हों, लाल सूर्ख आँखें हों, जिनसे आँसू बहते हैं; जिसकी आँखों की पलकें काँपती रहती हैं— यह नेत्र की विकृति रिष्ट है।

नकुलान्धृष्टि, कपोतदृष्टि, रात्र्यन्ध तथा दिवान्धरूपी रोग भी है।

### नासिका में रिष्ट के चिह्न—

नासिकाऽत्यर्थविवृता संवृता पिटिकाचिता ॥८॥

### उच्छूना स्फुटिता म्लाना—

जिसकी नाक बिना कारण ही अतिशय विस्तृत, अतिशय संवृत (बन्द) पिटिकाओं से भरी, ऊपर शोथ युक्त, स्फुटित और म्लान हो, यह नासिका की

विकृति रिष्ट हैं।

ओष्ठ में रिष्ट के चिह्न-

यस्यौष्ठौ यात्यधोऽधरः ऊर्ध्व द्वितीय, ।  
स्यातां वा पक्षजम्बूनिभावुभौ ॥९॥

जिसका निचला ओठ नीचे लटक जाता है, ऊपर का ओठ ऊपर चला जाता है अथवा जिसके दोनों ओठ पके हुए जामुन की भाँति हो जाते हैं; वह ओठ की विकृति रिष्ट है।

दाँतों में रिष्ट के चिह्न-

दन्ताः सशर्कराः श्यावास्तप्राः पुष्पितपंकिताः ।  
सहसैव पैत्युर्वा-

जिसके दाँत शर्करायुक्त, श्यामवर्ण, ताप्रवर्ण, पुष्प (श्वेतदाग) युक्त या कीचड़ (मैल से भरे हों) अथवा अचानक ही गिर पड़ते हों, यह दाँत की विकृति रिष्ट है।

जीभ में रिष्ट के चिह्न-

जिह्वा जिह्वा विसर्पिणी ।  
शूना शुष्कागुरुः श्यावालिप्तासुप्तासकण्टका ।

जिसकी जिह्वा कुटिल, कारण के बिना ही लपलपाती हो, शोथ युक्त हो, शुष्क हो, भारी हो, मैल से लिप्त संज्ञा शून्य या काँटो से व्याप्त हो वह जिह्वा विकृति रिष्ट है।

ग्रीवा में रिष्ट के चिह्न-

शिरः शिरोधरा वोद्धुं पृष्ठं वा भारमात्मनः ॥११॥  
हनू वा पिण्डमास्यस्थं शक्नुवन्ति न यस्य च ।

जिसकी ग्रीवा सिर का और पीठ अपने शरीर का भार न उठा सके; अथवा जिसका हनु मुख में रखे ग्रास को सम्हाल न सके; ये तीनों ग्रीवादि की विकृति 'रिष्ट' है।

अंगों का अकारण भारीपन आदि रिष्ट के चिह्न-

यस्यानिमित्तमङ्गानि गुरुण्यति लघूनि वा ॥१२॥

जिसके अङ्ग बिना कारण के ही अतिभारी या अतिशय हल्के हो जाते हैं; यह अङ्ग की विकृति रिष्ट है।

छिद्रों से रक्त-निर्गमन रिष्ट के चिह्न-

विषदोषाद्विना यस्य रोमयो रक्तं प्रवर्तते ।

बिना विषदोष के जिसके रोमकूपों से या छिद्रों से रक्त बहता हो, यह भी रिष्ट है।

शिश्रून तथा अण्डकोशों में रिष्ट के चिह्न-

उत्सिक्तं मेहनं यस्य वृषणावतिनिः सृतौ ॥१३॥

अतोऽन्यथा वा यस्य स्यात् सर्वं ते कालचोदिताः

जिसका मेहन अतिशय ऊपर चढ़ गया हो, या जिसके वृषण अतिशय बाहर आ गये हों, अथवा इससे विपरीत हों अर्थात् वृषण ऊपर चढ़ गये हो और मेहन बाहर आ गया हो, ये सब (केशरोम आदि श्लोक 6 से 13 तक वर्णित विकृतियों से युक्त व्यक्ति) मृत्यु से प्रेरित हैं—मरनेवाले हैं। (समय की मर्यादा—एक साल, वर्ष के पीछे जातिरिष्ट भी बचता है।)

ललाटादि में रिष्ट के चिह्न-

यस्यापूर्वा: सिरालेखा बालेन्द्राकृतयोऽपि वा ।

ललाटेबस्तिशीर्षं वा षष्मासान्नं स जीवति ॥१४॥

जिस, पुरुष के माथे में या बस्तिगिर (उदर के निचले—भाग) में बिना कारण के नई सिराजी अथवा दूज के चाँद—सा कुटिल आकार दिखता है, वह पुरुष छः मास भी नहीं जीता।

शरीर में रिष्ट का चिह्न-

पद्मिनीपत्रवत्तोयं शरीरे यस्य देहिनः।

प्लवते प्लवमानस्य षष्मासास्तस्य जीवितम् ॥१५॥

जिस पुरुष के स्नान करते समय जल कमलपत्र के समान शरीर पर नहीं ठहरता वह छः मास ही जीता है।

शिराओं तथा रोमकूपों में रिष्ट के चिह्न-

हरिताभाः सिरा यस्य रोमकूपाश्च संवृत्ताः ।

सोऽम्लाभिलाषीपुरुषः पित्तान्मरणमशुते ॥१६॥

जिस रोगी के शिरायें हरी कन्ति की हो गई हों, रोमकूप बन्द हो और अम्ल को चाहने वाला हो, वह व्यक्ति पित्त (जनित विकार) से मृत्यु पाता है।

**सिर तथा मुख में रिष्ट का चिह्न-**

यस्य गोमयचूर्णाभं चूर्णं मूर्धिनं मुखेऽपि वा ।  
सस्नेहं मूर्धिन्धूमो वाः मासान्तं तस्य जीवितम् ॥१७॥

जिस रोगी के सिर पर या मुख पर स्नेह लगाने पर गोबर के चूर्ण की भाँति चूर्ण (रुक्ष) हो जाता है, अथवा सिर पर धूम होता है, वह एक मास ही जीता है।

**सिर तथा भ्रूद्वय में रिष्ट का चिह्न-**

मूर्धिनं भ्रुवोर्वा कुर्वन्ति सीमान्तावर्तका नवाः ।  
मृत्युं स्वस्थस्य षड्गत्रात्रिगत्रादातुरसय तु ॥१८॥

जिस स्वस्थ पुरुष के सिर में या भ्रुवों पर नये सीमन्त के आवर्त उत्पन्न हो जाते हैं वह छः रात तक जीते हैं और रोगी हो तो तीन रात ही जीता है।

**जिह्वादि रिष्ट का चिह्न-**

जिह्वा श्यावा मुखं पूति सव्यक्षिनि मिमज्जति ।  
खगा वा मूर्धिनीयन्ते यस्य तं परिवर्जयेत् ॥१९॥

जिसकी जीभ काली पड़ गई हो, मुख से दुर्गन्ध आती हो, वाम आँख अन्दर को बैठ गई हो अथवा सिर पर पक्षी बैठते हों (वह नहीं बचता), उसकी चिकित्सा न करें।

**वक्षस्थल में रिष्ट का चिह्न-**

यस्य स्नातानुलिपत्स्य पूर्वं शुषयत्पुरो भृषम् ।  
आद्रेषु सर्वे गत्रेषु सोऽर्धमासं न जीवति ॥२०॥

जिस पुरुष के स्नान करके चन्दन लेपन करने पर सब अंगों के गीला रहते हुए भी सबसे प्रथम छाती अधिकतः सूखती है, वह पन्द्रह दिन नहीं जीता।

अक्षम्याद्यगपद्गत्रे वर्णो प्राकृतवैकृतो ।  
तथैवोपचयग्लानिरोक्षस्नेहादि मृत्युवे ॥२१॥

बिना कारण जिसके शरीर पर एक साथ (एक समय में) प्राकृत और वैकृत

वर्ण, उपचय और अनुपचय ग्लानि और हर्ष, रुक्षता और स्नेह आदि (शीतता और उष्णता) हो, वह मृत्यु के लिए है।

**अंगुली आदि में रिष्ट का चिह्न-**

यस्य स्फुटेपुरडगुल्यो नाकृष्टा न स जीवति ।  
क्षवकासादिषु तथा यस्यापूर्वी धनिर्भवेत् ॥२२॥

हस्यो दीर्घोऽति वोच्छवासः पूतिः सुरभिरेव वा ॥२३॥

खींचने पर या चटका ने पर जिसकी अंगुलियों न चटके वह नहीं बचता। छींक, कांस आदि में जिसकी अपूर्व धनि (पहले नहीं सुनी गई) होती है, वह नहीं बचता या जिसका उच्छवास बहुत छोटा अथवा बहुत लम्बा या दुर्गन्ध या सुगन्धित होता है, वह नहीं जीता।

**गन्धाविकृति-रिष्ट-**

आप्लुतानाप्लुते काये यस्य गन्धोऽतिमानुषः ।

मलवस्त्रवणादौ वा वर्षान्त तस्य जीवितम् ॥२४॥

स्नान करने पर या स्नान न करने पर जिस मनुष्य में कोई दैवी सुगन्ध या दुर्गन्ध रहती है, अथवा मल, वस्त्र और व्रण आदि कोई अमानुष गन्ध रहे, वह एक वर्ष तक ही जीता है।

**मक्खी आदि से रिष्ट ज्ञान-**

भजन्ते ऽत्यङ्गसौरस्याद्यं यूकामक्षिकादयः ।

त्यजन्ति वाऽनिवैरस्यात्सोऽपि वर्ष न जीवति ॥२५॥

उत्तम रस के कारण जिसके अंगों पर जूँ, मक्खी आदि पहुँचती है, अथवा अतिविरिसता के कारण जिसके अंगों को छोड़ देती है। वह भी एक वर्ष नहीं जीता।

**शारिरिक शैत्य आदि से रिष्ट ज्ञान-**

सततोष्मसु गात्रेषु शैत्यं यस्योपलक्ष्यते ।

शीतेषु भृशमौष्ठ्यं वा स्वेदः स्थोऽप्यहेतुकः ॥२६॥

निरन्तर उष्ण रहने वाले अंगों में जिसकी शीतलता का अनुभव होता हो, और जो अंग सदा शीत रहते हों उनमें बिना कारण के अतिशय उष्णता रहे,

इसी प्रकार बिना कारण के स्वेद होना इन लक्षणों में भी एक साल से अधिक नहीं जीता।

पिटिकादि के रिष्ट चिह्न—

यो जातशीतपिटिकः शीताङ्गो वा विद्युतो ।

उष्णदेही च शीतार्तः स प्रेताधिपहोचरः ॥२७॥

जो व्यक्ति (कफ के कारण) शीतिपिटिका से आक्रान्त होने अथवा शीतल अङ्ग होने पर भी जलन का अनुभव करता है, तथा जो शीत से पीड़ित व्यक्ति उष्ण से द्वेष करता है, वह प्रेत के स्वामी (यम) के पास जाता है।

हृदयादि में दाहादि रिष्ट के चिह्न—

उरस्यूष्मा भवेद्यस्य जठरे चातिशीतता ।

भिन्नं पुरीषं तृष्णा च यथा प्रेतस्थैव सः ॥२८॥

मूत्रं पुरीषं निष्ठ्यूतं शुक्रं वाऽप्सु निमज्जति ।

निष्ठ्यूतं बहुर्वर्णं वा यस्य मासात्सनश्यति ॥२९॥

जिस मनुष्य की छाती में उष्णता और उदर में अतिशीतलता हो एवं मल पतला हो तथा यास रहती हो, वह प्रेत अथवा मृतक के समान है। जिसका मूत्र, मल, थूक और शुक्र पानी में ढूब जाता है, अथवा थूक बहुत रंगों वाला होता है, वह एक मास में नष्ट हो जाता है।

प्रतिकूल ज्ञान रिष्ट का चिह्न—

घनीभूतमिवाकाशमाकाशमिव यो धनम् ।

अमूर्तमिव मूर्त च मूर्त चामूर्तवत्स्थितम् ॥३०॥

तेजस्यतेजस्तद्वच्च शुक्लं कृष्णमसच्च सत् ।

अनेत्रोगश्चन्द्रं च बहुरूपमलाञ्जनम् ॥३१॥

जाग्रदक्षांसि गन्धर्वान् प्रेतानन्यांश्च तदिधान् ।

रूपं व्याकृतितत्त्व्यः पश्यति स नश्यति ॥३२॥

जो मनुष्य आकाश को घनरूप वाला और घनवस्तु को आकाश की भाँति, अमूर्त को मूर्त की तरह और मूर्त को अमूर्त की भाँति, तेज को तेज से रहित,

इसी प्रकार अतेजस को तेज से युक्त, श्वेत को काला, काले को श्वेत, असत् को सत् और सत् को असत्, बिना नेत्र रोग के भी चन्द्रमा को बहुत रूप वाला और दाग रहित देखता है जागता हुआ भी राक्षस, गन्धर्व प्रेत या इस प्रकार के प्राणियों को देखता है, तथा जो दृष्टि आकृति वाले रूप को देखता है या अनेक रूप देखता है, वह नष्ट हो जाता है।

अरुंधती आदि को न देखना रूप रिष्ट

सप्तर्षीणां समीपस्थां यो न पश्यत्यरुन्धतीम् ।

ध्रुवमाकाशगङ्गा वा स न पश्यति तां समाम् ॥३३॥

सप्तर्षियों के पास में स्थित अरुन्धती को जो नहीं देखता है अथवा आकाश गंगा को और ध्रुव को नहीं देखता, वह एक साल में मर जाता है।

कर्ण आदि विकृति से रिष्टज्ञान—

मेधातोयौधनिर्धोषवीणापणववेणुजान् ।

श्रृणोत्यन्यांश्च यः शब्दानसतो न सतोऽपि वा ॥३४॥

निष्पीड्य कर्णो श्रृणुयान्न यो धुकधुकास्वनम् ।

तद्वग्दन्धरसस्पर्शान् मन्यते यो विपर्यात् ॥३५॥

सर्वशो वा न यो यश्च दीपगन्धं न जिग्रति ।

विधिना यस्य दोषाय स्वास्थ्याया विधिना रसाः ॥३६॥

यः पांसुनेव कीर्णाङ्गो योऽङ्गे घातं न वेति वा।

अन्तरेण तपस्तीव्रं योगं वा विधिपूर्वकम् ॥३८॥

जानात्यतीन्द्रियं यश्च तेषां मरणमादिशोत् ।

जो मनुष्य बादल, पानी के प्रवाह का शब्द तथा वीणा, पणव, या वेणुजन्य शब्दों को तथा दूसरे शब्दों का न होने पर भी सुनता है अथवा शब्द होने पर भी नहीं सुनता, तथा कानों को बन्द करके जो (स्वभावः सुनाई देने वाले) धुक धुक शब्द को नहीं सुनता, इसी प्रकार जो गन्ध, रस और रूप का विपरीत रूप में अनुभव करता है, अथवा बिल्कुल अनुभव नहीं करता, और जो दीपक (के बुझने) की गन्ध को नहीं सूचता तथा विधिपूर्वक दिये रस जिसमें रोग उत्पन्न करते हैं और अविधिपूर्वक दिये रस स्वास्थ्य देते हैं, जो मनुष्य अंगों को धूल

से भरा मानता है अथवा अंग पर लगी चोट को नहीं जानता, जो मनुष्य बिना तीव्र तप किये या बिना विधिपूर्वक योग (के द्वारा शक्ति प्राप्त) किये अतीन्द्रिय विषय को जानता है उसकी मृत्यु जाननी चाहिए।

#### स्वरविकारादि से रिष्टज्ञान—

हीनो दीनः स्वरोऽव्यक्तो यस्य स्यादगद् गदोऽपि वा ।  
सहसा यो विमुह्येदा विवक्षुर्न स जीवति ।  
स्वरस्य दुर्वलीभावं हानिं च बलवर्णयोः ॥३९॥  
रोगवृद्धिमयुक्तया च दृष्ट्वा मरणमादिशेत् ।  
अपस्वरं भाषमाणं प्राप्तं मरणमात्मनः ॥४०॥  
श्रोतारं चास्य शब्दस्य दूरतः परिवर्जयेत् ।

**स्वरविकृति-** जिसका स्वर बिना कारण के हीन, दीन, अव्यक्त अथवा भर्या हुआ होता है अथवा जो बोलने की इच्छा होने पर सहसा बोल नहीं सकता, वह नहीं जीता। बिना कारण के स्वर की निर्बलता, जल एवं वर्ण की हानि और अकारण रोग की वृद्धि देखकर मृत्यु कहनी चाहिए। स्वाभाविक स्वर से भिन्न अर्थात् हीन स्वर में जो मनुष्य अपनी मृत्यु (मैं- मरुँगा, मरुँगा) को कहता है, उसको तथा इस शब्द को सुनने वाले रोगी को भी वैद्य दूर से छोड़ देवे।

#### छायाविपर्यय रिष्ट-

संस्थानेन प्रमाणेन वर्णेन प्रभयाऽपि वा ।  
छाया विवर्तते यस्य स्वन्नेऽपि प्रेत एव सः ॥४१॥

आकृति में, परिमाप में, वर्ण में अथवा कान्ति में जिसकी छाया बदल जाती है, वह स्वप्न में भी प्रेत ही है (जागने पर तो ही ही)।

#### छाया और प्रतिछाया—

आतपादर्शतोयादौ या संस्थानप्रमाणतः ॥४२॥  
छायाऽङ्गात्सम्भवत्युक्ता प्रतिछायेति सा पुनः ।  
वर्णप्रभाश्रया या तु सा छायैव शरीरगा ॥४३॥

छाया दो प्रकार की है— धूप, शीशा और जल आदि में आकर एवं परिमाण

के अनुकूल अंगों की जो छाया होती है; उसे 'प्रतिछाया' कहते हैं और जो शरीर में ही प्रभा और वर्ण के आश्रित रहती है; वह छाया है।

#### प्रतिछायाविकार—

भवेद्यस्य प्रतिछाया छिना भिन्नाऽधिकाऽऽकुला ।  
विशिरा द्विशिरा जिम्मा विकृता यजि वाऽन्यथा ॥४४॥  
तं समाप्तायुषं विद्यान्ना चेल्लक्ष्यनिमित्तजा ।  
प्रतिछायामयी यस्य न चाक्षीक्षेत कन्यका ॥४५॥

जिस पुरुष की प्रतिछाया (प्रतिबिम्ब) छिन्न-भिन्न, अधिक, अनिश्चित, अरिथर, शिर से रहित, दो सिर वाली, कुटिल, विकृत अथवा अन्य रूप में दिखायी दे, उसकी आयु समाप्त हुई जानना चाहिए; बशर्ते यह प्रतिबिम्ब प्रत्यक्ष कारण से उत्पन्न न हुआ हो। जिस रोगी की आँखों में प्रतिबिम्ब कुमारिका (पुतली में दीखने वाला प्रतिबिम्ब) वहाँ दिखायी दे, उसकी भी आयु समाप्त हुई जाने।

#### महाभूतों की छाया का पृथक्-पृथक् स्वरूप—

आकाश आदि पञ्च महाभूतों की पाँच छाया भिन्न-भिन्न लक्षणों की होती है। यथा— आकाश की छाया—निर्मल, थोड़ी नील वर्ण, ईषत्सिनग्ध और प्रभा से युक्त होती है। वायु की छाया—धूलि से लिप्त की भाँति अरुण, श्यामवर्ण, भस्म के समान, रुक्ष एवं नष्टकांति होती है। अग्नि की छाया—विशुद्ध रक्त के समान लाल, दीप्त प्रभा तथा देखने में सुख देने वाली होती है। जल की छाया—निर्मल वैद्यर्य के साथ विमल, अतिस्निग्ध और आरोग्य देने वाली होती है। पृथ्वी की छाया—रिथर (अचल) स्निग्ध वर्ण घन, निर्मल, श्याम और श्वेत होती है।

#### महाभूतों की छाया के पृथक् गुण—

वायवी रोगमरणक्लेशयन्याः सुखोदयाः ।

वायु की छाया—रोग, मृत्यु और क्लेश देने वाली और शेष चार छाया सुख देने वाली हैं।

#### प्रभा के सात प्रकार तथा शुभाशुभत्व—

प्रभोक्ततैजसी सती, सातु सप्तविधा स्मृता ।  
रक्ता पीता सिता श्यावा हरिता पाण्डुपराऽसिता ॥४९॥  
तासां याः स्युर्विक्तासिन्यः स्निग्धाश्च विमलाश्च याः ।  
ताः शुभाः मलिना रुक्षाः संश्रिप्ताश्चाशुभोदयाः ॥५०॥

सभी प्रभायें तैजस होती हैं और वे सात प्रकार की कही गई हैं। यथा—लाल, पीली, श्वेत, श्याव, हरित पाण्डुर और काली।

इनमें से जो प्रभा फैलने वाली (सतेज), स्तिंगध और विमल होती है। वे शुभ हैं और जो मलिन, रुक्ष और सिमटने वाली (निस्तेज) होती हैं वे अशुभ हैं।

छाया तथा प्रभा के भेद और लक्षण—

वर्णमाक्रामति छाया प्रभा वर्ण प्रकाशनी ।

आसन्ने लक्ष्यते छाया विकृष्टे भा प्रकाशते ॥५१॥

छाया रक्त आदि (स्वाभाविक) वर्णों को दबा देती हैं और प्रभा लाल आदि वर्णों को प्रकाशित करती है। छाया पास से दिखाई देती हैं और प्रभा दूर से ही चमकती है।

छाया और प्रभा की व्यापकता और प्रभाव—

नाच्छायो नाप्रभः कश्चिद्दिशेषाश्चह्नयन्ति तु ।

नृणां शुभाशुभोत्पत्तिं काले छायासमाश्रयाः ॥५२॥

कोई भी मनुष्य बिना छाया के या बिना प्रभा के नहीं होता किन्तु छाया के अश्रित समय—समय पर होने वाले विशेष (परिवर्तन) मनुष्य के शुभ या अशुभ को सूचित करते हैं।

रिष्ट के अन्य चिन्ह—

जो मनुष्य पैरों को भूमि पर रगड़ता हुआ—सा तथा कन्धों को गिराकर चलता है, हितकारी अन्न और मात्रा में बहुत खाते हुए भी बल में निरन्तर घटता जाता है, जिसे थोड़ा खाने पर भी मलमूत्र अधिक आते हैं या बहुत खाने पर मलमूत्र थोड़े आते हैं, अथवा जो थोड़ा खाने पर भी कफ से पीड़ित होकर लम्बा श्वास लेता है और श्वास के लिए हाथ पेर मारता है; जो लम्बा उच्छ्वास निकालकर पीछे से छोटा निःश्वास अन्दर लेकर दुःख अनुभव करता है और जो थोड़ी वायु बाहर नाक से निकालता है; विषम रूप में अतिशय से जिसकी नाड़ियों में स्पन्दन होता है; जो अग्रबाहु को सिकोड़कर कठिनाई से सिर को कंपाता हो; जिसके ललाट से पसीना बहता हो एवं सन्धि बन्ध शिथिल हो, जो बलवान् या दुर्बल व्यक्ति खड़ा करने पर भी मृच्छित हो जाता है, जो चित्त (पीठ के बल) ही सोता है, और पावों को विरूप रखता है, बिस्तर आसन या दीवार पर जो न होने

वाली वस्तु को पकड़ना चाहता है, जो बिना अवसर के हँसते हुए मृच्छित होकर ओठों को चाटता है, जो ऊपर के ओठ को चाटता हुआ फूत्कार करता है, जिसकी ओर काली पीली या लाल वर्ण की छाया दौड़ती हो ऐसा दीखता है और जो वैद्य, औषध, पेय, भोजन, गुरु और मित्र से देष करता हो, उन सबको यम का वशीभूत हुआ जानना।

ग्रीवाललाटहृदयं यस्य स्विद्यति शीतलम् ।

उष्णोऽपरः प्रदेशश्च शरणं तस्य देवताः ॥६१॥

पूर्वरूपाणि सर्वाणि ज्वरादिव्यति मात्रया ।

यं विशन्ति विशत्येनं मृत्युर्जरपुरः सरः ॥१॥

जिसके ग्रीवा, ललाट और हृदय शीतल ओर पसीने से युक्त हों और दूसरे अंग गर्म हों, उसकी रक्षा देवता ही कर सकते हैं, दूसरे नहीं।

जिसमें ज्वर आदि रोगों के सब पूर्वरूप अतिमात्रा में प्रविष्ट उत्पन्न होते हैं, उसमें ज्वर आदि रोगों को आगे करके मृत्यु धुसरी है।

योऽणुर्ज्योतिश्नेकाग्रो दुश्छायो दुर्मनाः सदा ।

बलिं बलिभूतो यस्य प्रणीतं नोपभुजते ॥६२॥

निर्निमित्तं च ये मेधां शोभामुपचयं श्रियम् ।

प्राप्नोति वा विभ्रंशं स प्राप्नोति यमक्षयम् ॥६३॥

जिसकी ज्योति (हृष्टि या अग्नि) स्वल्प हो, व्याकुल मन, दूषित छाया युक्त और निरन्तर शोभाक्रान्त मन हो, जिसकी दी हुई बलि को कौए आदि नहीं खाते, बिना कारण के ही जिसमें मेधा, शोभा पुष्टि और लक्ष्मी आ जाती अथवा मेधा, शोभा आदि बिना कारण के नाष्ट हो जाती हो, वह मर जाता है।

प्रकृति विपर्यय-

गृणदोषमयी यस्य स्वस्थस्य व्याधितस्य वा ।

यात्यन्यथात्वं प्रकृतिः षण्मासान्न स जीवति ॥६४॥

जिस स्वरथ रोगी पुरुष की सत्त्वादि गृणमयी तथा वातादि दोषमयी प्रकृति (सहज स्वभाव) बदल जाती है, वह छः मास से अधिक नहीं जीता।

भवितः शीलं स्मृतिस्त्यागो बुद्धिर्बलमहेतुकम् ।

षडेतानि निर्वर्तन्ते षड्भिर्मासैर्मरिष्यतः ॥६५॥

छः मास में मरने वाले मनुष्य की भक्ति, शील, सृति, त्याग, बुद्धि और बल ये बिना कारण नष्ट हो जाते हैं। (इन छः में से कुछ के ही नष्ट होने से रिष्ट नहीं होता।)

**मत्तवद्गतिवाक्कम्पमोहा मासान्मरिष्टः ॥६६ ॥**

जिसकी गति, वाणी, कम्प और मोहमत्त (पागल) की भाँति हो जाते हैं, वह एक मास के भीतर मरता है।

**नश्यत्यजानन् षड्हात्केशलुञ्चनवेदनाम् ।**

**न यति यस्य चाहारः कण्ठं कण्टामयादृते ॥६७ ॥**

**प्रेष्याः प्रतीपतां यान्ति प्रेताकृतिस्तीर्यते ।**

**यस्य निद्रा भवेन्नित्या नैव वा न स जीवति ॥६८ ॥**

जो केशों को उखाड़ने की वेदना का अनुभव नहीं करता और गले के रोग के बिना, भोजन जिसके गले के नीचे नहीं जाता, वे छः दिनों में मर जाते हैं।

जिसके भूत्य (अकस्मात् और अकारण) विपरीत हो जाते हैं, उसे प्रेत की आकृति वाला (मरा) कहते हैं। जिसको निरन्तर निद्रा आती हो अथवा बिल्कुल न आती हो, वह नहीं जीता।

**वाष्पद्वार का बन्द होना आदि रिष्ट का लक्षण—**

**वक्त्रमापूर्यतेऽशृणां स्विद्यतश्चणौ भृशम् ।**

**चक्षुश्चाकुलातां याति यमराज्यं गमिष्टः ॥६९ ॥**

जिस मनुष्य के आँसुओं के स्रोतों का मुख बन्द हो जाता है अथवा पैरों पर बहुत पसीना आता है, या आँखों में आकुलता रहती है वह शीघ्र ही मरता है। यैः पुरा रमते भावैररतिस्तैर्न जीवति।

जो पदार्थ पहले सुखकारक अनुभव होते थे, उनसे ही अरुचि हो जावे, तो वह नहीं बचता।

**सहसा जायते यस्य विकारः सर्वलक्षणः ।**

**निवर्तते वा सहसा, सहसा स विनश्यति ॥७० ॥**

जिस रोगी में रोग एकदम से सम्पूर्ण लक्षणों का हो जाता है अथवा रोग सहसा हट जाता है, वह अकस्मात् मर जाता है।

**ज्वरादि रोगों के विशिष्ट रिष्ट—**

जिस पुरुष में हेतु आदि से बलवान्, गम्भीर (सब धातुओं के अन्दर प्रविष्ट), देर से चला आने वाला, प्रलाप, भ्रम, श्वास, धातुक्षय और शोधयुक्त ज्वर हो, जिसकी अग्नि नष्ट हो गई है, जो बलवान् है, फिर भी आवाज न निकलती हो, जो लाल आँखों वाला और हृदयशूल वाला हो, ऐसे रोगी का ज्वर उसे मार देता है। जो ज्वर शुष्क कास के साथ पूर्वान्ह में या अपराह्न में होता हो, तथा जिस रोगी का बल और माँस नष्ट हो गया हो उसे श्लेष्म-कास युक्त ज्वर मार देता है। ये तीन रिष्ट हैं। इनके अतिरिक्त अन्य रिष्टों का वर्णन भी विभिन्न ग्रन्थों में मिलता है।

**रक्त पित्त के रिष्ट—**

जिस रक्त, पित्त में बहुत लाल, काला इन्द्र धनुष की कान्ति का (नानावर्ण का): ताम्र, हारिद्र या हरित, लाल रूप दिखाई देवें, जो रोम कूपों से बहता है, तथा जिसमें रक्त, कण्ठ, मुख और हृदय में रुक्ष जाता है, जिसमें रक्त से वस्त्र रंग नहीं जाता, जिसमें दुर्गन्धयुक्त वेग के साथ बहुत मात्रा में रक्त बहता है; वह तथा बहुत बड़ा हुआ रक्तपित्त, पाण्डु, ज्वर, वमन, कास, शोथ और अतिसार वाले रोगी को नष्ट कर देता है अर्थात् पाण्डु आदि रोगों में प्रबल रक्तपित्त रिष्ट होता है।

**कासश्वास के रिष्ट—**

**कासश्वासौ ज्वरच्छर्दितृष्णातीसारशोफिनम् ॥७६ ॥**

ज्वर, वमन, तृष्णा, अतीसार और शोफ से युक्त रोगी को कास तथा श्वास मार देते हैं।

**राज्यक्षमा के रिष्ट—**

**रक्षमा पाश्वरूजानाहरक्तच्छर्द्यसत्तापिनम् ।**

पाश्वरूक, आनाह, रक्तवमन और असंताप वाले रोगी का यक्षमा नष्ट कर देता है।

**वमन के रिष्ट—**

**छर्दिवेगवती मूत्रशकृद्गन्धिः सचन्द्रिका ॥७७ ॥**

**सास्त्रविद्यूयरूक्कासश्वासवत्यनुषङ्गिणी ।**

वेगशीला, मूत्र एवं मल की गन्ध वाली; चन्द्रिका यक्षत; रक्त, मल, पूय, पीड़ा

कास और श्वास के साथ होने वाली तथा चिरकाल से चलती हुई छर्दि रोगी मार देती है।

**रिष्टभूत तृष्णा तथा मदात्यय—**  
**तृष्णाऽन्यरोगक्षपितं बहिर्जिहुँ विवेचनम् ॥78॥**  
**मदात्ययोऽतिशीतार्तं क्षीणं तैलप्रभाननम् ।**

किसी अन्य रोग से कृश, जीभ बाहर निकाले हुये मूर्छा युक्त रोगी को तृष्णा नष्ट कर देती है। अतिशीत से पीड़ित, क्षीण और तैलप्रभा के तुल्य मुखवाले रोगी को मदात्यय मार देता है।

**अर्श के रिष्ट—**

**अर्शासि पाणिपन्नाभिगुदमुष्कास्यशोफिनम् ॥79॥**  
**हत्पाशर्वाङ्गस्त्रजाच्छर्दिपायुपाकज्वरातुरम् ।**

हाथ, पैर, नाभि, गुदा, मुष्क तथा मुख में शोफ वाले एवं हृदय पीड़ा, पाश्व धी या अंगवेदना से पीड़ित तथा वमन गुदापाक और ज्वर वाले रोगी को अर्श रोग मार देता है।

**अतीसार के रिष्ट—**

यकृत्पिण्ड के या मांस क धोने के जल के समान या कृष्णवर्ण; तैल, धी, दूध, दही, मज्जा, वसा या आसव के समान; मस्तुलुंग, स्याही (काली), पूय, वेसवार, पानी या मधु के समान; अतिशय लाल या काला; अतिस्निग्ध, अतिदुर्गम्ययुक्त; अतिपतला, अतिघट्या अतिवेदनायुक्त; नानावर्ण का; अतिसार या रक्तादि धातु जिसमें बहते हों, मलरहित तथा अतिशय मल वाला; तनु (रेशे) वाला, मक्खियाँ जिस पर बहुत आती हों, रेखावाला तथा चन्द्रिका युक्त मलवाला, अतीसार से जिस पुरुष की गुर्दवलियाँ शीर्ण (चिथड़ी) हो गई हों, नल खुल गया हो (निरन्तर मल का प्रवाह हो रहा हो), पर्वशूल एवं अस्थिशूल से पीड़ित हो, गुदभ्रंश हो गया हो तथा बल क्षीण हो, अपक्व आहार मल में त्याग करता हो, प्यास, श्वास, ज्वर, वमन, दाह, आनाह तथा प्रवाहिका से युक्त रोगी को मार देता है।

**अश्मरी रिष्ट—**

**अश्मरी शूनवृष्णं बद्धमूत्रं रुजार्दितम् ।**

जिसके वृष्ण सूज गये हों, मूत्र रुक गया हो, तथा पीड़ा से दुःखी हो, उस मनुष्य को अश्मरी मार देती है।

**प्रमेह रिष्ट—**

प्यास, दाह, पिटिका, मांस का सङ्ग्रह और अतीसार से पीड़ित मनुष्य को प्रमेह मार देता है।

मर्मों में हृदय, पीठ, स्तन, अर्स, गुदा और सिर में उत्पन्न पिटिका तथा पर्व या पैर अथवा हाथ में उत्पन्न पिटिका, मन्द उत्साह वाले प्रमेही को मार देती है और माँस की सङ्ग्रह, दाह, प्यास, मद, ज्वर विसर्प, मर्मों का अवरोध, हिक्का, श्वास, भ्रम और क्लम थकान से युक्त पिटिका सब मनुष्यों के लिए मारक होती है॥

**गुल्मरिष्ट—**

विस्तृत मोटाई वाला, घट्ट कछुए के समान ऊपर को उठा, सिराओं से व्याप्त; ज्वर वमन हिक्का, आध्मान और पीड़ायुक्त, कास, पीनस, जी मिचलाना, श्वास, अतीसार तथा शोफ से युक्त गुल्म रोगी को मार देता है।

**उदररोग रिष्ट—**

उदररोग मलमूत्र के अवरोध, श्वास, सोफ, हिक्का, ज्वर, भ्रम, मूर्छा, वमन और अतीसार से युक्त होने पर निर्बल मनुष्य को मार देता है। जिसकी आँखों पर सूजन आ गई हो; मेहन, बस्ति, वृष्ण आदि कुटिल हो गये हों, शरीर और त्वचा क्लेदयुक्त हो, तथा विरेचन से आनाह हटा देने पर भी बार-बार जिसको आनाह होता हो; उसे उदररोग मार देता है।

**पाण्डुरोग में रिष्ट—**

**पाण्डुरोगः श्वयथुमान् पीताक्षिनखदर्शनम् ॥91॥**

शोथयुक्त पाण्डु रोग, आँख, नख और दृष्टि पीली होने पर मार देता है।

**शोफ में रिष्ट—**

तन्द्रा, दाह, अरुचि, वमन, मूर्छा; आध्मान एवं अतीसार से युक्त तथा अनेक उपद्रवों से युक्त शोथ जो कि पुरुष के पैरों से आरम्भ होकर फैला हो, और स्त्री के मुख से आरम्भ होकर फैला हो या स्त्री पुरुष दोनों में (कुक्षिः) उदर और गुह्य भाग से उत्पन्न हुआ, रेखाओं से व्याप्त हो, तथा दोषानुसार बहाव वाला



### मसूरिका के रिष्ट

जिस रोगी के शरीर में प्रवाल की गुटिका के समान मसूरिका (चेचक) उत्पन्न होकर शीघ्र नष्ट हो जाती है, वह रोगी जल्दी ही मर जाता है।

मसूरविदल (मसूर की दाल) अथवा प्रवाल के समान, अन्दर में मुख वाले, किण (व्रणवस्तु= Sear या मस्से) के समान विस्फोट मारक होते हैं।

**कामलाऽक्षणोर्मुखं पूर्ण शङ्खयोर्मुक्तमांसता ।**

**सन्त्रासश्चोष्णताऽङ्गे च तस्य तं परिवर्जयेत् ॥1 13॥**

जिस रोगी की आँखों में कामला (पीलापन), मुख में पूर्णता शंखों में मांस की न्यूनता और अंगों में त्रास एवं उष्णिमा हो, उसकी वैद्य चिकित्सा न करें।

### ब्रणों के रिष्ट-

जिसकी त्वचा बिना कारण ही छिल जाये, और धृष्टक्षत फैलाता जाये, उसकी वैद्य चिकित्सा न करें।

चन्दन, खस, मदीरा, शव तथा कौए की गन्ध वाले, शैवाल, मुर्गे की शिखा, केशर, हरताल या स्याही के समान कान्ति वाले, अन्दर से जलने वाले और बाहर उष्णिमा-रहित ब्रण प्राण नाशक होते हैं।

जिस वातजन्य ब्रण में शूल न हों, पित्तजन्य में दाह न हो कफ जन्य में पूय न हो, मर्मजन्य में पीड़ा न हो, बिना चूर्ण छिड़के भी चूर्ण बिखेरा प्रतीत हो, बिना कारण के शक्ति ध्वजा आदि का रूप जिन ब्रणों में दिखाई देवे, उन सब ब्रणों को असाध्य समझें।

जिस भग्नदर से मल, मूत्र और वायु निकले, तथा जो क्रीमयुक्त, हो वह असाध्य है।

### अन्य प्रकीर्ण रिष्ट-

**घट्यज् जानुना जानु पादावृद्धम्यपातयन् ।**

**योऽपास्यति मुहुर्वक्त्वातुरो न स जीवति ॥**

जो रोगी घुटने को घुटने से रगड़ता है, पैर को ऊपर उठाकर फेंकता है, जो बिना कारण के मुख को हटाता रहता है, वह नहीं बचता।

दन्तैश्छिन्दन्नखायाणि तैश्च कैशांस्तुणानि च ।

भूमि काष्ठेन विलिखश् लोष्टं लोष्टेन ताङ्यन् ॥1 18॥

हृष्यरोमा सान्द्रमूत्रः शुष्ककासी ज्वरी च यः ।

मुहुर्सम् मुहुः क्षेडज् शव्यां पादेन हन्ति यः ॥

मुहश्छिद्राणि विमृशन्नातुरो न स जीवति ।

दाँतों से नखों के अग्रभागों को, नखाग्रों से केशों या तिनकों को काटने वाला, भूमि को लकड़ी से कुरेदने वाला, ढेले को देले से मारने वाला, रोमांच वाला, घट्ट (गढ़े) मूत्र वाला, शुष्ककास युक्त, ज्वर रोगी, बार-बार हँसने वाला, बार-बार शब्द करने वाला, पैर से शव्या को मारने वाला तथा बार-बार छिद्रों के (दोषों की) विवेचना करने वाला (छिन्द्रान्वेषी) या नासिका आदि छिद्रों को बार-बार स्पर्श करने वाला रोगी नहीं जीता।

मृत्यवे सहसाऽस्त्य तिसकव्यङ्गविप्लवः ॥1 20॥

मुखे, दन्तनखे पुष्पं, जटरे, विविधाः सिराः ।

रोगी के मुख पर अचानक तिलक, व्यङ्ग तथा विपल्व का होना, नखों या दाँतों पर पुष्प (श्वेत चिन्ह) बनना, ज्वर पर नाना प्रकार की शिराओं का उभड़ना मृत्यु के लिए होता है।

ऊर्ध्वश्वासं गतोष्माणं शलोपहतवक्षणम् ॥1 21॥

शर्म चानधिगच्छन्तं बुद्धिमान् परिवर्जयते ।

ऊर्ध्व श्वास वाले, ऊष्मा रहित, वंक्षण शूलयुक्त एवं (किसी भी प्रकार) शान्तिक न अनुभव करने वाले (बेचैन) रोगी को वैद्य छोड़ देवें।

विकारा यस्य वर्धन्ते प्रकृतिः परिहीयते ॥1 22॥

सहसा, सहसा तस्य मृत्युर्हरति जीवितम् ।

जिस रोगी के विकार (रोग) सहसा बढ़ते हों और प्रकृति सहसा कम होती (बदलती) जाती हो, (शूर डरपोक होते, दाता लालची हो जाये आदि) उसकी मृत्यु सहसा हो जाती है।

औषधि सम्बन्धी रिष्ट-

यमुद्विश्यातुरं वैद्यः सम्पादयितुमौषधम् ॥1 23॥

यत्मानो च शन्क्रोति दुर्लभं तस्य जीवितम् ।

जिसके उद्देश्य से वैद्य यत्करते हुए भी औषध तैयार नहीं कर सकता है, उसका जीवन दुर्लभ है।

**विज्ञातं बहुशा सिद्धं विधिवचावचारितम् ।**

**न सिध्यत्यौषधं यस्य नास्ति तस्य चिकित्सतम् ॥1 2 4 ॥**

पूर्णतया जानी हुई, बार-बार सफल सिद्ध हुई, तथा विधिपूर्वक दी हुई भी औषध जिस रोग में सफल नहीं होती, उसके लिए औषध नहीं है। (वह मरेगा)।

**भवेद्यस्यौषधेऽने वा कल्प्यमाने विपर्ययः ॥1 2 5 ॥**

**अकस्माद्वर्णगन्धादेः स्वस्थोऽपि न स जीवति ।**

जिसके उद्देश्य से औषध या अन्न बनाने में बिना कारण के रस, गन्ध, वर्ण, आदि की विपरीतता हो जाती है, वह स्वस्थ होने पर भी नहीं जीता।

**अदृष्टजन्य रिष्ट—**

**निवाते सेन्धनं यस्य ज्योतिश्चाप्युपशास्यति ॥1 2 6 ॥**

**आतुरस्य गृहे यस्य भिद्यन्कते वा पतन्ति वा।**

**अतिमात्रममत्राणि दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥1 2 7 ॥**

जिस रोगी के घर में हवा का झोंका न होने तथा तैल और बत्ती ठीक होने पर भी दीपक बुझ जाता है, अथवा बर्तन आदि जिसके घर में बहुत अधिक मात्रा में टूटते व गिरते हैं, उस रोगी का जीवन दुर्लभ है।

**यं नरं सहसा रोगो दुर्बलं परिमुश्चति ।**

**संशयप्राप्तमात्रेयो जीवितंतस्य मन्यते ॥1 2 8 ॥**

जिस दुर्लभ मनुष्य को रोग सहसा छोड़ देता है आत्रेय ऋषि उसके जीवन को संशयग्रस्त मानते हैं।

**रोगी के बाध्यवादी से रिष्ट का कथन निषेध—**

**कथयेन्च च पृष्ठोऽपि दुःश्रवं मरणं भिषेक् ।**

**गतासोर्बन्धुमित्राणां च चेच्छेतं चिकित्सतुम् ॥**

वैद्य को चाहिए कि मरने वाले के सम्बन्धी या मित्रों को पूछने पर भी सुनने में बुरी (मृत्यु की) सूचना न दे और (किसी बहाने से टालकर) उसकी चिकित्सा

न करे ('गतासु' का सामान्य अर्थ 'मृत' होता है, पर यहाँ 'आसन मृत्यु' समझना चाहिए।

**रिष्ट युक्त रोगी की चिकित्सा निषेध का कारण—**

**यमदूतपिशाचाद्यैर्यत्परासुरुपास्ते ।**

**श्रभिदरौषधवीर्याणि तस्मात्परिवर्जयते ॥1 3 0 ॥**

क्योंकि यमदूत, पिशाच आदि धेरे रहते हैं, और औषध की शक्ति को नष्ट कर देते हैं; इसलिए मुमर्ष की चिकित्सा न करें।

**रिष्ट ज्ञान की महत्ता—**

**आयुर्वेदफलं कृत्स्नं यदायुर्ज्ञे प्रतीष्टितम् ।**

**रिष्टज्ञानद्रतस्त्वात्सवैदैव भवेभिद्षक् ॥1 3 1 ॥**

क्योंकि आयुर्वेद को जानने वाले वैद्य में आयुर्वेद का फल (आयु का ज्ञान और उसकी रक्षा) सम्पूर्ण रूप में स्थित है। इसीलिए वैद्य को सदा रिष्ट ज्ञान को समझने वाला होना चाहिए।

आयु होने पर उसकी रक्षा भी हो सकती है, रिष्ट ज्ञान से आयु समाप्ति की सूचना मिलती है, और आयु समाप्ति में उसकी रक्षा का प्रयास व्यर्थ होता है।

**पुण्यादिक्षय से मृत्युकारण—**

**मरणं प्राणिनां दृष्टमायुः पुण्यो भयक्षयात् ।**

**तयोरप्यक्षायाद् दृष्टं विशमापरिहारिणाम् ॥1 3 2 ॥**

आयु और पुण्य में से किसी एक या दोनों के क्षय होने पर प्राणियों का मरण देखा जाता है। आयु, और पुण्य इन दोनों का क्षय न होने पर भी विषम आहार-विहार आदि का (चण्ड, हाथी, गाय, भैस, शेर, साँप, आदि जिनसे बचना चाहिये उनका) परिहरण न करने के स्वभाव वालों की भी मृत्यु देखी जाती है।

**वक्तव्य—** मृत्यु नियत काल और अनियत काल दोनों प्रकार की है। जैसे एक गाड़ी सीधे राते पर चलते-चलते अपने समय पर टूटती है, वह नियत काल मृत्यु हैं, और वही गाड़ी पहाड़ आदि पर चलाने से या वाहक या घोड़े आदि के दोष से असमय में टूट जाती है यह अकाल मृत्यु है। इस प्रकार आयु और पुण्य के क्षय से जो मृत्यु होती है, वह काल मृत्यु है। शेर, चीता आदि से या अपथ्य सेवन से जो मृत्यु होती है वह अकाल मृत्यु है।

(1) यहाँ मृत्यु के चार कारण बताये गये हैं-

(1) आयुःक्षय (2) पुण्यक्षय (3) उभयक्षय (4) विषमापरिहार ।

शरीर की रचना के अनुसार (अ.३ श्लोक 106 से 118)

यथा योग्य समय पर आयुःक्षय से मृत्यु होती है।

अधिक जीने योग्य शरीर होने पर भी उचित भोजनादि साधनों के अभाव से होने वाली मृत्यु पुण्यक्षयजन्य होती है।

जहाँ दोनों ही कारण होते हैं, वहाँ उभयक्षयजन्य मृत्यु होती है और जब असंयम, साहस और असावधानी आदि के कारण (ऊपर वक्तव्य में वर्णित) जो अकाल मृत्यु होती है, वह विषमापरिहारजन्य मृत्यु कहलाती है।

### जीन आयुर्वेद में वर्णित शकुन-विज्ञान

रोगी की परिस्थिति सम्बन्धी प्रश्न, निमित्त सूचना, शकुन, ज्योतिषशास्त्र के लग्न, चन्द्रयोग आदि, स्वप्न व दिव्यज्ञानियों का कथन आदि द्वारा रोगी के आयु प्रमाण को जानकर वैद्य चिकित्सा में प्रयत्न करें।

रिष्टै र्विना न मरणं भवतीह जंतोः  
स्थानव्यतिकर मणोऽतिसुसूक्ष्मतो वा  
कृच्छाण्यपि प्रथित भूतभवद्विष्य  
द्रूपाणियत्वविधिनात्र भिषकप्रपश्येत् ॥३१॥

रिष्ट (मरण सूचक चिह्न) के प्रगट हुए बिना प्राणियों का मरण नहीं होता है, अर्थात् मरने के पहिले मरण सूचक चिह्न अवश्यमेव प्रकट होता है। इसीलिये वैद्य का कर्तव्य है, कि जानने में अत्यन्त कठिन ऐसे भूत, वर्तमान और भविष्यत्काल में होने वाले मरण लक्षणों को स्थान के परिवर्तन करके और अत्यन्त सूक्ष्म रीति से प्रयत्नपूर्वक वह देखें। (मरण चिह्न किसी नियत अंग प्रत्यंगों में ही नहीं होता है शरीर के प्रत्येक अवयव में हो सकता है इसीलिये उनको पहचानने के लिए एक अंग को छोड़कर दूसरा, दूसरा छोड़कर, तीसरा अंग, इस प्रकार प्रत्येक स्थान या अंगों को परिवर्तन करके देखें।

### अरिष्ट लक्षण

वात, पित्त, कफ प्रकृति, देह का स्वाभाविक स्वभाव, छाया, आकार आदि जब अपने लक्षण से विपरीतता को धारण करते हैं उसे मरण चिह्न (रिष्ट) समझना

चाहिये। पंचेन्द्रियों में विकार हो जाना व मल और कफको पानी में डालने पर ढूब जाना यह सब उस रोगी के मरण का चिह्न है।

**रिष्ट सूचक दूतलक्षण**

**(शुभदूतलक्षण)**

**सौम्यः शुभाय शुचिवस्त्रयुतः स्वजाति ॥३५॥**

वैद्य को बुलाने के लिए अत्यन्त कृश, हीन वा अधिक काला, रुखा शरीर वाला एवं बीमार दूत आ गया हो, जिसके हाथ में तलवार आदि आयुध या दण्ड हो, संध्याकाल में रोते हुए एवं डर से कांपते हुए आ रहा हो उस दूत को रोगी के लिए यमदूत के समान समझना चाहिए। जो दूत घोड़ा, गधा, हाथी, रथ आदि वाहनों पर चढ़कर, वैद्य को बुलाने के लिये आया हो वह भी निंदनीय है। एवं जो दूत सामने रहने वाले घास वगैरे को तोड़ते हुए, एवं लकड़ी मिट्टी का ढेला, पथर, ईट वगैरह को फोड़ते हुए आ रहा हो वह भी निंद्य है। इस प्रकार के दूत लक्षणगत मरण चिह्न को जानकर रोगी का मरण होगा ऐसा निश्चय करें। तदनंतर सर्वशास्त्र विशारद वैद्य उक्त रोगी की चिकित्सा न करें। शांत, निर्मल वस्त्र युक्त रोगी के समानजाति युक्त दूत का आना शुभ सूचक है।

**अशुभ शकुन**

उद्वेगसंक्षवथुलग्ननिरोधशब्द

प्रत्यर्द्धसंखलितरोषमहोपतापाः

ग्रामाभिधातकलहानिग्नसमुद्भवाद्याः

वैद्यःप्रयाणसमये खलु वर्जनीयाः ॥३६॥

वैद्य रोगी के घर जाने के लिए जब निकलें तब उद्वेग, छोंक, निरोध (बांधों, रोकों बन्द करो आदि) ऐसे विरुद्ध शब्दों को सुनना स्पर्धा, स्खलन, क्रोध, महासन्ताप, ग्राम में उत्पात, कलह, आग लगाना आदि सब अपशुकन है। वैसे अपशुकनों को टालना चाहिये। तात्पर्य यह है कि ऐसे अपशुकनों को देखकर निश्चय करना चाहिये कि रोगी की आयु थोड़ी रह गयी है।

मार्जारसर्पशशाल्यकाष्ठधारा—

ष्यग्निर्धरा ह महिषा न कुलाः शुगालाः

रक्ताः सजस्समलिता रजकस्य भारा:

अभ्यागताः समृतकाः परिवर्जनीयाः ॥३॥

रोगी के घर जाते समय सामने से आने वाले मार्जार, सर्प, खरगोश, आपत्ति, लकड़ी का गट्ठा, अग्नि, सूअर, भैंस, नौला, लोमड़ी लालवर्ण की पुष्टमाला, मलिनवस्त्र व शरीरादि से युक्त मनुष्य अथवा चाण्डाल आदि नीच जाति के मनुष्य, धोबी के कपड़े, मुर्दे के साथ के मनुष्य ये सब अपशुकन हैं।

### शुभशकुन

शांतासु दिक्षु शकुनाः पटहोरुभेरी  
शंखांबुदप्रवरवंशमृदंगनादाः  
छत्रध्वजा नृपसुतः सितवस्त्रकन्याः  
गीतानुकूलमृदुसौरभगंधवाहाः ॥३८॥  
श्वेताक्षताम्बुरुहकुकुटनीलकंठा  
लीलाविलासललिता वनिता गजेन्द्राः  
स्वच्छांबुपूरितधटा वृषवाजिनश्च  
प्रस्थापनापारसमयेऽभिमुखाःप्रशस्ताः ॥३९॥

प्रस्थान करते समय वैद्य को सभी दिशायें शांत हो पटह, भेरी, शंख, मेघ, बासुरी मृदंग आदि से शुभ शब्द मुनाई दे रहे हों, सामने से छत्र, ध्वजा, राजपूत, ध्वलवस्त्रधारिणीकन्या, शीत अनुकूल व सुगन्धित हवा, सफेद अक्षत, कमल, कुकुट, मयूर, खेल व विनोद में मग्न स्त्रियाँ, हाथी व स्वच्छ पानी से भरा हुआ घड़ा, बैल, घोड़ा आदि आवें तो प्रशस्त हैं, शुभशकुन हैं, इनमें वैद्य की विजय होगी।

इस प्रकार के शकुनों से रोगी के भाग्य को निश्चय करके रोगी के पास जाकर उनके सर्वशरीर लक्षण को देखें। वह रोगी दीर्घायुषी होने पर भी वैद्य को उचित है कि वह रोगी की उम्र में कितने वर्ष तो बीत गये और कितने बाकी रहें इस बात का विचार करें।

जिसके हाथ व पाद अत्यन्त कोमल, मांस भरित, स्निध, अशोक की कोपल या कमल के समान हो एवं अनेक शुभसूचक रेखाओं से युक्त होकर निर्मल हो, जिसके दोनों कर्ण मनोहर व दीर्घ हैं अत्यधिक मांस से युक्त है दोनों नेत्र नीलकमल के समान हैं, दाँत मोती या सम्पूर्ण अनारदानों के समान हैं, ललाट व केश रिनग्ध

उन्त दीर्घ हो, जिसका श्वास व दृष्टि लम्बे हैं, बाढ़ पुष्ट है, अँगुलि, नख, मुख, नासिका ये स्थूल हो, रसनेन्द्रिय, गला, उदर, शिश्न, जंघा ये हस्त हों, संधि व नाभि गढ़े हुए हों, गुल्फ छिपा हुआ हो, जिसकी छाती अत्यन्त विस्तृत हो, स्तन व भ्रू के बीच में दीर्घ अंतर हो, शिरासमूह बिल्कुल छिपा हुआ हो, जिसको स्नान कराने पर या कुछ लेपन करने पर पहिले मस्तक को छोड़कर ऊर्ध्व शरीर (शरीर के ऊपर का भाग) सूखता हो फिर अधोशरीर एवं अन्त में मस्तक सूखता हो, जन्म से ही जिसका शरीर रोगमुक्त हो और जो धीरे-धीरे बढ़ रहा हो, जिसकी बुन्दि कला आदि को जानने के लिये सशक्त हो, इन्द्रिय ठढ़ हों, जिसका केश स्निध बारीक व मृदु हों, एवं जिसके रोमकूप प्रायः दूर-दूर हों, इस प्रकार के सुलक्षणों से युक्त शरीर को जो धारण करता है वह विपुल ऐश्वर्य सम्पन्न व दीर्घायुष्य होता है। इन सब लक्षणों से युक्त मनुष्य पूर्ण (दीर्घ) आयुष्य के भोक्ता होता है। यदि इनमें से आधे लक्षण पाये गये तो अर्थ आयुष्य का भोक्ता होता है, एवं इनसे विलक्षण शरीर को धारण करने वाला हीनायुषी होता है, मनुष्य के वय, स्वास्थ्य आदि इन्ही लक्षणों से निर्णीत होते हैं।

इस प्रकार शास्त्र समुद्र पारगामी विधिज्ञ विद्वान् वैद्य को सबसे पहले उस रोगी की आयु को जानकर तदनन्तर उसकी व्याधि का परिज्ञान कर लेना चाहिये एवं विधि पूर्वक उस रोगी की निवृत्ति के लिए प्रयत्न करें। इस प्रकार चिकित्सा कर, अपनी कीर्ति की प्रतिदिन रक्षा करें।

### “आयुर्वेद में वर्णित स्वप्न एवं शकुन”

सप्तविधस्वप्न

दृष्टः श्रुतोऽनुभूतश्च प्रार्थितः कल्पितस्तथा ।

भाविको दोषजश्चैव स्वप्नः सप्तविधो विदुः ॥३॥

स्वप्न सात प्रकार का है—

- (1) दृष्ट — जो दिन में दिखा हो, उसी को रात्रि में स्वप्न में देखें।
- (2) श्रुत — जो बात सुनी हो, उसी को स्वप्न में देखें।
- (3) अनुभूत — जो बात जागृत अवस्था में अनुभव करी हो उसी को स्वप्न में देखें।
- (4) प्रार्थित — जो वस्तु की जागृत अवस्था में इच्छा की हो, उसी को स्वप्न में देखना।
- (5) कल्पित — जो दिन में किसी वस्तु की कल्पना करे, वो स्वप्न में देखें।

(6) भाविक – जो दृष्टश्रुत से विलक्षण देखें और उसको उसका वैसा ही फल हो, उसको भाविक जानना।

(7) दोषज – अर्थात् वात, पित्त, कफ, इनकी प्रकृति के अनुसार स्वप्न दीखना। तीन दृष्टादिक सात स्वप्नों में प्रथम के पाँच स्वप्नों को वैद्य निष्फल कहे। तथा दिन का स्वप्न एवं अति छोटा अथवा अत्यन्त बड़े स्वप्न को भी वैद्य निष्फल जाने, और जो स्वप्न प्रथम रात्रि में देखा हो, वह अल्प फल को देता है जिस स्वप्न को देखकर फिर न सोवें, वह स्वप्न शीघ्र महाफल को देय है।

जो प्रकृति-सम्बन्धी स्वप्न अर्थात् जैसे दोष की प्रकृति हो, उसी प्रकार का स्वप्न देखा हुआ भी निष्फल है। जैसे वात प्रकृति वाला वात प्रकृति के अनुरूप स्वप्न देखे। पित्त-प्रकृतिवाला पित्त प्रकृति के और कफ प्रकृति कफप्रकृति के एवं द्वंद्वज और त्रिदोषज जो द्वंद्वज के और त्रिदोषज प्रकृति के अनुरूप स्वप्न देखे तो निष्फल है। और जिस स्वप्न को देखा उसकी विस्मृति हो जावे तो भी निष्फल है, शेष समान है।

### स्वप्न देखने का कारण

मनोवहानां पूर्णत्वा द्वौषैरतिवलैस्त्रभि।  
स्त्रोतसां दारुणान् स्वप्नान् काले पश्यत्यदारुणान् ॥६॥

मनोवह अर्थात् मन के बहने वाली नाड़ियों के छिद्र जिस समय अतिवली तीनों दोषों से पूर्ण हो जाते हैं, उस काल में यह मनुष्य दारुण (खोटे) और अदारुण (शुभ) स्वप्नों को देखता है।

नातिप्रसुप्तः पुरुष सफलानफलानपि ।  
इन्द्रियेशेन मनसा स्वप्नान पश्यत्यनेकधा ॥७॥

जिस समय यह पुरुष न अत्यन्त सोता हो और न जगता हो, उस समय इन्द्रियों के अधिपति मन के द्वारा सफल और निष्फल अनेक प्रकार के स्वप्नों को देखता है। जिसमें स्वप्न देखता है, उस अवस्था को स्वप्नावस्था कहते हैं।

सर्वेन्द्रियाण्युपरतौ मनोह्युपरतं यथा ।

विषयेभ्यस्तदा स्वप्नं नानारूपं प्रपश्यति ॥८॥

और ग्रन्थाकारों ने भी लिखा है कि जिस समय सम्पूर्ण इन्द्रियाँ और मन विषयों

से उपराम को प्राप्त होते हैं, तब यह प्राणी अनेक प्रकार के भले-बुरे स्वप्नों को देखता है।

### अशुभस्वप्ना:

**रोगभावि स्वप्नाः (राजयक्षमा सूचक स्वप्न)**

तहाँ प्रथम रोग होनहार स्वप्नों को कहते हैं। जो मनुष्य स्वप्न में कुत्ता, ऊँट और गधे पर चढ़ के दक्षिण दिशा को जाता है, उसके राजयक्षमा का रोग होकर मरता है।

### रक्तपित्त संमंभे

जो मनुष्य स्वप्न में लाख और लाल वस्त्र के समान आकाश को देखता है, वह रक्तपित्त रोग को प्राप्त हो, और उसी रक्तपित्त में मरण को प्राप्त होता है।

### रक्तरोगे

जो मनुष्य स्वप्न में लाल फूलमाला और अपने सम्पूर्ण अंगों को लाल और लाल वस्त्रों को धारण करता बारम्बार हँसता है, एवं जिसको स्वप्न में लाल वस्त्र धारण करने वाली स्त्री खींचती है, वह स्नधिर के रोग में मरता है।

### गुल्म रोगे

जिस मनुष्य के स्वप्न में शूल रोग, अफरा, आतों का रोग, अत्यन्त दुर्बलता का रोग, और जिसके नख दुष्टरंग के हो जाय, उस मनुष्य की मृत्यु गुल्मरोग से होती है।

जिस स्वप्न में मनुष्य के हृदय में घोर कांटेवाली लता (बेल) उत्पन्न होय उस मनुष्य के मारनेको कूर गुल्मरोग उसकी देह में प्रवेश करता है।

### कुष्टरोग

जिसकी देह नेक भी स्पर्श करने से फट जावे, और घाव हो जावे, वो मनुष्य कुष्ट करके मरण पाता है। यह जाग्रत अवस्था में जानना और यही मनुष्य स्वप्न में नग्न हो, घृत को देह में लगावें, और ज्वालारहित अग्नि में हवन करें तथा उसके हृदय में कमल प्रकट होय, वो कुष्ट करके मरेगा ऐसा जानना।

### प्रमेहरोग

जो मनुष्य स्नान कर चुका हो, और तेल आदि का मालिश कर चुका हो, तथापि उसकी देह में मक्खी आकर बैठे, वह मनुष्य प्रमेह रोग को प्रमेह हो,

और उसी प्रमेह रोग करके मारा जाता है यह जाग्रत अवस्था में जानना। अब कहते हैं कि वही मनुष्य स्वप्न में चांडाल(भंगी डोम आदि) के साथ अनेक प्रकार के घृततैलादि स्नेह का पान करता है, वो प्रमेह करके मरता है। उसको मधुप्रमेह होता है।

### उन्मादरोगे

एक ठिकाने बहुत देरी तक ध्यान का लग जाना, मन में उद्गेग और तर्क वितर्क, सर्व वस्तु मात्र में तर्क करे, अरति और बलहानि के ये लक्षण उन्माद रोग होने वाले रोगी के हैं वह इसी रोग से मरे। जो मनुष्य भोजन नहीं करें, निमान चित्त से देखे, तथा आनन्द से पीड़ित चित्त जिसका अर्थात् अत्यन्त आनंदित रहे एवं जो अत्यन्त क्रोधी और जिसकी अत्यन्त त्रास होय वह अति प्रबल उन्माद रोग से मरने वाला जानना। ये जाग्रत अवस्था के चिन्ह हैं। और जिस मनुष्य के ये जाग्रत अवस्था चिन्ह हो, वह स्वप्न में राक्षसों के समूहों करके नाचता हुआ जल में डूब जावे। वह उन्माद रोग को प्राप्त हो मृत्यु को प्राप्त होता है।

### अपस्माररोगे

जो मनुष्य जागृत अवस्था में अकस्मात् अनेक प्रकार के भयानक दुष्ट स्वरूपों को देखे, और अनेक प्रकार के दुष्ट शब्दोंको सुने वो अपस्मार (मृगी) रोग प्रकट कर और इसी रोग से मारा जाय एवं यही मनुष्य स्वप्न में उन्मत हो नाचने लगे, उस नाचते हुए को मृत पुरुष बाँधकर ले जाए वो अपस्मार करके मरे इसमें संदेह नहीं।

जिस जगते हुए पुरुष के ठोड़ी, मन्यानाड़ी, और नेत्र ये स्तंभित हो जावे, उसको बहिरायाम (वादी का रोग) होकर निश्चय मरता है।

### मृत्युसूचक स्वप्न

जो मनुष्य स्वप्न में पूँड़ी पूआ खायकर फिर उसी प्रकार उल्टी कर देवे और जग पड़े तो वो नहीं जीवे।

### अनेक रोगों में विविध स्वप्न

स्वप्न में ज्वर, होने वाले मनुष्यों की कुत्ते के साथ प्रीति होती है। जिनके शोष रोग होने वाला हो, उनकी बन्दरों के साथ प्रीति होती है। उन्माद होने वाले की राक्षसों के साथ, अपस्मार (मृगी) रोग होने वाले को प्रेतोंके साथ प्रीति होती है।

प्रमेह रोग वाले और अतिसारी स्वप्न में जल पीते हैं। कुष्ठ होने वाले तेल पीते हैं। गुल्म रोग होने वाला के कोठे में और मस्तक पर वृक्षोत्पत्ति हो। मरतक रोग और छर्दि रोग होने वाला मनुष्य चने की तिलमिली पूँड़ी खाता है, और श्वास रोग तथा प्यार रोग वाला मार्ग चलता है। पांडु रोग होने वाला हस्ती मिले पदार्थ खाता है और जो रक्तपित्ती स्वप्न में रुधिर पीता है, वो अवश्य मरण पावे।

जो पुरुष इन रोगों के पूर्वरूपों को उत्तमरीति से जानता है, वह इन दुष्ट पूर्वरूपों का यत्र और इनके फल को भी जानता है। इस प्रकार यह मनुष्य इनको और अन्य दुष्ट स्वप्नों के रोगी की मृत्यु के अर्थ अथवा घोर कष्ट के लिए देखता।

अब अन्य अशुभ-स्वप्नों को कहते हैं। जैसे कि जिसके मस्तक पर बाँस का वृक्ष, गुल्म (छोटाजवासे के सदृश वृक्ष) और लता प्रकट हो, और जिसके देह में पक्षी प्रवेश करें, तथा स्वप्न में मुर्छित होकर गमन करे, और जिसको गीध उल्लू, कुत्ता, और कोआ आदि त्रास देवे।

जो मनुष्य स्वप्न में राक्षस, प्रेत, पिशाच, स्त्री चांडाल, द्वुमआदिकोंकरके बाँस, वेत, लता फॉस तिनका और कॉट के संकट में मोहित हो, लगकर गिर पड़े, तथा रेतली पृथ्वी में तथा सर्प की बाँबी में, राख में शमशान में, देवस्थानमें, गढ़े में, दुष्ट जल में, कीत में अंधौए कुए में गिर और पानी के बेग करके जो हरण करा जाय अर्थात् वह जावे।

स्वप्न में तेल का पीना, तथा देह में लगाना, उलटी करना, दस्त होना, तथा सुर्वा का मिलना कलह होना, बन्धन में पड़ना, और हारना जोड़ियों का नाश पांसू और चमड़े का गिरना, तथा स्वप्न में खुशी होना और कुपित हुये पितृश्वरों करके ललकारा जाना, दांत, चन्द्र सूर्य, देवता, दीपक और नेत्र, इनका गिर पड़ना, अथवा नाश होना तथा पर्वत का टूटना।

जो मनुष्य स्वप्न में लालपुष्पवन, पृथ्वी, हिंसाघर, गुफा, और अंधकार, इनमें प्रवेश करे, तथा लाल माला को पहन खिलखिलाय के, नंगा हो, दक्षिण दिशा को जाय, अथवा बन्दर को साथ लेकर दारुण वन में प्रवेश करे।

करोड़ों को हाथ में लिये हुये, भयंकर रूप वाले नग्न दण्ड को धारण करने वाले काले लाल नेत्र वाले पुरुषों का स्वप्न में दर्शन होना अशुभ है। काली पापिष्ठ अमंगली आचरण वाली तथा केश नख और स्तन जिसके लम्बे होय और दुष्ट

रंग की माला तथा वस्त्रों को धारण करने वाली ऐसी स्त्री का स्वप्न में दीखना काल रात्रि जानना। ये सम्पूर्ण दारुण स्वप्न हैं। यदि रोगी देखे तो मृत्यु को प्राप्त हो, और आरोग्य पुरुष देखे तो संशय को प्राप्त हो, ऐसे दुष्ट स्वप्नों से कोई भी पुण्यवान् पुरुष बचता है।

अब सुश्रूत के मत से दुष्ट स्वप्न कहते हैं, जैसा कि देह में तेल का लगाना, तथा ऊँट, सर्प गधा, सूकर, और भैंस इन पर बैठकर जो दक्षिण दिशा को जाय, तथा लाल वस्त्र को धारण करने वाली काली, बाल जिसके खुल रहे ऐसी स्त्री हँसती, नाचती जिस मनुष्य को बाँधकर दक्षिण दिशा को घसीटे, अथवा जो चांडालों करके दक्षिण दिशा को घसीटा जावे, अथवा जिसको मृतपुरुष और सन्यासी आलिंगन करे।

स्वप्न में जिसके मस्तक को विकराल मुख के कुत्ते सूर्ये, और जो सहत् तैल पीवे, अथवा कीचड़ में डूब जावे, अथवा जिसके सम्पूर्ण अंगों में कीच लग जावे, नाचें, हँसे तथा नग्न हो मस्तक पर लाल पुष्प की माला धारण करे।

स्वप्न में जिसकी छाती में बाँस का नरसलका अथवा ताढ़ का वृक्ष उत्पन्न हो, तथा जिसको मछली निगल जावे, अथवा अपनी माता में प्रवेश कर जावें, पर्वत के अग्रभाग से अंधकार युक्त गड्ढे में गिरे, अथवा पानी के वेग से बहे जावे, वा मुँडन हो, तथा शत्रु से पराजित हो वा बन्धन को प्राप्त हो, एवं जो काक (चील, गीध, धूधू) आदि से पीड़ित होवे।

जो मनुष्य स्वप्न में देवप्रतिमा को और पृथ्वी को हिलती देखे, तथा सेमर का वृक्ष, ढाक का वृक्ष, यूप (यज्ञ में पशु मारने का स्तम्भ) वर्मई, नीम का वृक्ष और फूला हुआ कचनार के वृक्ष को देखे, अथवा अपने को चिता में बैठा देखे, तथा कपास, तैल, खल, लोहे के पदार्थ, नोन, तिल को प्राप्त होय अथवा पक्क अन्न (पूड़ी-कचौड़ी, लड्डू) आदि को स्वप्न में भक्षण करे, दारु पीवें इत्यादि स्वप्नों से स्वस्थ पुरुष रोगी हो, और रोगी पुरुष की मृत्यु होय।

'विष्णु पुराण' में लिखा है कि स्वप्न में देव ब्राह्मण आदि का राजा का और प्रजा का क्रोधित होना, कुमारी (कन्याओं का) आलिंगन करना, पशु आदि प्राणियों का मैथुन देखना, अपने देह की हानि, वीर, कंठ और मनवांछित पदार्थों का नाश देखना, अपने को दक्षिण दिशा में जाता हुआ देखें तथा रोग से आक्रान्त देखें,

फलों का हरण, घास का काटना, तथा गेरुआ कपड़े पहने उसी प्रकार अपने को खेलता, तेल पीता, तेल में स्नान करता, लाल पुष्पमाला और लाल चन्दन धारण करे हुए दीखना इनसे आदि ले और बहुत से दुःस्वप्न जानना चाहिए।

वराहमिहिर लिखते हैं कि स्वप्न में हिरण के ऊपर अपने को बैठा देखे तो भ्रमण करे, और शूकर के ऊपर बैठा देखे तो थोड़े ही काल में मृत्यु हो, उसी प्रकार ऊँट पे बैठने से रोग, और हाथी पर बैठने से कुटुम्बवृद्धि होय।

मार्कडेय ऋषि लिखते हैं कि जो मल-मूत्र सुवर्ण और चाँदी की बमन को जागते स्वप्न में देखे वो मनुष्य दस महीने जीवे। जो मनुष्य स्वप्न में लोहदण्ड का धारण करने वाला और सम्पूर्ण परिच्छद (हाथी, घोड़ा आदि) जिसके काले हो ऐसे पुरुष अपने पास खड़ा देखे, तो तीन रात्रि में मरेगा ऐसा जानना।

जो स्वप्न में कराल, विकट, काले, पुरुष, हाथ में शस्त्र ले रखे हो तथा पत्थर मारते हो ऐसा देखे वो शीघ्र मरे।

लाल अथवा काले वस्त्र के धारण करने वाली स्त्री गाती हँसती जिसको स्वप्न में दक्षिण दिशा को ले जावे, वो मनुष्य नहीं जीवे।

जो मनुष्य स्वप्न में अपने ओढ़ने-बिछाने के वस्त्रों को सफेद वा काले और लाल देखे उसकी मृत्यु उपस्थित है, ऐसा जानना।

जो मनुष्य स्वप्न में गड्ढे में गिर पड़े, जिसके घर के किवाड़ लग जावे, वो पुरुष जब तक शव्या से नहीं उठे, तब तक ही उसका जीवन है ऐसा जानना।

रक्तगन्ध और लालफूल माला जिसने पहिन रखी हो, तथा तेल को लगावे तथा पीवे, मुंडित हो लाल वस्त्र को धारण कर गधे के ऊपर बैठ वेग से दक्षिण दिशा में जावे, इस प्रकार जो मनुष्य अपने आप को स्वप्न में देखे, वह अवश्य यमराज के घर को पधारे।

जिस मनुष्य के स्वप्न में दाँत और बाल गिर जावे उसका धननाश और व्याधि पीड़ा होय।

स्वप्न में जिसके पीछे सींगवाले (बैल, भैंसा आदि) और डाडी वाले (सिंह, वधेरा कुत्ता आदि) और बंदर तथा सुअर दौड़े उसको राजकुल से भय होय।

जो स्वप्न में धूल या तेल, तथा धी को देह में लगाता है, एवं और प्रकार का स्नेह (चर्बी आदि) को लगाता है वह अवश्य रोगी होय।

लाल वरत्र और लाल चन्दन के धारण करने वाली स्त्री जिस पुरुष का आलिंगन करे, उसकी मृत्यु हो ।

काले वरत्र और काले चन्दन के धारण करने वाली स्त्री जिस पुरुष का आलिंगन करे, उसका अकल्याण जानना ।

स्वप्न में नंगे, मुडित, लाल, काले वस्त्र के धारण करने वाले अंगहीन, विकराल, काले फांसी और शस्त्रों को लिये ऐसे पुरुष बाँधते मारते दक्षिण दिशा को ले जाते तथा भैसा ऊँट और गधे पर चढ़े हुए जिस, स्त्री को दीखे वह नैरोग्य रोही होय और जो रोगी हो वह मृत्यु पावे ।

जो मनुष्य स्वप्न में अपने को पर्वत वृक्ष आदि ऊँचे स्थान से गिरा हुआ देखे, तथा पानी में डूबा हुआ अग्नि में जला हुआ तथा कुत्ते ने नखों से घायल करा हुआ मछली के द्वारा भक्षित, अकस्मात् नेत्र जाते रहे, तथा अकस्मात् दीपक बुझा हुआ ऐसा देखे तथा तैल, दारु इनको पीवे लोह, तिल इनका लाभ होय, तथा पक्कान का लाभ होकर उसको भोजन करे, तथा कुँमा मे व पाताल मे प्रवेश करे, इस प्रकार के दुष्ट स्वप्न देखने से जिसकी प्रकृति स्वस्थ है, उसको रोग होय और जो रोगी है वो मरे ।

### अशुभ स्वप्नों को शान्त करने का उपाय

दुःस्वाप्नान्येवमादीनि दृष्ट्वा ब्रूयान्न कस्यचित् ।  
स्नानं कुर्यादुषस्येव दद्याद्भेदतिलानयः ॥७७॥  
पठेत्योत्राणि देवानां रात्रौ देवालये वसेत् ।  
कृत्यैवं त्रिदिनं मर्त्यो दुःस्वाप्नात्परिमुच्यते ॥७८॥

पूर्वोक्त नग्न मुडांदि दुष्ट स्वप्नों को देखकर किसी से न कहे, और प्रातःकाल स्नान कर सुवर्ण और तिलका और लोह का दान करे, फिर दुष्ट स्वप्नों का नाशकर्ता ऐसे देवताओं के स्तोत्रों का पाठ करें। इस प्रकार दिन में कर रात्रि में देवमन्दिरों में स्थित हो जागरण करे। इस प्रकार तीन दिन करने से मनुष्य दुःस्वप्न के फल से छूट जाता है।

दृष्ट्वा च प्रथमे यामे सुप्यात् ध्यात्वा पुनः शुभम् ।  
जपेद्वान्यतमं देवं ब्रह्मचारी समाहितः ॥८३॥

न चाचक्षीत कस्मैचित् दृष्ट्वा स्वप्नमशोभनम् ।

देवतायतने चैव वसेद्रात्रित्रयं तथा ॥८४॥

विप्रांश्च पूजयेन्नित्यं दुःस्वप्नात्परिमुच्यते ॥८५॥

यदि रात्रि के प्रथम प्रहर में स्वप्न देखे तो शुभवस्तु का स्मरण कर फिर शयन करे, अथवा अपनी इच्छा के अनुसार चाहिए जिस देवता का ध्यान करे, और ब्रह्मचर्य में रहना, दुष्ट स्वप्न को किसी के आगे कहे नहीं, और देवमंदिर में तीन रात्रि जागरण करें, नित्य ब्राह्मणों का पूजन करा करें, तो दुःस्वप्न से छूट जावें।

अकल्याणमपिस्वप्नं दृष्ट्वा तत्रैव यः पुनः ।

पश्येत्सौम्यं शुभाकारं तस्य विद्याच्युभं फलम् ॥८६॥

चरक

चरक में लिखा है कि यदि यह प्राणी दुःस्वप्न देखे, और उसी के पिछाड़ी शुभ स्वप्न देखे, तो उसका शुभ ही फल जानना ।

अथशुभस्वप्नानाह— (धनलाभ, रोगमुक्ति आदि सूचक स्वप्न) ।

अब इसके उपरांत उत्तम स्वप्न दर्शन को कहते हैं। जैसाकि देवता ब्राह्मण, गौ, बैल, जीवते हुए अपने सुहृद, राजा देवीप्यमान अग्नि, विप्र और निर्मल, जलों को यह प्राणी कल्याण के लाभार्थ और व्याधि के दूर होने के लिए देखता है।

मांस मछली श्वेत फूलमाला, श्वेत वस्त्र, और फल इनको यह प्राणी स्वप्न में धन के लाभार्थ और रोग दूर होने के लिए देखता है।

बड़ा भारी मन्दिर, सफलवृक्ष, हाथी और पर्वत इन पर स्वप्न में यह प्राणी द्रव्यलाभ के और रोग दूर होने के अर्थ चढ़ाता है।

जो मनुष्य स्वप्न में बढ़े हुए नदी, नद, समुद्र दूषित जल को तैरता है, अर्थात् इनके पार जाता है, वो कल्याण, लाभ, और रोगमुक्ति के अर्थ हैं।

जिस प्राणी को स्वप्न में सर्प, जोंक, अथवा भौंराँमकखी काटे, उसकी आरोग्य और धन का लाभ बुद्धिवान् पुरुष कहे।

इस प्रकार जो रोगी मनुष्य शुभ स्वप्न देखता है, उसकी दीर्घायु जाननी। इसकी चिकित्सा वैद्य को करना चाहिये ।

ग्रह, नक्षत्र, तारागण, चन्द्रमण्डल, सूर्योदय, प्रञ्जलित, अग्नि, महलके ऊपर

चढ़ना, तथा मन्दिर के ऊपर चढ़ना, इत्यादि अन्य शुभ स्वप्न देखने से प्राणों को सिद्धि की प्राप्ति होती है।

स्वप्न में मदिरा का पीना, वसा (चर्बी) मांस का भक्षण करना, देह में कृमि पड़ जावे तथा सर्व अंग में विष्ठा लगी प्रतीत हो, तथा रुधिर से स्नान, दही भात का भोजन, सफेद वस्त्र और सफेद चन्दन का लगाना, रत्न, भूषण आदि का देखना शुभ है।

देवता, ब्राह्मण द्विष्ट (त्रिवर्ण) छत्र, तुष, कमल राजा, सफेद पुष्प और सफेद आभूषण के धारण करने वाली स्त्री, बैल, पर्वत, दूध, फल जिनमें लग रहे ऐसे वृक्षों पर चढ़ना, दर्पण, मांस और माला, इनकी प्राप्ति होना बड़े भारी जलाशय के पार होना, इत्यादि स्वप्न में देखने से धन की प्राप्ति हो, और रोग से मुक्ति होती है।

वृहद्यात्राग्रन्थ में श्री वराहमिहिर का वाक्य है जैसे कि स्वप्न में पर्वत, मन्दिर, हाथी, बैल इन पर चढ़ना, चन्द्र, तारागण और सूर्य को ग्रसना अथवा स्वप्न में इनको ढूँढ़ना, पृथ्वी और समुद्र को ग्रसना, शत्रुओं का वध करना, विवाह और जुआ खेलने में जीत होना, तथा लड़ाई व कुश्ती में जीत होना, मांस, मछली और दूध का भक्षण करना, रुधिर का देखना, तथा रुधिर से स्नान करना, सुरा (दारु) रुधिर, मध्य, दूध और खीर का भोजन, अथवा इन्हीं दूध, खीर आदि से पृथ्वी में लिहसजाना (व्याप्त होना) निर्मल आकाश का देखना, मुख में गौ, भैंस, सिंहिनी, हथिनी, घोड़ी आदि का दूध दुहना, देव, ब्राह्मण और गुरुओं का मन्दिर ये सब स्वप्न में दिखना शुभ है। तथा स्वप्न में जल से अभिषेक का देखना राज्यदाता है।

राज्य में अभिषेक, मस्तक का काटना, मरण, अग्नि का मिलना, तथा अग्नि से घर का फुँकना, जलाशयों का तरण, और विषमस्थान (खथाई गड़ा) आदि का फाँदना, हथनी, घोड़ी, और गौ का घर में व्याहना (अर्थात् बच्चा देना) हाथी पर बैठना, तथा स्वप्न में रुदन करना शुभ है।

पर-स्त्रियों का लाभ होना, तथा पर-स्त्रियों का आलिंगन करना, हाथ पैरों में वेडीन का तथा विष्ठा का देह में लेप होना, शुभ जीव, राजा और सुहदों का दर्शन होना ये सम्पूर्ण स्वप्न शुभ राज्य लाभकारी हैं।

स्वप्न में गौ, बैल, हाथी मन्दिर, पर्वत, वनस्पति, (वृक्ष) इन पर चढ़ना विष्ठा का लेप होना, रुदन करना, मरा हुआ देखना, और अगम्या (बहिन, बेटी आदि) से गमन करता उत्तम कहा है। (आचार मयूर)

दूध वाले फलित वृक्ष पर अकेला चढ़े और उसी जगहे जगपरे तो शीघ्र धन की प्राप्ति होते।

जिस प्राणी के स्वप्न में दाहिने हाथ को श्वेत सर्प काटे, उसको दस दिन के भीतर एक सहस्र 1000 रुपयों का लाभ होय।

जिस प्राणी को स्वप्न में जल में सर्प, बिच्छु डसे, उसकी विजय, धन की और पुत्र की प्राप्ति कहनी चाहिये।

जो स्वप्न में महल पर बैठकर भोजन करे, और जो समुद्र के पार हो जाये, वह यदि दासकुल में भी उत्पन्न हुआ हो, तो भी निश्चय राजा होय।

जो प्राणी स्वप्न में तालाब के बीच में बैठकर मावत कमल के पत्ते पर धृत और खीर का भोजन करे, उसको राजा जानना चाहिये। अर्थात् राजा होय।

जो प्राणी स्वप्न में बुगली, मुर्गी क्रौंची पक्षी को देखकर जगे तो उसको प्रिय बोलने वाली कुलवान भार्या की प्राप्ति होय।

जो मनुष्य स्वप्न में दुहा हुआ झाग सहित दूध पीता है, उसको यज्ञ में सोमपान की प्राप्ति हो, और अनेक भोगों को भोगे।

स्वप्न में दही देखने से सर्व प्राणियों को प्रिय होय। गेहूँ देखने से धन की प्राप्ति और यव देखने से यज्ञ का आगम अर्थात् यज्ञ होय। तथा पीला सरसों के देखने से लाभ होय।

जो मनुष्य स्वप्न में बैल जुड़े हुए रथ में अकेला बैठता है, और उसी समय नींद खुल जावे, तो शीघ्र धन की प्राप्ति होय।

स्वप्न में दही की प्राप्ति होने से धन की प्राप्ति हो, धृत के मिलने से यश होय, और स्वप्न में धृत के खाने से क्लेश होय, और दही खाने से यश प्राप्ति होय।

बृहस्पति, लिखते हैं कि जो मनुष्य स्वप्न में मनुष्य का अपक्व मांस को भक्षण करता है, उसके प्रत्येक अंग का मैं फल कहता हूँ-तू सुन।

पैर का मांस खाने से 500 रुपये की प्राप्ति होय। एवं भुजा के मांस भक्षण से 1000 हजार रुपये की प्राप्ति होय। मस्तक भक्षण से राज्य प्राप्ति, और

हृदय के मांस को स्वप्न में खाने से मंत्री होय ।

जो मनुष्य स्वप्न में जूता तोड़ी, ध्वजा, चक्र, निर्मल और तीक्ष्ण तलवार को प्राप्ति होकर उसी समय जग पड़े तो उसको मार्ग चलना पड़ेगा, ऐसा जानना ।

जो मनुष्य स्वप्न में नौका पर बैठ बड़ी भारी नदी की तरता है, वह अवश्य प्रदेश को जायेगा, और उस जगह से शीघ्र आगमन होय ।

जो मनुष्य स्वप्न में पीले वस्त्र और पीले चन्दन फूलमाला के धारण करने वाली स्त्री का आलिंगन करना देखे तो वो कल्याण को प्राप्त होता है ।

उसी प्रकार सफेद वस्त्र, सफेद चन्दन, तथा सफेद फूल—माला के धारण करने वाली स्त्री जिसको स्वप्न में आलिंगन करे, उसकी चारों तरफ से लक्ष्मी का आगमन होय ।

स्वप्न में कपास, भरम (राख) भात, और छाँच को त्यागकर सम्पूर्ण सफेद वस्तु शुभकारी है। और गौ, हाथी, देव ब्राह्मण और घोड़ा इनको परित्याग कर सम्पूर्ण कृष्णवस्तु स्वप्न में दीखना अशुभ है ।

देव, ब्राह्मण, गौ, पितर, विरक्त, पुरुष और राजा ये स्वप्न में जो वात कहे वो उसी प्रकार होय, इसमें संदेह नहीं ।

जो मनुष्य आसन, शव्या पर, सवारी में, देह में, और वाहन (घोड़ा हाथी आदि) के अपने को पजरता (जलता) देखे, उसी वक्त जग पड़े, तो उसको चारों तरफ से लक्ष्मी की प्राप्ति होय ।

जो मनुष्य स्वप्न में घोड़ी, मुर्गी और हिंडोला इनको प्राप्त हो, जग पड़े तो वह सकामा और प्रिय बोलने वाली ऐसी स्त्री को प्राप्त होवे ।

जो मनुष्य स्वप्न में बेड़ी और फांसों से बंध जावे, उसके सुन्दर पुत्र होय, और उत्तम प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है ।

परासर संहिता में लिखा है स्वप्न में अपने अंगों को फूलता देखना, शत्रु को जीतना, बिजली को छूना, विपत्य में भी विपत्य का पड़ना, दिशाओं में फिकना, पैरों में बेड़ी पड़ना, अग्नि को ग्रसना, भुजाओं से शत्रुदमन छत्र, और हाथी पर बैठना, तथा दिव्य ब्राह्मण का दर्शन होना सूर्य, चन्द्र, तारागणों का भक्षण करना, मरतक के सात, पाँच अथवा तीन टूक होना । बैल, घर, राजा इनका दर्शन । सफेद सिंहासन पर बैठना तथा समुद्र और पृथ्वी को ग्रस लेना, इत्यादि स्वप्न

पृथ्वी को राज्यदाता है ।

स्वप्न में बड़ा भारी रण जुआ औरबाद में जीत होना, तथा पशु, मृग और मनुष्यों की प्राप्ति तथा सिंहासन की प्राप्ति, दिव्यवस्त्रों का और चन्दनादि का पहनना लगाना, एवं अगम्याख्री से गमन, अपना मरण देखना, अग्नि की प्राप्ति और हरी—हरी धास का देखना ।

सुन्दर सुगन्धित सफेद चन्दन आदि का लेप और फूल माला तथा वस्त्र का धारण करना, ब्राह्मण देवता, राजा इनका दर्शन होना, तथा आशीर्वाद देना, तथा मणि, चांदी सुवर्ण और कमल आदि के पत्र में धी, दहीं, खीर का भोजन इत्यादि स्वप्न देखना शुभ है ।

### निष्कल स्वप्न

यथास्वं प्रकतिस्वप्नो विस्मृतो विहतश्चत यः ।

चिन्ताकृतो दिवा हृष्टो भवन्त्यफलदास्तु ते ॥137॥

यथा प्रकृति के अनुसार अर्थात् जैसी जिसकी वातपित्तादिक प्रकृति ऐसा स्वप्न और जो स्वप्न, देखा हो उसकी याद भूल गई हो, और जो विहित हो (अर्थात् प्रथम दुष्ट स्वप्न देखे फिर उसके पिछाड़ी शुभ स्वप्न देखे) और जो चिंतवन करा हुआ तथा दिन का देखा हो ऐसा स्वप्न निष्कल है ।

आयुस्तृतीयभागे शेषे: पतितः प्रकीर्तिः स्वप्नः ।

अतिहासशोककोपोत्साहनुगुप्ताभयाद्गुणोत्पन्नः ॥138॥

वितयः क्षुधापिपासामूत्रारीषोद्ध्रवः स्वप्नः ।

अत्यन्त वृद्धावरथा का स्वप्न, अत्यन्त हास्य, शोक, कोप, उत्साह, निंदा, भय, इन कारणों से तथा जो भूख, प्यास, और मूत्र, मल की बाधा में स्वप्न दिखे वो निष्कल है ।

### प्रकृतिजन्यस्वप्न

वाताधिकेऽभ्रं भ्रमीतर्विपश्येत्कृष्णानि वर्णानि प्रचंडवातम् ।

पित्ताधिके काञ्चनरत्नमाल्यदिवाकराग्निज्वलनानि पश्येत् ॥139॥

श्लेशमाधिकरश्चन्द्रभशुक्लपुष्पसरित्सरोभोनिधिलंघनानि ।

काले मरुत्पित्तकफप्रकोपः साधारणं स्यादवलसन्निपातात् ॥140॥

जिस प्राणी की वात प्रकृति होती है, वो आकाश में भ्रमण करे, तथा काले रंग के पदार्थों को देखे, तथा प्रचण्ड हवन (आंधी) को देखता है। पित्ताधिक प्रकृति वाला मनुष्य सुवर्ण और रलों की माला, सूर्य अग्नि और प्रकाशवान् पदार्थ (बिजली आदि को) – देखे कफाधिक प्रकृति वाला मनुष्य चन्द्रमा के तुल्य सफेद पुष्प, सरोवर, नदी, समुद्र को तरना, इत्यादि स्वप्न देखे, और मिश्रित प्रकृति वाले मनुष्य मिश्रित स्वप्न को देखते हैं।

स्वप्नस्य प्रहरपरत्वेनफलं  
स्वप्ने तु प्रथमे यामे संवत्सरविपकिनः ।  
द्वितीये चाष्टभिमसैस्त्रभिमसैस्तुतीयके ॥१४१॥  
चतुर्थयामे यः स्वप्नो मासेन फलदः स्मृतः।  
अरुणोदय वेलायां दशाहेन फलं भवेत् ॥१४२॥  
गोविसर्जनवेलायां सद्य एव फलं भवेत् ॥१४३॥

रात्रि के प्रथम प्रहर का देखता हुआ स्वप्न 1 वर्ष में फल देता है। दूसरे प्रहर का स्वप्न आठ महीने में फलदेय। तीसरे प्रहर का स्वप्न तीन महीने में और रात्रि के चतुर्थ प्रहार में देखा हुआ स्वप्न 1 महीने में अपना शुभा-शुभ फल करे। और जो अरुणोदय (भाकफाटे) स्वप्न देखा हो, वह दस दिन में फल करे। इसी प्रकार गौ छोड़ने के समय जो स्वप्न देखा होता है वह तत्काल शुभा-शुभ फल देता है। परन्तु जो मनुष्य जिस समय जागता है, उसको उसी समय का देखा हुआ स्वप्न शुभाशुभ फल देता है।

#### स्वप्नवर्षनविधि—

अब स्वप्न देखने की विधि कहते हैं कि राजा-वस्त्र, मोती, मणिकोले और सामंत (सूबेदार) ज्योतिषी, पुरोहित इनको साथ ले देवता के मन्दिर में जाये और उस जगह गन्ध, पुष्प, धूप नैवेद्य तथा वस्त्र रलादिक से मंत्रपाठ-पूर्वक इष्ट देव का पूजन करे। फिर उस राजा का पुरोहित इन्द्रियों को जीत उसी मन्दिर के पूर्व की ओर अथवा ईशान की ओर बिस्तरा करके और पुष्पों को तथा सुगन्धित वस्तु को अपने सिरहाने धर के सोवे, उसी प्रकार ख्याल राजा एक बार भोजन करे, और दाहिनी करवट सोवें इस प्रकार यथोपदेश उस मन्दिर में स्वप्न की परीक्षा करे।

एक वस्त्रः कुशास्तीर्णे सुप्तः प्रयत्नानसः।  
निशान्ते पश्यते स्वप्नं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥१४८॥

स्वप्न देखने की इच्छा वाला पुरुष एक वस्त्र को धारण कर कुशा के आसन पर मन को एकाग्रकर शयन करे। इस प्रकार करने से इस प्राणी को रात्रि के अन्त में जैसा कुछ शुभाशुभ भविष्य हो ऐसा स्वप्न दीखे।

**“आयुर्वेदोद्धार में वर्णित शुभाशुभ शकुन”**

‘चलते समय यात्री (वैद्य को) शुभाशुभ शकुन’  
मांसोदकु भातपत्रोविप्र वारणगोवृषा: ।  
शुक्लवर्णा शचपूज्यन्ते प्रस्थाने दर्शनं गताः ।  
स्त्रीपुत्रिणीसवत्सागौर्वद्ध मानमलं कृता ।  
कन्यामत्स्याः फलं चामंस्वस्तिकं मोदकादधि ।  
हि रण्याक्षतपात्रं वारत्नानिसु मनोनृपः ।  
अप्रशान्तोऽनलोवाजीहं सश्चाषः शिखीतथा ।  
ब्रह्मदुन्दुभिजीमूतशंखवेणुरथस्वनाः ।  
सिंहगोवृषनादाषश्चहेषितं गजबृहिं तम ।

कद्मा मांस, भरा और रीता जल का घड़ा (अर्थात् जब वैद्य रोगी के घर में प्रवेश करे तब भरा मिले और जब निकले तब रीता घड़ा) छत्र, ब्राह्मण, हाथी, गौ, बैल और सफेद वर्ण के सर्व पदार्थ शुभ हैं (परन्तु कपास, हड्डी, छाल, भस्म, खार इत्यादि शुभ नहीं है) पुत्रवती स्त्री, बछड़ेसहित गौ, शराब, शृंगार युक्त कन्या, मछली, कच्चे फल, मोतियों की माला, अथवा साथिया जो स्त्री काढती है, लड्डू, दही, सुवर्ण खील, अक्षत का पात्र, रल, राजा, प्रज्ज्वलित अग्नि, घोड़ा, हंस, तीलकण्ठ, मोर, वेदध्वनि, नगाड़े का शब्द, मेघ की गर्जन, शंख, वेणु, रथ इनका शब्द सिंह, गौ, बैल, और हाथी इनका हींसना ये सम्पूर्ण सुन्दर चित्त वाले वैद्य को मार्ग में मिलना शुभ है।

शास्तं हं सरुतं नृणां कौशिकञ्चं वदामतः ।  
प्रस्थाने यायिनः श्रेष्ठावाचश्चह दयङ्गमाः ॥

यात्रिक मनुष्यों को हंस का शब्द, और कौशिक (पेचक पक्षी) का शब्द वामदिक में होय तो शुभ है। तथा मन हरणकर्ता वाणी भी यात्रिक को शुभ है।

पत्रपुष्पकलोयेतान्सक्षीरान्निरुजोद्रुमान् ।

अश्रितावान् भोवे शमध्वजतोरणवे दिकाः ॥

पत्र, पुस्त्र और फलयुक्त, तथा क्षीरयुक्त नैरोग्य वृक्षों में तथा उच्च स्थान, घर, ध्वजा, तोरण और वेदी इनमें जो शक्ति होते हैं वो श्रभ हैं।

अप्रशस्त दर्शन

शुष्के दशनिहते पत्रे वल्लीनद्वै संकटके ।  
 वृक्षोऽथवाशमभस्मारिथविट्ठुषाङ्गरपांसुषु ॥  
 चैत्यवल्मीकविषमस्थितादीप्तखरस्वराः ।  
 पुरतोदिक्षादीप्तासवक्तारोनार्थसाधकाः ॥

शुष्क तथा बिजली का मारा हुआ, बेल लताओं से आच्छादित और कैटे वाला ऐसा वृक्ष तथा पथर, भस्म, हड्डी, विष्ठा, तुश, धूल, चैत्य, (यामवाहर देवता की भावना करके स्थापित वृक्ष) वर्मई, विषमतचा से बैठे हुए दीप्ति और घोर शब्द से सन्मुख, और दीप्ति दिशाओं में जो शकुन होते हैं वे कार्य साधक नहीं होते अर्थात् वो अशभ हैं।

पुन्नामानः खगावामा: स्त्रीसंज्ञादक्षिणाः शुभाः ।  
पुन्नावामतः श्रे ष्ठोगजखच्चार वर्जितः ॥

स्त्रीनामादक्षिणेश्रेष्ठाशिवाश्यविवर्जिता

पुरुष संज्ञक पक्षियों का बोलना वामादिक में अच्छा है, और स्त्री संज्ञकों का दाहिनी तरफ से शुभ है। हाथी, खद्गर को त्याग कर बाकी पुरुषसंज्ञक पशुओं का वामभाग में बोलना शुभ है। शिवा (श्यारिया) तथा श्यमा (श्यामचिङ्गिया) इनको त्यागकर बाकी स्त्रीसंज्ञक पश—पक्षीयों का दक्षिण भाग में बोलना शुभ है।

दक्षिणाद्वामगमनं प्रशस्तं श्वश्रुगालयोः ।

वामनं क लचाषाणां नो भयं शशसर्पयोः ॥

भाषाकौषिक योश्चैवनप्रशस्तं किलोभयम् ।

दर्शनं वारुतञ्चापिनगोधाक कलासयोः ॥

दृतैरनिष्टैस्तु ल्यानामशस्तं दर्शनं नृणाम् ।

कुत्ता और स्यारिया का दाहिनी तरफ से वामभाग में जाना शुभ है। और नौला, चाष (नीलकण्ठ) इनका वामतरफ से दाहिनी तरफ जाना शुभ है। और सर्प का दोनों भाग में जाना निषेध है। भाष (सफेद चील) कौपिक (पेचेक वा उल्ल) इनका दर्शन और शब्द दोनों अशुभ हैं उसी प्रकार करकैटा (गिरगट) और गोहका के भी दर्शन और शब्द शुभ नहीं हैं और जो दुष्ट दूत के लक्षण लिखे हैं इसी प्रकार मनष्य का दर्शन अशुभ है।

मार्ग च्छे दोहि मार्जा रोगोधासरठवानरै : ।

रोगिद्वाराभिगमनेमंगलंतदमङ्गलम् ॥

बिल्ली, गोह, दो मुख की सर्पिणी और वानर इनका रोगी के घर जाते हुए वैद्य. का मार्ग काटना अच्छे शकुन का अमंगल कर देता है। अर्थात् इनका रास्ता काटना अमंगलीक है।

कुलत्थतिलकार्पासतृष्णपाषाणभस्मनाम् ।

पात्रं ने छं तथा झार तै लक द मप रितं ॥

प्रसन्ने तरमद्यानां पूर्णवारक्तसर्षचैः।

शवकाष्ठपलाशानां शुष्कानां पथिसङ्गमः ॥

ने ध्यन्ते पतितान्तस्थदोनान्धारे पवस्तथा ।

मृदुशाताऽनुकूलश्चसुगान्धश्चानलः शुभः ॥

खराण्डानष्टगन्धश्चप्रतिलामश्चगाहतः ।

कुलथी, तिल, कपास, तुष, पत्थर, भस्म तथा अंगारे से भरा, तेल से भरा और कीच से भरा, ऐसा पात्र दुष्ट मध्यकर के परिपूर्ण पात्र, लालसरसो, मुरदा, लकड़ी, ढाक की सुखी लकड़ी मार्ग में मिलना तथा पतित घर के भीतर बैठे, दीन, अंथे और शत्रु और तीखी गरम दुर्गन्ध वाली उलटी पवन इत्यादि मिले तो वैद्यको शुभ नहीं है। परन्तु मृदु, शीतल, अनुकूल और शुभपवन समुख से लगना शुभ है।

ग्रन्थयर्वदादिषु सदाछे दशब्दश्चपूजितः ।

विद्रध्युदरगुस्मेषुभेदशावदस्तथैवच ॥

रक्तपित्तातिसरिषु रुद्धशब्दः प्रशस्यते ।  
एवं व्याधिविशेषेणानिमित्तमुपधारयेत् ॥

ग्रन्थी (गांठ) और अर्वुदादि रोग में यदि वैद्य को छेद शब्द हो तो उत्तम है। विद्रधि, उदर रोग और गुल्म रोग में भेद शब्द होना शुभ है। रक्तपित्त, अतिसार आदि रोगों में रुद्ध (रोको) ऐसा शब्द शुभ है। इसी प्रकार प्रत्येक व्याधि में वैद्य निमित्तों को जान लें।

तथैवाकुष्टहाकाष्टमाकुन्दरुदितस्वनाः ।  
छर्धावात्पुरीषाणां शब्दोवैर्गर्दोष्टयोः ॥  
प्रतिषिद्धं तथाभग्नं क्षुतं स्खलितमाहतम् ।  
दौर्मनस्यचैवैद्यस्ययात्रायां नप्रशस्यते ॥

उसी प्रकार बुरी रीति से पुकारना, हाय कष्ट है ऐसा कहना चिल्लाना, रुदन करना, तथा वमन, अधोवायु, और मलमूत्र का शब्द, तथा गधा, ऊँट का डकारना और छींकना, ये शब्द बुरे हैं। चोट लगना गिरना, लडाई, और दौर्मनस्य ये वैद्य को यात्रा में शुभ नहीं हैं।

चिकित्सांरोगिणः कर्तुं गच्छतोभिषजः शुभम् ।  
यात्रेयः सौम्यशकुनः प्रोक्तोदीप्तोन शोभनः ॥

चिकित्सा करने को जाने वाले वैद्य को मार्ग में सौम्य (शांत) शकुन शुभ है। और दीप्त शकुन शुभ नहीं है। अर्थात् अशुभ है।

प्रवैशोप्ये तदुद्देशावेदक्ष्यञ्चतथातुरे ।  
प्रतिद्वारं गुहे वास्य पुनरेतन्नगण्यते ॥

जो शकुन यात्रा में कहे हैं वो प्रवेश में भी देखने तथा रोगी के पास जाकर भी देखने तथा उस रोगी के जिस समय घर के द्वारे में प्रवेश करे तब भी देखे फिर शकुन का फल नहीं गिना जाता।

केशभस्मास्थिकाष्टाश्मतुषकापर्सकटकाः ।  
खटवोर्ध्वपादामद्यापोवसातैलंतिलास्तृणम् ॥  
नपुंसकं व्यङ्गभग्ननग्नं मुण्डासिताम्बराः ।  
प्रस्थानैवाप्रवैशोवानेष्पयंते दर्शनं गताः ॥

केश, भरम, हड्डी, पथर, तुष, कपास, कांटे, उल्टी खाट, मद्यपी, चरबी, तेल, तृण, नपुंसक, अंगहीन टूटे अंग का, नंगा, मुँडित, कालेरंग के वरत्र पहनने वाला, इन सबका प्रस्थान में अथवा प्रवेश में दर्शन होना अशुभ है।

भाण्डानां सङ्करस्थानां स्थानात्सञ्चरणं तथा ।  
निखातोत्पाट नं भङ्गपतनं निर्गमस्तथा ॥  
वैद्यासनावसादोवारोगीवास्यादधोमुखः ।  
वैद्यं सम्भाषमाणोऽङ्गं कुडयमास्तरणानिवा ॥  
प्रमुद्यादाधुनीयाद्वाकरौष्टस्तं शिरस्तथा ।  
हस्तं चाकृष्यवैद्यस्यन्यसे चित्तरसिचोरसि ॥  
योवैद्यमुन्मुखः पृच्छेदन्मार्षित्वाङ्गमातुरः ।  
नसविध्यतिवैद्योवागृहे यस्यनपूज्यते ॥

पात्रों का औंधे मुख होना, तथा स्थान से चलायमान होना, पृथ्वी खोदकर गाड़ना, अथवा पृथ्वी से उखाड़ना, व भंग होना, पतन होना, अथवा उनको लेकर निकलना, वैद्य के आसन का विनाश होना, अथवा रोगी का मुख नीचे को हो, रोगी वैद्य के बोलने पर अपने अंगों को भीत से अथवा बिछैये पर रगड़े अथवा पटके उसी प्रकार हाथ, पीठ और सिर को रगड़े या दे दे मारे तथा वैद्य के हाथ को पकड़कर अपने मस्तक और छाती पर धरे और जो रोगी वैद्य से अपना हाल ऊँचा मुख करके पूछे अथवा अपने अंगों को झाड़ने पोछने लगे और जिसके घर में वैद्य का पूजन न हो ऐसा रोगी अच्छा नहीं हो किन्तु मरे।

भवने पूज्यते वापियस्यवैद्यः ससिध्यति ।  
शुभशुभे षुदूतादिष्वशुभैह्यशुभे षुच ॥  
आतुरस्य ध्रुवंतस्माहूतादीनलक्षयेद्रिष्क ।

जिसके घर में वैद्य का पूजन होता है वह रोगी शीघ्र अच्छा हो जाता है। शुभ रोगियों के शुभ दूतादिक होते हैं, और अशुभ के अशुभ होते हैं, अतएव वैद्य रोगी के दूतादिक की अवश्य परीक्षा करे आदि श्रब्द से शकुन, निमित्तादि जानने अर्थात् इनकी भी परीक्षा वैद्य करे।

**'अष्टाङ्ग हृदय में वर्णित शुभाशुभ शकुन'**

पाखण्डादि दूतों का शुभाशुभ लक्षण—

पाखण्डाश्रमवर्णानां सवर्णाः कर्मसिद्धये ।  
त एव विपरीताः स्वुर्दूताः कर्मविपत्तये ॥1॥

पाखण्ड, आश्रम, वर्ण इनमें जो समान वर्ण के तुल्य जाति के दूत होते हैं, वे कर्मसिद्धि के लिये हैं। और वे यदि विपरीत हो तो कर्म का नाश करने वाले होते हैं।

वक्तव्य— पाखण्ड—26 प्रकार के वात्य विशेष, आश्रम—ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी, वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। इनमें जो रोगी के समान होते हैं, वे दूत चिकित्सा में सफलता देते हैं। विपरीत असफलता देते हैं।

**अशुभ दूतों का लक्षण—**

दीनं भीतं द्रुतं त्रसं रुक्षामंगलवादिनम् ।  
शास्त्रिणं दण्डिनं षष्ठं मुण्डश्मश्रुजाधरम् ॥2॥  
अमङ्गलाह्यं क्रूरकर्माणं मलिनं स्त्रियम् ।  
अनेकं व्याधिं व्यङ्गं रक्तमाल्यानुलेपनम् ॥3॥  
तैलपङ्काङ्कितं जीर्णाविवरणाद्रिं कवाससम् ।  
खरोष्ट्रमहिमाषारुं काष्ठलोष्टदिमर्दिनम् ॥4॥  
नानुगच्छे द्विषग्दूतां माह्यनं च दूरतः ।

दीन, भीत (डरा हुआ) भागता हुआ, घबराया हुआ, रुक्ष, अशुभ कहने वाला, शत्र या डण्डा हाथ में लिये, नपुंसक, मुण्डा हुआ या दाढ़ी—जटा धारण किये, अकल्याण नाम वाला, क्रूरकर्म करने वाला, मैला, स्त्री, एक से अधिक, रोगी हीन अंग वाला, लालमाला या लाल लेप वाला, तेल या कीचड़, चुपड़े, फटे, विवरण या गीले अथवा एक ही वस्त्र को धारण किया हुआ, गधे, ऊँट या भैंस पर सवार लकड़ी या देले को मलता हुआ और दूर से पुकारने वाला, ऐसे दूत के साथ वैद्य न जाये।

**वैद्य के लक्षणों से अशुभ सूचना—**

अशस्त चिंतावचने नग्ने छिन्दति भिन्दति ।  
जुह्नाने पावक पिण्डान् पितृभ्यो निर्वपत्यपि ॥5॥

सुन्ने मुक्तकचेऽभ्यक्ते रुदत्यप्रयते तथा ।

वैद्य दूता मनुष्याणामागच्छन्ति मुमूर्षताम् ॥6॥

वैद्य यदि अप्रशस्त वस्ती की चिन्ता या बोलने में लगा हो, नंगा हो, काट रहा हो, तोड़ रहा हो, अग्नि में हवन करता हो, पितरों को पिण्ड दे रहा हो, सोया हो, बाल खोले हो अभ्यंग किया हो, रो रहा हो, अपवित्र स्थिति में हो, तब जो दूत आते हैं वे मरने वाले मनुष्यों के होते हैं।

**देश कालानुसार दूत विचार—**

विकारसामान्यगुणे देशे कालेऽथवाभिष्क् ।

दूतमध्यगातं दृष्ट्वा नातुरं तमुपाचरेत् ॥7॥

रोग के तुल्य गुणवाले देश या काल में आये हुये दूत को देखकर वैद्य उस रोगी की चिकित्सा न करे।

वक्तव्य— कफजन्य ज्वर में घृत, पानी आदि द्रव के समीप में, ही, आनूप देश हो, प्रातःकाल हो तो वैद्य चिकित्सा न करें।

**दूत की अशुभ चेष्टा—**

स्पृशन्तो नाभिनासास्य केशरोनखद्विजान् ।

गृह्यपृष्ठस्तनग्रीवाजठरानामिकाङ्गुलीः ॥8॥

कापसिबुससीसास्थिकपालमुशलोपलम् ।

मार्जनीशूर्पचैतान्तभस्माङ्गारदशातुषान् ॥9॥

रञ्जपानत्तुलापाशमन्यद्वा भग्नविच्युतम् ।

तत्पूर्वेदशने दूता व्याहरन्ति मरिष्यताम् ॥10॥

जो दूत प्रथम दर्शन में ही नाभि, नासा, मुख केश, रोम, नख या दाँतों को छूते हुए गुह्यभाग, पीठ, स्तन ग्रीवा, उदर, अनामिका, अंगुलि, रुई, भूसा, सीसा, अस्थि, मिट्टी का ठीकरा मूसल, पत्थर, झाड़ू सूप वस्त्र के किनारे, भस्म अंगारे, कपड़े की बत्ती, बूस (भूसा) रसी, जूता, तराजू, पाश अथवा अन्य किसी टृटी या गिरी हुई वस्तु को छूते हैं। वे मरने वाले रोगी की सूचना देते हैं।

**दूतागमन के अशुभ समय—**

तथाऽर्धरात्रे मध्याहे संधययोः पर्ववासरे ।

षष्ठीचतुर्थीनववर्मीराहुकेतूयादिषु ॥11॥

### भरणीकृतिका७७श्लेषापूर्वाद्रैपैत्रनैऋत्यै ॥१२॥

इसी प्रकार आधी रात में, मध्याह्न में, सन्ध्याकाल में, पर्व के दिन, षष्ठी, चतुर्थी, नवमी, या राहु अथवा केतु के उदय आदि के दिन (ग्रहण), भरणी, कृतिका, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा, आर्द्धा, मधा और मूल नक्षत्र में जो दूत आते हैं, वे भी रोगी मृत्यु के सूचक हैं।

#### दूत के आने पर अशुभ लक्षण

जिस दूत के रोगी सम्बन्धी वचन बोलने पर वैद्य अग्र अशुभ निमित्त को देखें, उस दूत के साथ वैद्य न जाये।

#### अशुभ निमित्त-

अंगहीन, प्रेत, मृत पुरुष के लिए प्रयुक्त अलंकारों से शोभित, कटी हुई रसी, जला हुआ वस्त्र आदि, नष्ट हुआ घड़ा आदि दिखाई दे अथवा छिन्न, नष्ट, आदि शब्द सुनाई दें, अथवा कटु रस तीव्र गन्ध या मुर्दे की तीव्र गन्ध अति क्रूर र्पर्श अथवा अन्य इसी प्रकार का कोई अशुभ रोगी के सम्बन्ध में दूत के बोलते रहने पर हो, अथवा दूत के आने के समय ऐसा ही कोई अशुभ निमित्त हो, तो उस रोगी की चिकित्सा न करे।

हाहा करके रोना, जोर से रोना, यह डॉटकर बुलाना, गिरना, छाँक का आना, वैद्य के वस्त्र, छाते या जूते का नष्ट होना, दुःखी आदमियों का दिखाई देना, चैत्य ध्वजा और भरे पात्रों का गिरना, मरा नष्ट हुआ आदि प्रवादों का सुनना, राख या धूल से (वैद्य के) वस्त्रों का खराब होना, साँप, बिल्ली गोहे, गिरगिट या बन्दर का रास्ता काट कर जाना, सूर्य जिस दिशा में हो, उस दिशा की ओर मुख करके क्रूर मृग या पक्षी बोलना ये अशुभ हैं। (वैद्य के जाते समय रास्ते में या रोगी के घर में घुसते समय) काले धान्य गुड़ तक्र, लवण, आसव, चर्म सरसों, वसा, तैल, तिनका, कीचड़, इन्धन, नपुंसक, क्रूर व्यक्ति, चाण्डाल जाल, वागुर, (मृगबन्धनी) वमन, मल, दुर्गन्ध, देखने में बुरे, सार रहित वस्तु, मैथुन, रुई आदि (श्लोक ९ में कहीं) शत्रु, उत्तान रूप में पड़ी शय्या, आसन या यान का दर्शन हो या घट, शराब आदि अन्य वस्तुयें उल्टी मुख नीचे पड़ी हों तो ये अशुभ चिह्न हैं।

नर और मादा पक्षियों से शुभाशुभ ज्ञान—

पुंसज्ञाः पक्षिणो वामाः स्त्रीसज्ञां दक्षिणाः शाभाः।

प्रदक्षिणां खगमृगा यान्तो, नैवशवडम्बुकाः ॥२३॥

अयुग्माशचमृगाः शस्ताः शस्ता नित्यं च दर्शने ।

चासभासभरद्वाजनकुलच्छागवर्हिणः ॥२४॥

पुलिंग पक्षी वामपाश्वर्म में स्त्रीलिंग पक्षी दक्षिण पाश्वर्म में वामसे दक्षिण दिशा की ओर जाते हुए पशु पक्षी प्रशस्त हैं। किन्तु कुत्ता और गीदङ्ग दक्षिण से वाम जाते हुए शुभ हैं। इनका मिलना ही शुभ नहीं। अयुग्म पाँच या सात आदि मृगों का मिलना शुभ है। चाष, भास, भारद्वाज, नेवला, बकरा, और मोर का दिखाई देना सदा (दाहिने बाँये कहीं भी) शुभ है।

अशुभ पक्षी आदि—

अशुभं सर्वथोलूकविडालसरटेक्षणम् ॥२५॥

उल्लू, बिल्ली, सरट (गिरगिट), इनका किसी भी रूप में दिखाइ देना अशुभ है।

सूअर आदि का बोलना शुभ—

प्रशस्ता कीर्तने कोलगोधाहिशशजाहकाः ।

न दर्शने नव विरुद्धे, वानररक्षावतोऽन्यथा ॥२६॥

कोल (सूअर), गीध, साँप, खरगोश, जाहक इनकी बोली प्रशस्त है, परन्तु देखने में या रोने में ये प्रशस्त नहीं। बन्दर और भालू (रींछ) देखने में रोने में प्रशस्त हैं। बोलने में प्रशस्त नहीं।

इन्द्रधनुष आदि से शुभाशुभज्ञान—

धनुरैन्द्रं च ललाटमशुभं, शुभमन्यतः ।

अग्नि पूर्णानि पात्राणि भिन्नानि विशिखानि च ॥२७॥

सामने की ओर इन्द्रधनुष होना अशुभ है, पीठ या पाश्वर्म में होना शुभ है। अग्नि से भरे, टूटे हुए या अन्दर से खाली पत्रों का रास्ते में मिलना शुभ नहीं है।

वैद्य को रोगी के घर पहुँचने पर शुभाशुभ निमित्त—

दध्यक्षतादि निर्गच्छदक्ष्यमाणं च मङ्गलम् ।

वैद्यो मरिष्यतां वैश्म प्रविशनेव पश्यति ॥२८॥

रोगी के घर में घुसता हुआ वैद्य आदि रोगी के घर से निकलते हुए दही,

अक्षत आदि तथा आगे (श्लो 30 में) कहीं जाने वाली मांगलिक वस्तुओं को रोगी के घर से निकलते देखता है, तो रोगी को मरने वाला समझे ।

### वैद्य को उपदेश—

इसी प्रकार के दूतादि रोगी का अशुभ देखकर वैद्य रोगी की चिकित्सा न करे। इससे विपरित रूप में शुभ देखकर दया से निर्मल चित्त वाला वैद्य यत्नपूर्वक रोगी की चिकित्सा करे।

दही, अक्षत आदि शुभ शकुन—दही, अक्षत, निष्पाम (सेम) प्रियंगु, मधु, धी, यावक, (अलाता), अज्जन, भृंगार, (झारी या सुराही), घण्टा, दीपक, कमल, दूर्वा, ताजा, फल खाद्य वस्तु, रत्न, हाथी घड़े, कन्या रथ, वर्धमान, मनुष्य(मान प्रतिष्ठा सम्पत्ति और आयु आदि से बढ़ते हुए मनुष्य) देवता, राजा, श्वेत फूल, बाल, श्वेत वस्त्र, चामर, श्वेत घोड़ा, शंख, साधु, ब्रात्मण पगड़ी, तोरण, स्वस्तिक, जोतकर सम की हुई भूमि, जलती हुई आग, मन के अनुकूल खान—पान, मनुष्यों से भरा हुआ रथ, बच्चे के साथ गाय, घोड़ी तथा स्त्री, जीवज्जीवक, सारङ्ग, सारस, प्रिय बोलने वाले हंस शतपत्र आदि पक्षियों का दर्शन, बंधा हुआ एक पशु, रुचक (कङ्गालय), शीशी (दर्पण) सरसों, गोरोचन या सुन्दर वस्तुओं का दर्शन, उत्तम सुगंधित गन्धस अतिश्वेत वर्ण, मधुर रस, अकुपित साँड़ का शब्द, इस प्रकार गायों का भी अकुपित शब्द, शुभकारी पुरुष, मृग एवं पक्षियों की सुन्दर वाणी, छाता, ध्वजा, पताका का ऊपर को चढ़ाना—उठाना, यात्राकाम में जय—जय का आशीर्वाद शब्द, भेरी मृदङ्ग और शंख के पुण्य प्रशस्त, शब्दों का सुनना वेद—पाठ के शब्दों का सुनना, अनुकूल सुख देने वाली वायु, इनका रास्ते में या रोगी के घर में प्रवेश करते समय होना, रोगी के आरोग्य का लक्षण है। इस प्रकार से दूतशकुन कह दिये गये हैं।

‘वर्धमान’ का अर्थ संदिग्ध है। इन्दु—अलंकार विशेष मानते हैं। दूसरे गोद उठाये बच्चे को वर्धमान कहते हैं। कुछ वर्धमान का शराब अर्थ करते हैं। अन्य विशेष दर्प या चशक जो कि मंगल कार्य के लिए बनाया जाता है ‘वर्धमान’ कहते हैं, अरुणदत्त ने शौर्य, त्याग प्रज्ञा और राज—सम्मान आदि से बढ़ते हुए मनुष्य, अर्थ किया है, यही ठीक लगता है।

(अष्टाङ्गहृदय, अ. 6)

5

### भगवती आराधना में वर्णित शुभाशुभ निमित्त

#### निषिधिका का लक्षण

निषिधिका एकान्त प्रदेश में अन्य जनों को दीख न पड़ेगी ऐसे प्रदेश में हो। प्रकाश सहित होनी चाहिये। वह नगरादिकों से अति दूर न हो। न अति समीप भी हो। वह टूटी हुई, विध्वस्त की गई ऐसी न हो। वह विस्तीर्ण प्रासुक और दृढ़ होनी चाहिये। जहाँ पर मुनि के मृत शरीर का विसर्जन किया जाता है, उस स्थानविशेष को निषिधिका कहते हैं।

वह निषिधिका चीटिओं से रहित, छिड़ों से रहित होनी चाहिए। घिसी हुई नहीं होनी चाहिये। प्रकाश सहित होवे। समान भूमि के स्थान पर होवे, निर्जन्तुक, बाधा रहित होवे। वह गीली तथा इधर—उधर हिलने वाली न होवे। वह निषिधिका क्षपक की वसतिका से नैऋत्य दिशा में, दक्षिण दिशा में अथवा पश्चिम दिशा में होनी चाहिये। ऐसी इन दिशाओं में निषिधिका की रचना करना पूर्व आचार्यों ने प्रशस्त माना है।

#### निषिधिका का फल

सव्वसमाधी पठमाए दक्षिणाए दु भत्तं सुलभं ।

अवराए सुहविहरे होदि य उवधिस्त लाभो य ॥२९७॥

नैऋत्य दिशा की निषिधिका सर्व संघ के समाधि के लिए कारण हो जाती है। अर्थात् इस दिशा की निषिधिका संघ का हित करने वाली होती है। दक्षिण दिशा की निषिधिका से आहार सुलभता से संघ को मिलता है। पश्चिम दिशा में निषिधिका होने से संघ का सुख से विहार होता रहेगा और उनकों पुस्तकादिक उपकरणों का लाभ होता रहेगा।

जदि तेसिं वाधादो दट्टब्बा पुव्वदक्षिणा होइ।

अवरुत्तरा य पुव्वा उदीचिपुब्बुत्तरा कमसो ॥१९७२॥

यदि नैऋत्य, दक्षिण और पश्चिम दिशा में निषिधिका बनवाने में कुछ बाधा उपस्थित होगी तो आग्नेय दिशा में, वायव्य दिशा में, ऐशान दिशा में व उत्तर

दिशा में इन दिशाओं में से जिन दिशा में सुविधा हो वहाँ बनवानी चाहिए ।  
एदासु फलं कमसो जाणेज्ज तुमंतुमा स कलहो य ॥  
भेदो य गिलाणं पि य चरिमा पुण कद्ददे अण्ण ॥२९७३॥

परन्तु इन दिशाओं की निषिधिकाओं का फल इस प्रकार क्रम से समझ लेना चाहिए । पूर्व दक्षिण दिशा में स्पर्ढा, अर्थात् मैं ऐसा हूँ ऐसा तू है । दूसरे इस प्रकार के है ऐसी स्पर्ढा, उत्पन्न होगी, पश्चिमोत्तर दिशा में कलह होगा, पूर्व दिशा में संघ में फूट पड़ेगी, उत्तर दिशा में व्याधि उत्पन्न होगी, ईशान्य दिशा में संघ में परस्पर खींचातानी होगी । पूर्वोत्तर दिशा में निषिधिका करने से प्रथमतः मुनिमरण होगा ऐसा इन दिशाओं का फल है ।

#### मृत शरीर के बन्धनादि

जिस समय भिक्षु का मरण हुआ होगा उसी बेला में उसका प्रेत ले जाना चाहिए । यदि अवेला में मर जाने पर जागरण, बन्धन अथवा छेदन करना चाहिए ।

बालमुनि, वृद्धमुनि, शिक्षकमुनि, तपस्वी मुनि, भययुक्त, मुनि, रोगी मुनि, दुःख पीड़ित मुनि और आचार्य इनको वर्जकर धीर, निद्रा को जिन्होंने जीता है ऐसे मुनियों को जागरण करना चाहिए ।

जिन्होंने पदार्थ का सत्य स्वरूप जाना है और क्षपक के कृत्य जिन्होंने अनेक बार किये हैं, जिसमें महाबल पराक्रम और धैर्य हैं ऐसे मुनि क्षपक के हाथ और पाया तथा अंगूठा इनका कुछ भाग बाँधते हैं अथवा छेदते हैं ।

#### मृत शरीर को बन्धनादि करने का कारण

यदि यह विधि न की जायेगी तो उस मृतक शरीर में क्रीड़ा करने का स्वभाव वाला कोई भूत अथवा पिशाच प्रवेश करेगा । उस प्रेत को लेकर वह उठेगा, भागेगा, क्रीड़ा करेगा । इस कार्य को देखकर बालमुनि, भीरुमुनि, इनके मन में क्षोभ उत्पन्न होकर ये भागेंगे अथवा मरण होगा इस लिये हाथ, पाँव व अंगूठा बाधना चाहिए अथवा उनके कुछ प्रदेशों का छेदन करना चाहिये ।

#### मृत शरीर को निकालने का विधान

तेण परं संगविध संथारगदं च तत्थ वंधिता ॥  
अट्टेंतरक्खणद्युंगामं तत्तो सिरं किञ्च ॥१९८०॥

शिविका की रचना करने के अनन्तर विछाने के साथ उस शब को बाँधकर शिविका में उसको सुलाना चाहिए । ग्राम के सन्मुख उसका मस्तक करना चाहिए । ग्राम के सन्मुख ही मस्तक करने का कारण यह है कि कदाचित् वह उठेगा तो उसका मुख ग्राम की तरफ नहीं होगा और ग्राम की तरफ पैर करके शिविका में स्थापन करने पर वह उठने पर ग्राम में प्रवेश करेगा इसलिए ग्राम की तरफ सिर का विधान है ।

पुव्वभोगिय मग्गेण आसु गच्छति तं समादाय ॥  
अट्टिदमणियतंता य पिट्टदोते अणिष्ठंता ॥१९८१॥

पूर्व से देखे हुए मार्ग से वह शब शीघ्र लेकर जाना चाहिए । रास्ते में खड़े न होना चाहिए न पीछे देखकर लौटना भी चाहिए ।

कुसुमुटिंठ घेत्तूण य पुरदो ऐगेण होइ गंतव्यं ॥  
अट्टिदअणियतंतेण पिट्टदो लोयणं मुच्चा ॥१९८२॥

उस शब के आगे एक मनुष्य मुटिठ में कुशदर्भ लेकर जावे । वह पीछे न देखे न मार्ग में ठहरे ।

#### निषीधिका की विधि

तेण कुसुमुटिठ्धाराए अवोच्छिण्णाए समणिपादाए ।  
संथारोकादब्बो सब्बत्थ समो सगि तत्थ ॥१९८३॥

जिसने निषीधिका स्थान पूर्व में देखा है वह मनुष्य वहाँ जाकर दर्भमुष्टि की समानधारा से सर्वत्र सम ऐसा संस्तर करना चाहिए ।

#### रेखा लिखने की विधि

जत्थं ण होज्ज तणाइं चुण्णोहि वि तत्थ केसरेहि वा ॥  
संघदिव्वा लेहा सब्बत्थ समा अवोच्छिण्णा ॥१९८४॥

यदि दर्भ तृण नहीं मिला तो प्रासुक तण्डुल, मसूर की दाल इत्यादिकों के चूर्ण से, कमलकेशर वगैरह से मस्तक से लेकर पाँव तक समान नहीं तुटी हुई रेखायें लिखनी चाहिए ।

#### असम रेखा का फल

जदि विसमो संथारो उवरि मञ्जे व होज्ज हेट्या वा ॥  
मरणं व गिलाणं वा गणिवसभजदीणं णायव्यं ॥१९८५॥

ऊपर मध्य में अथवा नीचे रेखाओं में यदि विषमता होगी तो वह अनिष्ट सूचक है। ऊपर की रेखायें विषम होगी तो गणिका—आचार्य का मरण अथवा व्याधि सूचित होता है। मध्य की रेखा विषम होने पर एलाचार्यमरण अथवा व्याधि सूचित होता है और नीचे की रेखा विषम हो पर सामान्य यतीका मरण अथवा व्याधि की सूचना मिलती है।

शब का सिर ग्राम की ओर करने का कारण  
जत्तो दिसाए गामो तत्तो सीसं करितु सोवधियं॥  
उठ्ठेतरक्खणटूँ वोसरिदव्यं सरीरं तं ॥ १९८६ ॥

जिस दिशा में ग्राम होगा, उस दिशा में मस्तक पर पिंडी के साथ उस शब को उस स्थान पर रखना चाहिए। ग्राम के सम्मुख मस्तक करने का अभिप्राय। यह है कि यदि कोई नीच देव शरीर में प्रवेश करेगा तो शब सीधा उठकर ग्राम के विपरीत दिशा में भागेगा। जिससे ग्राम के लोगों को कोई त्रास नहीं होगा।

पिंडी की स्थापना करने का उद्देश्य

जो वि विराधिय दसणमन्ते कालं करितु होज्ज सुरो ॥  
सो वि दिनुञ्जदि दठ्ठूण सदेहं सोवधिं सज्जो ॥ १९८७ ॥

जिसे सम्यादर्शन की विराधना से मरण कर देवपर्याय पाया है वह भी पिंडी के साथ अपना देह देखकर मैं पूर्व भव में मुनि था ऐसा जान सकेगा।

विभिन्न नक्षत्रों में समाधि का फल  
एत्ता भाए रिखे जदि कालगदो सिवं तु सब्वेसिं॥  
एको दु समे खेते दिवदृढ़वेते मरंति दुवे ॥ १९८९ ॥  
सदभिसभरणा अद्वा सादा असनेस्स जिटू अवरवरा ॥  
रोहिणिविसाहपुणव्वसु त्तिउत्तरा मज्जिमा सेसा ॥ १९९० ॥

अल्प नक्षत्र में यदि क्षपक का मरण होगा तो वह सबको सुखदायक होगा। मध्य नक्षत्र में मरण होने से और एक मुनि का मरण होता है। महानक्षत्र पर मरण होने से दो मुनियों का मरण होता है।

जो नक्षत्र पन्द्रह मुहूर्त के रहते हैं उनको जघन्य—मुहूर्त कहते हैं। शतभिषक् भरणी, आर्द्रा, स्वाति, आश्लेषा इन छह नक्षत्रों में से किसी एक नक्षत्र पर अथवा

उसके अंश पर यदि क्षपक का मरण होगा तो सर्व संघ का क्षेम होता है। तीस मुहूर्त के नक्षत्रों को मध्यम नक्षत्र कहते हैं। अश्विनी कृतिका, मृगशिर, पुष्य, मध्या पूर्वा फाल्युनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, पूर्वा, पूर्वाषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा और रेती इन पन्द्र नक्षत्रों पर अथवा उसके अंशों पर क्षपक का मरण होने से और एक मुनि का मरण होता है। उत्कृष्ट पैतालीस मुहूर्त के नक्षत्रों को उत्कृष्ट नक्षत्र कहते हैं। उत्तर, फाल्युनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपदा, पुनर्वसु, रोहिणी इन छह मुहूर्त में से किसी मुहूर्त पर अथवा उसके अंश पर क्षपक का मरण होने से और दो मुनियों का मरण होता है।

दोष निवारक निमित्त

गणरक्खत्यं तत्या तणमयपडिविवयं खु कादूण ॥  
एकंतु समे खेते दिवदृढ़खेते दुवे देज्ज ॥ १९९० ॥

गण के रक्षण हेतु से मध्यम नक्षत्र में तृण का प्रतिबिम्ब कर रखना चाहिए तथा उत्तम नक्षत्र पर दो दो तृण के प्रतिबिम्ब करके अर्पण करना चाहिए।

दोष निवारण के लिए प्रतिबिम्ब रखने की विधि

तट्टाणसावणं चिय तिक्खुत्तो ठविय मडयपासम्भि ॥  
विदियवियप्पिय भिक्खू कुज्जा तह विदियतदियाणं ॥ १९९१ ॥

मृतक के पास प्रतिबिम्ब स्थापन कर उसे मुनि के स्थान में मैने यह दूसरा अर्पण किया है यह चिरकाल यहाँ रहे अथवा तप करे ऐसा जोर से तीन बार उच्चारण करना चाहिए। एक का अर्पण करने में यह क्रम कहा है। मृतक के पास दों तृण प्रतिबिम्ब स्थापन कर दोनों के स्थान में मैने ये दो अर्पण किये हैं ये यहाँ चिरकाल रहे अथवा तप करे ऐसा जोर से तीन बार बोलना चाहिए।

काय लिखने की विधि

असदि तणे चुण्णोहिं च केसरच्छारिद्वियादिचुण्णोहिं ॥

कादव्योथ ककारो उर्वारि हिट्टा यकारो से ॥ १९९२ ॥

प्रतिबिम्ब करने के लिए यदि तृण नहीं होगा तो तंडुलचूर्ण, पुष्य के केसर, भस्म अथवा ईटो का चूर्ण, इसमें से जो कुछ प्राप्त होगा उससे ऊपर ककार तथा नीचे यकार लिखना चाहिए अर्थात् ‘काय’ ऐसा शब्द लिखना चाहिए। संघ शान्ति

के लिए ऐसा कार्य करना चाहिए। (क्षपक को स्थापन करने के पूर्व में प्रायुक धान्य चूर्णादिक से लिखकर उसके ऊपर क्षपक को स्थापन करना चाहिए। ककार के नीचे यकार भी लिखना चाहिए। अर्हन्तक की पूजा वगैरा से भी शान्ति करते हैं ऐसा मूलाराधना में उल्लेख है।

निमित्त परिज्ञान के लिए तीसरे दिन के कार्य  
एवं पडिवित्ता पुणो विं तदिविवसे उवेक्खंति ।  
संघस्स सुहविहारं तस्स गदी चेव णादुंजे ॥ १९९६ ॥

उपर्युक्त क्रम से क्षपक के शरीर की स्थापना कर पुनः तीसरे दिन वहाँ जाकर देखते हैं। अर्थात् परिज्ञान करने के लिए तीसरे दिन मुनि फिर वहाँ जाते हैं

#### सुभिक्ष के निमित्त

जदिविवसे संचिट्ठदि तमलाणद्वं च अक्खदं मडयं ।  
तदिवरिसाणि सुभिक्खं खेमसिवं तम्हि रज्जम्मि ॥ १९९७ ॥

जितने दिन तक वृकादिक पशु-पक्षियों के द्वारा वह क्षपक शरीर स्पर्शित नहीं होगा और अक्षत रहेगा उतने वर्ष तक राज्य में क्षेम रहेगा ऐसा समझना चाहिए।

जं वा दिसमुवणीदं सरीरयं खगचदुप्पदगणे हिं ।  
खेमं सिवं सुभिक्खं विहरिज्जो तं दिसं संघो ॥ १९९८ ॥

पक्षी अथवा चतुष्पद प्राणी जिस दिशा में उस क्षपक का शरीर ले गए होंगे उस दिशा में संघ विहार करें उस दिशा की तरफ क्षेमादिक समझना चाहिए।

#### सिद्धि गमन के निमित्त

जदि तस्स उत्तमंगं दिस्सदि दंता च उवरिगिरिसिहरे ।  
कम्ममलविष्पमुक्को सिद्धिं पत्तोति णादब्बो ॥ १९९९ ॥

क्षपक का मर्तक या दंतपंक्ति पर्वत के शिखर पर दीख पड़ेगी तो वह क्षपक कर्ममल से अलग होकर मुक्त हो गया है ऐसा समझना चाहिए। जयनन्दि टिष्पणी में सिद्धि से स्वार्थसिद्धि ग्रहण किया है।

विभिन्न देव पर्याय में उत्पत्ति के निमित्त  
वेमाणिओ थलगदो समम्मि जो दिसि य वाणविंतरओ ।  
गुड्डाए भवणवासी ऐस गदी से समासणे ॥ २००० ॥

क्षपक का मर्तक उच्च स्थल में दीखेगा तो वह वैमानिक हुआ है ऐसा समझना चाहिए। समभूमि में यदि दीखेगा तो ज्योतिष्क अथवा व्यंतर हुआ है ऐसा समझना चाहिए। गड्ढे में यदि दीखेगा तो भवनवासी हुआ है ऐसा मानना चाहिए।

#### ‘सीता के पुत्र प्राप्त एवं निवासन सूचक स्वप्न और शक्ति’

अथान्तर इस प्रकार के भोगों के समूह से युक्त तथा धर्म, अर्थ और काम के सम्बन्ध से अत्यन्त प्रीति उत्पन्न करने वाले दिनों के व्यतीत होने पर किसी दिन सीता विमान तुल्य भवन में शरद कृतु की मेघमाला के समान कोमल शैव्या पर सुख से सो रही थी कि उस कमललोचना ने रात्रि के पिछले प्रहर में स्वप्न देखा और देखते ही दिव्यवादित्रों के मङ्गलमय शब्द से वह जागृत हो गई। तदन्तर अत्यन्त निर्मल प्रभात के होने पर संशय को प्राप्त सीता, शरीर सम्बन्धी क्रियाएँ करके सखियों सहित पर्ति के पास गई और पूछने लगी कि हे नाथ! आज मैंने जो स्वप्न देखा है, हे विद्वान्! आप उसका फल कहने के लिए चोग्य है।

#### सीता के स्वप्न-

शरदिन्दुसमच्छायौ क्षुद्धासागरनिःस्वनौ ।

कैलासशिखराकारौ सर्वालङ्घारभूषितौ ॥ ६ ॥

कान्तिमत्सितसंदृष्टौ प्रवरौ शरभोत्तमौ ।

प्रविष्टौ मे मुखं मन्ये विलसत्सितकेसरौ ॥ ७ ॥

मुझे ऐसा जान पड़ता है कि शरदकृतु के चन्द्रमा के समान जिनकी कान्ति थी, क्षोभ को प्राप्त हुए सागर के समान जिनका शब्द था, कैलाश के शिखर के समान जिनका आकार था, जो सब प्रकार के अलङ्घारों से अलंकृत थे, जिनकी उत्तम दाढ़े कान्तिमान् एवं सफेद थीं और जिनकी गर्दन की उत्तम जटाएँ सुशोभित हो रही थीं, ऐसे अत्यन्त श्रेष्ठ दो अष्टपद मेरे मुख में प्रविष्ट हुए हैं।

शिखरात् पुष्पकस्याथ सम्भ्रमेणोरुणान्विता ।

वासनुन्ना पताकेवापतितास्मि किल क्षितो ॥ ८ ॥

यह देखने के बाद दूसरे स्वप्न में मैंने देखा है, कि मैं वायु से प्रेरित पताका के समान अत्याधिक सम्भ्रम से युक्त हो, पुष्पक विमान के शिखर से गिरकर नीचे पृथ्वी पर आ पड़ी हूँ।

श्री राम द्वारा स्वप्नफल कथन—  
 पद्मनाभस्ततोऽवोचच्छर भद्रयदर्शनात् ।  
 प्रदरोवर्चिरे षौव पुत्रयुग्ममताप्स्यसि ॥९॥  
 तदन्तर राम ने कहा है कि हे वरोरु ! अष्टपादों का युगल देखने से तू शीघ्र ही दो पुत्र प्राप्त करेगी ।

पतनं पुष्पकस्याग्रदृष्यते न प्रशस्यते ।  
 अथवा शमदानस्थाः प्रयान्तुं प्रशमं ग्रहाः ॥१०॥

हे प्रिये ! यद्यपि पुष्पक विमान के अग्रभाग से गिरना अच्छा नहीं है, तथापि चिन्ता की बात नहीं है क्योंकि शान्तिकर्म तथा दान करने से पापग्रह शान्ति को प्राप्त हो जावेंगे ।

स्वप्नों के साक्षात् फल— अनन्तर सीता ने गर्भ धारण किया। उस गर्भ से ही प्रसिद्ध लवण और अकुंश (लव-कुश)जन्मे थे ।

निर्वासन सूचक शकुन— अथान्तर जब इस प्रकार शुद्ध हृदय के धारक राम महेन्द्रोदय नामक उद्यान में स्थित थे, तब उनके दर्शन की आकांक्षा से प्रजा उनके समीप इस प्रकार पहुँची मानो प्यासी ही हो ।

श्रावितं प्रतिहारीभिः पारम्पर्यात् प्रजागमम् ।  
 विज्ञाय दक्षिणस्याक्षणः स्पन्दं प्राप विदेहजा ॥२॥

'प्रजा का आगमन हुआ है' यह समाचार परम्परा से प्रतिहारियों ने सीता को सुनाया, सो सीता ने जिस समय इस समाचार को जाना, उसी समय उसकी दाहिनी आँख फड़कने लगी ।

अचिन्त्यज्ज्व किंचेतन्निवेजयति मे परम् ।  
 दुःखस्याऽगमनं नेत्रमधस्तात् स्पन्दनं भजत् ॥३॥

सीता ने विचार किया कि अधोभाग में फड़कने वाला नेत्र मेरे लिए किस भारी दुःख के आगमनकी सूचना दे रहा है ।

पापेन विधिना दुःखं प्रापिता सागरान्तरे ।  
 दुष्टस्तेन न सन्तुष्टः किमन्यत् प्रापयिष्यति ॥४॥

पापी विधाता ने मुझे समुद्र के बीच दुःख प्राप्त कराया है, सो जान पड़ता है कि

वह दुष्ट उससे सन्तुष्ट नहीं हुआ, देखूँ वह अब और क्या प्राप्त कराता है। जिस प्रकार सूर्य यद्यपि चन्द्रमा का पालन करता है, परन्तु प्रयत्नपूर्वक अपने तेज से उसे तिरोहित कर पालन करता है, इसलिए वह निरन्तर अपने कर्म का फल भोगता है। व्याकुल होकर सीता ने अन्य देवियों से कहा कि अहो देवियों! तुमने तो आगम को सुना है, इसलिए अच्छी तरह विचार कर कहो कि मेरे नेत्र के अधोभाग के फड़कने का क्या फल है? उन देवियों के बीच निश्चय करने में निपुण जो अनुमती नाम की देवी थी, वह बोली कि देवि ! इस संसार में विधि नाम का दूसरा कौन पदार्थ दिखाई देता है। पूर्व पर्याय में जो अच्छा या बुरा कर्म किया है, वही कृतान्त, विधि, दैव अथवा ईश्वर कहलाता है। मैं पृथग् रहने वाले कृतान्त के द्वारा इस अवस्था को प्राप्त कराई गई हूँ, ऐसा जो मनुष्य का निरूपण करना है, वह अज्ञानमूलक है।

'तदन्तर गुण दोष को जानने वाली गुणमाला नाम की दूसरी देवी ने सान्त्वना देने में उद्यत हो दुःखिनी सीता से कहा कि हे देवि ! प्राणनाथ को तुम्ही सबसे अधिक प्रिय हो, और तुम्हारे ही प्रसाद से दूसरे लोगों को सुख का योग प्राप्त होता है। इलालिए सावधान चित्त से भी मैं उस पदार्थ को नहीं देखती जो है सुचिष्टते! तुम्हारे दुःख का कारण प्राप्त कर सके ।

सीता द्वारा शान्तिकर्म— उक्त दो के सिवाय जो वहाँ अन्य देवियाँ थीं उन्होंने कहा कि हे देवि ! इस विषय में अत्यधिक तर्क वितर्क करने से क्या लाभ है? शान्तिकर्म करना चाहिए। जिनेन्द्र भगवान् के अभिषेक, अत्युदार पूजन और किमिच्छक ज्ञानके द्वारा अशुभ कर्म को दूर हटाना चाहिए। इस प्रकार कहने पर सीता ने कहा कि हे देवियों ! आप लोगों ने ठीक कहा है क्योंकि दान पूजा, अभिषेक और तप अशुभ कर्मों को नष्ट करने वाला है। दान विज्ञों का नाश करने वाला है, शत्रुओं का बैर दूर करने वाला है, पुण्य का उपादान है तथा बहुत भारी यश का कारण है। इतना कहकर सीता ने भद्रकलश नामक कोषाध्यक्ष को बुलाकर कहा कि प्रसूति पर्यन्त प्रतिदिन किमिच्छक दान दिया जावे। 'जैसी आज्ञा हो' यह कहकर उधर कोषाध्यक्ष चला गया और इधर यह सीता भी जिनपूजा आदि सम्बन्धी आदर में निमग्न हो गई ।

अशुभ स्वप्न और शकुनका साक्षात् फल— तदन्तर द्वारपालों ने जिन्होंने द्वार

छोड़ दिये थे, तथा जिनके चित्त व्यग्र थे, ऐसे देशवासी लोग सभा मण्डप में उस तरह डरते-डरते पहुँचे, जिस तरह की मानों सिंह के स्थान पर ही जा रहे हों।

तदन्तर राम ने सांत्वना देने वाली वाणी से पुनः कहा कि आप सब लोगों का स्वागत है। कहिये आप सब किस प्रयोजन से यहाँ आये हैं।

तदनन्तर उनमें से जो मुखिया था वह जिस किसी तरह टूटे-फूटे अक्षरों से बोला कि हे देव ! अभयदान देकर प्रसन्नता कीजिये । तब राजा रामचन्द्र ने कहा कि हे भद्र पुरुषों ! आप लोगों को कुछ भी भय नहीं है, हृदय में स्थित बात को प्रगट करो और स्वस्थता को प्राप्त होवो । मैं इस समय समस्त पाप का परित्याग कर उस तरह निर्दोष वरस्तु को ग्रहण करता हूँ जिस प्रकार हंस मिले हुए जल को छोड़कर केवल दूधको ग्रहण करता है । तदनन्तर अभय प्राप्त होने पर भी जो बड़ी कठिनाई से अक्षरों को स्थिर कर सका था ऐसा विजय नामक पुरुष हाथ जोड़ मस्तक से लगा मन्द स्वर में बोला कि हे राम ! हे नरोत्तम ! मैं जो निवेदन करना चाहता हूँ उसे सुनिये । इस समय समस्त प्रजा मर्यादा से रहित हो गई है । यह मनुष्य स्वभाव से ही महाकुटिलचित्त है, फिर यदि कोई हृष्टान्त प्रकट मिल जाता है, तो फिर उसे कुछ भी कठिन नहीं रहता । वानर स्वभाव से ही परम चंचलता धारण करता है फिर यदि चंचल यन्त्र रूपी पंजर पर आरूढ़ हो जावें तो कहना ही क्या है । जिनके चित्त में पाप समाया हुआ है ऐसे बलवान् मनुष्य अवसर पाकर निर्बल मनुष्यों की तरुण स्त्रियों को बलात् हरने लगे हैं । कोई मनुष्य अपनी साध्वी प्रिया को पहले तो परित्यक्त कर अत्यन्त दुःखी करता है फिर उसके विरह से स्वयं अत्यन्त दुःखी हो, किसी की सहायता से उसे घर बुलवा लेता है । इसलिए हे नाथ ! धर्म की मर्यादा छूट जाने से जब तक पृथ्वी नष्ट नहीं हो जाती है, तब तक प्रजा के हित की इच्छा से कुछ उपाय सोचा जाय । आप इस समय मनुष्य लोक के राजा होकर भी यदि विधिपूर्वक प्रजा की रक्षा नहीं करते हैं तो वह अवश्य ही नाश को प्राप्त हो जायेगी । नदी, उपवन, सभा, ग्राम, घाऊ मार्ग, नगर, तथा घरों में इस समय आपके इस एक अवर्णवाद को छोड़कर और दूसरी चर्चा ही नहीं है कि राजा दशरथ के पुत्र राम समस्त शास्त्रों में निपुण होकर भी विद्याधरों के अधिपति रावण के द्वारा हृत सीता को पुनः वापिस ले आये । यदि हम लोग भी ऐसे व्यवहार का आश्रय लें तो उसमें कछु

‘भी दोष नहीं है क्योंकि जगत् के लिए तो विद्वान् ही परम प्रमाण है। दूसरी बात यह है कि राजा जैसा काम करता है, वैसा ही काम उसका अनुकरण करने वाले हम लोगों में भी बलात् होने लगता है।

इस प्रकार दुष्ट हृदय वाले मनुष्य स्वच्छ होकर पृथ्वी पर अपवाद कर रहे हैं, सो हे काकुत्स्थ! उनका निग्रह करो। यदि आपके राज्य में एक यही दोष नहीं होता, तो वह राज्य इन्द्र के भी साप्राज्य को विलम्बित कर देता। इस प्रकार उक्त निवेदन को सुनकर एक क्षण के लिए राम, विषाद रूपी मुग्धर की चोट से जिनका हृदय अत्यन्त विचलित हो रहा था ऐसे हो गये। वे विचार करने लगे कि हाय-हाय यह बड़ा कष्ट आ पड़ा। जो मेरे यश रूपी कमलवन को जलाने के लिए अपयशरूपी अग्नि लग गई।

अथानन्तर किसी तरह एक वस्तु में चिन्ता को स्थिरकर श्री राम ने लक्ष्मण को बुलाने के लिए द्वारपाल को आज्ञा दी। कार्यों के देखने में जिनका मन लग रहा था ऐसे लक्ष्मण, द्वारपाल के बचन सुन हड्डबड़ाहट के साथ चंचल घोड़े पर सवार हो, श्री राम के निकट पहुँचे और हाथ जोड़ नमस्कार कर उनके घरणों में दृष्टि लगाये हए मनोहर पुर्वी पर बैठ गये।

तदन्तर अणभर ठहर कर राम ने यथाक्रम से लक्ष्मण के लिए अपवाद उत्पन्न होने का समाचार सुनाया। सो उसे सुनकर लक्ष्मण के नेत्र क्रोध से लाल हो गये। उन्होंने उसी समय योद्धाओं को तैयार होने का आदेश दिया तथा स्वयं कहा कि मैं आज दुर्जनरूपी समुद्र के अन्त को प्राप्त होता हूँ और मिथ्यावादी लोगों की जिहादों से पृथिवी को आच्छादित करता हूँ। अनुपम शील के समूह को धारण करने वाली एवं गुणों से गम्भीर सीता के प्रति जो द्वेष करते हैं, मैं उन्हें आज क्षय को प्राप्त कराता हूँ।

तदनन्तर जो क्रोध के वशीभूत हो दुर्दशीय अवस्था को प्राप्त हुये थे, तथा जिन्होंने सभा को क्षोभयुक्त कर दिया था, ऐसे लक्ष्मण को राम ने इन वचनों से शान्त किया, कि हे सौम्य ! यह समुद्रान्त पृथिवी भगवान क्रष्णभद्रेव तथा भरत चक्रवर्ती जैसे उत्तमोत्तम प्रुणों के द्वारा चिरकाल से पालित है।

जबकि अकीर्ति रूपी अग्नि के द्वारा हरा-भरा कीर्तिरूपी उद्यान जल रहा है, तब इन नश्वर विशाल भोगों से क्या प्रयोजन सिद्ध होने वाला है। मैं जानता

हूँ कि देवी सीता, सती और शुद्ध हृदय वाली नारी है, पर जब तक वह हमारे घर में स्थित रहती है, तब तक अवर्णवाद शस्त्र और शास्त्रों के द्वारा दूर नहीं किया जा सकता ।

मेरा यह महायोग्य, प्रकाशमान, अत्यन्त निर्मल एवं उज्ज्वल कुल जब तक कलङ्कित नहीं होता है, तब तक शीघ्र ही इसका उपाय करो। जो जनता के सुख के लिए अपने आप को अर्पित कर सकता है, ऐसा मैं निर्दोष एवं शील से सुशोभित सीता को छोड़ सकता हूँ परन्तु कीर्ति को नष्ट नहीं होने दूँगा ।

इस प्रकार कहने पर लक्ष्मण ने हाथ जोड़कर विनम्र भाव से कहा कि हे देव! सीता को छोड़ना उचित नहीं है। जिसके चरण-कमल अत्यन्त कोमल हैं, जो कृशाङ्गी है भोली है और सुखपूर्वक जिसका लालन पालन हुआ है, ऐसी अकेली सीता उपद्रवपूर्ण मार्ग से कहाँ जायेगी ?

हे नाथ ! हे वीर ! प्रसन्न होओ कि जो निर्दोष है, जिसने कभी सूर्य भी नहीं देखा है, जो अत्यन्त कोमल है, तथा आपके लिए जिसने अपना हृदय अर्पित कर दिया है, ऐसी सीता को मत छोड़ो ।

सीता का निर्वासन – तदनन्तर जिनका विद्वेष अत्यन्त हृष्ट हो गया था, जो क्रोध के भार को प्राप्त थे, और जिनका मुख अप्रसन्न था, ऐसे राम ने छोटे भाई-लक्ष्मण से कहा कि हे लक्ष्मीधर ! अब तुम्हें इसके आगे कुछ भी नहीं कहना चाहिए। मैंने जो निश्चय कर लिया है, वह अवश्य किया जायेगा, चाहे उचित हो चाहे अनुचित। निर्जन वन में सीता अकेली छोड़ी जायेगी। वहाँ वह अपने कर्म से जीवित रहे अथवा मरे। दोष वृद्धि करने वाली सीता भी मेरे इस देश में अथवा किसी उत्तम सम्बन्धी के नगर में अथवा किसी घर में क्षण भर के लिए निवास न करे।

अथानन्तर जो चार घोड़ों वाले रथ पर सवार होकर जा रहा था, सेना से घिरा था, वन्दीजन ‘जय’ ‘नन्द’ आदि शब्दों के द्वारा जिसकी पूजा कर रहे थे, जिसके शिर पर सफेद छत्र लगा हुआ था, जो धनुष को धारण कर रहा था तथा कवच और कुण्डलों से युक्त था ऐसा कृतान्तवक्ष्वत्र सेनापति स्वामी के पास चला।

तदनन्तर उसने पृथिवी का स्पर्श करने वाले सिर से स्वामी को प्रणाम कर

हाथ जोड़ते हुए यह कहा कि हे देव ! मुझे आज्ञा दीजिये । राम ने कहा कि जाओ, सीता को शीघ्र ही छोड़ आओ। उसने जिन मन्दिरों के दर्शन करने का दोहला प्रगट किया था, इसलिए मार्ग में जो जिनमन्दिर मिले, उनके दर्शन कराते जाना। तीर्थकरों की निर्वाणभूमि सम्मेदाचल पर निर्मित, एवं आशाओं के पूर्ण करने में निपुण जो प्रतिमाओं के समूह हैं, उनके भी उसे दर्शन कराते जाना। इस प्रकार दर्शन कराने के बाद इसे सिंहनाद नामकी निर्जन अटवी में ले जाकर तथा वहाँ ठहरा कर हे सौम्य ! तुम शीघ्र ही वापिस आ जाओ ।

तदनन्तर बिना किसी तर्क विरक के ‘जो आज्ञा’ कहकर सेनापति सीता के पास गया और इस प्रकार बोला कि हे देवि ! उठो, रथ पर सवार होओ, इच्छित कार्य कर, जिन मन्दिरों के दर्शन करो और इच्छानुकूल फल का अभ्युदय प्राप्त करो। इस प्रकार सेनापति जिसे मधुर शब्दों द्वारा प्रसन्न कर रहा था, तथा जिसका हृदय अत्यन्त हर्षित हो रहा था, ऐसी सीता रथ के समीप आयी। रथ के समीप आकर उसने कहा कि सदा चतुर्विध संघ की जय हो, तथा उत्तम आचार के पालन करने में एकनिष्ठ जिनभक्त रामचन्द्र भी सदा जयवन्त रहें। यदि हमसे प्रमाद वश कोई असुन्दर चैष्टा हो गई है तो जिनालय में निवास करने वाले देव मेरे उस समस्त अपराध को क्षमा करें। अत्यन्त उत्सुक हृदय को धारण करने वाली सीता ने पति में लगे हुए हृदय से समस्त सखी जनों की यह कहकर लौटा दिया कि हे उत्तम सखियों ! तुम लोग सुख से रहो। मैं जिनालयों को नमस्कार कर अभी आती हूँ। अधिक उत्कंठा करना योग्य नहीं है। इस प्रकार सीता के कहने से, तथा पति का आदेश नहीं होने से सुन्दर भाषण करने वाली अन्य स्त्रियों ने उसके साथ जाने की इच्छा नहीं की थी।

तदनन्तर परम प्रमोद को प्राप्त, प्रसन्नमुखी सीता, सिन्धों को नमस्कार कर उज्ज्वल रथ पर आसूढ़ हो गई। रत्न तथा सुवर्ण निर्मित रथ पर आसूढ़ हुई सीता उस समय, इस तरह सुशोभित हो रही थी, जिस तरह विमान पर आसूढ़ हुई रत्नमाला से अलंकृत देवाङ्गना सुशोभित होती हैं। कृतान्तवक्त्र सेनापति के द्वारा प्रेरित, उत्तम घोड़ों से जुता हुआ वह रथ भरत चक्रवर्ती के द्वारा छोड़े हुए बाण के समान बड़े वेग से जा रहा था।

निर्वासिनी सीता का अपशुकन दर्शन—

शुष्कद्रुमसमारूढ़ो वायसोऽत्यन्तमाकुलः ।  
राट विरसं धुन्तन्सकृत्यक्षस्तकम् ॥७५॥

उस समय सूखे वृक्ष पर अत्यन्त व्याकुल कौआ, पहुँच तथा मरतक को बार-बार कपांत हुआ विरस शब्द कर रहा था ।

सुमहाशोक सन्तप्ता धृतमुक्तशिरोरुहा ।

रुरोदाभिमुखं नारी कुर्वती परिदेवनम् ॥७६॥

जो महाशोक से सन्तप्त थी, जिसने अपने बाल कम्पित कर छोड़ दिये थे, तथा जो विलाप कर रही थी, ऐसी, एक स्त्री सामने आकर रोने लगी ।

पश्यन्त्यप्येवमादीनि दुर्निमित्तानि जानकी ।

व्रजत्येव जिनासक्तमानसा स्थिरनिश्चया ॥७७॥

यद्यपि सीता इन सब अपशकुनों को देख रही थी, तथापि जिनेन्द्र भगवान में आसक्त चित्त होने के कारण वह दृढ़ निश्चय के साथ आगे चली जा रही थी ।

पवन के समान वेगशाली वे धोड़े उस गंगा नदी को इस तरह पार कर गये, जिस तरह कि साधु सम्यक्दर्शन के सारपूर्ण योग से संसार को पार कर जाते हैं। तदनन्तर कृतान्तवक्त्र सेनापति यद्यपि मेरु के समान सदा निश्चलचित्त रहता था, तथापि उस समय वह दया सहित होता हुआ परम विषाद को प्राप्त हो गया। कुछ भी कहने के लिए जिसकी आत्मा आशक्त थी, जो महादुःख से ताङ्गित हो रहा था, तथा जिसके बलात् आँसू निकल रहे थे। ऐसा कृतान्तवक्त्र अपने आप पर नियन्त्रण करने तथा खड़े होने के लिए असमर्थ हो गया। तदनन्तर जिसका समस्त शरीर ढीला पड़ गया था, और जिसकी कान्ति नष्ट हो गई थी ऐसा सेनापति रथ खड़ा कर और मरतक पर हाथ रखकर जोर-जोर से रुदन करने लगा। तत्यश्चात् जिसका हृदय टूट रहा था, ऐसी सती सीता ने कहा कि हे कृतान्तवक्त्र! तू अत्यन्त दुःखी मनुष्य के समान इस तरह क्यों रो रहा है? तू इस अत्यधिक हर्ष के अवसर पर मुझे भी विषादयुक्त कर रहा है बता तो सही कि तू निर्जन महावन में क्यों हो रहा हैं? स्वामी का आदेश पालन करना चाहिए अथवा अपने नियोग के अनुसार यथार्थ बात अवश्य कहना चाहिए। इन दो कारणों से जिस

किसी तरह रोना रोककर अपनी यथार्थ बात निरुपण किया। उसने कहा कि हे शुभे! विष, अग्नि अथवा शस्त्र के समान दुर्जनों का कथन सुनकर जो अपकीर्ति से अत्यधिक भयभीत हो गये थे ऐसे श्री राम ने दुःख से छूटने योग्य स्नेह छोड़कर दोहलों के बहाने हे देवि ! तुम्हें उस तरह छोड़ दिया है, जिस तरह कि मुनि रति को छोड़ देते हैं। हे स्वामिनि ! यद्यपि ऐसा कोई प्रकार नहीं रहा, जिससे कि लक्षण ने आपके विषय में उन्हें समझाया नहीं हो तथापि उन्होंने अपनी हठ नहीं छोड़ी।

जिस प्रकार धर्म के सम्बन्ध से रहित जीव की सुख स्थिति को कही शरण नहीं जान पड़ता। हे देवि ! तेरे लिए न माता शरण है, न भाई शरण है, और न कुटुम्बीजनों का समूह ही शरण है, इस समय तो तेरे लिए मृगों से व्याप्त वह बन ही शरण है।

तदनन्तर सीता उसके बचन सुन हृदय में वज्र से ताङ्गित के समान अत्यधिक दुःख से व्याप्त होती हुई मोह को प्राप्त होती गई। बड़ी कठिनाई से चेतना प्राप्त कर उसने लड़खड़ाते अक्षरों वाली वाणी में कहा कि कुछ पूछने के लिए मुझे एक बार स्वामी के दर्शन करा दो। इसके उत्तर में कृतान्तवक्त्र ने कहा कि हे देवि! इस समय तो वह नगरी बहुत दूर रह गई है अतः अत्यधिक कठोर आज्ञा देने वाले स्वामी राम को किसप्रकार देख सकती हो? तदनन्तर सीता यद्यपि अश्रुजल की धारा में मुख कमल का प्रक्षालन कर रही थी तथापि अत्यधिक स्नेहरूपी रस से आक्रान्त हो उसने यह कहा कि सेनापते! तुम मेरी ओर से राम से यह कहना कि हे प्रभो! आपको मेरे त्वाग से उत्पन्न हुआ विषाद नहीं करना चाहिए। हे महापुरुष! परम धैर्य का अवलम्बन कर सदा पिता के समान न्यायवत्सल हो प्रजा की अच्छी तरह रक्षा करना। क्योंकि जिस प्रकार प्रजा पूर्ण कलाओं को प्राप्त करने वाले शरद् क्रतु के चन्द्रमा की सदा इच्छा रहती है उसे चाहती है, उसी प्रकार कलाओं के पार को प्राप्त करने वाले एवं आलाद के कारणभूत राजा की प्रजा सदा इच्छा करती है— उसे चाहती है। जिस सम्यक्दर्शन के द्वारा भव्य जीव दुःखों से भयंकर संसार से छूट जाते हैं, उस सम्यक्दर्शन की अच्छी तरह आराधना करने के योग्य हो। हे राम! साम्राज्य की अपेक्षा वह सम्यक्दर्शन ही अधिक माना जाता है, क्योंकि साम्राज्य तो नष्ट हो जाता है, परन्तु सम्यक्दर्शन स्थिर सुख को देने वाला है। हे पुरुषोत्तम! अभ्यों के द्वारा की हुई जुगुप्सा से

भयभीत होकर तुम्हें वह सम्बन्धर्णन किसी भी तरह नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि वह अत्यन्त दुर्लभ है। हथेली में आया रल यदि महासागर में गिर जाता है, तो फिर वह किस उपाय से प्राप्त हो सकता है? अमृत फल को महा आपत्ति से भयंकर कुएँ में फेंककर पश्चात्ताप से पीड़ित बालक परम दुःख को प्राप्त होता है। जिसके अनुरूप जो होता है, वह उसे बिना किसी प्रतिबन्ध के कहता ही है। क्योंकि इस संसार का मुख-बन्धन करने के लिए कौन समर्थ है? हे गुणभूषण! यद्यपि आत्महित को नष्ट करने वाली अनेक बातें आप श्रवण करेंगे तथापि ग्रहिल (पागल) के समान उन्हें हृदय में धारण नहीं करना विचार पूर्वक ही कार्य करना।

जो रथ के मध्य से पहले ही उत्तर चुकी थी, ऐसी सीता इस प्रकार कहकर तृण तथा पत्थरों से व्याप्त पृथिवी पर गिर पड़ी। (पद्मपुराण)

### राम परशुराम की भेंट के पूर्व शकुन

सीता के स्वयंभूत के उपरान्त जब श्री राम जी सीता सहित अयोध्या लौट रहे थे, उस अवसर पर मार्ग में परशुराम के आगमन के पूर्व निम्न प्रकार शुभाशुभ शकुन प्रगट होने लगे—

**धोरास्तु पक्षिणो वाचो व्याहरन्ति समन्ततः ।**

**भौमाश्चैवमृगाः सर्वे गच्छन्ति स्म प्रदक्षिणम् ॥९॥**

उस समय ऋषि-समूह तथा श्री रामचन्द्र जी के साथ यात्रा करते हुए पुरुष सिंह महाराज दशरथ के चारों ओर भयंकर बोली बोलने वाले पक्षी चहच्छाने लगे और भूमि पर विचरने वाले समस्त मृग उन्हें दाहिने रखकर जाने लगे।

**तान् हृष्ट्वा राजाशार्दूलो वसिष्ठं पर्यपृच्छतः ।**

**असौम्याः पक्षिणो धोरा मृगाश्चापि प्रदक्षिणाः ॥१०॥**

**किमिदं हृदयोत्कम्पि मनो मन विषीदति ।**

उन सबको देखकर राजसिंह दशरथ ने वसिष्ठ जी से पूछा— ‘मुनिवर! एक ओर तो ये भयंकर पक्षी धोर शब्द कर रहे हैं और दूसरी ओर ये मृग हमें दाहिनी ओर करके जा रहे हैं; यह अशुभ और शुभ दो प्रकार का शकुन कैसा? यह मेरे हृदय को कम्पित कर देता है। मेरा मन विषाद में डूब जाता है।’

**राज्ञो दशरथस्यैतच्छुत्वा वाक्यं महानृषिः ॥११॥**

**उवाच मधुरां वाणीं श्रूयतामस्य यत् फलम् ।**

**उपस्थितं भयं धोरं दिव्यं पक्षिमुखाच्युतम् ॥१२॥**

**मृगाः प्रशमयन्त्येते संतापस्त्यज्यतामयम् ।**

राजा दशरथ का यह वचन सुनकर महर्षि वसिष्ठ ने मधुर वाणी में कहा— ‘राजन! इस शकुन का फल है, उसे सुनिये— आकाश में पक्षियों के मुख से जो बात निकल रही है, वह बताती है कि इस समय कोई धोर भय उपस्थित होने वाला है, परन्तु हमें दाहिने रखकर जाने वाले ये मृग उस भय के शान्त हो जाने की सूचना दे रहे हैं; इसलिये आप यह चिन्ता छोड़िये।’

इन लोगों में इस प्रकार बातें हो ही रही थीं कि वहाँ बड़े जोरों की आँधी उठी। वह सारी पृथ्वी को कँपाती हुई बड़े-बड़े वृक्षों को धराशायी करने लगी। सूर्य अन्धकार से आच्छन्न हो गये। किसी को दिशाओं का भान न रहा। धूल से ढक जाने के कारण वह सारी सेना मूर्छित-सी हो गयी।

उस समय केवल वसिष्ठ मुनि, अन्यान्य ऋषियों तथा पुत्रों सहित राजा दशरथ को ही चेत रहा गया था, शेष सभी लोग अचेत हो गये थे। उस धोर अन्धकार में राजा की वह सेना धूल से आच्छादित-सी हो गयी।

उस समय राजा दशरथ ने देखा— क्षत्रिय राजाओं का मान-मर्दन करने वाले भृगुकुलनन्दन जमदग्निकुमार परशुराम सामने से आ रहे हैं। वे बड़े भयानक से दिखाई देते थे। उन्होंने मस्तक पर बड़ी-बड़ी जटाएँ धारण कर रखी थीं। वे कैलाश के समान दुर्जय और कालाग्नि के समान दुःसह प्रतीत होते थे। तेजोमण्डल द्वारा जाज्वल्यमान से हो रहे थे। साधारण लोगों के लिये उनकी ओर देखना भी कठिन था। वे कन्धे पर फरसा रखे और हाथ में विद्युदगुणों के समान दीप्तिमान् धनुष एवं भयंकर बाण लिये त्रिपुरविनाशक भगवान् शिव के समान जान पड़ते थे।

अनन्तर परशुराम ने दशरथादि की भर्त्तर्णा की एवं राम को अपना धनुष चढ़ाने को कहा। राम ने धनुष को सरलता से चढ़ाकर परशुराम के लिये अपने तेज का प्रदर्शन किया। अपशुकुन की सूचनानुसार श्रीरामादि को परशुराम के क्रोध का पात्र बनना पड़ा परन्तु शुभ शकुन की सूचनानुसार श्रीरामजी विजयी हुये।

### मृत्यु के पूर्व रावण द्वारा अपशकुन दर्शन

राम-रावण युद्ध के प्रायः अन्तिम चरण में रावण ने बहुरूपिणी विद्या को सिद्ध

करके राम लक्ष्मण के साथ युद्ध करने का निर्णय लिया।

अथानन्तर लाल-लाल नेत्रों को धारण करने वाला प्रतापी रावण उठकर अमोघ शस्त्ररूपी रत्नों से युक्त उज्ज्वल शास्त्रागार में जाने के लिए उस प्रकार उद्यत हुआ जिस प्रकार कि बज्रालय में जाने के लिये इन्द्र उद्यत होता है। जब वह शास्त्रागार में प्रवेश करने लगा तब निमांकित अपशुकन हुए।

शस्त्रागार में अपशुकन दर्शन

पृष्ठतः क्षुतमग्रे च छिन्नो मार्गो महाहिना।  
हाही धिङ्क्त्वां क यासीति वचांसि तमीवावदन् ॥१८॥

पीछे की ओर छींक हुई, आगे महानाग ने मार्ग काट दिया, ऐसा लगने लगा जैसे लोग उशसे यह शब्द कह रहे हों कि हा! तुझे धिक्कार है कहाँ जा रहा है?

वातूलप्रेरितं छत्रं भग्नं वैदूर्यदण्डकम् ।  
निपपातोत्तरीयं च बलिभुग्दक्षिणोऽरटत् ॥१९॥

(पद्मपुराण 73 पर्व)

नील मणिमय दण्ड से युक्त उसका छत्र वायु से प्रेरित हो टूट गया, उसका उत्तरीय वस्त्र नीचे गिर गया और दाहिनी और कौआ काँव-काँव करने लगा।

अन्येऽपि शकुनाः क्रूरास्तं युद्धाय न्यवर्त्तयन् ।  
वचसा कर्मणा ते हि न कायेनानुमोदकाः ॥२०॥

इनके सिवाय और भी क्रूर अपशुकनों ने उसे युद्ध के लिए मना किया। यथार्थ में वे सब अपशुकन उसे युद्ध के लिए न वचन से अनुमति देते थे कि ये अपशुकन से और न काम से ही।

नानाशकु नविज्ञानप्रवीणधिषणा ततः ।  
दृष्ट्वा पापान्महोत्पातानत्यन्ताकुलमानसाः ॥२१॥

तदनन्तर नाना शकुनों के ज्ञान में जिनकी बुद्धि निपुण थी ऐसे लोग उन पाप पूर्ण महा उत्पातों को देख अत्यन्त व्याग्रचित हो गये।

अपशुकनों को देखकर मन्दोदरी ने रावण को सीता को वापिस करने के लिए एवं युद्ध न करने के लिए बहुत अनुनय-विनय की। परन्तु रावण ने मानो काल से प्रेरित होकर एक भी नहीं सुनी। वह बहुरूपिणी विद्या के द्वारा निर्मित महारथ

में युद्ध के लिए आसूढ़ हुआ।

विशाल नयन तथा अनुपम आकृति को धारण करने वाला रावण उस रथ पर आसूढ़ हुआ अपने तेज से मानो समस्त लोक को ग्रस ही रहा था। जो अपने समान थे, अपना हित करने वाले थे, महा बलवान् थे, देवों के समान कान्ति से युक्त थे और अभिप्राय को जानने वाले थे ऐसे गगनवल्लभ नगर के स्वामी को आदि लेकर दश हजार विद्याधर राजाओं से विरा रावण सुग्रीव और भामण्डल को देख कुपित होता हुआ उनके सन्मुख गया।

युद्ध क्षेत्र में अपशुकन दर्शन

दृष्ट्वा दक्षिणतोऽत्यन्तभीमनिः स्वानकारिणः ।  
भल्लूका गगने गृध्रा भ्रमन्ति छन्नभः स्कराः ॥१४॥

(पद्मपुराण 74 पर्व)

रावण की दक्षिण दिशा में भालू अत्यन्त भयंकर शब्द कर रहे थे और आकाश में सूर्य को आच्छादित करते हुए गीध मँडरा रहे थे।

जानन्तोऽपि निमत्तानि कथयन्ति महाक्षयम् ॥

शौर्यमानोत्कटः कुद्धा युयुरेव महानरा : ॥१५॥

शूरवीरता के अहंकार से भरे महासुभट यद्यपि यह जानते थे कि ये अपशुकन मरण को सूचित कर रहे हैं तथापि वे कुपित हो आगे बढ़ जाते हैं।

राम लक्ष्मण द्वारा शुभ शकुन दर्शन

गमने शकुनास्तेषां कृतकोमलनिस्वनाः ॥  
आनन्दयन् यथापूर्व मिष्टदेशनिवेशिनः ॥३६॥

जब राम लक्ष्मण का गमन हुआ तब पहले की भाँति इष्ट स्थानों पर बैठकर कोमल शब्द करने वाले पक्षियों ने उन्हें आनन्दयुक्त किया।

इस युद्ध के अन्त में लक्ष्मण के द्वारा रावण की मृत्यु हुई।

**“यादवों के विनाश सूचक अपशुकन”**

वैशम्पायन जी कहते हैं—जनमेजय ! महाभारत—युद्ध के पश्चात् जब छत्तीसवाँ वर्ष प्रारम्भ हुआ तब कौरव नन्दन राजा युधिष्ठिर को कई तरह के अपशुकन दिखाई देने लगे।

वधुर्वाताश्च निर्धाता रुक्षाः शर्करवर्षिणः ।

अपशम्यानि शकुना मण्डलानि प्रचक्रिरे ।

बिजली की गङ्गड़ाहट के साथ बालू और कंकड़ बरसाने वाली प्रचण्ड आँधी चलने लगी। पक्षी दाहिनी और मण्डल बनाकर उड़ते दिखाई देने लगे।

प्रत्यगूहं महानयो दिशो निहारसंवृताः ।

उल्काश्चाङ्गारवर्षिण्य, प्राप्तन् गगनाद् भुवि ।

बड़ी-बड़ी नदियाँ बालू के भीतर छिपकर बहने लगीं। दिशाएँ कुहरे से आच्यादित हो गयी। आकाश से पृथ्वी पर अङ्गार बरसाने वाली उल्काएँ गिरने लगीं।

आदित्यो रजसा राजन् समवच्छन्मण्डलः ।

विरशिमरुदये नित्यं कबन्धैः समदृश्यत ॥४॥

राजन ! सूर्य मण्डल धूल से आसन्न हो गया था। उदय-काल में सूर्य तेजो-हीन प्रतीत होते थे और उनका मण्डल प्रतिदिन अनेक कबन्धों (बिना सिर के धड़ो) से युक्त दिखाई देता था।

परिवेषाश्च दृश्यन्ते दारुणाश्चन्द्रसूर्ययोः ।

त्रिवर्णिः श्यामरुक्षान्तास्तया भस्मारुण प्रभाः ।

चन्द्रमा और सूर्य दोनों के चारों ओर भयानक घेरे दृष्टिगोचर होते थे। उन घेरों में तीन रंग प्रतीत होते थे। उनका किनारे का भाग काला एवं रुखा होता था। बीच में भस्म के समान धूसर रंग दीखता था और भीतरी किनारे की कान्ति अरुणवर्ण की दृष्टिगोचर होती थी।

एते चान्य च बहव उत्पाता भयशंसिनः ।

दृश्यन्ते बहवो राजन् हृदयोद्देग कारकाः ।

राजन ! ये तथा और भी बहुत से भयसूचक उत्पात दिखाई देने लगे, जो हृदय को उद्धिन कर देने वाले थे।

“अपशकुनों का फल”

कस्यचित् त्वथ कालस्य कुरुराजो युधिष्ठिरः ।

शुश्राव वृष्णिचक्रस्य मौसले कर्दन् कृतम् ॥

विमुक्तं वासुदेवं च श्रुत्वा रामं च पाण्डवः ।

इसके थोड़े ही दिनों बाद कुरुराज युधिष्ठिर ने यह समाचार सुना कि मूसल को निमित्त बनाकर आपस में महान् युद्ध हुआ है जिसमें समस्त वृष्णिवंशियों का संहार हो गया। केवल भगवान् श्रीकृष्ण और बलराम जी ही उस विनाश से बचे हुए हैं।  
(श्रीमहाभारतम् मौसल पर्व प्रथमोऽध्यायः)

राम रावण युद्ध के पहले अपशकुन

उत्पातसूचक लक्षणों के ज्ञाता तथा लक्षण के बड़े भाई श्रीराम ने बहुत-से

अपशकुन देखकर सुमित्राकुमार लक्षण को हृदय से लगाया और इस प्रकार कहा।

लक्षण ! जहाँ शीतल जल की सुविधा हो और फलों से भरे हुए जंगल हों, उन स्थानों का आश्रय लेकर हम अपने सैन्यसमूह को कई भागों में बाँट दें और इसे व्यूहबद्ध करके इतनी रक्षा के लिए सदा सावधान रहें।

लोकक्षयकरं भीमं भयं पश्याम्युपस्थितम् ।

प्रवर्हणं प्रवीराणामृक्षवानररक्षसम् ॥३॥

‘मैं देखता हूँ समस्त लोकों का संहार करने वाला भीषण भय उपस्थित हुआ है, जो रीछों, वानरों और राक्षसों के प्रमुख वीरों के विनाश का सूचक है।’

वाताश्च कलुषा वान्ति कम्पते च वसुन्धरा ।

पर्वताग्राणिवेष्टने पतन्ति च महीरुहाः ॥४॥

धूल से भरी हुई प्रचण्ड वायु चल रही है। धरती काँपती है, पर्वतों के शिखर हिल रहे हैं और पेड़ गिर रहे हैं।

मेघाः क्रव्यादसंकाशाः परुषाः परुषस्वनाः ।

क्रूराः क्रूरं प्रवर्षन्ति मिश्रं शोणितविन्दुभिः ॥५॥

मेघों की घटा घिर आई है, जो मांसभक्षी राक्षसों के समान दिखायी देती है। वे मेघ देखने में तो क्रूर हैं ही इनकी गर्जना भी बड़ी कठोर है। ये क्रूरतापूर्वक रक्त की बूँदों से मिले हुए जल की वर्षा करते हैं।

रक्ताचन्दनसंकाशा संध्या परमदारुणा ।

ज्वलतः प्रपतत्येतजदादित्यादग्निमण्डलम् ॥६॥

यह संध्या लाल चन्दन के समान कान्ति धारण करके बड़ी भयंकर दिखाई देती है। प्रज्ञचलित सूर्य से आग की ज्वालाएँ टूट-टूटकर गिर रही है।

दीना दीनस्वरा: क्रूराः सर्वतो मृगपक्षिणः ।

प्रत्यादित्यं विनर्दन्ति जनयन्तो महद्दयम् ॥७॥

क्रूर पशु और पक्षी दीन आकार धारण कर सूर्य की ओर मुँह करके दीनतापूर्ण स्वर में चीत्कार करते हुए महान् भय उत्पन्न कर रहे हैं।

रजन्यामप्रकाशसस्तु संतापयति चन्द्रमाः ।

कृष्णरक्तांशुपर्यन्तो लोकक्षय इवोदितः ॥८॥

रात में भी चन्द्रमा पूर्णतः प्रकाशित नहीं होते और अपने स्वभाव के विपरीत ताप दे रहे हैं। ये काली और लाल किरणों से व्याप्त हो इस तरह उदित हुए हैं, मानों जगत् के प्रलय का काल आ पहुँचा है।

**हस्यो रुक्षोऽप्रशस्तश्च परिवेवस्तु लोहितः ।**

**आदित्ये विमले नीलं लक्ष्म लक्ष्मण दृश्यते ॥११॥**

लक्ष्मण ! निर्मल सूर्य मण्डल में नीला चिह्न दिखाई देता है। सूर्य के चारों ओर ऐसा घेरा पड़ा है, जो छोटा, रुखा, अशुभ तथा लाल है।

**रजसा महता चापि नक्षत्राणि हतानि च ।**

**युगान्तमिव लोकनां पश्य शंसत्ति लक्ष्मण ॥१०॥**

सुमित्रानन्दन ! देखो ये तारे बड़ी भारी धूल राशि से आच्छादित हो हतप्रभ हो गये हैं, अतएव जगत् के भावी संहार की सूचना दे रहे हैं।

कौए, बाज तथा अधम गीथ चारों ओर उड़ रहे हैं और सियारिनें अशुभ सूचक महाभयंकर बोली बोल रही हैं।

**शैले: शूलैश्च खड़ैश्च विमुक्तैः कपिराक्षसैः ।**

**भविष्यत्यावृता भूर्मिर्मासशोणितकर्दमा ॥१२॥**

जान पड़ता है वानरों और राक्षसों के चलाए हुए शिलाखण्डों, शूलों और तलवारों से यह सारी भूमि पट जायेगी तथा यहाँ माँस और रक्त की कीच जम जाएगी।

हम लोग आज ही जितनी जल्दी हो सके, इस रावणपालित दुर्जय नगरी-लङ्घ पर समस्त वानरों के साथ वेगपूर्वक धावा बोल दे।

ऐसा कहकर संग्रामविजयी भगवान् श्रीराम हाथ में धनुष लिए सबसे आगे लङ्घापुरी की ओर प्रस्थित हुए। (पृ. 1109 वा. रामायण)

**‘रावण की पराय तथा श्री राम की विजय सूचक शकुन’**

मेघ के समान प्रतीत होने वाले शत्रु के उस रथ को आता देख रामचन्द्र जी ने बड़े वेग से अपने धनुष पर टंकार दी। उस समय उनका धनुष द्वितीया के चन्द्रमा जैसा दिखाई देता था। श्रीराम ने इन्द्र सारथि मातलि से कहा— मातलि! देखो, मेरे शत्रु रावण का रथ बड़े वेग से आ रहा है। रावण जिस प्रकार प्रदक्षिण भाव से महान् वेग के साथ पुनः आ रहा है, उससे जान पड़ता है, इसने समरभूमि

में अपने वध का निश्चय कर लिया है। (8-10) वा.रामा. पृ. 1386)

श्रीरामचन्द्र के साथ इस वचन से देवताओं के श्रेष्ठ सारथि मातलि को बड़ा संतोष हुआ और उन्होंने रावण के विशाल रथ को दाहिनी रखते हुए अपने रथ को आगे बढ़ाया। उसके पहिये से इतनी धूल उड़ी कि रावण उसे देखकर काँप उठा।

**समुत्पेतुरथोत्पाता दारुणा रोमहर्षणः ।**

**रावणस्य विनाशाय राघवस्योदयाय च ॥२०॥**

उस युद्ध के समय ऐसे भयंकर उत्पात होने लगे, जो रोंगटे खड़े कर देने वाले थे। उनसे रावण के विनाश और श्रीरामचन्द्रजी के अभ्युदय की सूचना मिलती थी।

**ववर्ष रुधिरं देवो रावणस्य रथोपरि ।**

**वाता मण्डलिनस्तीव्रा व्ययमव्यं प्रचक्रमुः ॥२१॥**

मेघ रावण के रथ पर रक्त की वर्षा करने लगे। बड़े वेग से उठे हुए बवंडर उसकी वामावर्त परिक्रमा करने लगे।

**महदगृध्रकुलं चास्य भ्रममाणं नभस्थले ।**

**येन येन रथो याति तेन तेन प्रधावति ॥२२॥**

जिस-जिस मार्ग से रावण का रथ जाता था, उसी-उसी ओर आकाश में मँडराता हुआ गीधों का महान् समुदाय दौड़ा जाता था।

**संध्यया चावृता लङ्घा जपापुष्पनिकाशया ।**

**दृश्यते सम्प्रदीप्तेव दिवसेऽपि वसुंधरा ॥२३॥**

असमय में ही जपा (अङ्गहुल) के फूल की सी लाल रंग-वाली संध्या से आवृत हुई लङ्घापुरी की भूमि दिन में भी जलती हुई सी दिखाई देती थी।

**सनिर्धाता महोल्काश्च सम्प्रपेतुर्महास्वनाः ।**

**विषादयस्ते रक्षांसि रावणस्य तदाहिताः ॥२४॥**

रावण के सामने वज्रपाल की सी गङ्गाहाहट और बड़ी भारी आवाज के साथ बड़ी-बड़ी उल्काएँ गिरने लगीं जो उसके अहित की सूचना दे रही थी। उन उत्पातों ने राक्षसों को विषाद में डाल दिया।



तथा युद्ध में अधिक पराक्रम प्रकट किया ।

### रावण का मरण सूचक अपशकुन

श्री राम जब रावण को मारने के लिए कुशल बाण हाथ में लिए—

असुभ होन लागे तब नाना  
रोवहिं बहु शृगाल स्वर स्वाना ।  
बोलहिं खग अति आरति हेतू  
प्रगट भये नभ जहाँ तहाँ केतू ॥4॥

पृष्ठ नं:- 868 (रामचरितमानस)

तब अनेक अशकुन होने लगे। बहुत से सियार, गधे और कुत्ते रोने लगे। पक्षी जगत् के दुःख के कारण बोलने लगे। आकाश में जहाँ-तहाँ पुच्छल तारे दिखाई देने लगे।

दसदिसि दाह होन अतिलागा भयउ परव बिनु रवि उपरागा ।  
मन्दोदरि उर कम्पित भारी प्रतिमास्त्रवहिं नयन मग बारी ॥

दसों दिशाओं में दाह होने लगा। बिना पर्व के सूर्य ग्रहण होने लगा। मन्दोदरी हृदय बहुत थरथराने लगा। मूर्तियाँ नेत्रों के मार्ग से जल बहाने लगीं।

प्रतिमा रुदहिं पविपात नभ अति बात बह डोलति मही।  
बरषहिं वलाहक रुधिर कचरज अशुभ अतिसक कोकही ॥  
उतपात अमित बिलोकि नभ सुर बिकल बोलहिं जय—जये ।  
सुर सभय जानि कृपाल रघुपति चाप सर जोरत भये॥

मूर्तियाँ रोने लगीं, आकाश से वज्रपात होने लगा, प्रचण्ड पवन चलने लगी, पृथ्वी डोलने लगी। बादलों से रुधिर, बाल और धूल की वर्षा होने लगी। ऐसे अपशकुन हुए उन्हें कौन कह सकता है? बहुत से उपद्रव देखकर आकाश में देवता व्याकुल होकर जय-जय बोलने लगे। देवताओं को व्याकुल जानकर दयालु रामजी ने धनुष पर बाण चढ़ाए ॥

### धन्यकुमार चरित में वर्णित शकुन

यत्किञ्चिदाद दात्येष तद् गृहणीयात्स्वयं मुदा ।  
मा निषेधय तत्र त्वं दैवमस्य फलिष्यति ॥9॥

सेवक ने कहा कि यह जो कुछ लेवे उसे हर्षपूर्वक स्वयं लेवे, निषेध नहीं करना, उसी में इसका भाग्य फलेगा।

ततोऽभिनन्दितो मात्रा दुर्वारोचन चन्दनैः ।

आशीर्वचन दानेन सुवेलायां विनिर्गतः ॥10॥

तदनन्तर माता ने दूबा रोली और चन्दन से जिसका अभिनन्दन किया है तथा आशीर्वाद देकर जिसे सन्तुष्ट किया है ऐसा धनकुमार अच्छी घड़ी में घर से निकला।

पुरतो गच्छता तेन कोटिलाभोदर्शिका ।

पूर्ण कुम्भोधृता नारी ददृशे पथि सन्मुखम् ॥11॥

आगे जाते हुए उसने मार्ग में संमुख करोड़ों का लाभ दिखाने वाली, पूर्ण कलश लिये एक स्त्री देखी।

वामं विधाय तामग्रे यावद्याति ददर्श सः।

शकटं वृषमा कृष्टं बहु काष्ठेश्च संभृतम् ॥12॥

उससे बैई और कर ज्योंही वह आगे जाता त्यों ही उसने बैलों से खींची जाने वाली तथा अनेक काष्ठों से भरी हुई एक गाड़ी देखी।

शश्यां समर्प्य तां तस्य मेषं संगृह्य सत्वरम् ।

गतः स्वसदनं सोऽपि नीचः स्वल्पेन तुष्टिति ॥23॥

पलंग सौंपकर तथा उसका मेढ़ा लेकर वह चाण्डाल शीघ्र ही अपने घर चला गया सो ठीक ही है क्योंकि नीच पुरुष थोड़े ही से सन्तुष्ट हो जाता है।

लोकारव्यानमलीकं कि कुष्माण्डं मज्जिका मुखे ।

नूनं यथा न विशति पुण्यहीने धनं तथा ॥24॥

यह लोकोक्ति क्या मिथ्या है कि जिस प्रकार छेरी से मुख में कुमड़ा प्रवेश नहीं करता उसी प्रकार पुण्यहीन के पास धन प्रवेश नहीं करता।

प्रहष्टा जननी जाता दृष्ट्वा पुत्रं समागतम् ।

पिष्टदूर्वादधिद्रव्यैः कृतन्यासा हि मस्तके ॥27॥

पुत्र को आया देख माता अत्यन्त हर्षित हुई। उसने चून, दूबा तथा दही उसके मस्तक पर रखकर दृष्टि दोष दूर किया।

इति संभाषणं मात्रा कृतं शंसन पूर्वकम् ।  
सुचिरं कृतं पुण्यानां सर्वत्रैव प्रियं भवेत् ॥२९॥

इस प्रकार प्रशंसापूर्वक माता ने उसके साथ संभाषण किया सो ठीक ही है क्योंकि पुण्यात्मा जनों को सब जगह चिरकाल तक प्रिय वस्तुएँ समागम होती रहती हैं।

### अठिनपुराण में वर्णित शकुन

विशन्ति येन मार्गेण वायसा बहवः पुरम् ।  
तेन मार्गेण रुद्धस्य पुरस्य ग्रहणं भवेत् ॥१॥

जिस मार्ग से बहुत से कौए पुर में प्रवेश किया करते हैं उसी मार्ग से रुद्ध हुए पुर का ग्रहण होता है।

सेनायां यदि वा साथ निविष्टे वायसो रुदन् ।  
वामो भयातुरस्त्रस्तो भयं वदति दुरस्तरम् ॥२॥

सेना में अथवा साथ में यदि रोता हुआ कौआ निविष्ट हो जावे तथा वाम भयातुरं अर्थात् भय से डरा हुआ हो तो यह शकुन अत्यन्त कठिन भय की सूचन देता है।

छायां गवाह नोपानच्छ त्रवस्त्रादिकु द्वने ।  
मृत्युस्तत्पूजने पूजा तदिष्टकरणं शुभम् ॥३॥

छाया—अंग—बाहर: उपानत् (जूते)—छत्र और वस्त्र आदि के कुहन करने में मृत्यु होती है। उसके पूजन में और उसके नष्ट करने में पूजा करना शुभ होता है।

प्रोषितागमकृत्काकः कुर्वन्द्वारि गतागतम् ।  
रक्तं दग्धं गृहे द्रव्यं क्षिपन्वन्हिनिवेदकः ॥४॥

कौआ यदि द्वार पर आना जाना करता हो तो प्रदेश गए हुए के आगमन की सूचना देता है। रक्त—दग्ध द्रव्य घर में डालता हुआ अग्नि की सूचना करता है।

न्यसेद्रक्तं पुरस्ताच्च निवेदयति बन्धनम् ।  
पीत द्रव्यं तथा रुक्मरुप्यमेव तु भार्गव ॥५॥

यद्यैवोपनयेदद्रव्यं तस्य लब्धिं विनिर्दिशेत् ।  
द्रव्यं वाऽपनयेद्यतु तस्य हानि विनिर्दिशेत् ॥६॥

यदि आगे रक्त रखे तो बन्धन होने की सूचना देता है। हे भार्गव ! पीले रंग को कोई द्रव्य—सुवर्ण—रजत (चाँदी) जो भी इनमें से द्रव्य जावे तो यह शकुन उसकी प्राप्ति का सूचक होता है। इसी प्रकार से जिस द्रव्य को वह ले जावे तो उसी द्रव्य की हानि की सूचना देता है।

पुरतो धनलद्धिः स्यादाममांसस्य च्छर्दने ।

भूलद्धिः स्यान्मृजदः क्षेपे राज्यं रत्नार्पणे महत् ॥७॥

यातुः काकोऽनुकूलस्तु क्षेमः कर्मक्षमो भवेत् ।

न त्वर्थसाधको ज्ञेयः प्रतिकूलो भयावहः ॥८॥

आगे कद्य मांस के छर्दन करने में धन का लाभ होता है। मिट्टी की क्षेप करने में भूमि का लाभ और रत्न के अर्पण करने में महान् राज्य की प्राप्ति होती है। जाने वाले के काक (कौआ) अनुकूल हो तो क्षेम और कर्म क्षम होता है। यदि वह प्रतिकूल हो तो अर्थ का साधक नहीं होता तथा भयप्रद होता है।

संमुखे ऽभ्येति विरुद्धवन्यात्राधातकरो भवेत् ।

वामः काकः स्मृतो धन्योदक्षिणोऽर्थ विनाशकृत् ॥९॥

यदि कौआ बोलता हुआ सामने से आवे तो यह यात्रा का घात करने वाला होता है। कौआ यदि वाम भाग में रहे तो बहुत अच्छा होता है। दक्षिण भाग में कौआ का होना अर्थ के विनाश करने वाला होता है।

वामोऽनुलोमगः श्रेष्ठो मध्यमो दक्षिणः स्मृतः।

प्रतिलोमगतिर्वामो गमनप्रतिषेधकृत् ॥१०॥

वाम भाग में भी जो अनुलोमगमन करने वाला होता है, वही श्रेष्ठ कहा गया है। दक्षिण काक मध्यम माना गया है। जो कौआ प्रतिलोम गति वाला हो चाहे वाम भाग में ही हो यह शकुन यात्रा का निषेध करने वाला होता है।

निवेदयति यात्रार्थं मभिप्रेतं गृहे गतः ।

एकाक्षिचरणस्त्वर्कं वीक्षमाणो भयावहः ॥११॥

गृह में गया हुआ यात्रार्थ को अभिप्रेत बताता है। यदि कौआ एकाक्षि और एक चरण वाला होकर सूर्य को देखता हो तो बहुत ही भय देने वाला होता है।

कोटरे वासमानश्च महानयं करो भवेद् ।

न शुभस्तूषरे काकः पङ्गाङ्गः स तु शस्यते ॥१२॥

कोटर में वास करता हुआ कौआ महान् अनर्थ के करने वाला होता है। ऊपर भूमि में स्थित काक शुभ नहीं होता है। यदि कौआ कीच से सने हुए शरीर वाला हो तो बहुत ही प्रशस्त शकुन होता है।

**अमेध्यपूर्णवदनः काकः सर्वार्थ साधकः ।**

**ज्ञेयाः पतत्रिणोऽन्येऽपि काकवद्भृगुनन्दन ॥1 3 ॥**

अपवित्र वस्तु से परिपूर्ण मुख वाला कौआ समस्त अर्थों का साधक शकुन होता है। हे भृगुनन्दन ! इसी प्रकार से अन्य पक्षी भी शुभ और अशुभ शकुन बतलाते हैं। जिस तरह कौआ सूचन देता है।

**स्कन्धावारापसव्यवस्थाः श्वाना विप्रविनाशकाः ।**

**इन्द्रस्थाने नरेन्द्रस्य पुरेशस्य तु गोपुरे ॥1 4 ॥**

**अन्तर्गुहे गृहेशस्य मरणाय भवेद्मषन् ।**

**यस्य जिघ्रति वामाङ्ग तस्य स्यादर्थं सिद्धये ॥1 5 ॥**

स्कन्धावार और अपसंघ में स्थित कुत्ता विप्रों का विनाशक होता है। राजा के इन्द्र स्थान में और पुरेश के गोपुर में तथा गृहस्वामी के अन्दर गृह भूंकता हुआ मृत्यु की सूचना कुत्ता दिया करता है। कुत्ता जिसके बाँधे अङ्ग को सूंघ लेता है उसके कार्य की निश्चित सिद्धि हुआ करती है।

**भवाय दक्षिणं चाङ्ग तथा भुजमदक्षिणम् ।**

**यात्राघातकरो यातुर्भवेत्प्रतिमुखो हि सः ॥1 6 ॥**

यदि दाहिने अङ्ग को सूंघता है तो भय देने वाला होता है इसी तरह से अदक्षिण भुजा को सूंघता है तो वह भी अशुभ है। यदि यात्रा करने वाले के प्रतिमुख कुत्ता होवे तो वह यात्रा का घात करने वाला होता है।

**मार्गावरोधको मार्गे चौरान्वदति भार्गव ।**

**आलाभोऽस्थिमुखः पापो रञ्जुचीरमुखस्तया ॥1 7 ॥**

हे भार्गव ! मार्ग में कुत्ता स्थित होकर मार्ग का अवरोध करनेवाला हो तो वह चोरों की सूचना दिया करता है। कुत्ते के मुख में हड्डी हो तो लाभ नहीं किया करता है। रसी या चीर कुत्ते के मुँह में हो तो यह पाप सूचक होता है।

**अमंगल्यमुखद्रव्यं केशं चैवशुभ तथा ॥1 8 ॥**

यदि कुत्ते के मुख में कोई जूता हो तो वह एक अत्यन्त अच्छा शकुन होता है। इसी प्रकार मांस से पूर्ण मुख वाला कुत्ता भी धन्य होता है। यदि कई अमङ्गल द्रव्य मुख में हो और केश हो तो वह भी एक अशुभ शकुन होता है।

**अवमूल्याग्रतो याति यस्य तस्य भयं भवेत् ।**

**यस्यावमूल्य व्रजति शुभं देशं तथा द्वुमम् ॥1 9 ॥**

कुत्ता यदि पेशाब करके आगे से जाता है तो उसको जिसके आगे से वह जाता है भय होता है। जिसके पेशाब करके शुभ देश या वृक्ष के पास जाता है तो वह शुभ शकुन होता है।

**मंगल्य च तथा द्रव्यं तस्य स्यादर्थसिद्धये ।**

**शब्द्य राम विजेयास्तथा वै जम्बुकादयः ॥2 0 ॥**

यदि मंगल्य द्रव्य हो तो उसकी अर्थ की सिद्धि के लिए होता है। हे राम ! कुत्त के सामने ही जम्बुक (गीड़) आदि को भी इसी प्रकार से शुभ एवं अशुभ शकुन बताने वाले जानने चाहिए।

**भयाय स्वामिनो ज्ञेयमनिमित्त रूतं गवाम् ।**

**निशि चौरभयाय स्याद्विकृतं मृत्यवेत्था ॥2 1 ॥**

बिना किसी कारण गणों की ध्वनि अर्थात् अचानक रम्माना उसके स्वामी को भय की सूचना दिया करता है अर्थात् अशुभ होता है। रात्रि में रम्भावे तो चोरों का भय, होता है और विकृत हो तो मृत्यु की सूचना दिया करता है।

**शिवाय स्वामिनो रात्रौ बलीवर्दो नदन्भवेत् ।**

**उत्सृष्टवृषभो राजो विजयं संप्रयच्छति ॥2 2 ॥**

यदि बली वर्द रात्रि में नाद करने वाला हो तो वह अपने स्वामी का कल्याण के लिए ही होता है। उत्कृष्ट वृषभ राजा को विजय देने वाला होता है।

**अभक्ष्यं भक्षयन्त्यश्च गावो दत्तास्तथास्वकाः ।**

**त्यक्तस्नेहाः स्ववत्सेशु गर्भक्षयकरा मताः ॥2 3 ॥**

किसी अभक्ष्य पदार्थ का भक्षण करने वाली दी हुई अपनी गौएँ अपने बछड़ों पर रनेह न करने वाली गर्भ के क्षय करने वली कही गई हैं।

भूमि पादैर्विनिध्यन्त्यो दीना भीता भयावहाः।  
आद्रिङ्गो हष्टरोमाश्च शृङ्गलग्नमृदः शुभाः ॥२४॥

भूमि को पैरो से विधातित करती हुई दीन-डरी हुई भय देने वाली होती है। भीगे हुए अज्ञो वाली तथा प्रहष्ट रोमों वाली और सीगों में मिट्ठी लगी रहने वाली गौएँ शुभ होती हैं।

महिष्यादिषु चायेतत्सर्व वाच्यं विजानता :  
आरोहण तथाऽन्येन समर्याणस्य वाजिनः ॥२५॥  
जलोपवेशन नेष्टं भूमौ च परिवर्तनम् ।  
विषत्करं तुरङ्गस्य. सुप्तिं वाडप्यनिमित्तः ॥२६॥  
यवमोदकयोद्देषस्त्वकस्माच्च न शस्यते ।  
वदनाद्वा धिरकोत्पतिर्वेषनं न च शस्यते ॥२७॥

इस तरह से भैंस आदि के विषय में भी वेत्ता पुरुष को यह सभी समझना चाहिए। अन्य से द्वारा आरोहण तथा पर्याण (जीन) के सहित अश्व का जलोपवेशन और भूमि में परिवर्तन अर्थात् जल में बैठा जाना या जमीन में लोट लगाना इष्ट नहीं होता है अर्थात् शुभ नहीं होता है। घोड़े का विषत्कर तथा बिना किसी कारण के सो जाना एवं जौ और मोदक से द्वेष भाव रखना, जो कि अचानक ही किया गया हो, अच्छा नहीं होता है मुख से खून का निकलना और कम्प युक्त होना भी शुभ नहीं होता है।

क्रीडन्वकैः कपैतैश्च सारिकाभिर्मृति वदेत् ।  
साश्रु नेत्रोजिहव्या च पादलेही विनष्ट्ये ॥२८॥

बगुला, कबूतर और सारिथाओं के साथ क्रीड़ा करता हुआ मृत्यु की सूचना दिया करता है। ऊँसुओं से पूर्ण नेत्र वाला तथा उस जीव से पैरों को चाटने वाला विनाश की सूचना दिया करता है।

वामपादेन च तथा विलिखंश्च वसुन्धराम् ।  
स्वेपेद्वा वामपाश्वेन दिवा वा न शुभप्रदः ॥२९॥

बाँये पैर से भूमि को खुरेदता हुआ अथवा बाँये पंखवाड़े से दिन में सोवे तो वह शुभप्रद नहीं होता है।

भयाय स्यात्सकृन्मूत्री तथा निद्राविलाननः ।  
आरोहणं न चेद्द्यात्रतीपं वा गृवं व्रजेत् ॥३०॥  
यात्राविंधातमाचष्टे वामपाश्व तथा सृशन् ।  
द्येषमाणः शत्रुयोग्र पादस्पर्शी जयावहः ॥३१॥

एक बार ही मूत्र करनेवाला तथा निद्रा से मलिन मुख वाला अन्य भय के लिए ही होता है। यदि किसी को अपना आरोहण न देवे अर्थात् सवारी न करने देवे तथा उल्टा घर की ओर लाधें तो यह यात्रा के विधान को बतलाया है। तथा वाम भाग का स्पर्श करता हुआ हिनहिनाता रहे तो वह शत्रु के युद्ध में पारदर्शी तथा जय दिलाने वाला है।

ग्रामे व्रजति नागश्चेन्मैथुनं देशहा भवेत् ।  
प्रसूता नागवनिता मत्ता चान्याय भूपतेः ॥३२॥

हाथी ग्राम को जावे यदि मैथुन हो तो देश का दहन करने वाला है। नाग वनिता (हथिनी) यदि प्रसूता तथा मत्त हो तो राजा का अन्त करने वाली होती है।

आरोहणं न चेद्द्यात्रतीपं वा गृहं व्रजेत् ।  
मर्दं वा वारणो जट्याद्राजघातकरो भवेत् ॥३३॥

आरोह न करने देवे या वापिस घर की ओर जावे और हाथी मद का त्याग करे तो राजा के घात करने वाला होता है।

वामं दक्षिणा पादेन पादमाक्रमते शुभः ।  
दक्षिणं च तथा दन्तं परिमाणिं करेण च ॥३४॥

दाहिने पैर से वाम (बाँये) पैर को आक्रात करे तो शुभ शकुन होता है। तथा दाहिने और के दांत को सूंड से परिमार्जन करे तो शुभ है।

वृषोऽश्वः कुञ्जरो रिपुसैन्य गतोऽशुभः ।  
खण्डमेघातिवृष्या तु सेना नासमवान्यात ॥३५॥

वृष-अश्व अथवा हाथी यदि शत्रु की सेना में चला जावे तो अशुभ शकुन होता है। खण्ड मेघाति वृष्टि से सेना का नाश होता है अर्थात् खण्ड-खण्ड मेघों से अत्यन्त वृष्टि होवे।

प्रतिकूलग्रहकर्त्ता तथा संमुखमासृतात् ।

यात्राकाले रणे वाऽपि छत्रादिपतनं भयम् ॥३६॥

प्रतिकूल ग्रह और नक्षत्र से तथा सामने की वायु से चात्रा के समय में अथवा युद्ध में छत्रादि के पतन का भय होता है।

हष्टा नराश्चानुलोमा ग्रहा वै जयलक्षणम् ।

कार्के योधाभिभरनं क्रव्याद्वर्षण्डलक्षयः ।

प्राची पश्चिमकैशानी सौम्या प्रेषठा शुभां च दिक् ॥४७॥

प्रसन्न मनुष्य तथा अनुलोम ग्रह जप का लक्षण होता है। कार्कों से योद्धाओं का अभिभवन (तिरस्कार) और राक्षसों से मण्डल का क्षय होता है। पूर्व-पश्चिम-ईशान दिशा सौम्य और शुभ होती है।

### भविष्य पुराण में वर्णित उत्पात (शकुन)

दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम- ये तीन प्रकार के उत्पात होते हैं। ग्रह, नक्षत्र, आदि से जो अनिष्ट की आशंका होती है वह दिव्य उत्पात कहलाता है। उल्कापात, दिशाओं का दाह (मण्डलों का उदय, सूर्य-चन्द्र के इर्द-गिर्द पड़ने वाले धेरे का दिखायी देना), आकाश में गन्धर्व नगर का दर्शन, खण्डवृष्टि अनावृष्टि या अतिवृष्टि आदि अन्तरिक्ष जन्म उत्पात हैं। जलाशयों, वृक्षों, पर्वतों तथा पृथ्वी से प्रकट होने वाले भूकम्प आदि उत्पात भौम उत्पात कहलाते हैं। अन्तरिक्ष एवं दिव्य उत्पातों का प्रभाव एक सप्ताह तक रहता है। इसकी शांति के लिए तत्काल उत्पाय करना चाहिए अन्यथा वे बहुत काल तक प्रभावी रहते हैं। देवताओं का हँसना, रुधिर स्राव होना, अकस्मात बिजली एवं वज्र का गिरना। हिंसा और निर्दयता का बढ़ना, सर्पों का आरोहण करना— ये सब देव दुर्निर्मित हैं। मेघ से उत्पन्न वृष्टि केवल शिलातल परही गिरे तो एक सप्ताह के अन्दर उत्पन्न प्राणी नष्ट हो जाते हैं। एक राशि पर शनि, मंगल और सूर्य- ये पाप ग्रह स्थित हो जायें और पृथ्वी अकस्मात् ध्रुएँ से ढकी दीखें तो भारी जन संहार की संभावना होती है। यदि बृहस्पति अपनी राशि का अतिचार करे और शनि वहाँ स्थित न हो तो राज्य नष्ट होने की सम्भावना रहती है। यदि सूर्य कुछ समय तक न दिखायी दे और दिशाओं में दाह होने लगे, धूमकेतु दिखायी दे और बार-बार भूकम्प होता हो तथा राजा के जन्म दिन में इन्द्रधनुष दिखायी पड़े तो वह उसके लिए दुर्निर्मित है। भयंकर आंधी, तृफान आ जाय, ग्रहों का आपस में युद्ध दिखलायी

है, तीन महीने में दूसरा ग्रहण लग जाये अथवा उल्कापात हो, आकाश और भूमि पर मेंढक दौड़ने लगे, हल्दी के समान पीली वृष्टि हो, पत्थरों में सिंह और बिल्ली की आकृति दिखलायी पड़े तो राष्ट्र में दुर्मिश्र और राजा का विनाश होता है। चैत्र में अथवा कुम्भके सूर्य में (फाल्गुन मास में) नदी का वेग अकस्मात् बहुत बढ़ जायें तो राष्ट्र में विल्पव होता है। ये सब सूर्यजन्य अद्भुत उत्पात हैं। हवन आदि द्वारा इनकी शान्ति करानी चाहिए। 'आ कृतणेन' (यजु ३ ३/४३) इस सूर्यमन्त्र द्वारा हवन कराना चाहिए। धान्यादिक निस्सार हो जाना, गौओं का निरत्तेज हो जाना, कुओं का जल सहसा सूख जाना ये सब भी सूर्यजनित उत्पात हैं इनकी शान्ति के लिए कमल-पुष्पों से एक सहस्र आहुतियाँ देनी चाहिए। विकृतपक्षी, पांडुवर्ण कपोत, श्वेत उल्लू, काला कौआ और कराकुल पक्षी यदि घर में गिरे तो उस घर में महान् उत्पात मच जाता है। गले की मालाएँ आपस में टकराने लगे, सद्यः उत्पन्न बालक को दाँत हो, देवताओं की मूर्तियाँ हँसती हो, मूर्तियों में पर्सीना दीख पड़े और धड़े में अथवा घरमें सर्प और मण्डूक का प्रसव हो जाय तो उस घर की गृहिणी छ मास के अन्दर नष्ट हो जाती है। घर पर या वृक्ष पर बिजली कड़-कड़ाकर गिरने और आग की ज्वालाएँ दिखायी देने पर महान् उत्पात होता है। इन सबकी शान्ति के लिए रविवार के दिन भगवान् सूर्य की प्रसन्नता हेतु उनकी पूजा करे। तिल एवं पायस की दस हजार आहुतियाँ प्रदान करे। गोदान करे और ब्राह्मणों को दक्षिणा दे। इससे शीघ्र शान्ति होती है। अचानक ध्वज, चामर, छत्र तथा सिंहासन से विभूषित रथ पर राजा का दिखलायी देना तथा स्त्री-पुरुषों की लडाई में भी महान् उत्पात है। पृथ्वी का काँपना, पहाड़ों का टकराना, कोयल और उल्लू का रोना आदि सुनायी पड़े तो राजा, मन्त्री, राजपुत्र, हाथी आदि विनष्ट होते हैं।

ताड़ एवं सुपारी के वृक्ष एक साथ उत्पन्न हो जायें तो उस घर में रहने वालों पर विपत्ति की सम्भावना होती है। दूसरे वृक्षों में अन्य वृक्षों के फूल-फल लगे हुए दीखें तो ये सोमग्रह जन्य उत्पात है। इसकी शान्ति के लिए सोमवार के दिन सोम के निमित्त दधि, मधु, घृत तथा पलाश आदि से 'इमं देवा' (यजु १/४०) इस मन्त्र से एक हजार आहुतियाँ दे और चरु से भी हवन करे।

उड़द और जौ की देरिया सहसा लुप्त हो जाय, दहीं, धूध, धी और पक्कानों

में रुधिर दिखलायी पड़े, एकाएक घर में आग जैसा लगना दिखायी दे, बिना बादल के ही बिजली चमकने लगे, घर के सभी पशु तथा मनुष्य सण से दिखायी पड़े तो मंगल ग्रह से उत्पन्न उत्पात समझने चाहिए। इनसे राजा, अमात्य तथा घरके स्वामियों का विनाश होता है। ऐसे भयंकर उपद्रवों को देखकर मंगल की शान्ति के लिए दहीं, मधु, धी से युक्त खैर और गूलर की समिधा से 'अग्निर्मूर्धा' (यजु. 3/12) इस मन्त्र से दस हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। तीन ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा में लाल वस्तुएँ देनी चाहिए तथा सोने या ताँबे की मंगल की प्रतिमा बना कर दान में देनी चाहिए। इससे शांति होती है।

गौएँ यदि घर में पूँछ उठाकर स्वयं दौड़ने लगे और कुत्ते तथा सूअर घर पर चढ़ने लगे तो उस घर की स्त्रियों को भीषण क्लेशकी आशंका होती है। गृहस्वामी का पूर्णतः मिथ्यावादी होना तथा राजा का वाद-विवादमें फँसना, घरमें गौओं का चिल्लाना, पृथ्वी का हिलना, घर में मेंढ़क तथा साँप का जन्म लेना – ये सभी उत्पात बुध ग्रहजन्य हैं। इसमें राज्य तथा घर के नष्ट होने की सम्भावना होती है। इन उत्पातों की शान्ति के लिए बुधवार के दिन बुध ग्रह के उद्देश्य से दही, मधु, धी तथा अपामार्ग की समिधा एवं चरुसे 'उद्बुध्यस्य' (यजु. 1/5) इस मन्त्र द्वारा दस हजार आहुतियाँ देनी चाहिए। बुध की सुर्वण की प्रतिमा तथा पयस्त्रिनी गाय ब्राह्मण को दान में देनी चाहिए।

पशुओंका असमय में समागम और उनसे यमल संततियों की उत्पत्ति, जौ, ग्रीहि आदि का सहसा लुप्त हो जाना, गृह स्तंभ का सहसा टूटना, आंगन में बिल्ली तथा मेंढ़क का नखों से जमीन कुरेदना और इनका घर पर चढ़ना में सभी दोष, जहाँ दिखायी दे, वहाँ छः महीने के भीतर ही घर का विनाश होता है कोई प्राणी मर जाता है या कुटुम्ब में कलह होता है तथा अनेक व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। बिल्व-वृक्षपर गृध और गृध्रीका एक साथ दिखलायी देना राजा के लिए विन्धकारक तथा प्रसाद के हानिकारक होता है। इस दोष से आमात्यवर्ग, राजा के विपरीत हो जाता है। यें सभी बृहस्पतिजनित दोष हैं। इसने शान्ति के लिए बृहस्पति के निमित्त शान्ति-होम करना चाहिये तथा पयस्त्रिनी गाय एवं स्वर्ण की बृहस्पति की प्रतिमा दान करना चाहिए।

राक्षस द्वारा घड़े का जल पीने का आभास होना; सिंह, शर्करा, तेल, चाँदी,

ताण्डवनृत्य, उड़द-भात, धान्य आदि का आभास होना; घर में ताँबा, काँसा, लोहा, सीसा तथा पीतल आदि का रखा दिखायी देने का आभास होना, ऐसे उत्पात पर धन के नाश होने की सम्भावना रहती है और अनेक व्याधियाँ होती हैं, राजा भयंकर उपद्रव तथा बन्धन में पड़ जाता है। गौ, अश्व तथा सेवकों का विनाश होता है। दन्तपंक्ति को छोड़कर दाँतों के ऊपर दाँतों का निकलना, शलाकाके समान दाँत निकलना ये भी दोषकारक हैं। बर्तनों में, घड़ों में यदि बादल के गरजने की आवाज सुनायी दे तो गृहस्वामी पर विपत्ति की सम्भावना होती है – ये शुक्रग्रह जनित होष हैं। इनकी शान्ति के लिए शुक्रवार के दिन दही, मधु, घृतयुक्त, शमीपत्र से हवन करें तथा दो सफेद वस्त्र, पयस्त्रिनी श्वेह गो और सुर्वण की शुक्र की प्रतिमा का दान करना चाहिये।

मन्दिर की जमीन यदि रक्त वर्ण की अथवा पुष्पित दिखलायी दे तो वहाँ भी उत्पात की सम्भावना होती है। आकाश में जलती हुई आग दिखाई दे तो स्त्री-पुरुषों की हानि ओर राष्ट्र में विप्लव की सम्भावना होती है। सभी औषधियाँ और सर्स्य रस विहीन हो जाय; हाथी, घोड़े मतवाले लेकर हिस्क हो जायें, राजा के लिए नगर तथा गाँव में सभी शत्रु हो जायें, गो, महिष आदि पशु अनायास उत्पात मचाने लगें; घर के दरवाजे में गोह और शंखिनी प्रवेश करे तो अशुभ समझना चाहिये; इससे राज-पीड़ा और धन-हानि होती है। ये सभी उत्पात शनिग्रह जनित समझने चाहिये। इनकी शान्ति के लिए विविध सर्स्यों तथा समिधाओं से शनिवार के दिन 'शंनोदेवी' (यजु. 3/6/92) इस मन्त्र से दस हजार आहुतियाँ देनी चाहिये और चरु से भी हवन करना चाहिये। नीली सवत्सा पयस्त्रिनी गाय, दो वस्त्र, सोना, चाँदी, शनि की प्रतिमा आदि दक्षिणा में ब्राह्मण को देनी चाहिये।

बादल के गरजे बिना लाल-पीली शिलावृष्टि का दिखलायी देना, बिना हवा के वृक्ष का हिलना – डुलना दिखलायी देना, इन्द्रध्वज तथा इन्द्रधनुष का गिरना, दिन में सियारो कथा तथा रात्रि में उल्लू का रोना, एक बैल का दूसरे बैल के ककुद पर मुँह रखकर रँभाना, ऐसे दोष होने पर देश में पाप की वृद्धि होती है तथा राजा राज्य एवं धर्म से च्युत हो जाता है। और ब्राह्मण में ब्राह्मण में परस्पर द्वन्द्व मच जाता है, वाहन नष्ट हो जाते हैं। आदिसे 'क्या नश्चित्र' (यजु. 2/7/30) इस मन्त्र द्वारा रविवार के दिन दस हजार आहुतियाँ राहु के लिये दे,

चरुसे भी हवन करे। पयस्तिवनी कपिला गौ, अतसी, तिल, शंख और युग्मवर्त्र ब्रात्मण को दान में दे। वारुणहोम भी करे। इससे सारे दोष पाप नष्ट हो जाते हैं।

यदि जम्बूक, गृथ, कोए आदि भीषण ध्वनि करते हों तथा भयंकर नृत्य करते हों तो मृत्यु की आशंका होती है, जलती हुई आग के समान धुमकेतु का दिखलायी पड़ना, जमीनका खिसकना मालूम होना ऐसी स्थिति में राजा पीड़ित होता है राज्य में अकाल पड़ता है तथा अनेक प्रकार के अनिष्ट होते हैं। इनकी शान्ति के लिये स्वर्ण छत्रयुक्त सात घोड़ों से युक्त सूर्यमण्डप बनाकर ब्रात्मण को दान करे। बिल्वपत्र भी दे, ऐन्द्रमन्त्र से हवन करे। यदि अकस्मात् शाल, ताल, अक्ष, खुदिर, कमल आदि धर के अंदर ही उत्पन्न हों तो ये सभी केतुग्रहजन्य दोष हैं इनकी शान्ति के लिये 'व्याघ्रकं' (यजु. ३/६०) इस मंत्र से दही, मधु, धृत से दस हजार आहुतियाँ दे तथा चरु भी प्रदान करे। भीती सवत्सा पयस्तिवनी गाय, वरत्र, केतुकी, प्रतिमा आदि ब्रात्मण को दान करे।

दक्षिण दिशा में अपनी छाया अपने पैर के एकदम समीप आ जाय और छाया में दो या पाँच सिर दिखलायी दें अथवा छिन-भिन रूप में सिर दिखलायी देतो देखनेवाले की सप्ताह के भीतर ही मृत्यु की आशंका होती है, कौआ, बिल्ली, तोता तथा कपोतका मैथुन दिखलायी देतो ये दुर्निष्ठ राहुजन्य उत्पात है। इनकी शान्ति के लिये शनिवार की शांति के निमित्त दस हजार आहुतियाँ देनी चाहिये। अर्क-पुष्प से शनि की पूजा करे तथा चरु से सौ बार यदि आकाश में ध्वज की छाया दिखलायी पड़े तो राष्ट्र में महान् विष्वव होता है। यदि जल में जलती हुई आग दिखलायी दे और सिर अथवा शरीर पर बिजली गिर जाय तो उसका जीवन दुर्लभ हो जाता है। दरवाजों के किनारे पर अथवा स्तम्भ पर अग्नि अथवा धूम दिखलायी देतो मृत्यु का भय होता है। आकाश में वज्राघात, अग्नि की ज्वाला के मध्य धुँआ, नगर के मध्य किसी अनहोनी घटना का दिखलायी देना, शब्द ले जाते समय उस शब का उठकर बैठ जाना; स्थापित लिङ्गका गमन करना; भूकम्प, आँधी-तूफान, उल्कापात होना; विना समय वृक्षों में फल-फूल लगना—ये सभी उत्पात राहुजन्य हैं। इनकी शांति के लिये दही, मधु, धी, धृथ, अक्षत आदि से 'क्या नश्चित्र' (यजु. २७/३९) इस मन्त्र द्वारा रविवार के दिन दस

हजार आहुतियाँ राहु के लिये दे व चरु से भी हवन करे। पयस्तिवनी कपिला गौ, अलसी, तिल, शंख और युग्मवर्त्र ब्रात्मण को दान में दे, वारुणहोम भी करे। इससे सारे दोष-पाप नष्ट हो जाते हैं। यदि आकाश में ध्वज की छाया दिखलायी पड़े तो राष्ट्र में महान् विष्वव होता है। वाम ओर दक्षिण के क्रम से यदि बाहु पैर तथा आँख में स्पन्दन हो तो इससे मृत्यु का भय होता है। यह सोमग्रहजनित दुर्निष्ठ है। पुरत्क यज्ञोपवीत, चरु तथा इन्द्र ध्वज में आग लग जाय तो यह सूर्यजन्य दुर्भिमित है। इसकी शांति के लिये सूर्य के निमित्त मित्रमधुयुक्त कनेर के पुष्पों से आहुतियाँ दे, उसकी शान्ति के लिये ग्रहों तथा उसके अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता के निमित्तदी विधिश्वरक पूजन-हवन-स्तवन, दान आदि करना चाहिये। तिथी के अनुसार क्रिया न करने से दोष होता है। अतः ये सभी शाआदि-कम शास्त्रोक्त विधान के अनुसार ही करने चाहिए। इससे शान्ति प्राप्त होती है और सर्व विध कल्याण — मङ्गल होता है।

### सीता हरणके बाद राम द्वारा देखे गये अपशकुन

इधर मृगरूपसे विचरते हुए उस इच्छानुसार रूप धारण करने वाले राक्षस मारीच का वध करके श्री रामचन्द्रजी तुरंत ही आश्रम के मार्ग पर लौटे। वे सीता को देखने के लिए जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाते हुए आ रहे थे। इतने ही में पीछे की ओर से एक सियारिन बड़े कठोर स्वर में चीत्कार करने लगी। गीदड़ी के उस स्वर से श्री राम चन्द्रजीके मन में कुछ शंका हुई। उसका स्वर बड़ा ही भयंकर तथा रोंगटे खड़े कर देने वाला था। उसका अनुभव करके वे बड़ी चिन्ता में पड़ गये। वे मन ही मन कहने लगे— 'यह सियारिन जैसी बोली बोल रही है' इससे तो मुझे मालूम हो रहा है कि कोई अशुभ घटना घटित हो गयी। क्या विदेहनंदिनी सीता कुशल से होगी? उन्हें राक्षस तो नहीं खा गये? मृगरूपधारी मारीच ने जानबूझकर मेरे स्वर का अनुकरण करते हुए जो आर्त-पुकार की थी, वह इसलिए कि शायद इसे लक्षण सुन सके। सुमित्रानन्दन लक्षण वह स्वर सुनते ही सीता के ही भेजने पर उसे अकेली छोड़कर तुरन्त मेरे पास यहाँ पहुंचने के लिये चल देंगे। राक्षस लोग तो सबके सब मिलकर सीता का वध अवश्य कर देना चाहते हैं। इसी उद्देश्य से यह मारीच राक्षस सोने का मृग बनकर मुझे आश्रम से दूर हटा ले आया था और मेरे बाणों से आहक होने पर जो उसने आर्तनाद

करते हुए कहा था कि 'हे लक्ष्मण! मैं मारा गया' इसमें भी उसका वही उद्देश्य छिपा था। वन में हम दोनों भाइयों के आश्रम से अलग हो जाने पर क्या सीता सकुशल वहाँ रह सकेगी? जन स्थान में जो राक्षसों का आहार हुआ है, उसके कारण सारे राक्षस मुझसे वैर बाँधे ही हुए हैं। आज बहुतसे भयंकर अपशकुन भी दिखायी देते हैं। सियारीन की बोली सुनकर इस प्रकार चिन्ता करते हुए मनको वश में रखने श्री राम तुरंत लौटकर आश्रम की ओर चले। मृग रूपधारी राक्षस के द्वारा अपने को आश्रम से दूर हटाने की घटना पर विचार करके श्री रघुनाथजी शंकित-हृदय से जनस्थान को आये। उनका मन बहुत दुःखी था। व दीन हो रहे थे। उसी अवस्था में वन के मृग और पक्षी उन्हें बाँये रखते हुए वहाँ आये और भयंकर स्वर में अपनी बोली बोलने लगे। उन महाभयंकर स्वर में अपशकुनों को देखकर श्री राम चन्द्रजी तुरन्त ही बड़े वेग से अपने आश्रम की ओर लौटे। इतने ही में उन्हें लक्ष्मण आते दिखायी दिये। उनकी कान्ति फीकी पड़ गयी थी। थोड़ी ही देर में निकट आकर लक्ष्मण श्री रामचन्द्रजी से मिले। दुःख और विषाद में झूबे हुए लक्ष्मण ने दुखी और विषादग्रस्त श्री रामचन्द्रजी से भेंट की। उस समय राक्षसों से सेवित निर्जन बने वन में सीता को अकेली छोड़कर आये हुए लक्ष्मण को देखने भाई श्रीराम ने उनकी निन्दा की। लक्ष्मण का बायाँ हाथ पकड़कर रघुनन्दन आर्त-से हो गये पहले कठोर तथा अन्त में मधुर वाणी द्वारा इस प्रकार बोले— 'अहो सौम्य लक्ष्मण! वह तुमने बहुत बुरा किया, जो 'सीता को अकेली छोड़कर यहाँ चले आये। क्या वहाँ सीता सकुशल होगी? वीर मुझे इस बात में संदेह नहीं है कि वन में विचरने वाले राक्षसों ने जनक कुमारी सीता को या तो सर्वथा नष्ट कर दिया होगा या वे उन्हें खा गये होंगे। क्योंकि मेरे आसपास बहुत से अपशकुन हो रहे हैं। पुरुषसिंह लक्ष्मण क्या हमलोग जीती-जागती हुई जनक दुलारी सीता तो पूर्णतः स्वस्थ एवं सकुशल पा सकेंगे?

यथा वै मृगसंधाश्च गोमायुश्चैव भैरवम् ।

वाश्यन्ते शकुनाश्चापि प्रदीप्ताममितो दिशम् ।

अपि स्वस्ति भवेत् तस्या रजपुत्रा महाबल ॥

श.वा.रा.आ.7

'महाबली लक्ष्मण! ये मृगों के झुंड (दाहिनी ओर से आकर) जैसा अमंगल सूचिक कर रहे हैं, ये गोदड जिस तरह भैरवनाद कर रहे हैं तथा जलती सी प्रतीत होने वाली सम्पूर्ण दिशाओं में पक्षी जिस तरह की बोली बोल रहे हैं— इन सबसे यही अनुमान होता है कि राजकुमारी सीता शायद ही कुशल से हो।

इदं हि रक्षो मृगसंनिकाशं प्रलोम्य मां दूरमनुप्रयातम् ।

हतं कथंचिन्महता श्रमेण स रक्षसोऽभून्नियमाण एव ॥२२॥

यह राक्षस मृग के समान रूप धारण करके मुझे लुभाकर दूर चला आया था। महान् परिश्रम करके जब मैंने इसे किसी तरह मारा, तब यह मरते ही राक्षस हो गया।

मनश्च मे दीनमिहाप्रहष्टं चक्षुश्च सव्यं कुरुते विकारम् ।

असंशयं लक्ष्मण नास्ति सीता हता मृता वा पथि वर्तते वा ॥

लक्ष्मण! अतः मेरा मन अत्यन्त दीन ओर अप्रसन्न हो रहा है। मेरी बाँयी आँख फड़क रही है, इससे जान पड़ता है, निः संदेह आश्रम पर सीता नहीं है। उसे कोई हर ले गया, वह मारी गयी अथवा (किसी राक्षस के साथ) मार्ग में होगी।

अशोक वन में सीता के शुभ-शकुन

शोक से संतप्त हुई सीताने इसी प्रकार बहुत कुछ विचार करके अपनी चोटी को पकड़कर निश्चय किया कि मैं शीघ्र ही इस चोटी से फाँसी लगाकर यमलोक में पहुँच जाऊँगी। सीताजी के सभी अङ्ग बड़े कोमल थे। वे उस अशोक वृक्ष के निकट उसकी शाखा पकड़ कर खड़ी हो गयी। इस प्रकार प्राण-त्याग के लिए उद्यत हो जब वे श्रीराम, लक्ष्मण और अपने कुल के विषय में विचार करने लगी, उस समय शुभाङ्गी सीता के समक्ष ऐसे बहुत से लोक-प्रसिद्ध श्रेष्ठ शकुन प्रकट हुए, जो शोक की निवृत्ति करने वाले और उन्हे ढाढ़स बँधनेवाले थे। उन शकुनों का दर्शन और उनके शुभ फलों का अनुभव उन्हें पहले भी हो चुका था।

तस्यः शुभं वाममरालपक्षम्— राज्यवृत्तं कृष्ण विशालशुक्लम् ।

प्राप्सन्दतैकं नयनं सुकेश्या मीनाहतं पद्ममिवाभिताभ्रम् ॥२॥

उस समय सुन्दर केशोंवाली सीता का बाँकी बरोनियों से घिरा हुआ परम

मनोहर काला, श्वेत और विशाल बाँया नेत्र फड़कने लगा। जैसे मछली के आधात से लाल कमल हिलने लगा हों।

**भुजश्चार्वश्चित्वृतपीनः परार्थकालागुरु चन्दनार्हः ।**

**अनुत्तमेनाध्युषितः प्रियेण चिरेण वामः समवेपताशु ॥३ ॥**

साथ ही उनकी सुन्दर प्रशंसित गोलाकार मोटी, बहु-मूल्य काले अगुरु और चन्दन से चर्चित होने योग्य तथा परम उत्तम प्रियतम द्वारा, चिरकाल से सेवित बाँयी भुजा भी तत्काल फड़क उठी।

**गजेन्द्रहस्तप्रतिमक्ष पीन— स्तयोर्द्धयोः संहतयोस्तु जातः ।**

**प्रस्पन्दमानः पुनरुरुरस्या रामं पुरस्तात् स्थितिमाचचक्षे ॥४ ॥**

फिर उनकी परस्पर जुड़ी हुई दोनों जाँयों में से एक बाँयी, जाँघ, जो गजराजकी सूँढ़ के समान पीन (मोटी) थी, बार-बार फड़क करमानो यह सूचना देने लगी कि भगवान् श्रीराम तुम्हारे सामने खड़े हैं।

**शुभं पुनर्हेमसमानवर्णं मीनदण्डोध्वस्त मिवातुलाक्ष्याः ।**

**वासः स्थितायाः शिखराग्रदन्त्याः किंचित् परिस्मिन्सत चारुगाज्याः ॥५ ॥**

तत्पश्चात् अनारके बीज की भाँति सुन्दर दाँत, मनोहर गाव्र और अनुपम नेत्रवाली सीता का, जो वहाँ वृक्ष के नीचे छड़ी थी, सोने के समान रंगवाला किंचित् महीन रेशमी पीताम्बर तनिक-सा खिसक गया और भावी शुभकी सूचना देने लगा।

**एतैर्निमितैरपरैश्च सुप्रः संचोदिता प्रागति साधुसिद्धेः ।**

**वातालयकान्तमिव प्रणष्टं वर्षेण बीजं प्रतिसंजहर्ष ॥६ ॥**

इनसे तथा और भी अनेक शकुनों से, जिनसे द्वारा पहले भी मनोरथ सिद्धि का परिचय मिल चुका था प्रेरित हुई सुन्दर भौंहोवाली सीता उसी प्रकार हर्ष से खिल उठी, जैसे हवा और धूप से सूखकर नष्ट हुआ बीज वर्षा के जल से सिंचकर हरा हो गया हो। उनका बिम्बफल के समान लाल ओठों, सुन्दर नेत्रों; मनोहर भौंहों, रुचिर केशों, बाँकी बरौनियों तथा श्वेत उञ्ज्वल दाँतों से सुशोभित मुख राहु के ग्रास से मुक्त हुए चन्द्रमा की भाँति प्रकाशित होने लगा। उनका शोक जाता रहा, सारी थकावट दूर हो गयी, मन का ताप शान्त हो गया और हृदय हर्ष से खिल उठा। उस समय आर्या सीता शुक्ल पक्ष में उदित हुए शीतरशिम

चन्द्रमा-से सुशोभित रात्री की भाँति अपने मनोहर मुख से अद्भुत शोभा पाने लगी।

(वा.रा. प्र. 938)

### श्री राम को शकुनो द्वारा राक्षसों के विनाश और अपनी विजय की सम्भावना

प्रचण्ड पराक्रमी खर जय श्री राम के आश्रम की ओर चला, तब भाई सहित श्री राम ने भी उन्हीं उत्पात सूचकलक्षणों को देखा! प्रभा के अहित की सूचना देने वाले उन महाभयंकर उत्पातों को देखकर श्री रामचन्द्रजी राक्षसों के उपद्रव का विचार करके अत्यन्त अमर्ष में भर गये और लक्षण से इस प्रकार बोले— महाबाहो ! ये जो बड़े-बड़े उत्पात प्रकट हो रहे हैं, इनकी ओर दृष्टिपात करो। समस्त भूतों के संहार की सूचना देनेवाले ये महान उत्पात इस समय इन सारे राक्षसों का संहार करने के लिये उत्पन्न हुए हैं।

**अमी रुधिरधारास्तु विसृजन्ते खरस्वनाः ।**

**ब्योम्नि मेघा निर्वर्तन्ते पसृषा गर्दनासूणाः ॥**

आकाश में जो गधों के समान धूसर वर्णवाले बादल इधर-उधर विचर रहे हैं, ये प्रचण्ड गर्जना करते हुए खून की धाराएँ बरसा रहे हैं

**सधूमाश शराः सर्वे मम युद्ध भिनन्दिताः ।**

**रूक्म पृष्ठानि चामानि विचिष्टनते विचण् ॥**

युद्धकुशल लक्षण ! मेरे सारे बाण उत्पात वश उठनेवाले धूम से सम्बन्ध हो युद्ध के लिये मानो आनन्दित हो रहे हैं तथा जिनके पृष्ठ भाग में सुवर्ण मढ़ा हुआ है, वे मेरे धनुष भी प्रत्यज्यां से जुड़ जाने के लिये ख्यय ही चेष्टाशील जान पड़ते हैं।

**याहशा इह कूजन्ति पक्षिणो वनचारिणः ।**

**अग्रतो नोऽभ्यं प्राप्तं संशयो जीवितस्य च ॥**

यहाँ जैसे—जैसे वनचारी पक्षी बोल रहे हैं, उनसे हमारे लिये भविष्य में अभयकी और राक्षसों के लिये प्राणसंकट की प्राप्ति सृचित हो रही है।

**सम्प्रहारस्तु सुमहान् भविष्यति न संशयः ।**

**अयमाख्याति मे वाहुः स्फुरमाणो मुहुर्मुहः ॥**

मेरी यह दाहिनी भुजा बारंबार फड़कर इस बात की सूचना देती है कि कुछ ही देर में बहुत बड़ा युद्ध होगा, इसमें संशय नहीं है।

**संनिकर्षे तु नः शूर जयं शत्रोः पराजयम् ।**

**सुप्रभं च प्रसन्नं च तव वक्त्रं हि लक्ष्यते ।**

शूरवीर लक्षण ! परंतु निकट भविष्य में ही हमारी विजय और शत्रु की पराजय होगी; क्योंकि तुम्हारा मुख कात्ति-मान एवं प्रसन्न दिखायी दे रहा है।

**उद्यतानां हि युद्धार्थं येषां भवति लक्षण ।**

**निष्प्रभं वदनं तेषां भवत्यायुः परिक्षयः ॥**

लक्षण ! युद्ध के लिये उद्यत होने पर जिनका मुख प्रभाहीन (उदास) हो जाता है, उनकी आयु नष्ट हो जाती है ॥

**रक्षसां नर्दता घोरः श्रूयतेऽयं महाध्वनिः ।**

**आहतानां च भेरणां राक्षसैः कूरकर्मभिः ॥**

गरजते हुए राक्षसों का यह घोर नाद सुनायी देता है तथा कूरकर्मा रक्षसों द्वारा बजायी गयी भेरियों की यह महा भयंकर ध्वनि कानों में पड़ रही है।

**अनागतविधानं तु कर्तव्यं शुभमिच्छता ।**

**आपदं शकमानेन पुरषेणा विपक्षिता ॥**

अपना कल्याण चाहनेवाले विद्वान् पुरुष को उचित है कि आपत्ति की आशङ्का होने पर पहले से ही उससे बचने का उपाय कर ले। इसलिये तुम धनुष-बाण धारण करके विदेह कुमारी सीता को साथ ले पर्वत की उस गुफा में ले जाओ जो वृक्षों से आच्छादित है॥ वत्स ! तुम मेरे इस बचन के प्रतिकूल कुछ कहो या करो, यह मैं नहीं चाहता। अपने चरणों की शपथ दिलाकर कहता हूँ, शीघ्र चले जाओ ॥ इसमें संदेह नहीं कि तुम बलवान और शूरवीर हो तथा इन राक्षसों का बध कर सकते हैं; तथापि मैं स्वयं ही इन निशाचरों का संहार करना चाहता हूँ (इसलिये तुम मेरी बात मानकर सीता को सुरक्षित रखने के लिये इसे गुफा में ले जाओ) श्री रामचन्द्रजी के ऐसा कहने पर लक्षण धनुष-बाण ले सीता के साथ पर्वतकी दुर्गम गुफा में चले गये। सीता सहित लक्षण के गुफा के भीतर चले जाने पर श्री राम चन्द्रजी ने 'हर्ष की बात है' लक्षण ने शीघ्र हो बात मान

ली और सीता की रक्षा का समुचित प्रबन्ध हो गया ऐसा कह कर कवच धारण किया। प्रञ्चलित आग के समान प्रकाशित होने वाले इस उस कवच से विभूषित हो श्री राम अन्धकार में प्रकट हुए महान अग्निदेव के समान शोभा पाने लगे। पराक्रमी श्री राम महान् धनुष एवं बाण हाथ में लेकर युद्ध के लिए डटकर खड़े हो गये और प्रत्यञ्चा की टंकार से सम्पूर्ण दिशाओं को गुँजाने लगे। तदन्तर श्रीराम राक्षसों का युद्ध देखने की इच्छा से देवता, गन्धर्व, सिद्ध और चारण आदि महात्मा वहाँ एकत्र हो गये। इनके अलावा जो तीनों लोकों में प्रसिद्ध ब्रह्मर्षिशरीरमणि पुण्यकर्मा महात्मा ऋषि हैं, वे सभी वहाँ जुट गये और एक साथ खड़े हो परस्पर मिलकर यों कहने लगे - 'ओ, ब्राह्मणों और समस्त लोकों का कल्याण हो। जैसे चक्रधारी भगवान् विष्णु युद्ध में समरत श्रेष्ठ असुरों को परास्त कर देते हैं, उसी प्रकार इस संग्राम में श्री रामचन्द्रजी पुलस्त्यवंशी निशाचरों पर विजय प्राप्त करें। ऐसा कहकर वे पुनः एक दूसरे की ओर देखते हुए बोले - एक ओर भवंकर कर्म करने वाले चौदह हजार राक्षस हैं और दूसरी ओर अकेले धर्मात्मा श्रीराम हैं, फिर यह युद्ध कैसे होगा ? ऐसी बातें करते हुए राजर्षि, सिद्ध, विद्याधर आदि देवयोनिगण सहित श्रेष्ठ ब्रह्मर्षि तथा विमान पर स्थित हुए देवता कौतूहलवश वहाँ खड़े हो गये। युद्ध के मुहाने पर वैष्णव तेज से आविष्ट हुए श्री राम को खड़ा देखकर उस समय सब प्राणी (उनके प्रभावोंको न जानने के कारण) भय से व्यथित हो उठे। अनायास ही महान् कर्मकरने वाले तथा रोष में भरे हुए महात्मा श्री राम का वह रूप कुपित हुए रुद्र देव के समान तुलनारहित प्रतीत होता था। जब देवता, गन्धर्व और चारण पूर्वोक्तरूप से श्रीराम की मगल कामना कर रहे थे, उसी समय भयंकर ढाल-तलवार आदि आयुधों और ध्वजाओं से उपलक्षित होने वाली निशाचरों की वह सेना गम्भीर गर्जना करती हुई चारों ओर से श्री रामजी के पास आ पहुँची। वे राक्षस सैनिक वीरोचित वार्तालाप करते, युद्ध का ढंग बताने के लिए एक-दूसरे के सामने जाते, धनुषों को खींचकर उनकी हँकार फैलाते, बारंबार मदमत होकर उछलते, जोर-जोर से गर्जना करते और नगाड़ी पीटते थे। उनका वह अत्यन्त तुमुल नाद उस वन में सब और गूँजने लगा। उस शब्द से डरे हुए वनचारी हिंसक जन्तु उस वन में गये, जहाँ किसी प्रकार का कोलाहल नहीं सुनायी पड़ता था। वे वनजन्तु भय के मारे पीछे फिरकर देखते

भी नहीं थे। वह सेना बड़े वेग से श्रीराम की ओर चली। उसमें नाना प्रकार के आयुध धारण करने वाले सैनिक थे। वह समुद्र के समान गम्भीर दिखायी देती थी। युद्ध कला के विद्वान् श्री रामचन्द्रजी ने भी चारों और दृष्टिपात करते हुए खरकी सेना का निरीक्षण किया और वे युद्ध के लिए उसके सामने बढ़ गये। फिर उन्होंने तरकस से अनेक बाण निकाले और अपने भयंकर धनुष को खींचकर सम्पूर्ण राक्षसों का वध करने के लिए तीव्र क्रोध प्रकट किया। कुपित होने पर वे प्रलयकालिक अग्नि के समान प्रज्वलित होने लगे। उस समय उनकी ओर देखना भी कठिन हो गया। तेज से आदिष्ट हुए श्रीराम को देखकर वन के देवता व्यथित हो उठे। उस समय रोष में भरे हुए श्री राम का रूप दक्षयत्र का विनाश करने के लिए उद्यत हुए पिनाकधारीमहादेवजी के समान दिखायी देने लगा। धनुषों, आभूषणों, रथओं और अग्नि के समान सूर्योदयकाल मेंीले मेघों की घटाके समान प्रतीत होती कान्तिवाले चमकीले कवचों से युक्त वह पिशाचों की सेना थी।

(वा.रा.पृ. 544)

### अद्भुत चिड़िया

आस्ट्रेलिया की 'नॉयजी स्क्रब' नामत चिड़िया अपना घोंसला जमीन पर बनाती है और यह अन्य किसी भी चिड़िया की आवाज की हू-ब-हू नकर कर सकती है।

### इण्डोनेशिया के जिरिनाज पर्वत पर तेजी से धूमता बादल

एक शान्त हो चुके ज्वालाखी के ऊपर मंडराताहुआ चपटा सा बादल उसके मुख से निकलने वाली गर्म हवा के कारण तेजी के साथ उसके ऊपर चक्कर काटता हुआ धूमता रहता है।

### एक प्रवासी नीला कबूतर

जो एक जहाज के बन्द अन्धेरे केबिन में सैगोन (वियतनाम) से ऑराज (फ्रांस) ले जाया गया। किन्तु वह 25 दिन में मविना किसी मार्ग चिह्न के 7200 मील की यात्रा करके अपने स्थान पर वापस पहुँच गया (अगस्त-1931)

6

### यात्रा के शुभाशुभ शकुन

#### शकुन की महता

यात्रा के समय दृश्यमान चिन्ह शकुन संज्ञक हैं। इनके दर्शन में यात्रा के शुभाशुभता की ठीक-ठीक सूचना मिल जाती है अतः यात्रारंभ करते समय विचारणीय तत्वसमुदाय में शकुन को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

'तिथिधिण्णयं च वारश्च लंग्न ग्रहबलं तथा ।

पंचानामपि सर्वेषां शकुनो दण्डनायकः ॥'

(ज्योतिनिवन्ध)

शुभ शकुन समीचीन फल प्रदान करते हैं तथा अशुभ शकुन तदूविलोम। अतः अपशकुनों की उपलब्धि में कभी यात्रा नहीं करनी चाहिए। अन्योन्य भयानक मुसीबतों के मुख में जाना भी शुभद हो सकता है परन्तु शकुन कदापि सम्यग् फल नहीं देते।

वरं शुभं दुर्जनकृष्णसर्पो वरं क्षियेत्सिंहमुखे स्वमंगम् ।

वरं तरेद्वारिनिधं भुचाम्यां नोल्लंघयेद् दुःशकुनं कदापि॥

(दैवज्ञमनोहर)

#### शुभं शकुन

(क) मनुष्य वर्ग — पुत्रवान् मनुष्य, सौभाग्य पूजवती स्त्री, वेश्या, समृद्ध तथा यशस्वी व्यक्ति, कुमारी, बालक, वनिक पूत्र, विश्वरत्त पुरुष, आसीयजन, सुवेषधारी मनुष्य, वरव्रालंकृत स्त्री, एक या दो ब्राह्मण (तीन वर्जित), ज्योतिषी, विद्वान् चारित्रवान्, व्यक्ति, धोबी, सुन्दरी, पगड़ी बांधा हुआ आदमी, प्रसन्न पुरुष, शिक्षक, उच्चायुक्त तथा कुलगुरु इत्यादि।

(ख) पशु—पक्षी वर्ग— हाथी, घोड़ा, अकेली बछड़े सहित गाय, मोर, नीलकंठ, न्यौला बंधा हुआ पशु, सफेद वृषभ, भेड़, भारद्वाज, पक्षी, हिरण, कबूतर, हंस, कोयल, तोता—मैना, कुक्रुट, रंग—बिरंगी चिड़ियाँ, बकरा, शेर, कृष्णवर्जित, साँप—बिच्छु आदि।

(ग) वनस्पति—वर्गः— अन्न, सफेद, सरसों, ऋतुफल, कमल ईख, हल्दी पुष्प, आँगूर, जौद्राक्षा, श्वेतधान्य, दूर्वा, दर्भ, ताम्बूल, पौधा, चन्दन, सर्वोषयी, उद्धान पंचपल्लव व आर्द लकड़ी आदि।

(घ) उपभोग्य—वर्ग :— दर्पण, वस्त्र, झूला, स्वर्ण-दुर्घ, ठहि, सुवर्णजनादि निर्मित आभूषण, सर्वरत्न, काजल, सुरमा, धौतवस्त्र, धृत, पताका, शिविका, पालकी, कशा, डौली मछली, भद्रासन, कोई खाद्य द्रव्य, आसन, चँवन, मणी, दीपक, रथ, वाहन सौभाग्य, द्रव्य, वस्त्र—निर्मित वितान, ताँबा, नगाड़ा, धन राशि, सुगन्धितद्रव्य, मृदंग, वीणादि समस्त वाद्य। व उनके शब्द, शब्द्या तथा अन्य आनन्द दायक सामग्री।

(ङ) प्रकीण—वर्ग :— जलपूरित कलश, छत्र (छात्र) गोली (चिकनी) मिही, प्रज्वलित (धूम रहित) अग्नि, रुदन रहित शव यात्रा, देवता सिंहासन, गौरोचन; आगे की ओर से आओ, सिद्धीभवति कर्मजा; 'शुभं भवतु,' 'कल्याणं भूयात्' आदि सभीचीन वचन, मन्द एवं सुगन्धित वायु, शहद, अंकुश, धनुषादि अस्त्र, पीछे से जाता हुआ रिक्त कलश, आयुध उठाया, गोबर, देव प्रतिभा प्रतिमा, चूना, किसी की उन्नति या भलाई के समाचार, जय घोष, वेदध्वनि, जुलूस, जो कोई शुभ-भावना से ओत प्रोत व्यक्ति हो, पुस्तकें कमल—दवात आदि लेखा सामग्री, पूजा सम्भार, तीर्थोदक, खेल—खिलौने तथा अन्य दुष्ट रहित वस्तुएँ विशेष।

(१), कोई अनुभूत या संतोषजनक शकुन अनुकृत होने पर भी ग्राह्य है...

"शस्तान्येतानि धर्मज्ञ यत्रस्यान्मनस प्रियम् ।  
मनसस्तुष्टिरेवात्र परमं जयलक्षणम् ॥"

(ज्योतिः सारः)

(२) पूर्वोक्त शुभ शकुनों की विद्यमानता चाहे स्वयम्भू हो, वे सर्वदा मंगल—जनक ही होते हैं। तथाच—

"स्वयमथ रचितान्ययलतो वा यदि कथितानि भवन्ति मंगलानि ।  
स जयति सकलां ततो धरित्री ग्रहणदृशां श्रुतिपाट्तौ यथाहः ॥"

(बराहमिहिर)

(३) शुभ शकुनों की चर्चा, श्रवण, दर्शन, तथा स्पर्श उत्तमोत्तम जानना चाहिये अतः शुभाकांक्षी व्यक्ति यशासंभव शकुनों का आचरण करें तथा उन्हें दायीं और रखकर यात्रा करें।

कीर्तनाच्छ्रवणं श्रेष्ठं श्रवणात् विलोकनम् ।

दर्शनात्स्यर्शनं चैषां दध्यादीनां गमादिषु ।

कृत्वा दक्षिणतः सर्वान् गच्छेन्सिद्धिमवात्युयात् ॥

मूहुर्तगणपति

### अपशकुन

(च) मनुष्य—वर्ग :— तस्कर, नग्न, नक्कटा, सिर मुंडाया हुआ, गमन करता हुआ, रोगी, लंगड़ा, बौना, कुबड़ा, नपुंसक, अन्धा, बहरा, दरिद्री, विमुक्त केशी, जयधारी, क्रोधी, धोखे—बाज, मूत्र—मलोत्सर्ग करता हुआ, गधे, ऊँट या भैंसे पर आरुढ़ सुदित, यवन, रजस्वला, गर्भवती, विधवा, छिनाल, शत्रु, शराबी, पागल, आचरण भ्रष्ट, वर्णसंकर, पतित—ब्रात्मण, विकलांग, क्षुधित, गैरूआ वस्त्र पहिने हुए, भिखारी, तैल लगाया हुआ, लकड़हारा, दीर्घ नखवाण, पाखण्डी, हजाम, लुहार, चमार, सुनार, बढ़ई माँसोप—जीवी, मोची, कुम्हार, प्राणहर्ता, दुर्जन मलिन, बहेलिया, भ्रान्त, हाथ में पाश लिये हुए, कृष्ण क्षीण काय, भार्द्र, वस्त्र धारण किया हुआ, लकड़ी या शस्त्र लिये हुए आरक्षण विभाग के कर्मचारी, अंग कम्पन, किसी व्यक्ति का गिर जाना, यात्री का स्वयं ठोकर खाना, आकस्मिक दुर्घटना के दर्शन व श्रवण तथा नंगे सिर वाला व्यक्ति।

(छ) पशु—पक्षी—वर्ग :— गधा, ऊँट, महिष, मृगचर्म, बिल्लियों का युद्ध, श्वान, उल्लू, गीध, बन्ध्या गौ, बैल, सूअर, छिपतली, कालानाग, गिरगिट, कौआ, गाय की छोंक, भैंसों का युद्ध, वानर, भालू, चूहों की लड़ाई, बिल्ली के द्वारा रास्ता काटना, कुत्ते के द्वारा कान फड़फड़ाना, मेड़ा, खरगोश, सेहली, गाय व अश्वादि के अंग कम्पन, श्वान—संग्राम लोमडी, तीतर, बगुला आदि।

(ज) वनस्पति वर्ग :— कालाधान्य, लकड़ी, तिल या सरसों खली, धान्य की भूसी, आटा, औषधि, घास, तिल, लाल पुष्प, आक—धतूरा, कंटीनी—झांडियाँ, उम्मूलित वृक्ष, सुगन्ध रहित पुष्प आदि।

(झ) उपभोग्य वर्ग :— तेल, छाछ, नमक, गुड़, आर्द वस्त्र, झाड़ू, सूप उबले हुए, चावल, खाली बरतन, वस्त्र का शरीर से खिसकना, जूते, कीच में सनी हुई वस्तु, यानादि का पलायन, रजस्वला के रक्त से लथ—पथ वस्त्र, काले तथा असित वस्त्र, सन्दूक का टूट जाना या गुम हो जाना, टूटे—फूटे बरतन तथा किसी

गृहस्थ की वस्तु की आकर्षिक क्षति इत्यादि।

(ज) प्रकीर्ण वर्ग :— धूएँ सहित भग्नि, पत्थर, कपास, लौह, हड्डियाँ, कपाल, वक्सा, विष्टा, रसी, जंजीर, कीचड़, रिक्त-कलश, ढार या मार्ग का अकस्मात् बन्द हो जाना, स्वगृह दहन, छींक, ठहरो मत जाओ, आदि वचन, रोदन सहित शव, कॉसा, कुटुम्ब में कलह, किसी पर क्रोध होना, किसी को बुरा भला कहना, कुरिसत वाक्य, रुदन या चीत्कार के शब्द, उत्पातादि के समाचार, कृड़ा करकट तथा किसी की मृत्यु या दुर्घटना के शब्द सुनना।

(1) विशेषः— श्वान चेष्टा विचार — यात्रादि शुभकार्यों के आरम्भ में कुत्ता अपने दाहिने पैर से सिर, ठोड़ी, नासिका, वक्षस्थल, गर्दन, कंधे अथवा पीठ को खुजलावे तो भविष्य ज्योतिर्मय जानना चाहिये अन्यथा बाये पाँव से खुजलावे तो कार्य नाश जाने।

(2) यदि (कीचड़ से भरा हुआ) कुत्ता अपने कान फड़फड़ाये, छींक करे, दाँत निकाले अथवा निंद्रा या आलस्य युक्त दृष्टिगोचर होवे तो निधन प्रद फल जानना चाहिये ।

### मतान्तरण शकुनपरत्व

वाम शकुन— निम्नलिखित शकुनों के दर्शन या उनका आभास बाई ओर शुभ है— भौरां, बिचू, ऊँट, तोता, हिंसक पशु, कुत्ता, गौरैया, कोयल, छिपकली, श्यामा पक्षी, रला पक्षी, पिगंत (उल्लु की एक जाति) छछुन्दर, खजन, तीतर, बन्दर का शब्द, गर्दभ का शब्द ।

दक्षिण शकुन— ये शकुन दक्षिणस्थ होने पर प्रशस्त है— भैंस, कौआ, गाय, छिक्कर (हिरण की एक जाति), पित्तत (पक्षी विशेष), मुर्गा, गीध, श्रीकण्ड पक्षी, बन्दर, काला हिरन, चटकादि पक्षी, भालू तथा श्वानादि।

### दिशानुसार शुभ - शकुन

(अ) पूर्व दिशा— कुक्कुट, हाथी, मोर, बंजुल पक्षी, भैंस, सिंहनाद, बैल, सूअर, तथा कोयल ।

(ब) पश्चिम दिशा— गाय, शशक, क्रौंच पक्षी, गीदड़, हँस की आवाज, चातक तथा तीतर ।

(स) उत्तर दिशा — कमल, हिरन, छछुन्दर, चूहा, घोड़ा, कोयल, जल, नीलकंठ

पक्षी, सेहली, मांगलिक वचन तथा घंटा-शंख के नाद आदि।

(द) दक्षिण दिशा— दाहिनी ओर जाता हुआ कौआ, गीदड़, उल्लू, हारीत (कबूतर विशेष), भेड़िया, भालू, पिंगला, कबूतर, रोदन तथा कूर शब्द ।

निर्देश— जो शकुन शुभ तथा अशुभ दोनों ही कथित हो तो उन्हें मिश्र फलद जानना चाहिये ।

शुभ शकुन से अभीष्ट कार्य की सिद्धि, मिश्र से सामान्य फल तथा दुःशकुन से असफलता की सुचना मिलती है । यथा

“प्रशस्ते: शकुने: कार्य कृत्याऽभ्येते गृहं तथा,  
अकृताथेऽपशुकुने मिश्रोमिश्रफलं भवेत् ॥”

(ज्योतिनिबन्ध)

### क्षुत — विचार (छींक के शकुन)

जिस प्रकार वनराज सिंह समस्त वन्य पशुओं को नेस्तनाबुद कर देता है तथेव छींक भी अशेष शुभ शकुनों को निष्कल कर देती है । अतः यात्रादि मंगल कार्यों के शुभारंभ में छींक को शकुन माना गया है ।

प्रारम्भयानसमयेषु तथा प्रवेशे ज्येंयं नच शुभं क्वाचिदप्युशवन्ति (—बृहद्यात्रा ।)  
विभिन्न ज्यौतिष के ग्रन्थों में छींक करने वाले जीव, छींक की दिशा,  
अवसर तथा समयभेद के अनुसूल छींक के भिन्न भिन्न प्रतिपादित किये गये हैं ।

(1) श्रुतकर्त्तानुसार क्षुत फल — कपटी के द्वारा (जान बूझकर), वृद्ध बालक कफ प्रवृत्ति के व्यक्ति, सन्नियात (विदोष) तथा पीनस रोग से ग्रस्त मनुष्य के द्वारा की हुई छींक का कोई शुभाशुभ फल नहीं जानना चाहिये । परन्तु गाय की छींक सर्वथा मरण प्रद है ।

(2) दिक्परत्व से छींक का फल— यद्यपि छींक सब दिशाओं में वर्णिक है तथापि आचार्यों ने अत्यावश्यक यात्रा के हेतु सूक्ष्म-विचोर की व्यवस्था की है—

(अ) यात्रा के लिये प्रवृत्त व्यक्ति के सम्मुख दिशा में हुई छींक से निष्फलत्व, दायीं तरफ हो तो भी भविष्य अंधकारमय, पीठ की ओर हो तो वांछित प्राप्ति तथा बायीं ओर होने वाली छींक यात्री की रक्षा करती है—

“निरर्थक पुरः प्रोक्तमनर्थ दक्षिणेन तुं ।  
पृष्ठतः कार्यलाभाय क्षुतं क्षेमाय वामतः ॥”  
(- मुहूर्तदीपिका)

“वामभागे क्षुते यापि सर्वकार्येषु सिद्धिदा ॥”  
(- ज्योतिनिबन्ध)

(ब) कार्यकर्ता के सम्मुख और दक्षिण नेत्र की तरफ हुई छींक दुष्टफल देती है दाहिने कान की ओर अपव्यय, पृष्ठ भग और दाहिने कान के बीच की दिशा में शत्रु वृद्धि, पीठ की ओर अभिलाषा-पूर्ति, बायें कान की ओर पीठ के बीच वाले देश की ओर सौख्यासि, बायें कान की तरफ विजय तथा बायें नेत्र की ओर जात-क्षुत से सर्वार्थ सिद्धि होती है।

“निषिद्धप्रेऽक्षिणि दक्षिणे च धनव्ययं दक्षिणकण्डेशो ।  
तत्पृष्ठभागे कुस्तेऽपिवृद्धि क्षुतं प्रकामं शुभमादधाति ॥१॥  
भोगाय वामश्रवणे स्वपृष्ठे कर्णे च वामे कथितं जयाय।  
सर्वार्थलाभाय च वामनेऽत्रे जातं क्षुतं स्यात्कमतोऽष्टधैवम् ॥”

(ख) पूर्वादिदिशाओं में छींक का फल— (वसन्तराज)

दिशा	फल	दिशा	फल
पूर्व	श्रीप्राप्ति	वायव्य	सर्वलाभ
आग्नेय	निधन	उत्तर	अशन्ति
दक्षिण	सिद्धि	ईशान	रक्षा
नेत्रत्य	पीड़ा	उर्ध्व	शुभत्व
पश्चिम	सौख्य	मध्य	अतिभय

“इन्दिरा मरणं सिद्धिः पीड़ा भोगाः सुखासुखे।  
निष्फलं चोपाविष्टस्य पूर्वतः क्षुतजं फलम् ॥”  
— ज्योतिनिबन्ध।

“ऊर्ध्वं चैव शुभं ज्ञेयं, मध्ये चैव महद्भयम् ॥”  
(3) अवसर भेद से क्षुतफल— विभिन्न आयोजनों के प्रारम्भ काल में संवृत्त

छींक की शुभाशुभता भिन्न भिन्न है—

औषध— निर्माण या सेवन, वाहनारोहण, विवाद (विवाह), शयन, भोजन, विद्या रंभ, तथा बीजवपन के समय हुई छींक, प्रशस्त है। यदाह

“औषधे वाहनारोहे विवाहे शयनेऽपि।  
विद्यारंभे विजवाये क्षुतं सप्तसु शोभनम् ॥”

सर्वशाकुन

‘मुहूर्त’— संग्रह— दर्पण ग्रन्थमें प्रस्तुत श्लोक के अन्तर्गत ‘विवाह’ के बदले में ‘विवाद शब्द प्रयुक्त किया गया है तथा संभवता वही उपयुक्त है। देवज्ञवर्य ‘गणपति’ का भी यही मत है—

“औषधेऽययने वादे वाहने शयनेऽशने ।  
बीजवाये बुधैः प्रोत्तं शोभनं सप्तसु—क्षुतम् ॥”

— मुहूर्तगणयति।

भोजन के विषय में मतान्तरेण, ऐसा कहा गया है कि भोजन के पूर्व छींक अशुभ फलदायक तथा तत्पश्चात् पुनः भोजन दातु अर्थात् शुभदा होती है। तथा

‘स्वप्नस्याऽऽधन्तयोः शस्तं क्षुतं नौ भोजनाग्रतः।  
भोजनान्ते यदि भवेद् भोज्यलाभः परेऽहनि ॥’

(ज्योतिनिबन्ध)

(4) समय परत्वेन छींक का फल— (अ) तीन घंटे का समय ‘याम’ (प्रहर) संज्ञक है, यात्रा प्रायः दिन में दी करणीय जानकर दिशा भेद के अनुसार दिन के प्रति याम में छींक का फल—

दिग्द्वारक	प्र.प्रहर	द्वि.प्र.	त्रु.प्र.	च.प्र.
पूर्व	लाभ	अग्निभय	धनाप्ति	मित्र सुख
आग्नेय	लव्यि	अग्निभाव	पुत्रसुख	वह्निभय
दक्षिण	धनाप्ति	अन्नलाभ	मृत्यु	लड़ाई
नेत्रत्य	विजय	मित्रलाभ	सौख्य	वार्तालाभ
पश्चिम	शुभप्रयाण	उत्साह	कलह	वस्त्राप्ति
वायव्य	जय	लाभ	पुत्रसुख	शुभत्व
उत्तर	अरिनाश	शत्रुत्यति	प्राप्ति	अल्पलाभ
ईशान	संग्राम	क्षय	रोग	बुद्धिलाभ

लाभो वहिर्धनं मित्र चतुः स्थानेषु पूर्वतः ।  
लाभो वाह्निः सुतो वह्निः क्रमादाग्नेयतो भवेत् ॥1 ॥  
यामक्रमाद दक्षिणास्यां धनमन्मृतिः कलिः ।  
लाभो मित्रं सुखं वार्तालाभो नैऋत्यदेशतः ॥2 ॥  
गमनोत्साहकलह — वस्त्राप्ति पश्चिमादिशः।  
वायव्यां तु जयो लाभः पुत्राप्तिमङ्गलं क्रमात् ॥3 ॥  
शत्रुनाशो रिपुप्राप्तिर्भोगं चोत्तरं क्षुतम् ।  
संग्रामनाशरुगृद्विरीशयाक्रमेण च ॥4 ॥

पीयुषधारा

(ब) छींक होने के समय इष्ट, धष्टी, वार, तिथि को जोड़कर 8 का भाग देने पर 1,3,5,7 शेष रहे तो शुभफल तथा 0,2,4,6 आदि रहे तो अशुभ फल जानना चाहिए ।— यथा —

“क्षुते गत छठी वार तिथीयुग्व सुमिहता ।  
विषमा लाभदा नित्यं समा विघ्नमृतिप्रदा ॥”

— सर्वशाकुन ।

(1) विशेष — कार्यकर्ता के द्वारा कभी भी की हुई छींक अनिष्टकारक ही होती है— “आत्मछिक्का महद्भयम्”— फलितनवरल संग्रह

(2) छींक का शब्द सुनते ही कार्यकर्ता अपने पैरों की छाया को मापकर उसमें 13 युक्त करे। प्राप्त संख्या को 8 से विभाजित करने पर अवशिष्टांको के अनुसार क्षुत जनित फल—

शेषांक	1	2	3	4	5	6	7	0
फल	लाभ	सिद्धि	हानि	शोक	भय	श्रीप्राप्ति	दुःख	निष्फल

“वुधरिष्ठक्यारवं श्रुत्वा पादच्छयां च कारयेत् ।  
त्रयोदशयुतान् कृत्वा चाष्टभिर्मांगमाहरेत् ॥1 ॥”  
लाभः सिद्धिहानिशोकौ भयं श्रीरुद्धयनिष्फले ।  
क्रमणैव फलं ज्ञेयं गर्गेण च यथोदितम् ॥2 ॥

ज्योतिः सार

क्षुतदोष परिहार— भगवान् का तन-मन-धन से विधिवत् स्तवन करने से छींक दोष का निवारण होता है —

“नामसंकीर्तनं नित्यं क्षुतं प्रस्खलितादिषु ।  
वियोगं शीघ्रमाप्नोति सर्वत्र नात्रसंशयः ॥”

— विष्णुधर्मोत्तर

(1) शकुनापवाद— रुरु नामक काले हिरन के अतिरिक्त समरत मृग जातियां तथा अशेष पक्षी गधा दाहिनी ओर जाते हुए प्रशक्त हैं। परन्तु विषम संख्यक हिरण दायी ओर तथा पक्षीगण (3,5,7) बायीं ओर शुभ हैं—

“मृगा विहंगाश्च गताः प्रदक्षिणां महीभृतां कांक्षितकार्य सिद्धये ।

मृगा व्रजन्तः परमोजसंख्यमा ॥”— श्री पति ।

“पक्षिणां विषमसंख्यया शकुनाः वामे शुभः ।”

— पीयुषधारा ।

(2) जाहक (सहेली), गोह, कछुआ, सूअर, सर्प एवं खरगोशादि का नामोच्चारण यात्रा के समय शोभनीय है परन्तु इनके दर्शन एवं शब्द सर्वथा अशुभ होते हैं। एवमेव, बन्दर तथा रोंछ आदि को देखना तथा इनके शब्द सुनना प्रशस्त है किन्तु इनकी चर्चा अशुभ है। यथा—

“गोधासूकर जाहकाहिशशकाः पापारुतालोकने ।

धन्यं कीर्तनमृक्षवानरफलं तद् व्यत्यायाच्छोभने ॥”

— मुहूर्तदीपिका ।

(3) गधे का बायी ओर या पीठ की ओर भोकना शुभप्रद कहा गया है। यथा

‘रासभखो वामे ऽपि पृष्ठे तर्थदः ॥’

— मुहूर्त मार्तण्ड ।

“खरशब्दः शुभो वामे पृष्ठे चापि यियासताम् ॥”

— ज्योतिषप्रकाश ।

(4) नद्युत्तारण, गृहप्रवेश, युद्ध, नष्ट वस्तु की खोज तथा भय सम्बन्धी कार्यार्थ क्रियमाण यात्रा में अशुभ शकुन, शुभफल तथा शुभ शकुन, विपरित फल प्रदान करते हैं—

“नद्युत्तरे भर्य युद्दे प्रवेशो नष्टवीक्षणे ।  
शकुना त्यस्तगाः शस्ताः”

— ज्योतिनिर्बन्ध ।

परन्तु राजदर्शन करने में शकुन की कर्तव्यता सामान्य यात्रा के सदृश ही जानना चाहिये । यथा—

“नृपावलोकने शकुनः प्रयाणवत् ॥”

— श्री पति ।

(5) भग्नावशेष, सूखे पेड़, कंटीली झाड़ियाँ, शमशान, राख, अग्नि, भूसी आदि की सन्निधि में अथवा आबाद जगह, प्रकोष्ठ—शून्य—गृह तथा जर्जर स्थानों पर शुभ शकुन भी पापफल देते हैं—

“प्रभग्नशुष्कद्रुमकष्टकीषु मशानभस्माग्नितुलाकुलेषु ।  
प्राकारशून्यालयजर्जरीषु सोम्योऽपि पापः शकुनः प्रकल्प्यः ॥”

— वराह मिहिर।

(6) वसन्त ऋतु में कौआ कोयल, श्रावण में हाथी और पर्पीहा, भाद्रपद में सूअर और गीदड़, शरदऋतु में भालु और क्रोंच पक्षी, हेमन्त में व्याघ्र, रीछ, बन्दर, लकड़बग्धा, भैंस तथा सर्पादि बिल में रहने वाले जन्तु एवं शिशिर ऋतु में लोमड़ी गधा, हिरन, ऊँट, चोपाये जानवर तथा खरगोश के शकुन शुभ संज्ञक हैं।

(7) ग्राम वासियों के शकुन वन में एवं वन्य शकुन ग्राम में तथा दिन चर जीवों के शकुन रात्रि में ओर रात्रि में दृश्यमाण शकुन दिन में निरर्थक होते हैं।

“न च ग्राम्यो वने ग्राही नारण्यो ग्राम संस्थितः।  
दिवाचरो न सर्वयो न च नक्तश्चरो दिवा ।”

— पीयूष धारा ।

(8) शकुन तस्कर-वर्ग के लिये उश्चित सिद्धिप्रद है। तथा च—  
योगे: फलं क्षितिशानं द्विजानां भगुणेमवेत् ।  
शकुनेश्चारचोराणा मितिरेषां मुहूर्ततः ॥

— ज्योति: सागर ।

(9) अशुभ शकुन बायीं ओर होने पर शुभ तथा शुभ शकुन दायीं ओर होने

पर शुभ होते हैं। तद्विपरित व्यवस्था विरोधार्थक की द्योतक है।

“एते दुःशकुना वामे कृताश्चेच्छकुनोत्तरम् ।  
अदुष्टा एव ते ज्ञेयाः शकुना दक्षिणे शुभाः ॥”

— मुहूर्तगणपति।

(10) झगड़ालु, रोगी, कलह प्रिय, शिकारी, नदी में उतरे हुए तथा उन्मत्त व्यक्तियों के लिए शकुन अनावश्यक है—

“द्वन्द्वरोगर्दितस्तत्र कलहामिषकांक्षिणः ।  
आपगान्तरिता मत्ता न ग्राह्यः शकुनाः क्वचित् ॥”

— पीयूष धारा ।

### दुःशकुन परिहार

यद्यपि अपशकुन की उपलब्धि में यात्रा ही बिवर्णनीय है तथापि आवश्यकता में आचार्यगणों ने स्वस्वमतानुसार दुष्टशकुनों के परिहार निर्दिष्ट किये हैं—

(1) प्रथम बार विरुद्ध शकुन हो जाने पर 44 प्राण (प्रायः 44 सैकण्ड) पर्यन्त ठहरकर पुनः शकुन की प्रतीक्षा करे ।

दूसरी बार भी विपरीत शकुन प्राप्त हो तो 16 श्वास (1 मिनट 4 सैकण्ड) तक ठहरकर अनुकूल शकुन मिलने पर यात्रारंभ करे । यदि द्वितीय प्रयत्न भी निष्फल हो तो प्रयाण स्थगित कर देना चाहिये

“आद्येऽपशकुने स्थित्वा प्राणानेकादशव्रजेत् ।  
द्वितीये षोडशप्राणीस्तृतीये न क्वचिद् व्रजेत् ॥”

— मुदुर्तचिन्तामणी

(2) “विरुद्धे शकुने पूर्वे प्राणायामाष्टकं चरेत् ।

द्वितीये द्विगुणान्कुर्यात् तृतीये न व्रिजेत् क्वचित् ॥”

ज्योतिनिबन्ध के प्रस्तुत अभिधानानुसार प्रथम अपशकुन होने पर यियासु आठ बार प्राणायाम करके पुनः शकुन के लिए चेष्टा करे । द्वितीयावृत्ति में भी अपशकुन ही प्रतियपन्न हो तो 16 बार प्राणायाम करके शोभनीय शकुनाप्ति में प्रयाण करे । तीसरी बार विलोम शकुन प्राप्त हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिये ।

(3) मतान्तरेण, प्रथमावृति में दुःशकुन की उपलब्धि में यात्रोदयत व्यक्ति घर

लौटकर हाथ पैर का प्रक्षालन करके तीन बार आचमन करे और पुनः शकुन के लिए चेष्टा करे।

‘जाते विरुद्धे शकुनेऽध्वनीनो निवृत्य कृत्वा करपादशौचम् ।  
आचम्य च क्षीरतरोधस्तातिष्ठन्प्रपश्येच्छकुनान्तराणि ॥’

—(वसन्तराज)

(4) प्रथम अपशकुन में तीन प्राणायाम, द्वितीयावृत्ति में छः तथा तृतीयावृत्ति, में अशुभ उर्ध्न हो तो एक दिन के अनन्तर उपयुक्त शान्ति विधान आचरण करके प्रयाण करे।

‘यायी विरुद्धशकुनमादी दृष्ट्वा प्रयत्नतः ।  
प्राणायामत्रयं कुर्याद् द्वितीये द्विगुणं चरेत् ॥’  
तृतीये पुनरावृत्य शान्त्या यायाद्विनान्तरे ।

—कश्यपर्षि।

(5) पहली बार विरुद्ध शकुन की स्थिति में कुछ समय इष्ट देव का स्मरण करे। दूसरी बार भी पूर्ववत् शकुन हो तो सुलभ उपचारों से विप्राभिनन्दन करके उनसे स्वरित-प्रार्थना करे। परन्तु तीसरी बार अपशकुनकी संवृत्ति में यात्रा नहीं करनी चाहिये।

‘आदौ विरुद्धशकुने दृष्ट्वा यायीष्टदेवताम् ।  
स्मृत्वा द्वितीये विप्राणां कृत्वा पूजां निवर्त्येत् ॥’

—नारदपुराण।

(6) दुःशकुन की तृतीयावृत्ति में भी यदि गमन अनिवार्य हो तो घृत व सुवर्ण का किसी वेद-वेदांग निष्णात विप्र तो दान देकर यात्रा करे—

‘आये दुःशकुने निवृत्य च शुचिर्भूत्वाष्टथाऽस्यायम् ।  
कृत्वां याय्यपरेऽष्टवारमपरे दत्वा सूवर्णं ब्रजेत् ॥’

मुहूर्त मार्त्तण्ड।

(7) वाराणसी के दक्षिण भाग की ओर रहने वाले ‘कुकुट’ नामक ब्राह्मण का स्मरण करने से दुःशकुन, शुभ शकुन मे परिणत हो जाते हैं—

‘वाराणस्यां दक्षिणे भागे कुकुटो नाम वै द्विजः ।  
तस्य स्मरणात्रेण दुःशकुनः शकुनो भवेत् ॥’

ज्योतिनिवन्ध

(8) महादेव की अर्चना तथा प्रदक्षिणा (अर्द्ध) करके दुःशकुन में भी जानेवाला अर्भाष्ट सिद्धि प्राप्त करता है।

‘अपि प्रहीणस्य समस्तलक्षणैः क्रियाविहीनस्य निकृष्ट जन्मनः ।  
प्रदक्षिणीकृत्य शशांकशेखरं प्रयास्यतः कस्य न सिद्धिरिष्यते ॥’

(बृहदयात्रा)

(1) स्नान, दान, जप, एवं पुण्य का आचरण करने से अशुभ शकुन भी निष्प्रभाव हो जाते हैं—

‘दुःस्वप्नदुर्निमित्तापशकुना विलयं ययुः ।  
स्नानदानजपै पुण्यैरित्याह भगवान्भृगुः ॥’

ज्योतिर्निवन्ध

यात्रा में त्याज्य दोष

(1) सूर्य—चन्द्र का अयनदोष; ग्रीष्म वर्षा और शरद् ऋतुः; क्षयाधिमास स्वराशि का घातक मास; कर्क, वृश्चिक और मीनस्थ सूर्य; चातुर्मास्य और होलान्त पक्ष में प्रयाण नहीं करना—चाहिये।

(2) कृष्णानंग चतुर्दिन, यमद्वितीया, चतुर्थी, षष्ठी, नवमी, द्वादशी, चतुर्दशी, घात, तिथि क्षयार्द्धि तिथि तथा—दिक्शुल में यात्रा विवर्ज्य है।

(3) रवि, सोम, मंगल और शनिवार; निर्बल वक्री या अस्तंगत ग्रह का बार, घात बार, गन्तव्य, दिशा से पृष्ठवत्तिनी दिशापति के बार—शूल में यात्रा न करें।

(4) यात्रा में पूर्वोक्त नेष्ट नक्षत्र, मध्य, स्वाती; ग्रहादि पापयुक्त, रवि भुक्त भोग्य तथा अन्यान्य उत्पातों से दूषित नक्षत्र, घनिष्ठादि पंचक, घातक्ष, नक्षत्र जनित दिक्शुल, मृतपक्ष के नक्षत्र, कालशूल व कुलाकुल नक्षत्र, परिद्युदंड दोष, त्रिशुल यंत्र दोष त्याज्य है।

(5) विष्कंभ एव आनन्दादि के अशुभ नित्य-योग, घात योग, शनिवार व रोहिणी नक्षत्र से उद्गत सिद्धि-योग एवं भ्रमण—महाडल योगो में कृता यात्रा अनिष्टप्रद होती है।

(6) महापात व विष्टि करण में यात्रा कदापि न करे।

(7) निर्बल व पृष्ठ व्यतिरित सूर्य, पीठ का, वामगत व बलहीन चन्द्र, समुख बुधशुक्रादि दोष, वक्री तथा अस्तंगत शुक्र, विविध प्रणालियों से विचार्य राहुदोष

तथा सूर्यादिग्रात् ग्रहों की स्थिति में यात्रा विलोभ फलदा होती है।

(8) योगिनी दोष, काल-पाश, समय निर्बलत्व, अभिजिम्मुहूर्त में दक्षिण की यात्रा तथा कालविशेष में निषिद्ध-दिग्यात्रा सर्वथा त्याज्य है।

(9) अशुभ राशि लग्न, लग्नकुण्डली के ग्रहस्थानजन्य दोष, लालाटिक योग तथा अन्य अशुभ योगों का यात्रा में त्याग ही श्रेयस्कर हैं।

(10) अपनी स्त्री, साथु, ब्रात्मण या किसी भी व्यक्ति का मान भंग या घर में कलह करके की हुई यात्रा दुष्ट फल देती है।

(11) यात्रारंभ के दिन से सात अन्यथा (असामर्थ्य की स्थिति में) एक दिन पूर्व से स्त्री सम्भोग का त्याग करें तथा यात्रा के दिन त्याज्य वस्तुओं का उपयोग नहीं करना चाहिये।

(12) यात्रा के पूर्व दिन अशुभ स्वप्न तथा यात्रारंभ के समय विपरीत शकुन के दर्शन होने पर यात्रा नहीं करे।

(13) अपनी पत्नी के रजस्वला होने पर, माता के द्वारा निषेध करने पर तथा अकाल वृष्टि, व मृताशौचादि होने पर यात्रा नहीं करे।

(14) होली, दिवाली, रक्षाबंधनादि त्यौहार अपने पुत्र-पुत्री अथवा किसी निकटस्थ सम्बन्धों के अन्न प्राशन, यज्ञोपवित एवं विवाहादि विशेष आयोजनों की निष्पत्ति के पूर्व ही यात्रा करना निषिद्ध है।

(15) चौर बाण में तथा उल्कापात, भूकम्प, अकाल-गर्जन, वज्रपात, धूमकेतु के उदय, ग्रहण तथा अन्य किसी उत्पात के पश्चात् एक सप्ताह पर्यन्त यात्रा का परित्याग करें। (मुहूर्त- पारिजात)

### प्रकाश धाराओं से युक्त मछली

फोटोस्टोमियास ग्यूरनी नामक मछली के शरीर में प्रकाश देने वाले बिन्दुओं की दो लम्बी कतारें होती हैं, जिनसे समुद्र की गहराईयों में भी उसका मार्ग प्रकाशित होता है।

### 5 सूर्यों का देश

सिंग-नाइंग-चू (चीन) के निकट प्रातः कालीन कुहरे के कारण उत्पन्न दृष्टिभ्रम से आकाश में 5 सूर्य दिखाई देते हैं।

### वर्षा का भविष्य-फल-विज्ञान

‘जल विहीने सृष्टि नाश जल बहुले सृष्टि नाश’ अर्थात् जल के अभाव से सृष्टि का नाश होता है और जल की अधिकता से भी सृष्टि का नाश होता है क्योंकि जीव जगत् के लिए वायु के बाद जल की आवश्यकता सर्वोपरि है। वनस्पति से लेकर कीट, पतंग, पशु, पक्षी व मनुष्य तक जल के बिना जीवित नहीं रह सकते हैं। इसलिए जल को जीवन भी कहा गया है। पिण्ड से लेकर ब्रह्माण्ड (पृथ्वी) तक के तत्व की उपस्थिति तथा अनुपात की समानता प्रायः एक समान है। यथा शरीर में प्रायः दो तिहाई (2/3) जल है तो पृथ्वी में भी दो तिहाई (2/3) जल है। वनस्पति पृथ्वी से ओर वातावरण से जल को ग्रहण करके स्वयं भोजन बनाती है, पोषित होती है, वृद्धि को प्राप्त होती है, पत्ते, फल, फूल को धारण करती है। इसी से अर्थात् वनस्पति से अन्य पशु, पक्षी व मनुष्य स्व-स्व योग्य भोजन प्राप्त करते हैं इतना ही नहीं वनस्पति अंगार-विश्लेषण के द्वारा प्राणवायु (ऑक्सीजन) को त्याग करती है जिससे मनुष्य, पशु, पक्षी जीवित रहते हैं। इतना ही नहीं वनस्पति से लकड़ी, औषधि, ईधन, तेल, छाया, वस्त्र की सामग्री आदि प्राप्त होती है। इन सभी उपलब्धियों के पीछे जल का योगदान महत्वपूर्ण है। वनस्पति से पर्यावरण में शुद्धता रहती है, तापमान नियन्त्रित रहता है, वर्षा समुचित समय पर होती है। यह प्राकृतिक व्यवस्था, क्रिया-प्रतिक्रिया, परस्पर सहकारिता रूप से चलती रहती है। पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि पानी से अपनी ध्यास बुझाते हैं। इतना ही नहीं अनेक पशु, पक्षी शरीर की स्वच्छता के लिए एवं गर्भी से स्वयं की रक्षा के लिए जल से स्नान करते हैं। मछली, मगरमच्छ, कछुआ, मेंढक आदि अनेक जलचर जीव तो जल में ही निवास करते हैं। जीव वैज्ञानिक डार्विन के अनुसार जीव सृष्टि का आरम्भ तो जल में ही हुआ है। मनुष्य ध्यास बुझाने के लिए, भोजन पकाने के लिए, शुद्धता के लिए और अनेक उपकरण बनाने के लिए जल के ऊपर निर्भर है। जल के बिना जीव जगत् की सम्भावना ही सन्देहास्पद है। इसलिए जल के लिए वर्षा की आवश्यकता कर्मभूमि के प्रारम्भ से ही महत्वपूर्ण

रही है। कर्मभूमि का प्रारम्भ वर्षा से और वर्षा से कृषि हुई है, कृषि के बाद ऋषि परम्परा प्रारम्भ हुई, ऋषि से आध्यात्म, ज्ञान विज्ञान, सभ्यता, संस्कृति, कला, शिक्षा प्रारम्भ हुई है। इसी प्रकार वर्षा से कृषि, कृषि से ऋषि और ऋषि से प्रगति हुई। इसीलिए वर्षा का सही—सही ज्ञान पूर्वानुमान करने के लिए मानव पहले से ही प्रयत्नशील रहा है और अभी भी है। यथा—

**कृषिदृष्टि विना नैव कदाचिदपिनो भवेद् ।**

**तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पूर्वं वृष्टिं परीक्षयेत् ॥**

परन्तु जिस खेती के द्वारा राजा तथा प्रजा का पालन होता है वह बिना वर्षा के कदापि नहीं हो सकती; अतः वर्षाकाल में खेती के उपयोगी वर्षा होगी या नहीं यह बात पहिले ही से जानने का पूरा यत्न करने की परम आवश्यकता है।

वर्षा एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। भू-पृष्ठ के जलाशयों से सूर्य-किरण आदि के प्रभाव से जल बाष्प रूप में परिवर्तित होता है। वही बाष्प विभिन्न भौतिक, रासायनिक प्रक्रियाओं से बादल रूप में परिवर्तित होता है। वही बादल, ताप, चाप, आर्द्रता, धात, प्रतिधात के कारण वर्षा रूप में धरती पर गिरता है। यह भौतिक, रासायनिक प्रक्रिया, प्राकृतिक होने के कारण प्रकृति के अंगभूत है। इसलिए वर्षा का अध्ययन व पूर्वानुमान प्रकृति के अध्ययन के फलस्वरूप होता है। इसलिए वर्षा ज्ञान के लिए प्रकृति के अवयव स्वरूप पृथ्वी, ग्रह, नक्षत्र, जल, वायु, वनस्पति, पशु, पक्षी, बादल, बिजली का परिज्ञान किया जाता है। पहले मनुष्य अधिक प्रकृति के नजदीक रहता था। इसलिए वह प्राकृतिक घटकों से वर्षा का अध्ययन करता था जो कि वर्तमान वैज्ञानिक यान्त्रिक पूर्वानुमान से कुछ अधिक सत्य होता था। वैज्ञानिक न्यूटन के क्रिया—प्रतिक्रिया नियम के आधार पर प्राकृतिक या वैज्ञानिक पद्धति से वर्षाका परिज्ञान किया जाता है। दोनों पद्धति स्व-स्व क्षेत्र में सही हैं। वैज्ञानिक भी विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों से प्रकृति का ही अध्ययन करके वर्षा का परिज्ञान करते हैं, तो प्राचीन ज्ञानी, महर्षि, ऋषि प्राकृतिक घटकों से प्रकृति का अध्ययन करके वर्षा ज्ञान करते थे।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक न्यूटन का गति सिद्धान्त विषयक एक सिद्धान्त है, उस सिद्धान्त में उन्होंने प्रतिपादित किया है कि—

"According to Newton's first law of motion a body at rest

will remain at rest and a body moving with uniform velocity in a straight line will continue to do so unless an external force is applied to it."

एक द्रव्य जो विराम अवस्था में है तथा विराम अवस्था में रहेगा तथा एक द्रव्य जो सीधी रेखा में गतिशील है व गति शील ही रहेगा, जब तक उस द्रव्य की अवस्था में परिवर्तन करने के लिए कोई बाह्य बल न लगाया जावे।

एक द्रव्य तब तक स्थिर रहता है, जब तक बाह्य शक्ति का प्रयोग उसको गतिशील करने के लिए नहीं होता तथा एक द्रव्य अविराम गति से एक सीधी रेखा में चलता रहता है जब तक कि उस पर किसी बाह्य शक्ति का प्रभाव नहीं पड़ता है।

न्यूटन के अन्य सिद्धान्त के अनुसार—

Every action have reaction.

अर्थात् प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया होती है। उपर्युक्त सिद्धान्त के अनुसार विश्व में अनेक भौतिक व रासायनिक क्रियाएँ होती हैं। इसके कारण ही वैज्ञानिक यंत्रों में पारा का ऊपर चढ़ना, नीचे उतरना, स्थिर होनादि क्रियायें तथा पशु, पक्ष, कीट, पतंग, मनुष्य, बादल, वायु आदि में भी स्व योग्य क्रियायें होती हैं। मैंने अनेक बार अनुभव करके पाया कि जब चिटियाँ अण्डा लेकर चलती हैं, हठात् अत्यधिक तापमान बढ़ जाता है, चन्द्र मण्डल में चन्द्र के पास तारा होता है, गर्मी से अत्यधिक बैचेनी होती है अधिक कीट-पतंग विचरण करने लगते हैं तब शीघ्र वर्षा होती है। जिस वर्ष अधिक आम आते हैं उस वर्ष अधिक वर्षा होती है और कम आम आने से कम वर्षा होती है।

**वर्षा जानने की विधि**

हस्ती समुद्रादादाय करेण जलमीप्सिनम् ।

दद्यादूधनाय तद्द्यादातेन प्रेरितो घनः ॥1 3॥

स्थाने स्थाने पृथिव्याज्व काले काले यथोचितम् ।

तत्सर्व परिज्ञानार्थ निमित्तं मुख्यकारणम् ॥1 4॥

सूर्य अपनी किरणों द्वारा समूद्र में से जल को ऊपर खींच कर बादलों को देता है (अर्थात् सूर्य की गरमी से जल के परमाणु सूक्ष्म होकर ऊचे जाते हैं उनके

साथ वायु के परमाणु मिलकर बादल बन जाते हैं। फिर वे बादल वायु के सहारे से जिस जिस देश में तथा जिस जिस काल में जितना-जितना जल वर्षना हो उतना- उतना वहाँ- वहाँ वर्षते हैं। इन सब बातों को जानने के लिए निमित्त ही मुख्य कारण है।

**भौमान्तरिक्षदिव्याणि निमित्तं त्रिविधं स्मृतम् ।  
विस्तरेण प्रवक्ष्यामि फलं तेषां पृथक् पृथक् ॥१५॥**

निमित्त तीन प्रकार के हैं, एक भौम, दूसरा आन्तरिक्ष, और तीसरा दिव्य। इन तीनों का पृथक् - पृथक् फल विस्तार से कहता हूँ, क्योंकि—  
**प्रकृते: स्वानुकूले चेत्सुवृष्टिः क्षेमकृत्सदा ।  
प्रकृतेश्वान्यथा भावे उत्पातः स्यादनेकधा ॥१६॥**

ये ही तीनों निमित्त जिस देश में अपने—अपने स्वभावानकूल रहते हैं तब तो उस देश में सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम, कल्याण और आरोग्य आदि से राजा तथा प्रजा की वृद्धि होती है और जो इनमें किसी पदार्थ का प्रकृति भाव बदलकर विकृतिभाव हो जाता है तब वहाँ अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, युद्ध और महामारी आदि उत्पातों से राजा तथा प्रजा का नाश होता है।

**भौम (भूमि) के निमित्त से वर्षा ज्ञान  
भूमावुत्पत्यते यच्च स्थावरं वाऽथ जङ्गमम् ।  
तदेक दैशिकं भौमनिमित्तं परिकीर्तितम् ॥२१॥**

पृथिवी पर उत्पन्न होने वाले वृक्ष गुल्म लतादि स्थिर तथा मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट आदि चर प्राणि भूमि के निमित्त हैं।

**देश प्रकरण**

**अनूपो जङ्गलो मिश्रस्त्रिधा देशो बुधैर्मतः ।  
तत्तत्स्वभावं विज्ञाय जलवृष्टिं निवेदयेत् ॥२२॥**

वर्षा जानने वाले विद्वानों ने देश के तीन भेद कहे हैं— (1) अनूप (2) जांगल और (3) मिश्र। इनके पृथक्-पृथक् स्वभावों को जानकर वर्षा बतलानी चाहिये, क्योंकि न्यूनाधिक वर्षा होने में देश ही प्रथम कारण है।

**नदी पल्लशैलाद्यः मृदुवाता तपान्वितः ।  
अनेकवनशस्याद्यः सोऽनूपो देश उच्यते ॥२३॥**

जिस प्रदेश में नदी, तालाब, पर्वत, वृक्ष, शीतल वायु, बहुत से वन और हरी-हरी खेतियाँ अधिक हों उसको अनूप देश कहते हैं, जैसे मालवा, गुजरात, कोंकन आदि।

**स्वल्पोदक तृणो यस्तु प्रवातः प्रचुरा तपः ।  
सज्जयो जङ्गलो देशो बहुधान्यादिसंयुतः ॥२४॥**

जिस प्रदेश में जल तथा घास की कमी हो और वायु तथा धूप की अधिकता हो तथा न्याय, वाजरा आदि धान्य अधिक पैदा होते हों उसको जांगल देश कहते हैं, जैसे मारवाड़, सिंधु, कच्छ आदि।

**संसृष्टलक्षणो यस्तु देशः साधारणो मतः ।  
समा साधारणे यस्माच्छतिवर्षोष्णमारुतः ॥२५॥**

जिस प्रदेश में अनूप और जांगल दोनों के लक्षण मिलते हों उसको मिश्र देश कहते हैं, जैसे मेवाड़, ढूँड़ाड़ हाड़ीती आदि।

**तश्च साधारणाद्विधाऽनूपजाङ्गलयोः परम् ।  
यत्र यस्य गुणाधिक्यं तत्र तस्य गुणं भजेत् ॥२६॥**

परन्तु मिश्र के दो भेद हैं, एक अनूप मिश्र और दूसरा जांगल मिश्र। जिस देश में अनूप के लक्षण अधिक मिलते हों वह अनूप मिश्र और जांगल के लक्षण अधिक मिलते हों वह जांगल मिश्र जानना, क्योंकि जिसके लक्षण अधिक मिलते हों उसमें उसी का विशेष स्वभाव रहता है।

**अनूपे भूयसी वृष्टिः स्वल्पा वृष्टिस्तु जङ्गले ।  
मध्यमा मिश्रदेशे तु स्वभावेश्च प्रजायते ॥२७॥**

अनूप देशों में अधिक वर्षा, जांगल देशों में कम वर्षा और मिश्र देशों में साधारण वर्षा स्वभाव से ही हुआ करती है।

**तस्मान्मालवदेशादौ समानेऽपि ग्रहोदये ।  
वृष्टिःस्योदेव नियता कालात्क्षेत्रे बलिष्ठता ॥२८॥**

इसीलिए मालवा आदि अनूप देशों में यदि कम वर्षा करने वाले अशुभ ग्रहों का योग हो तथापि उन देशों में वर्षा कम नहीं होती, क्योंकि उन देशों में स्वभाव ही से वर्षा अधिक हुआ करती है।

तदा दुष्टग्रहादीनां योगे दुर्भक्षता नहि ।  
किन्तु विग्रहमार्यादि तत्कृतं वैकृतं भवेत् ॥२९॥

यदि अनूप देशों में कम वर्षा करने वाले दुष्ट ग्रहों का योग भी आ जाय तो भी वहाँ दुर्भक्ष नहीं पड़ता किन्तु युद्ध महामारी आदि कोई अन्य उपद्रव हो जाता है।

एवं मरुस्थलादौ स्याद्यादाशुभ ग्रहोदयः ।  
तथाप्यवग्रहोवृष्टिर्वच्यः स्वल्पोऽपिधीमता ॥३०॥

इसी प्रकार मारवाड़ आदि जांगल देशों में यदि अधिक वर्षा करने वाले शुभ ग्रहों का योग भी आजाय तो भी वहाँ अधिक वर्षा नहीं होती क्योंकि उन देशों में स्वभाव ही से वर्षा कम हुआ करती है।

### वैज्ञानिक अनुसन्धान

वर्षा के अनेक कारणों में से भूमि या देश भी एक कारण है। यहाँ पर भूमि का अर्थ है— पृथ्वी पृष्ठ पर रहने वाले जलाशय, पर्वत, वृक्ष, बन, जंगल, नदी, उपजाऊ समतल जमीन, बंजर भूमि, रेतीली भूमि आदि। जहाँ पर अधिक जलाशय, बन, जंगल आदि हो, वहाँ अधिक वर्षा होती है क्योंकि जलाशय आदि से बाष्पीकरण ज्यादा होता है और प्रत्यावर्तन किया से वर्षा भी अधिक होती है। जैसे कि भारत की चेरापुंजी में। क्योंकि चेरापुंजी हिमालय में अवरिथत होने के कारण वह भाग जंगल, पर्वत से युक्त है जिसके कारम ऊपर जाने वाले बादल बनस्पति के कारण उत्पन्न आद्रता से घनीभूत होकर नीचे उतरता है और पर्वत श्रृंखला से टकराकर प्रचुर वर्षा करता है। वहाँ प्रायः एक वर्ष में ओसतन ६० इंच वर्षा होती है। यह भू-भाग वर्षा का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। इसके विपरीत जहाँ पर वृक्ष, पर्वत, जलाशय आदि नहीं हो वहाँ पर सबसे कम वर्षा होती है, वृक्ष नहीं होने के कारण आद्रता कम होती है, पर्वत नहीं होने के कारण बादल आकाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर उड़ते हैं परन्तु टकराकर वर्षा नहीं करते। यथा राजस्थान की थार मरुभूमि, आफ्रिका की सहारा मरुभूमि आदि। यह सूक्ष्म व्यापक वैज्ञानिक कारण को भारतीय लोग पहले से जानते थे इसीलिए वृक्षरोपण करते थे, वृक्ष को नहीं काटते थे। परन्तु मध्यकाल में प्राचीन वैज्ञानिक कारण के अभाव से एवं आधुनिक वैज्ञानिक कारण के अभाव से भारतीय लोग

यहाँ तक कि भारत की सरकार भी वृक्षों की अन्धाधुन्ध कटाई करवा दी। जिसके कारण पर्यावरण सन्तुलन बिगड़ गया, तापमान बढ़ गया और कहीं अधिक तो कहीं कम वर्षा होने लगी। परन्तु वर्तमान वृक्ष की कटाई के दुष्परिणामों से व्रस्त होकर पुनः वृक्ष की कटाई के दुष्परिणाम से व्रस्त होकर पुनः वृक्ष रोपण होने लगा। अभी तो नारा भी देने लगे— ‘वृक्ष रोपण गंगा अवतरण’ अर्थात् वृक्षरोपण से धरती पर पानी का अवतरण करो। वर्षा के लिए उपर्युक्त सर्वश्रेष्ठ भू-भाग एवं निकृष्ट भू-भाग के मध्य में अनेक प्रकार के मध्यम प्रकार के भू-भाग होते हैं। जहाँ वर्षा के लिए अनुकूल भू-भाग होता है वहाँ वर्षा अधिक होती है और जहाँ पर प्रतिकूल भू-भाग होता है वहाँ वर्षा कम होती है और मध्यम भू-भाग होत है वहाँ मध्यम वर्षार्था होती है।

### वृक्ष से वर्षा ज्ञान

माघ फाल्गुन अरु चैत्र में विरच्छाँ झैड़े न पान ।  
गायां तरसै धास विन नर तरसै विन धान ॥३१॥

माघ, फाल्गुन और चैत्र के महीनों में यदि वृक्षों के पुराने पत्ते न गिर जावे तो गायें तो धास के लिए और मनुष्य धान्य के लिये तरसे ऐसा दुर्भिक्ष पड़े।

पात झैड़े भूपर पड़े नगन वृक्ष हो जाय ।  
तो निश्चयकर जानियै सही जमानो थाय ॥३२॥

यदि इन तीन महीनों में वृक्षों के पुराने पत्ते सब गिर पड़े तो निश्चय ही सुभिक्ष होने योग्य उत्तम वर्षा होवे।

जो वसन्त फूलै नहीं फलै नहीं वरनाय ।  
रथ्यत दुखी राजा दुखी दुखिया गोधा गाय ॥३३॥

यदि चैत्र वैशाख में वनस्पति के फल फूल न लगें तो राजा प्रजा तथा गवादि पशु दुःखी हो जावे— ऐसा दुर्भिक्ष पड़े।

मधू मास वैशाख में सब फूलै वन राय ।  
रथ्यत सुखी राजा सुखी सुखिया गोधा गाय ॥३४॥

यदि चैत्र वैशाख में जंगल की सब वनस्पतियां फूले फलें तो राजा प्रजा तथा गवादि पशु सुखी हो जावे— ऐसा सुभिक्ष होवें।

अर्ध वृक्ष फूलै फलै आधो अफल रहाय ।  
तो जाणीजे माघजी वर्ष करवरो याय ॥३५॥

यदि आधे वृक्ष के फल फूल लगें और आधे के नहीं लगे तो साधारण संवत् होवे ।

फूल मारतो करवरो फल सूखां कण हाण ।  
भेद बताऊँ माघजी वृक्षां यह सहि धाण ॥36॥

यदि वृक्षों के फूल कम लगें तो संवत् मध्यम होवे और जो फल लग कर वृक्षों के ऊपर ही सूख जावें तो धान्य कुछ भी पैदा नहीं होवे ।

विरचां लम्बी कूंपला, जो फल फूल न होय ।  
घास घणा सुण माघजी अन्न न निपज्जे कोय ॥37॥

यदि वृक्षों के नये पत्तों की कोपलें तो लम्बी निकलें परन्तु फल फूल कुछ भी नहीं लगें तो घास तो बहुत होवे किन्तु धान्य बिलकुल नहीं होवे ।

फूलझड़ै वन रायके अफल्या वृक्ष रहाय ।  
झोलो लागे साख में अन्न महंगा थाय ॥38॥

यदि वृक्षों के फूल लगकर गिर पड़ें और फल न लगें तो खेतियों को हानि पहुंचे और धान्य महंगा होवे ।

पत्रन में जालो पड़े फल फूलन मे कीट ।  
झोलो लागे साख में समयो जासी सीट ॥39॥

यदि वृक्षों के पत्तों में जाले पड़े जावें तथा फल फूलों में कीटे पड़े जावें तो भी खेतियों को हानि पहुंचे और संवत् नष्ट होवे ।

जो वृक्षों के सूखी लाख। रोली पील्यो विगड़ै साख ।  
लच पच गूंद लाख रस चुवै । आफू तेल घृत गुड़ हुवै ॥40॥

यदि लाख, गूंद, गूगल आदि वृक्षों का रस वृक्षों पर ही सूख जाय तो रोली पीलीया आदि रोगों से खेतियों का नाश होवे और जो वृक्षों पर नहीं सूखे वरन् उनमें बहुत रस होवे तो अफीम, तेल घृत गुड़ादि रसों की बहुत वृद्धि होवे ।

अपने अपने देश में देख आम फल फूल  
जा दिशि डार सु निर्फली वा दिशि मेह न मूल ॥41॥

आम के वृक्षों में जिस दिशा की ओर की शाखा में फल फूल न लगें उस ओर की दिशा में पानी नहीं बरसे, और जिस ओर को लगें उस दिशा में बरसे ।

आम आमलो सुरजणो मोरसरी झड़जाय ।  
ऊनाली झोलो लगे कातिक साख न थाय ॥42॥

यदि आम, आमले, सुरजणे और मोरसरी के वृक्षों के फूल ही गिर पड़ें जिससे

फल न लगे तो रबी (गेहूं चने आदि) की फसलों को हानि पहुंचे और खरीफ (ज्यार, बाजरा आदि) की फसल पैदा ही नहीं होवे ।

नीमां अधर निमोली सूकै । काल पड़े पर घू नहिं चूकै ।

आधो पकियो आधो सूखै । कैठैक निपजै कैठैक झूलै ॥43॥

यदि नीम की निमोलियें पक कर नीचे न गिरे किन्तु वृक्षों पर ही सूख जावें तो उस देश में निश्चय ही दुर्भिक्ष पड़े । और जो कुछ निमोलिये तो पकें और कुछ ऊपर ही सूखें तो धान्य कहीं पैदा हो और कहीं न हो ऐसा संवत् होवे ।

चन बेरी अरु खेजरी सकल पात झड़ जाय ।

शुभ आरख आषाढ़ यह समो सरस निपजाय ॥44॥

आषाढ़ में यदि छोटे बेर तथा खेजड़ी के वृक्षों के सम्पूर्ण पत्ते गिर पड़ें तो उत्तम सुभिक्ष होने योग्य अच्छी वर्षा होवे ।

चन बेरी अरु खेजरी अर्धपात झड़जाय ।

अर्धपात सावित रहै करसन समो कहया ॥45॥

यदि छोटे बेर तथा खेजड़ी के वृक्षों के आधे पत्ते गिर पड़े और आधे पत्ते वृक्षों पर ही लगे रहें तो आधा संवत् होवे ।

चन बेरी फूलै फलै यौ खेजड़ डरहाट ।

नहीं अंकुरै बड़ जटन है दुर्भिक्ष हरराट ॥46॥

यदि छोटे बेर तथा खेजड़ी के वृक्षों के सब पत्ते हरे हो जावें तथा फल फूल लगें और बड़ वृक्ष की जटाओं के नवीन अंकुर न निकलें तो वर्षा बिलकुल न होवे जिससे बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़े ।

ऊंटकटालो रींगणी संखावल्ली फूलै ।

माय विसारै डीकरा गाय बाछड़ा भूलै ॥7॥

वर्षाकाल में यदि ऊंट कटाला, कटेली तथा संखावली के फूल लगें तो माता तो अपने पुत्रों को और गाय अपने बछड़ों को भूल जावे ऐसा दुर्भिक्ष पड़े ।

भू पसरी बूंटी फल फूल । पाकै अर्क उड़वै तूल ।

निपजै अड़क धात कहुं तोय । चवला चिणा मोट तिल होय ॥48॥

उपरोक्त तीनों के अतिरिक्त पृथ्वी पर फैलने वाली वृष्टियें फूलें फलें तथा आक की डोडियें पक कर उनमें की रुई वायु में उड़ने लगे तो चबले चने मोठ तिल तथा जंगली धान्य ही पैदावारी अच्छी होवे ।

फोगा निपजै बाजरो सांगर मोठ सवाय ।

बांवल चंवला नीम तिल बड़ा ज्वार कैवाय ॥४९॥

यदि फोग का वृक्ष फले तो बाजरा, खेजड़ी फले तो मोठ, बंबूल फले तो चबला, नीम फले तो तिल, और बड़ फले तो ज्वार पैदा होवे ।

कहै कोगासी माघजी पीपल फलियो जोय ।

मोठ बाजरा थोड़ा होसी अड़क नाज कछु होय ॥५०॥

यदि पीपल फले तो मोठ तथा बाजरा तो कम पैदा होवे किन्तु जंगली धान्य अधिक पैदा होवे ।

पतझड़ फले पलाश निज सांतुं अन्न नीपजै ।

कैरांहिं धणो कपास कूरी मंडवो कांगणी ॥५१॥

यदि पलाश वृक्ष के सब पत्ते गिर जावें और बिना पत्तों ही के सम्पूर्ण वृक्ष के फल फूल लगें तो सातों ही धान्य पैदा होवें । और कैर के फलने से कपास तथा कूरी मंडवा कांगणी आदि धान्य पैदा होवें ।

निर्मल वीज पलाश का तो अन्न निर्मल होय ।

कीड़ो लागो डाढ़को थोथै थोतो जोय ॥५२॥

पलाश के बीज यदि स्वच्छ हों तो अन्न भी स्वच्छ पैदा होवे और जो उनको कीड़े लगें तो अन्न को भी कीड़े लगें जिससे हानि होवे ।

नीची नेपे गलित सब निपजे साकर साल ।

भये किरात निःशंक यो गेहूं चने संभाल ॥५३॥

यदि ईख तथा चावल अधिक पैदा होवे तो गेहूं तथा चने भी अधिक पैदा होवें ।

यों सालर समसत फले निपजे सातों तूर ।

भील भाव यह निखर के भये मग्न भर्पूर ॥५४॥

ऐसे ही सालर सम्पूर्ण फलें तो सातों धान्य पैदा होवे— अर्थात् दोनों ऋतुओं की खेतियों के उपयोगी वर्षा होवे ।

आकन घोड़े सब्ज अति विच्छु थलन अपार ।

अनपढ़िये इन आखरन नेपे कहै जवार ॥५५॥

यदि आक के वृक्षों पर हरे रंग की टीटी जैसे पक्षी अधिक होवें वा भूमि पर बिच्छु अधिक, होवें तो ज्वार बहुत पैदा होवे ।

आकां गेहूं नीम तिल अरजे अरस सवाय ।

आमां आफू नीपजे गूलर सूं गुड थाय ॥५६॥

यदि आक फले तो गेहूं, नीम फले तो तिल, अरज फले तो अरस आम फले तो अफीम, और गूलर फले तो गुड पैदा होवे ।

कैर, कैरुंदा गूंदा पाकै। दुनिया सरस धऊं रस चाहै ।

पाकै जांबू आम खजूर माघा निपजै सातूं तूर ॥५७॥

कैर, कैरुंदे और गूंदे पके तो छाँओं रसों की वृद्धि होवे तथा जामुन, आम और खजूर पके तो सातों ही धान्य पैदा होवें ।

कैर बोर पीलू पकै नीम आम पर जाय ।

दूध दही रस कस धणा कार्तिक साख सवाय ॥५८॥

कैर, बेरं, पीलू, नीम और आम पके तो दूध दहीं आदि रस कस की वृद्धि होवे तथा खरीफ (श्रावण) साख भी अच्छी पैदा होवे ।

पाकै गुडा नीम का आमां टवकै साख ।

पाकै जांबू आमली पाकै दाढ़म दाख ॥५९॥

फल पाकै नीचे झड़े रस सूखै नहिं मास ।

अन्न निवजै सुण माघ जी भरसी खाई खास ॥६०॥

यदि निमोली, आम, जामुन, इमली, अनार ओर दाख पककर रस भरे हुये भूमि पर गिरने लगें तो अन्न इतना अधिक निपजे कि खाइयां भरी जावें ।

वृक्षन फल विपरीत जब उलट पुलट लागन्त ।

पड़े काल भयभीत यों आगाम लखियो मिन्त ॥६१॥

जब कभी वृक्षों के विपरीत फल लगें तो निश्चय ही बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़े ।

अकाले च फलं पुष्पं वृक्षाणां यत्र जायते ।  
ऋतोर्विष्यव्यश्वैव दुर्भिक्षं तत्र मण्डले ॥6 2॥

जिस देश में बिना समय ही वृक्षों के फल फूल लगें अथवा ऋतु विपरीत हो जाये तो उस देश में भी बड़ा दुर्भिक्ष पड़े ।

थुहर से वर्षा का ज्ञान ।  
वर्षा प्रारम्भ जानिये निकले थूहरपात ॥6 3॥

वर्षा काल के प्रारम्भ में जब थुहर के नये पत्ते निकलें तो वर्षा शीघ्र प्रारम्भ होने वाली जाने ।

यस्मिन् कालेस्तिधनिश्छिद्रपत्राः सन्दृश्यन्ते वृक्षगुल्मा लताश्च ।  
तास्मिन् वृष्टिः शोभना सम्प्रदिष्टा रुक्षैश्चिद्रैरल्पगम्भः प्रदिष्टम् ॥6 4॥

वर्षाकाल में जिस समय वृक्ष लतादि पत्ते स्तिधन तथा छिद्रों रहित होवें तो उस समय अच्छी वर्षा होवे और जो रुक्ष तथा छिद्रों वाले होवें तो अल्प वर्षा होवे ।

### वैज्ञानिक अनुसंधान

प्रायः मार्गशिर मास से ही मेघ का गर्भ धारण प्रारम्भ हो जाता है। यह गर्भ धारण भी सूर्य किरण, धूल, ताप-चाप, आद्रता, वायु संचार आदि के कारण होता है। यह गर्भ (बादल) पृथ्वी के ऊपर वायुमण्डल में तैरता रहता है। इससे वनस्पति आदि भी प्रभावित होती है। संभवतः जो वृक्ष अधिक गर्भ (अधिक बादल) के कारण उत्पन्न आद्रतादि) से अधिक फूलता-फलता है उस वृक्ष में अधिक फूल-फल आते हैं और इसके विपरीत जिस वृक्ष में कम गर्भ के कारण अधिक फूलता फलता है उस वृक्ष में अधिक फूल-फल आते हैं इसलिये कुछ निश्चित आम आदि वृक्ष में अधिक फूल-फल आने पर अधिक वर्षा होती है और कम आने पर कम वर्षा होती है।

### मनुष्य से वर्षा ज्ञान

पित प्रकृति वाले मनुष्य को वर्षा का ज्ञान ।  
अतिपित्तवारो आदमी सोवै निद्रा धोर ।  
अनपद्धियो अपदेहते कहै मेघ अतिज्ञार ॥6 5॥

वर्षाकाल में पित प्रकृति वाला मनुष्य धोर निद्रा में सोवे तो वर्षा बहुत जोर से होवे ।

वातपित्त प्रकृति वाले मनुष्य को वर्षा ज्ञान ।  
वातपित्त युत देहजो रहै मेघ सो धूम ।  
अनपद्धिया आतम थकी कहै मेघ अतिधूम ॥6 6॥

वात पित प्रकृति वाले मनुष्य का शिर गर्मी से धूम जाये तो वर्षा बहुत जोर से होवे ।

लेखक को वर्षा ज्ञान ।

आगम सूझे सवन को माधव आवनहार ।  
कागज फूटे लेखनी लेहालेह विचार ॥6 7॥

लिखने के समय अक्षरोंकी स्याही पत्रकी दूसरी ओर को फूट निकले तथा सूखे नहीं तो वर्षा होवे ।

अफीमची, पंसारी और गड़रियों को वर्षा ज्ञान ।  
अंमली अमलसू ऐतरया गांधी गलन किरान ।  
गाडर गूंद सूं चीकणी मेघा मुक्ति बरखान ॥6 8॥

अफीम, गुड़, नमक, नवसादर आदि गलने लगें वा भेड़ गूंद जैसी चिकनी हो जाये तो वर्षा होवे ।

ग्वाले तथा वागवान को वर्षा का ज्ञान ।  
गोवर कीडे देख अति जब मेह कहे गवाल ।  
तव अवसारी मेघ की (जब) कोकिल मोर कुरलाल ॥6 9॥  
गोवर, गल जाये, उसमें बहुत से कीड़े पड़ जायें, वा कोकिल वा मोर बहुत शब्द करे तो वर्षा होवे ।

दहीं मथने वाली को वर्षा ज्ञान ।

बिगड़े धृत विलोव ने वनिता होय उदास ।  
जब अवसारी मेघ की (तव) तहीं आज्य की आस ॥7 0॥

दहि मथने पर यदि मक्खन न निकले तो वर्षा जोर से होती है।

खाटी हो गई छाछ दूध विचल दधि विचलै ।  
आसो मेह अवार घड़ियां पलकां माघ जी ॥7 1॥

छाच बहुत खट्टी हो जावे वा दृध वा दर्ही में खंभीर आ जावे तो अतिशीघ्र वर्षा होगी ।

माखण ठरियो माह छिण छिण छायो छाछ पर ।

गई मेघ की आश वृद्ध हुआ मेह माघ जी ॥७२॥

यदि दर्हीं मथते समय यदि मक्खन छाल पर शीघ्र ही उपजावे तो वर्षा न होवे ।

जड़िये वा सुनार को वर्षा ज्ञान ।

कुन्दन जमे न जड़ाव पर जमे सलायन कीठ ।

जड़िये सोनी सब कहें उड़े मेघ अति रीठ ॥७३॥

जड़ने की वस्तु पर कुन्दन नहीं लगे और कुन्दन जड़ने की लोहे की सलाइयों पर काट आ जावे तो वर्षा जोर की होवे ।

सुनार तथा साबुनगर को वर्षा का ज्ञान ।

यों ही साबुन नोन ज्यों नवसादर गल जाय ।

सोनी साबुनगर कहें वर्षा करे अन्याय ॥७४॥

साबुन नमक वा नवसादर गल जावें तो वर्षा अधिक होवे ।

कसारे तथा लोहार को वर्षा का ज्ञान ।

पीतल कांसी लोह नै जिण दिन काट चढ़न्त ।

तो जाणी जे भहुली जल धर जल वर्षन्त ॥७५॥

पीतल, कांसी वा लोहे को काट आ जावे तो वर्षा होवे ।

बढ़ई को वर्षा का ज्ञान ।

साल बसोला बदिनी कठिन कुहाड़ा होय ।

तवलों जोरे मेघ अति कहें सुथारे सोय ॥७६॥

साल, बसोला, बींदनी, कुल्हाड़ी आदि से लकड़ी काटने वा छीलने में कठिनता पड़े तो वर्षा जोर से होवे ।

मूंज वाले को वर्षा ज्ञान ।

मूंज अंबाड़ी जेवड़ी चौपाई असवाय ।

पुन छत्तीसा यों कहे वर्षा करे अन्याय ॥७७॥

मूंज अंबाड़ी रसी वा चारपाई ऐठे तो वर्षा जोर से होवे ।

कुम्भकार को वर्षा का ज्ञान

बिगड़े वासन चाक पर मट्टी अधिक उभार ।

आरख आगम समझ के मेघ कहे कुंभार ॥७८॥

कच्ची मिट्टी के बर्तन चाक पर से उतरें किन्तु वहीं बिगड़ जावें तो वर्षा शीघ्र होवें ।

ओड़ को वर्षा का ज्ञान ।

गूने मूल पलाश का सिमटि गेंद सम होय ।

ओड़ खारोली यों कहे मेहां कमी न कोय ॥७९॥

पलाश वृक्ष की जड़ सिमट कर गेंद के समान गोल हो जाय तो वर्षा बहुत होवे ।

खारोल को वर्षा का ज्ञान ।

जूजा जलतेमोथ गेह आगर मांझ अंकूर ।

दिन चौथे के पांचवें नाल खाल भरपूर ॥८०॥

खारी नमक की आगरों में वर्षा के बिना ही यदि कुएँ आदि के जल से नागरमोथे के नये अंकुर निकल आवें तो चार वा पांच दिन में बहुत वर्षा होवे ।

नाई को वर्षा का ज्ञान ।

देख खुररी नायनकहे कन्था चलो विदेश ।

जमा कीट अति रासरन् मौजें करें स्वदेश ॥८१॥

हजामत करने के उस्तरों पर अधिक काट (जंग) आवे तो वर्षा अधिक होवे ।

धोबी को वर्षा का ज्ञान ।

धोविन धोखा मिट गया मन में हुआ हुलास ।

देख सोदनी बजबजी हुई मेघ की आस ॥८२॥

धोबी के कपड़े खूम में देने के माट में खमीर उठे तो वर्षा शीघ्र होवे ।

कोरे कपड़े सोदनी जब अति गर्मी होय ।

सूक्ष्म कीड़े सोदनी मेघा कमी न कोय ॥८३॥

पान कोर कपड़ों को जिस वर्तन में खूम दे उस में बहुत गर्मी हो जावे तथा छोटे-छोटे कीड़े पड़ जावें तो वर्षा बहुत होवे ।

जूते बनाने वाले को वर्षा का ज्ञान ।

देख खुररी कहे ढेढ़नी कन्था टूटे नेह ॥

ल्हेर्इ चढ़े न चर्म पर मुक्ता वर्षे मेह ॥४४॥

जूते बनाते समय चमड़े पर यदि लेही न चिपके तो वर्षा बहुत होवे ।

जूलाहे को वर्षा का ज्ञान ।

बुनकर केरी पांजनी सूखे नहीं सताब ।

तब अवसारी मेघ की (जब) लाल रंग लखि आब ॥४५॥

कपड़ा बुनने के ताने पर लगाई हुई पान शीघ्र न सूखे तो वर्षा बहुत होवे ।

ढोली को वर्षा का ज्ञान ।

ढोल दमामे दुरबरी बोरे सादर बाज ।

कहे ढोम दिन तीन में इन्द्र करे आवाज ॥४६॥

ढोल, नक्कारा, तासा आदि चमड़े से मढ़ा हुआ बाजा यदि ठीक न बजे तो तीन दिन में वर्षा होवे ।

भील आदि को वर्षा का ज्ञान ।

अति काली भू मकड़ी बांबी देख सुँदंक ।

वर्ष भला वर्षा बहुत हुये किरात निःशंक ॥४७॥

भूमि पर बहुत काले रंग की मकड़िये अधिक दिखें तो ज़माना श्रेष्ठ तथा वर्षा अधिक होवे ।

साधारण मनुष्य को वर्षा का ज्ञान ।

जब लग जल शीतल नहीं उमच मिटी नहिं देह ।

अन पढ़िये सब यों कहें तब लों जोरे मेह ॥४८॥

तालाब आदि का पानी ठंडा न होवे वा पीने से स्वाद न लगे वा गर्मी से शरीर बहुत व्याकुल हो जावे तो वर्षा ज़ोर से होवे ।

वर्षा जानने की युक्ति ।

जलका लोटा नीके भरिये । उस पर गीला कपड़ा धरिये ।

टपके नीर घड़ा हो खाली । मानो गंग जटा शिव चाली ॥४९॥

यह कौतुक नित देखे कोय । मेघा गमन परख यों होय ।

जो नहिं द्रवै बूंद सुन माघ । दिन दश पवन झकोले फाग ॥५०॥

एक लोटा जल से पूर्ण भर के उस के मुख पर पानी से भीगा कपड़ा ढाक दे उसके सहारे से लोटे का जल बाहर टपकने लगे जिससे लोटा कुछ खाली हो जावे तो वर्षा होवे, और जो कुछ भी पानी नहीं टपके तो दस दिन तक वर्षा न होवे किन्तु वायु चले ।

### वैज्ञानिक अनुसन्धान

वर्षाकि पहले जिस समय व्यापक रूप से धने बादल होता है और वातावरण में आद्रता होती है तब पृथ्वी की गर्मी का विकिरण नहीं हो पाता है जिससे उमरस (-हुम्स ह्युमिडिटी) बढ़ जाता है। इससे ताप-चाप भी बढ़ जाता है। इसके कारण ही वर्षा के पहले अधिक गरमी लगती है, पसीना बहता है, गुड आदि गलने लगते हैं, लोहादि पर काट (जंग) आ जाती है, चींटी कीट-पतंग बिल से निकलकर धूमने लगते हैं, तालाब आदि का पानी ठण्डा नहीं होता है। इस ही प्रकार अन्याय विषयों सम्बन्धी शकुनों के वैज्ञानिक कारणों का शोध-बोध कर लेना चाहिए।

### पशु से वर्षा का ज्ञान

ऊंटनी से वर्षा का ज्ञान

आगम लख के ऊंटनी दौड़े धनन अपार ।

पग पटके बैठे नहीं माधन आवन हार ॥९१॥

ऊंटनी भूमि पर इधर उधर दौड़े और पैरों को पछाड़े किन्तु बैठे नहीं तो शीघ्र वर्षा होवे ।

बैल तथा गाय से वर्षा का ज्ञान ।

बैल शब्द जो रातुं करै । सुख सम्पति की आशा सैरे ।

रातुं गाय, पुकारै वांग । काल पड़ै कै अद्भुत सांग ॥९२॥

रात्रि में बैल शब्द करे तो सुख सम्पति होवे और जो गाय गत्रिमें शब्द करे तो दुर्भिक्ष पड़े वा कोई और उपद्रव होवे । (इसकी विशेष चेष्टा 'रोहिणी' तथा 'श्रावणी' योग में देखो ।

बकरी से वर्षा का ज्ञान ।

जड़ा अजया के सुत दोय हों समया साखरा जोय ।

तीन जने शिशु बाकरी तो धृत महंगा होय ॥९३॥

बकरी के बच्चे 2 हों तो जमाना अच्छा होवे और 3 हों तो धृत बहुत महंगा होवे।

भेड़ से वर्षा का ज्ञान ।

साबुन केसे ज्ञाग पुनि गाडर कुतसी हुन्त ।

दौड़े सन्मुख पवन के जल थल टेल भरन्त ॥95॥

भेड़ के साबुन जैसे साग आ जावें और वायु के सन्मुख दौड़े तो वर्षा अधिक होवे ।

विल्ली से वर्षा का ज्ञान ।

मंजारी के एक सुत माघ जानिये काल ।

दोयां होसी करवरो तीनां होय सुकाल ॥96॥

विल्ली का बच्चा एक हो तो दुर्भिक्ष पड़े, दो होंतो करवरा संवत् होवे और जो तीन हों तो सुभिक्ष होवे ।

विल्ली तथा कुतिया से वर्षा का ज्ञान  
चार जणै मंजारड़ी चार श्वानड़ी जोय।  
कहै फोगसी माघ जी समियो सखरो होय ॥97॥

विल्ली या कुतिया के 4-4 बच्चे हों तो बहुत श्रेष्ठ सुभिक्ष होते हैं।

श्वान मंजारी पांच रुठव ।

काल पड़े सुण अति रौरव ।

कटैक खाड़ो वहै दुधार ।

सात आठ जण नृप की हार ॥98॥

विल्ली या कुतिया के 5 या 6 बच्चे हों तो बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़ता है तथा कहीं युद्ध होता है। और जो कभी 7 या 8 बच्चे हों को राजा की हार होती है।

श्वान से वर्षा का ज्ञान

उद्धाट्य चेदक्षिणमक्षिलौटे नाभिं स्वकीयामथवाधिरुढः।

शेते गृहस्योपरिजागरुकस्तदाम्बुदो उम्बुङ्गिति प्रभूतम् ॥99॥

श्वान अपनी दाहिनी आंख खोलकर नाभि को चाटता है अथवा घर की छत पर सोता है तो बहुत तेज वर्षा होती है।

वर्षासु वृष्टे: सलिले निमग्नाः कुर्वन्ति चक्रभ्रमणाद्विशेषात् ।

आपो विधुन्वन्ति पिवन्ति तोयं पक्षान्तरे उन्यत्र जलागमाय ॥100॥

वर्षा काल में श्वान यदि जल में निमग्न हो तो अच्छी वर्षा होती है, जल में चक्रवत् फिरे तो विशेष वर्षा होती है और जो जल को हिलाये या पीये तो 15 दिन बाद किसी अन्य स्थान में वर्षा होती है।

निर्गत्य तोयादधिरुद्य पार्णि कौलेयकश्चेद्विधुनोति कायम् ।

तन्निश्चितप्रावृष्टिं वृष्टिमब्दं कृषिवलाप्रीतिकर्णि करोति ॥101॥

वर्षा काल में यदि श्वान जल में स्नान करके बाहर आकर के ऊंचे स्थान पर खड़ा होकर के अपने अंग को कंपाये तों खेतों के लिए उपयोगी अच्छी वर्षा होती है।

जृम्भाप्रकुर्वन् गगनं विलोक्य यो जागरुकः कुरुतेऽश्रुपातम् ।

स जल्पति प्रावृष्टमम्बुपूरप्लुतावनिं सर्वसमृद्धिशस्यम् ॥102॥

वर्षा काल में श्वान यदि जंभाई खाता हुआ और नेत्रों से आंसू गिराता हुआ आकाश की ओर देखे तो खेतों के लिए उपयोगी बहुत उत्तम वर्षा होती है।

अचैः स्वराः स्युस्तृणकूटसंस्थाः प्रासादवेशमोजमसांस्थिताशा ।

वर्षासु वृष्टिं कथयन्ति तीव्रामन्यत्र मृत्युन्दहनं रूजश्च ॥103॥

वर्षा काल में श्वान यदि तृण के ढेर, महल या उत्तम स्थान पर चढ़कर के जोर से शब्द करे तो बहुत जोर से वर्षा होती है परन्तु वर्षा काल के बिना ऐसी चेष्टा करे तो महामारी आदि रोग तथा अग्नि का उपद्रव होता है।

न नीरदो मुञ्चति केनाचिच्चेदोषेण चेष्टा प्रभवेण वृष्टिम् ।

अचिन्तितास्तत्र पतन्त्यनर्थाश्चौराग्निभीरुमरकप्रकाराः ॥104॥

श्वान के पूर्वोक्त चेष्टा करने पर भी दैव योग से वर्षा नहीं होती तो वहाँ अचानक ही चौर, अग्नि भय, महामारी आदि कोई उपद्रव अवश्य होते हैं।

जम्बुकनी बोले दुखवाय ।

राज विग्रह दुर्भिक्ष थाय ।



काली चिड़िया का अण्डा 1 हो तो सुभिक्ष होता है। 2 हो तो घास कम पैदा होता है। परन्तु धान्य पैदा हो जाएगा, 3 हों तो आधा काल पड़े और 4 हों तो बड़ा भयंकर दुर्भिक्ष पड़ेगा।

**काल चिड़ी के अण्डे तल ऊन केश जट जोय।**

**जिस जिस के सुन केश हों मरी रोग अति होय ॥1 18॥**

अण्डों के नीचे जिन-जिन जीवों के केश ऊन जट आदि हों उन-उन जीवों में मरी आदि रोग होते हैं।

**सूत सूत नारेल जट मकई शिखा जो होय।**

**शण रेशम अंबाड़ि तृण सोहि महर्घता होय ॥1 19॥**

**घास फूस जड़ तूल हो तो जानो तृण हान।**

**ग्वाल कहे सुन माघ जी काल चिड़ी साहि धान ॥1 20॥**

अण्डों के नीचे सूत, रुई, नारियल या मक्का की जटा, शठा रेशम, अंबाड़ी, घास, आदि जो जो वस्तु रखी हो वह वस्तु तेज हो जाती है। और घास फूस वृक्ष आदि की जड़ छाल आदि वस्तु रखी हो तो घास उत्पन्न नहीं होगी।

**जो अण्डा ऊंचा धरे तीन हाथ परिमाण।**

**इस से नीच देखिये तो वर्जे कुछ हाण ॥1 21॥**

अण्डे भूमि के ऊपर 3 हाथ से नीचे स्थान पर रखे तो श्रेष्ठ नहीं किंतु इससे ऊंचे रखे तो श्रेष्ठ फल होवे।

**खंजन से वर्षा काज्ञान**

**खंजन शिखा उतार दृष्ट पड्यो वृथ माघ मेह ॥1 22॥**

वर्षा काले पहिले खञ्जन पक्षी के शिर पर शिखा निकलती है, जिससे वह वृष्टि में नहीं आता है। और जब भादों आसोज में इस की शिखा टूट पड़ती है तब वह पीछे दीखने लगता है। अतः जब खञ्जन दीखने लगे तब जाने कि वर्षा काल समाप्त हुआ, अर्थात् अब वर्षा का जोर नहीं रहा ॥ (इसका विशेष खुलासा 'दीप मालिका योग' में देखों ।)

**कुरज से वर्षा का ज्ञान**

**कुरज उड़ी कुरलाय वृद्ध हुआ मेह माघ जी ॥1 23॥**

कुरज (पक्षी) शब्द करता हुआ उड़ने लगे तो वर्षा काल बीत गया जानना चाहिए।

**रूपारेल से वर्षा का ज्ञान**

**करोति नीड़ भुवि चेद्राही समान्यपत्यानि विजायते वा ।**

**समुम्द्रो भानुमयूखवहिज्जिल्यते तज्जगतीं समस्ताम् ॥1 12॥**

वर्षा काल के पहिले यदि रूपारेल (शकुन चिड़िया) अपने अण्डे भूमि पर रखे और वे सम संख्या के हो तो उस देश में वर्षा नहीं होगी किंतु धूप बहुत पड़ेगी।

**गर्ते सरिद्रोधसि वा वराही शावान युग्मानपि चेत्प्रसूते ।**

**नाभोधरो मुञ्चति तावदम्भो यावत्समुझीयन्ते ब्रजन्ति ॥1 25॥**

यदि अण्डे खड़े में वा नदी तालाब आदि जलाशय में रखे और वे अण्डे सम संख्या के हों तो उन अण्डों के बच्चे अपने पंखो से उड़कर वहाँ से न चले जायें तब तक वर्षा नहीं होगी।

**द्वारादिदेशेषु गृहस्य यस्य प्रत्यक्षरूपा कुरुते कुलायम् ।**

**अम्भो घरो वर्षति चेत्तयापि तच्छून्यतां याति च भज्यते वा ॥1 26॥**

यदि घोंसला किसी घर के द्वार आदि पर बनाये तो वर्षा होगी, परन्तु वह स्थान शून्य हो जाएगा या गिर जाएगा।

**प्रासादशैलद्रुमकोटरेषु तुङ्गेषु चान्येषु विधाय नीडम् ।**

**प्रसूते यद्यसमैरपत्यैः श्यामा तदम्भो भवति प्रभूतम् ॥1 27॥**

यदि घोंसला कहीं सुन्दर घर की, पर्वत की वृक्ष की खोखाल में अथवा और किसी ऊँचे स्थान पर बना के विषम संख्या के (1, 3, 5) अण्डे रखे तो बहुत वर्षा होगी।

**कपोती से वर्षा का ज्ञान**

**मधु मास वैशाख में गर्ग समय नित जोय ।**

**रहे कपोती ध्वनि करे सही जुमाना होय ॥1 28॥**

चैत्र वैशाख में सूर्योदय से पहिले कपोती (पक्षी) नित्य शब्द करे तो सुभिक्ष के उपयोगी अच्छी वर्षा होगी।

टिटहरी से वर्षा का ज्ञान

टीटोड़ी के अण्डा एक । कहे फोगसी काल विशेष।

अण्डा दो टीटोड़ी घरे । अर्द्धकाल परजा अबुसरे ॥1 2 9॥

टीटोड़ी के अण्डे तीन । रोग दोष में परजा क्षीन ।

टीटोड़ी के अण्डे चार । नव खँड़ निपजे माघ विचार ॥1 3 0॥

टिटहरी के अण्डा यदि 1 हो तो दुर्भिक्ष, 2 हो तो आधा काल, 3 हो तो रोगादि का उपद्रव और 4 हो तो बहुत उत्तम सुभिक्ष होगा ।

चत्वारि टिट्हिभाण्डानि मासाश्चत्वार आहिताः ।

अधोमुखाण्ड मासैः स्याद्विष्टर्नोर्धर्ममुखाण्डके ॥1 3 1॥

देख अण्ड आषाढ़ में टीटोड़ी के चार ।

अण्ड चार चतु मास के वर्षा विषय विचार ॥1 3 2॥

ऊ गमना आषाढ़ का दक्षिण श्रावण जान ।

पश्चिम भाद्रव जानिये उत्तर आसु बखान ॥1 3 3॥

ईशाना आषाढ़ का अग्नि श्रावण धार ।

नैऋति भाद्रव जानिये वायव्य आसु विचार ॥1 3 4॥

आषाढ़ के प्रारम्भ में टिटहरी के बहुधा चार अण्डे होते हैं, उन को देखे, फिर वर्षा काल के चार अण्डे होते हैं, उन को देखे, फिर वर्षा काल के चार महिनों के लिये उनकी कल्पना करे । पूर्व वा ईशान के अण्डे से आषाढ़ में, दक्षिण वा अग्नि के अण्डे से श्रावण में, पश्चिम वा नैऋत्य के अण्डे से भाद्रवें में और उत्तर वा वायव्य के अण्डे से आसोज में वर्षा होगी ऐसा जानना चाहिए।

जाहि मास के नाम का टिट्टी अण्डा होय ।

ताहि मास लों वर्षना कहे भील सब कोय ॥1 3 5॥

जिस महीने के नाम का अण्डा होता है उस महीने में वर्षा होती है। और जिस महीने के नाम का अण्डा नहीं होता है उस महीने में वर्षा नहीं होती है। परन्तु-

नूंख भूमि दिशि देखिये वर्षा उतने मास ।

नूंख न दीखे भूमि दिशि उतने मास निरास ॥1 3 6॥

चारों अण्डों में से जिस 2 महीने के अण्डे की तीखी अणी भूमि की ओर नीचे को हो उस 2 महीने में वर्षा होती है, और जिस 2 महीने के अण्डे की तीखी अणी आकाश की ओर ऊंची हो उन-उन महीनों में वर्षा नहीं होती है।

जो अण्डां का ऊंचा मूँडा । नीर निवांणं लाघै ऊँडा ।

ऊंधे मूँड अण्डा धरै । चार मास मांग्या मेह करै ॥1 3 7॥

चारों अण्डों की तीखी अणीयें यदि आकाश की ओर ऊपर को हों तो चारों महीनों में वर्षा न होगी जिस से कृओं का पानी भी सूख जावे, और जो चारों की अणीयें भूमि की ओर नीचे को हों तो चारों महीनों में मन चाही वर्षा होती है।

जो अण्डा जिस कोण का अणि जो 'वांकी होय ।

खुररी खंच उस मास में अन्न पण महंगा जोय ॥1 3 8॥

जिस महीने के अण्डे की अणी नीचे ऊपर को न हो किन्तु आड़ी वा तिरछी हो उस महीने में वर्षा की खेंच (कर्मी) होती है जिससे धान्य भी तेज होते हैं।

चारूं अण्डा चिगवत् धरे अधो मुख जोय ।

फोग कहे सुन माघजी समया सखरा होय ॥1 3 9॥

यदि चारों अण्डों की तीखी अणीयें नीचे और पीठ ऊपर होती हैं और देखने में सुन्दर चिगवत् धरे हो तो चारों ही महीनों में उत्तम वर्षा होवे जिससे से संवत् बहुत अच्छा होता है।

उच्च भागे टिट्हिभाण्ड मुक्तया मेघमहोदये ।

जल प्रवाहे ऽव्यण्डानामुकिर्वृष्टिनिरोधिनी ॥1 4 0॥

टीटी अण्डा ऊंचा धरे । चार महीने निर्झर झरे ।

रखे अण्डा नदी निवान। कहे फोगसी मेह की हान ॥1 4 1॥

टिटहरी अपने अण्डे ऊंची भूमि पर धरे तो वर्षा बहुत, नीची भूमि पर धरे तो कम और नदी तालाब आदि जलाशय में धरे तो बहुत कम होती है।

टीटोड़ी अण्डा धरे नाड़ी नदी निवान ।

पाच फूट पर से उड़े फिर वरसे मेह जान ॥1 4 2॥

यदि अण्डे नाड़ी नदी तालाब आदि में धरे तो उन अण्डों के बचे वहाँ से उड़

के चले जाये तो फिर वर्षा होती है।

टीटोड़ी सर तीर तज पारवति कहीं वियाय ।

तो मेहा वरसे घना जल थल कक्राय ॥1 4 3॥

यदि तालाब आदि जलाशय को छोड़ के उन्हीं की ऊँची पाल पर अण्डा घरे तो बहुत वर्षा होती है।

अण्डे ऊँची भूमि शुभ सम भूमी सम राशा ।

छगन घास पतली अशुभ चतु पद करत विनाश ॥1 4 4॥

अण्डे ऊँची भूमि पर हों तो संवत् श्रेष्ठ, मध्यम भूमि पर हो तो मध्यम, नीचे भूमि पर हों तो नेष्ठ और अण्डों के नीचे सूखा गोबर या घास आदि हो तो चौपायों का नाश होता है।

छछरियां अण्डा तले टीटोड़ी मेलन्त ।

रस कस अति मंहंगा करे चतुपद भार पड़न्त ॥1 4 5॥

हाड़ सीप तल देखिये मरी बरका होय।

हाहाकार उस देश में विरले वचें जु कोय ॥1 4 6॥

अण्डें छछरियों पर रखे हों तो रस कस बहुत तेज हो तथा पशुओं को कष्ट हो और जो हड्डी वा सीप पर रखे हों तो उस देश में महामारी आदि रोग से हाहाकार मच जाता है।

बगुले से वर्षा का ज्ञान ।

बुग पावस दृढ़ के संयम से चुग लेय ।

सामा माजर चुग उड़े काल न कहिये जेय ॥1 4 7॥

वर्षाकाल से पहिले बगुला हिंसा छोड़ अहिंसा व्रत धारण करके वृक्ष पर स्थिर हो के बहुत दिनों तक बैठा रहे और भक्ष्य भी उस की बगुली ला के दे तो वर्षा बहुत होती है।

जिस ही दिश बगुली गई उस ही दिश चुग लेय।

दृढ़ पावस यों जानिये जय जय कार करेय ॥1 4 8॥

मध्य लेने को बगुली जिस और जावे उसी दिशा से भक्ष्य ले आये तो भी

वर्षा बहुत होती है।

सामा माजर ना चुगे बेगा ही उड़ जाय ।

दृढ़ पावस नहिं जानिये करवर समा कहाय ॥1 4 9॥

यदि बगुला ऐसे व्रत का पालन थोड़े से ही दिनों तक करे तो वर्षा मध्यम होती है और जो बिल्कुल व्रत धारण ही न करें तो वर्षा अल्प होती है।

कौवे से वर्षा का ज्ञान

वैशाख मासे निरुपदवेषु काकास्य शुभाय नीडम् ।

निन्देषु शुष्केषु संकंण्टकेषु वृक्षेषु दुर्भिक्षिमयाय हेतुः ॥1 5 0॥

वैशाख में कौवा अपना घोंसला किसी उत्तम वृक्ष पर बनावें तो वर्षा अच्छी होती है, और जो किसी निन्दित या सुखे या काटों वाले वृक्ष पर बनावें तो वर्षा नहीं हो। जिससे दुर्भिक्ष पड़ता है।

काकालयः प्रारिदिशि भूरुहस्य सुभिक्षकृत् स्वल्पधनस्तधानौ ।

मासद्वयं वृष्टिकरोति पूर्व ततो नवृष्टिर्हिमयात एव ॥1 5 1॥

पूर्व न वृष्टिर्निर्ऋतम् पयोदाः पश्चाद्धनो लोकसरोगता च ।

मासद्वयेऽतीवधन प्रचीच्यां निष्पत्तिरन्स्य तदोच्चभूम्याम् ॥1 5 2॥

ततोल्प वृष्टिर्यदि वाल्पवर्षा सवात्वृष्टिः पवनस्य कोणे ।

स्यादुत्तरस्यां भवने सुभिक्षमीशानभागेऽपि सुखं सुभिक्षम् ॥1 5 3॥

कौवा अपना घोंसला वृक्ष पर पूर्व में बनावे तो श्रेष्ठ वर्षा, अग्नि कोण में बनाये तो अल्प वर्षा, दक्षिण में बनाये तो वर्षा काल के प्रारम्भ ही के 2 महीनों में वर्षा, नैऋत्य कोण में बनावे तो पीछे के ही 2 महीनों में वर्षा, पश्चिम में बनावे तो मध्य के ही 2 महीनों में अत्यन्त वर्षा, व्यायव्य कोण में बनावे तो वायु सहित अल्प वर्षा, और उत्तर या ईशान में बनाये तो श्रेष्ठ वर्षा होती है।

वृक्षाग्रे तु महा वर्षा वृक्षमध्ये तु मध्यमा ।

अधःस्थानै नैव वर्षा वृक्षे काकालयाद्वदेत् ॥1 5 4॥

कौवा अपना घोंसला वृक्ष के ऊपर के अग्र भाग पर बनावें तो वर्षा अति, मध्य में बनाये तो मध्यम, और नीचे के भाग में बनाये तो अल्प वा कुछ भी

नहीं होवें। उपरोक्त दिशाओं की अपेक्षा यह फल स्पष्ट है।

**अवृष्टिरोगारि भयादिवृद्धिं विद्याच्च भूमौ बलिभुक्कलाये ।**

**शुष्केच वृक्षे उमरान्ननाशः प्राकारन्द्रे उरिभयं प्रभूतम् ॥155॥**

**निम्नप्रदेशे तस्कोटरे वा वल्मीकरन्धे भवनिष्वपीह ।**

**काकस्य नीडे खगवृष्टिदोषैर्भवन्ति शून्या नियमेन देशा : ॥156॥**

कौवा अपना धौंसला भूमि पर बनावे तो अवृष्टि दुर्भिक्ष रोग शत्रु आदि भय की वृद्धि, सूखे वृक्ष पर बनावे तो डमर (शस्त्र कलह वा पर चक्र भय) तथा अन्न का नाश, परकोटे की भित्ति के छिद्र में बनावे तो शत्रु से बहुत भय, वृक्ष की खोखल में वा सर्पादि की बंबी के मुख पर बनावे तो महामारी आदि रोगों तथा अनावृष्टि दुर्भिक्ष आदि की पीड़ा से वह देश शून्य होता है।

**कौवा जब ही घर कर ले लकड़ी आषाढ़ ।**

**अद्य विच पकड़े लाकड़ी दोनूँ साख सवाय ॥157॥**

**छेली पकड़े साख इक ऊभी पकतड़े काल ॥158॥**

आषाढ़ में यदि कौवा अपने धौंसले के लिये लकड़ी को बीच में से पकड़ के लावे तो दोनों साखें (खरीफ तथा रबी) उत्पन्न होवें, एक किनारे से पकड़ के लावे तो एक ही साख उत्पन्न हो और जो खड़ी पकड़ के लाते हैं तो दुर्भिक्ष पड़ता है।

**कावया भवेद्वारुणमण्डक चेत्पृथ्वी तदा नन्दति सर्वशस्यैः ।**

**मन्दप्रवर्षेऽलसंज्ञकाण्डे नोप्तस्य वीजस्य भवेत्प्ररोहः ॥159॥**

**जातानि शस्यानि समीरजेडण्डे खादन्तिकीटाः शलभाः शुकाद्याः ।**

**क्षेमां सुभिक्षं सुखिता धरित्री स्यादिन्द्रजेऽण्डेभिमितार्थ वृष्टिः ॥160॥**

कागली के 1 अण्डा यदि हो तो सम्पूर्ण प्रकार की खेतियाँ उत्पन्न हो, 2 हों तो वर्षा बहुत थोड़ी होती है। जिस से बोया हुआ धान्य उत्पन्न नहीं होता है। 3 हों तो वर्षा तो खेती के उपयोगी होती है परन्तु कोडे., टिड़ी, तोता आदि जनुओं से खेतियों को हानि पहुँचती है। और 4 हो तो क्षेम कल्याण सुभिक्ष आदि सुखों को करने वाली उत्तम वर्षा होती है।

**इदं त्विहोत्पातयुगं पृथिव्यां महाभयं शाकुनिका वदन्ति ।**

**यद्यायसो मैथुनसान्निविष्टो दृश्यते यद्या धवलः कदा घित् ॥161॥**

**देशे तु यत्राद्युतमेतदुग्रमालोकच्यते तत्र समापतन्ति ।**

**अवृष्टिदुर्भिक्षभयोपसर्ग चौराग्निशत्रुद्रव धर्मनाशाः ॥162॥**

जिस देश में कौवा और कागली मैथुन करते हुए दीखे अथवा श्वेत कौआ दीखे उस देश में अनावृष्टि दुर्भिक्ष महामारी चौर अग्नि शत्रु आदि उपद्रवों से देश तथा धर्म का नाश हो जाये और देखने वाले को भी दुःख हो अतः उस को भी इस की शान्ति करनी चाहिए।

**रजनी कुरले काग अति कृष्ण पक्ष जो होय ।**

**पठे काल उस देश में रोग शोक अति होय ॥163॥**

कृष्ण पक्ष की (अंधेरी) रात्रि में बहुत से कौवे सदा ही शब्द करें तो उस देश में दुर्भिक्ष वा महामारी आदि का उपद्रव होवें और वर्षा काल में यदि चांदनी रात्रि में भी शब्द करें तो भी पूर्वोक्त अशुभ फल हो किन्तु वर्षात्रिःतु के बिना चांदनी रात्रि में शब्द करें तो अशुभ नहीं है।

**ग्रामाद्विःश्च निर्गत्य स्वस्थाने मण्डल लिखेत् ।**

**सम्पूज्य शकुनं वीक्ष्य काकेन्नितविनिर्णयः ॥164॥**

**शाल्योदनेन साज्येन कृत्वा पिण्डत्रयं बुधः ।**

**सम्मार्जिते शुभे स्थाने स्थापेन्मन्त्रपूर्वकम् ॥165॥**

**वर्षाङ्गानाय संस्थाप्य प्रथमे पिण्डके जलम् ।**

**द्वितीये मृत्तिका स्थाप्या तृतीयेऽङ्गारकः पुनः ॥166॥**

**कपिलानां शतं हत्वा ब्राह्मणानां शतद्वयम् ।**

**तत्पापपरिगृहणासि यदि मिथ्यां वलिं हरेत् ॥167॥**

ग्राम के बाहर दक्षिण को छोड़ के अन्य किसी दिशा में जहाँ बहुत से कौवे रहते हों ऐसे बटादि वृक्ष के नीचे उत्तम भूमि को गोबर से लीप के मण्डल बनावें फिर पकाये हुए चावलों में दही तथा धी मिला के तीन पिण्ड बना के 'ऊँ इराटि मिरिटि काक चाण्डालिनी स्वाहा' इस मन्त्र से 7/7 बार मन्त्र के मण्डल में 1/1 हाथ के अन्तर से रख दे। फिर वर्षा जानने के लिये प्रथम पिण्ड पर जल, दूसरे पर मृत्तिका का ढेला और तीसरे पर कोयला रख दे। फिर कौवें से प्रार्थना करे कि 'हे काक आप को मैंने यह वलि वर्षा जानने के लिये अर्पण की है सो मेरे प्रश्न को सत्य-सत्य बतलाना। यदि मिथ्या कहा तो आपको एक सौ गो हत्या और दो सौ ब्रह्म हत्या लगेगी।' फिर आप उस स्थान से पीछे हट के खड़े होके



के अंत में जब वृक्षादि पर जाला बनाना प्रारम्भ कर दे तब वर्षाकाल समाप्त हो जाता है यह जानना चाहिए ।

साँड़ से वर्षा का ज्ञान ।

धुर आषाढ़े दूबेरे सांड़ा जाय पंयाल ।  
दर मुख दपटे से वर्षा होय विशाल ॥180॥

वर्षा काल के प्रारम्भ में साँड़ा दुर्बल हो जाये और अपने दर में धुस के भीतर से दर का मुख मिट्टी से बन्द कर लेवें तो बहुत वर्षा होती है ।

सांड़ा शीतल भय थकी पैठे जग पंयाल ।  
दर मुख मूंदन कठिन दे ले घासन की गाल ॥181॥

सांड़ा वर्षाकाल के आरम्भ की शीतल पवन के भय से जमीन में धुस के दर को घास मिट्टी आदि से बहुत मजबूत बन्द कर दे तो वर्षा बहुत होती है ।

साडा दर दपटे नहीं काया मैमत होय ।  
निश्चय दुर्भिक्ष जानिये कहें भील सब कोय ॥182॥

साँड़े यदि दर का मुख बंद नहीं करे किन्तु शरीर से पुष्ट हुये जहां तहां दिखाई दें तो वर्षा नहीं होती है । जिससे दुर्भिक्ष पड़ता है ।

मेढ़क से वर्षा का ज्ञान ।  
दादुर पानी छोड़ के बाहर बैठे आय ।  
अथवा गंजे जोर से वर्षा करे अन्याय ॥183॥

जिस हौज़ आदि में मेढ़क रहते हों उस में लकड़ी की छोटी सीढ़िये आधी पानी में और आधी बाहर रहे ऐसे रख दें जब मेढ़क पानी से निकल के उन सीढ़ियों पर आ बैठे या बहुत जोर से शब्द करे तो वर्षा होने वाली है जानना चाहिए ।

जलोका से वर्षा का ज्ञान ।

स्थिर चञ्चल ऊपर चढ़े यों जल में की जौख ।  
शान्त कूफानी वृष्टि का क्रम से जानो योग ॥184॥

एक जलोख को कांच की बड़ी बोतल में डाल दें, फिर उस बोतल को स्वच्छ पानी से मुंह तक भर दें तथा उस में कुछ काली मिट्टी या शक्कर डाल दें (जिससे

जलोख की खुराक मिले), फिर उसका मुख महीन कपड़े से ढांक के बांध दें। परन्तु 8-8 दिन से बोतल का पानी निकाल के उसे धो के दूसरा पानी आदि भर दे। फिर इस जलोख की चेष्टा को देखते रहें। यदि वह जलोख बोतल के पेंडें में शान्ति से जा बैठे तो हवा शान्त और यदि नीचे से ऊपर तथा ऊपर से नीचे अति-चपलता से धूमती रहे तो तृफान, और यदि बोतल के मुख पर आ बैठे तो वर्षा होने वाली है, जानना चाहिए ।

मच्छी से वर्षा का ज्ञान ।

जल मच्छी अति उछले फड़ा फड़ी अति हाय ।

ज्यों लो ज़ोरे मेघ अति कहें लोग सब कोय ॥185॥

मछलियाँ यदि जल के ऊपर बहुत जोर से उछलें तो वर्षा होती है।  
छोटी मछली तथा मगर से वर्षा का ज्ञान ।

सींगा मच्छी तरवरे मगर युद्ध अति शोर।

याम दोय के तीन में चढ़े घटा चहुं ओर ॥186॥

छोटी मछली जल के ऊपर तड़फे, वा मगर आपस में युद्ध करें या शोर मचावें तो 2 या 3 प्रहर में चारों ओर वर्षा की घटा चढ़ती है।

सर्प से वर्षा का ज्ञान ।

सर्प जु निगले सर्प को श्याम श्वेत का भेद ।

काल पड़े काला गिले सम्बत् करे सफेद ॥187॥

काला सर्प यदि श्वेत सर्प को निगल जाये तो दुर्भिक्ष पड़ता और जो श्वेत सर्फ काले सर्प को निगल जाये तो सुभिक्ष होता है।

सांप, गोहिड़े, मेंढ़क, चींटी तथा मकोड़े से वर्षा का ज्ञान ।

सांप गोहिड़े डेडुरे कीजीड़ि मकोड़े जान ।

दर छोड़े स्थल पर भ्रमे मेहा मुक्ति बखान ॥188॥

सांप गोहिड़ा मेंढ़क चींटी वा मकोड़ा अपने दर से निकल के भूमि पर इधर-उधर फिरन लगे तो शीघ्र वर्षा होती है।

गिरगिट मक्खी तथा तिंवरी से वर्षा का ज्ञान ।

गिरगिट रंग विरंग हो मक्खी चटके देह।

माकड़िये चहचह करें तब अति ज़ोरे मेह ॥189॥

गिरणिट बार बार रंग बढ़ले, मक्खी मनुष्यों की ढेह पर चिपके या तिवंरी लगातार शब्द करे तो वर्षा जोर से होती है।

मक्खी मच्छर डांस तथा विषेले जन्तुओं से वर्षा का ज्ञान ।

मक्खी मच्छर डां हों माघ जमाना जान

उपजे ज़हरी जानवर काल तना सहि धान ॥ १९० ॥

जिस वर्ष में मक्खी, मच्छर, डांस अधिक उत्पन्न हों उस वर्ष में सुभिक्ष होता है और जो विषेले जन्तु अधिक उत्पन्न हो तो दुर्भिक्ष पड़ता है।

दीमक, कसारी तथा छिपकली से वर्षा का ज्ञान ।

उदेई ऊ टे धनी कस्यारी चमचाय ।

रातो बोले विसमरी इन्द्र महोत्सव आय ॥ १९१ ॥

दीमक अधिक निकलें, कसारी बहुत शब्द करे, या रात्रि में छिपकली शब्द करे तो वर्षा होती है।

पशुओं को भी होता है पूर्वभास

पशुओं को खतरे का पूर्व ज्ञान हो जाता है। यह तथ्य अब निर्विवाद है। उदाहरण के तौर पर 1960 व 1963 के भूकंपों से हुए विनाश में किस चमल्कार ने असंग्य पशुओं की जबन-रक्षा की जबकि अनगिनत इंसान मारे गये। 1960 के भूकंप में अगाद मोरक्को से हजारों पशु-पक्षी भुकंप आने से कुछ घंटे पहले कूच कर गये थे। इस भुकंप में 15 हजार लोग मारे गये थे। इसके तीन वर्ष पश्चात् 1963 में यूगोस्लाविया में भीषण भुकंप आया। जिसमें कोई दस हजार लोग मारे गये थे। और स्कार जे नगर मलबे का ढेर बन आया था। भुकंप के बाद शहर की दशा देखकर ऐसा लगता था कि प्रत्येक पशु भुकंप आने से पहले ही शहर छोड़कर चला जाता था। यह भी लगा कि सवा लाख मनुष्यों को छोड़कर वाकी प्रत्येक जीवित प्राणी जानता था कि क्या होनेवाला है। यहाँ नहीं वहाँ के चिड़ियाघर के जानवरों, चीता, शेर, और हाथी आदि में भी भुकंप आने से आधे घण्टे पहले भय एवं आतंक की भावना पैदा हो गई थी। भय से चीत्कार करने के बाद वे एकदम खामोश हो गये थे। जैसे उन्होंने भाग्य और मनुष्य की स्थिति को न सलमझने की क्षमता के आगे हथियार डाल दिये हों। लंदन के चिड़ियाघर के एक पशु चिकित्सक का कहना है ! ऐसा लगता है कि पशु ने अपने अन्दर

सदियों के अनुभव से खतरे के प्रति अति संवेदनशीलता विकसित कर ली है। रुसियों के भी यह विद्यार है। 1966 में ताशमंद को हिला देने वाले भुकंप के आने से पहले वहाँ के चिड़ियाघर के संचालकों ने जानवरों में अजीव-सी बैचेनी पैदा होने की सूचना दी थी। भुकंप आने से एक घण्टा पहले भारी संख्या में चीटियों को अपने अडे ले जाते हुए देखा गया था। जैसे उन्हें आनेवाले खतरे का आभास हो गया था। मारको के भृ-भोतिकी संस्थान के वैज्ञानिक प्राणीशास्त्रियों के साथ मिलकर पशुओं की छठी इंद्रिय अनुभूति का पता लगाने का प्रयास कर रहे हैं। दरअसल अपनी इस छठीं इंद्रिय शक्ति से पशुओं को खतरे का पहले ही आभास हो जाता है। कई लोगों ने पशुओं की इस अनोखी शक्ति से लाभ भी उठाया है। उदाहरण के तौर पर 1944 को मै गडबर्ग (जर्मनी) में एक व्यक्ति शेव बना रहा था कि बिल्ली की म्याऊं-म्याऊं सुनकर उसने दरवाजा खोल दिया। बाहर एक बिल्ली खड़ी थी जो मोहल्लों में आवारा, की तरह फिरती थी। बिल्ली ने उसका पायजामा मुँह से पकड़कर उसे बाहर की ओर खींचा। यह देखने के लिए कि बिल्ली से कहाँ ले जाना चाहती है, वह बिल्ली के पीछे-पीछे भागा। बिल्ली आगे-आगे और वह उसके पीछे-पीछे। वह आधा मील तक गया होगा कि बिल्ली ने भागना बंद कर दिया। उसी क्षण ब्रिटिश वायुसेना के विमानों ने बम-वर्षा की और वह इमारत मिट्टी में मिल गयी, जहाँ वह व्यक्ति शेव बना रहा था। जब वह आदमी लौटकर अपने घर आया तो अपने घर को मटियामेट देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

वह आदमी कभी नहीं जान सका कि बिल्ली को कैसे इतनी बड़ी दूर्घटना का पूर्वभास हो गया था ?

इस घटना के बाद उस आदमी को बिल्लीयों से बड़ा घार हो गया।

रीयम के लोगों की फाझ्ता के बारे में ऐसी ही धारणा है। 10 अगस्त 1944 की रात को फ्रांस के इस ऐतिहासिक नगर में एक बहुत बड़ा हवाई हमला हुआ था। प्राचीन गिरजाघर पर भारी बम-वर्षा हुई थी, लेकिन हमला शुरू होने से दो घंटे पहले फाझ्तायें, जो हमेशा गिरजाघर की दीवारों में आनंद से रहती थीं, वहाँ से वह उड़ गयी। संभवतः उन फाझ्ताओं को इस होनेवाले हमले के खतरे का पूर्वभास हो चुका था।

यह धारणा है कि जानवर पहले ही जान जाते हैं कि मनुष्य क्या करने जा रहा है, यहाँ तक कि मनुष्य को स्वयं भी पता लगने से पहले ही उनको पता लग जाता है, नई नहीं है। जानवरों के आपस में संचार-संपर्क में विशेष दिलचष्टी होनेवाले एक विशेषज्ञ लिनो ये नाटी ने उन दिनों की एक रोचक व हैरत अंगेजकहानी का वर्णन किया है, जब वह टर्की के नगर मेहदेन में गया था।

उसने कहानी इस प्रकार बतायी है, एक रात को पहाड़ी पर मिली—जूली आवाजें आ रही थीं, जिनके बारे में मुझे बताया गया कि वे भेड़ियों के झुंड की आवाज थीं। मैं यह देखकर हैरान रह गया कि एक टर्की अधिकारीने कुछ पता लगाने के लिए दो आदमियों को भेजा। उन आदमियों ने सुना और वापस आकर बताया—भेड़िए घोषणा कर रहे हैं कि अगले तीन दिन लारियाँ यहाँ आएंगी। वे व्यक्ति पूर्णतः गंभीर थे।

‘मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब मैंने देखा कि अगले दिन फ्रांस से वहाँ सचमुच तीन लारियाँ आ पहुँची, जबकि आने कि की कोई पूर्व सूचना नहीं भेजी गयी थी। मेरे पूछने पर टर्की सरकार ने एक अधिकारी ने सादा—सा स्पष्टीकरण यह दिया कि उस क्षेत्र के लोग भेड़ियों की भाषा समझते हैं। लेकिन, उन भेड़ियों को लारियों के आने की सूचतना पहले ही कैसे मिल गयी थी, यह रहस्य ही बना रहा।’

दूब रहे या पनडुब्बी से नष्ट होने वाले जहाज से चूहे क्यों भागने लगते हैं? आकाशीय बिजली द्वारा जंगल में आग लगने से सप्ताहों पूर्व बंदरोंकी टोलियाँ जंगल छोड़कर क्यों चली जाती हैं? भारी तूफान की संभावना होने पर ध्रुवीय टट्टू खाना क्यों छोड़ देते हैं, जबकि मौसम विभाह वाले अच्छे मौसम की भविष्यवाणी करते हैं— ये सब बातें मानव के लिए आज भी एक रहस्य बनकर खड़ी हैं, जिनका सटीक उत्तर मानव अब तक नहीं खोज सका है।

लगता है, पशु हमारी समझ से परे कोई अनोखी व आश्चर्यजनक शक्ति रखते हैं, जिसे छठी इंद्रिय, मानसिक शक्ति या टैलीपैथी कहा जाता है। यदि इंसान पशुओं की भाषा समझ जाये, तो काफी कुछ अजूबा जान सकता है।

### वैज्ञानिक अनुसन्धान

कुछ पशु-पक्षी, कीट, पतंग में मनुष्य से भी कुछ अधिक संवेदनशील अंगोंपांग

होते हैं और मनुष्य से भी अधिक प्रकृति के निकट में रहते हैं जिससे उन्हें मनुष्य भी अधिक प्रकृति की सूक्ष्म—स्थूल हलचलों का परिज्ञान हो जाता है। इसके कारण वे प्राकृतिक अनुकूल घटनाओं से लाभान्वित होने के लिए तथा प्रतिकूल घटनाओं से स्वयं की सुरक्षा के लिए विभिन्न गति—विधियाँ करते हैं। उनकी गति विधियों का अध्ययन, करके मनुष्य भी अनुकूल परिस्थितियों से लाभ उठाता है और प्रतिकूल परिस्थितियों से स्वयं की सुरक्षा करता है। इसी सम्बन्धी विशेष वर्णन इसी ग्रन्थ में अन्यत्र किया गया है वहाँ से अध्ययन करें।

**अन्तरिक्ष के निमित्त से वर्षा का ज्ञान**

**वाटवभ्रसन्ध्या दिग्दाह परिवेष तमांसिच ।**

**खपुरं चेन्द्रचापं च तदिन्द्यादन्त रिक्षजम् ॥**

वायु, बादल, संध्या फूलना, दिग्दाह, परिवेष (सूर्य तथा चन्द्र के कुण्डल) अन्धकार, गंधर्वनगर और इन्द्र धनुष आदि अंतरिक्ष के निमित्त है।

### वायु प्रकरण

**ज्ञेयो वातश्च योगेन देशे वर्षा शुभा शुभम् ।**

**तेनाय बलवान्सर्वे जलयोगेभ्य इष्पते ॥**

संवत् का अच्छा बुरा होना वर्षा के आधीन है। और न्यूनाधिक वर्षा होने में वायु मुख्य कारण है। अर्थात् जिन जिन देशों में वायु की अनुकूलता होवे वहाँ—वहाँ सुवृष्टि और प्रतिकूलता होवे वहाँ—२ अनावृष्टि होती है इसलिये वायु का ज्ञान होना परमावश्यक है।

**वातस्तु त्रिविधः प्रोक्तः पावकः स्थापकोऽपरः ।**

**तृतीयो ज्ञापको वृष्टेः स्थानाङ्गे मध्यसङ्ग्रहात् ॥**

वर्षा जानने के लिये शास्त्रकारों ने वायु के तीन भेद कहे हैं।

(1) पावक (2) स्थापक (3) ज्ञापक

**आद्यस्तूत्यादकोऽभ्रादेः परो नविशरारू कृत् ।**

**तृतीयो भाविनी वृष्टिं पूर्वमेव निवेदयेत् ॥**

दिशाओं से संबंध रखने वाला पावक वायु बादलों को उत्पन्न करता है, ऋतुओं से संबंध रखने वाला स्थापक वायु बादलों को जहाँ—तहाँ ले जाता है और तिथियों

से संबंध रखने वाला ज्ञापक वायु आगे होने वाली सुभिक्ष दुर्भिक्षोपयोगी वर्षा को पहले से बतलाता है।

**तत्काल वृष्टि कृत्कालान्तरे मेघोपि च द्विधा॥**

बादलों को उत्पन्न करने वाले पावक वायु के दो भेद हैं। एक तो बहुधा वर्षाकाल में बादलों को उत्पन्न करते ही तत्काल वर्षा करता है और दूसरा शीतकाल में बादलों को उत्पन्न करके बहुत पीछे वर्षा करता है।

**पावक वायु से वर्षा का ज्ञान**

जब कभी वायु बहुत जोर से चले तो जाने कि 400 कोस के भीतर कहीं वर्षा, ओले व बर्फ गिरता है, क्योंकि इन कारणों के बिना वायु जोर से कभी नहीं चलती है। इसमें यह क्रम है कि वायु—पूर्व का हो तो दक्षिण में, उत्तर की हो तो पूर्व में, पश्चिम की हो तो उत्तर में, और दक्षिण की हो तो पश्चिम में वर्षा आदि होती है क्योंकि वायु की गति सदा अप्रदक्षिण (पूर्व से उत्तर, उत्तर से पश्चिम, पश्चिम से दक्षिण और दक्षिण से पूर्व की ओर गोलाकार) होती है।

**पूर्वस्यामथ वोदीच्यां पवनः शीघ्र वृष्टये ?**

**दक्षिणस्यां वृष्टिनाशं पश्चिमायां विलम्बकः ॥**

वायु पूर्व व उत्तर का हो तो तत्काल वर्षा, दक्षिण का हो तो वर्षा का नाश और पश्चिम का हो तो विलम्ब से वर्षा होते।

**आग्नेयो विग्रहं वन्हेर्भयं वृष्टि विघातनम् ।**

**नैऋतः पवनो यावत्तावत्कुर्यान्महातपम् ॥**

वायु अग्निकोण का हो तो अग्नि का भय तथा वर्षा का नाश और नैऋत्य कोण का हो तो गर्मी का बहुत जोर होते।

**वायव्यो वायुः कुरुते वृष्टिं पवन संयुताम् ।**

**तत्स्तीडा मत्कुणाद्या इतयो जीव वर्षणम् ॥**

वायु वायव्य कोण का हो तो वायु सहित वर्षा तथा टीड़ी खटमल आदि जीवों की उत्पत्ति होते।

**ऐशानः पवनो विश्वहिताय जलवृष्टये ।**

**आनन्दनन्दन्दयेल्लोके वायुचक्रमिदम्मतम् ॥**

वायु ईशान कोण का हो तो जगत् में कल्पाण तथा आनन्द करने योग्य उत्तम

वर्षा होती है।

**आग्नेयां न कदापीष्टं ईशानः सर्वद शुभः ।**

**नैऋतो विग्रहं रोगं दुर्भिक्षं कुरुते भयम् ॥**

वायु अग्निकोण का कभी श्रेष्ठ नहीं। ईशान कोण का सदा श्रेष्ठ और नैऋत्य कोण का विग्रह, रोग, दुर्भिक्ष आदि उपद्रव करता है।

**महतोपि समुद्भुतः सतडित्साभि गर्जितः ।**

**मेघान् विहनने वायु नैऋतो दक्षिणासिजः ॥**

नैऋत्य दक्षिण व अग्निकोण का वायु यदि 2 घड़ी तक भी चलता रहे तो बिजली तथा गाज से युक्त महान् मेघों को भी छिन्न-भिन्न कर दे, अर्थात् वर्षा को बिल्कुल रोक दे।

**पूर्ववातो भवेत्पूर्वं परचाद्वति दक्षिणः ।**

**त्रीणि दिनानि हित्वा च पश्चाद्वर्षन्ति नित्यशः ॥**

पूर्व दिशा का वायु (चलता हुआ) बन्द होकर पश्चिम को चलने लगे तो तीन दिन के बाद वर्षा प्रारंभ हो जाती है।

**उत्तरो वहते वायुः पश्चाद्वति पूर्वतः ।**

**पश्चदिनानि हित्वा च पश्चाद्वर्षन्ति सर्वतः ॥**

उत्तर दिशा का चलता हुआ वायु बन्द हो के पूर्व का चलने लगे तो पाँच दिन के बाद वर्षा होती है।

**पश्चिमो वहते वायुः पश्चाद्भवति नैऋतः ।**

**वातवृष्टि च मुश्चन्ति स्तोकं जलं विनिर्दिशत् ॥**

पश्चिम का चलता हुआ वायु बन्द होकर नैऋत्य का चलने लगे तो वायु जोर की चलती है तथा थोड़ी वर्षा होती है।

**जो चौवाया चहुं दिशां जब तक वाजे जोय ।**

**तो निश्चय कर जानिये कहूंक वर्षे तोय ॥**

जब कभी चारों दिशों का वायु चले तो जाने कि कहीं वर्षा हो रही है।

**ग्रह कुण्डल धनु कछु न हो वहे चौवाया वाय ।**

**दूर दिशान्तर वर्षती लावे घटा उड़ाय ॥**

सूर्य चन्द्र आदि ग्रहों के कुण्डल न होवे तथा इन्द्र धनुष भी न हुआ होवे और

वायु चारों दिशाओं का बहुत जोर से चले तो जाने कि कहीं दूर देश में वर्षा हो रही है तथा यहाँ आने वाली है।

स्थापक वायु से वर्षा का ज्ञान  
हेमन्ते दक्षिणो वायुः शिविरे नैऋतः शुभः ।

वसन्ते वारुणः श्रेष्ठः फलदायी शरत्सु सः ॥

हेमन्त ऋतु में दक्षिण का, शिशिर ऋतु में नैऋत्य का और वसन्त ऋतु में पश्चिम का वायु श्रेष्ठ, तथा शरद ऋतु में पश्चिम के वायु से फलों की वृद्धि होती है।

शरत्काले तू पूर्वस्य समीरः फल नाशनः ।

वसन्ते चोतरो वायुः फल पुष्पाणि नाशयेत् ॥

शरद ऋतु में उत्तर के वायु से फल तथा फूलों का नाश होता है।

पृथक्-पृथक् महीनों में पृथक्-पृथक् दिशाओं की वायु से वर्षा का ज्ञान  
नभसे मुख्यतः प्राच्यो श्रावणे चोत्तरानिलः ।

वृष्टिं दृढतरं कुर्यात् चैषमाशेषु वारुणः ॥

मुख्य कर के भाद्रपद में पूर्व के, श्रावण में उत्तर के और आषाढ तथा आश्विन में पश्चिम के वायु से बहुत दिनों तक वर्षा होती है।

आषाढः वायव चलै श्रावण पूरब वाय ।

भाद्रवडै पश्चिम चलै अन्न महंगो थाय ॥

आषाढ़ में वायव्य का, श्रावण में पूर्व का और भाद्रवे में पश्चिम का वायु चले तो वर्षा की कमी से धान्य महंगा हो जावे।

आषाढः वायव चलै कबहुंक उत्तर वाय ।

श्रावण में ईशानड़ी (तो) भाद्रव कोरो जाय ॥

आषाढ़ में वायव्यकोण का वायु चले तथा कभी-2 उत्तर का भी चले और श्रावण में ईशान का चले तो भाद्रवा में वर्षा नहीं होवे।

आषाढः दक्षिण चलै श्रावण पूरब वाय ।

भाद्रवडै उत्तर चलै पाणी परत न थाय ॥

आषाढ़ में दक्षिण का, श्रावण में पूर्व का और भाद्रवा में उत्तर का वायु चले

तो वर्षा बिलकुल नहीं होवे।

आषाढ़ नैऋत चलै श्रावण दक्षिण वाय ।

अग्नि कोण आसोज में ऊ भी साख सुखाय ॥

आषाढ़ में नैऋत्य का श्रावण में दक्षिण का और आसोज में अग्निकोण का वायु चले तो वर्षा की कमी से खेती सूख जावे।

अग्नि कोण श्रावण में वाजै ।

भाद्रवडै नैऋत्य नहिं गाजै ।

जो वर्षे तो लूंबां वरसै ।

गाज वीजकितहू नहिं दरसै ॥

श्रावण में अग्निकोण का और भाद्रवा में नैऋत्य का वायु चले तो सूर्य की धूप अधिक पड़े किन्तु वर्षा कहीं नहीं होवे।

श्रावण बाजै पश्चिम वाय ।

भाद्रवडै नैऋत्य भरणाय ॥

अश्विन पूरब फल सब झडै ।

फूलमार कै कीड़ो पड़े ॥

श्रावण में नैऋत्य का, भाद्रवे में दक्षिण का और आसोज में पूर्व का वायु चले तो वर्षा की कमी से खेती सूख जायेगी।

श्रावण में नैऋत्य चलै भाद्रव दक्षिण वाय ।

आसोजां पूरब चलै ऊ भी साख सुखाय ॥

श्रावण में नैऋत्य का, भाद्रवे में दक्षिण का और आसोज में पूर्व का वायु चले तो वर्षा की कमी से खेती सूख जायेगी। श्रावण में पश्चिम का भाद्रवे में नैऋत्य का और आसोज में पूर्व का वायु चले तो फल फूल झड़ें तथा कीड़े पड़ें।

श्रावण में नैऋत्य चलै भाद्रव दक्षिण वाय ।

आसोजां पूरब चलै ऊ भी साख सुखाय ।

श्रावण में नैऋत्य का भाद्रवे में दक्षिण का और आसोज में पूर्व का वायु चले तो वर्षा की कमी से खेती सूख जावे।

भाद्रवडै पूरव पवन अग्नि कोण की धार ।  
कांना काचर काकड़ी पोटे जाय जवार ॥

भाद्रवे में पूर्व वा अग्निकोण का वायु चले तो काचरे, ककड़ी आदि फलों में  
कीड़े पड़े तथा ज्वार की खेतियों में रोग हो जावे ।

जो भाद्रवडै दक्षिण वाजै। वाय वीजला गोरम गाजै ॥  
धूजै धरती थर के नाग। सोखै नदियाँ, सूखै बाग ॥

भाद्रवे में दक्षिण की वायु चले और निर्जल विजली चमके तथा बिना बादलों  
के आकाश गर्जन करे तो वर्षा के अभाव से नदी-तालाब आदि सूख जावें।

कहै फोग सुण माध जी भाद्रव पश्चिम वाय ।  
खडै (तो) कोरो करवरे मडै (तो) झड़ी लगाय ॥

भाद्रवे में यदि पश्चिम की वायु चले तो वर्षा बन्द हो जाती है परन्तु यदि  
प्रारंभ हो जाती है तो बहुत दिनों तक बरसती रहती है।

भाद्रवडै चारुं दिशां बाजै आटूं कूण ।  
आया मेह उड़ाय दै परज रहै सिर धूण ॥

भाद्रवे में यदि चारों दिशाओं व चारों कोणों की वायु चले तो बरसने को आई  
हुई घटा को भी वहाँ से कहीं अन्यत्र ले जावे ।

श्रावण वाजै सूरियाँ भाद्रवडै परवाई ।  
आसोजां में पश्चिम वाजै कार्तिक सवाई ॥

यदि श्रावण में उत्तर या वायव्य की, भाद्रवे में पूर्व व ईशान्य की और आसोज  
में पश्चिम व नैऋत्य की वायु चले तो कार्तिक में पकने वाली खेतियाँ बहुत अच्छी  
पैदा होवे ।

ज्ञापक (तिथियों से सम्बन्ध रखने वाले) वायु का निर्णय योग प्रकरण में किया  
जावेगा ।

### हवा की गति के कारण

हम जानते हैं कि ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, कार्बन डाइऑक्साइड, जलबाष्य  
और धूल के कणों का मिश्रण ही हवा है। हम देखते हैं कि हवा कभी स्थिर रहती  
है तो कभी बहने लगती है। हम यह भी अनुभव करते हैं कि हवा कभी तेजी

से चलती है तो कभी धीरे-धीरे ।

जब पृथ्वी पर कोई स्थान सूर्य के ताप से गर्म होने लगता है तो उस स्थान  
की वायु भी गर्म होने लगती है। तापमान बढ़ने के कारण उस स्थान की वायु  
फैलती है, जिससे उसका घनत्व कम हो जाता है, अर्थात् गर्म हवा हल्की हो  
जाती है। हल्की होने के कारण हवा वायुमण्डल में ऊपर उठने लगती है। परिणाम  
यह होता है कि उस क्षेत्र में वायु का दबाव कम हो जाता है। वायु के इस दबाव  
को संतुलित करने के लिए अधिक दबाव वाले ठंडे स्थानों से भारी हवा इस स्थान  
की ओर बहने लगती है। इसी को हम हवा का चलना या बहना कहते हैं।

समुद्र के आसपास के स्थानों में दिन के समय सूर्य की गर्मी से जमीन गर्म  
हो जाती है और वायु हल्की होकर वायुमण्डल में ऊपर उठने लगती है, इस  
वायु का स्थान ग्रहण करने के लिए समुद्र के पानी की सतह से ठण्डी हवा जमीन  
की ओर बहने लगती है। रात के मय ठीक इसका उल्टा होता है, अर्थात् समुद्र  
के पानी की अपेक्षा जमीन ठण्डी हो जाती है और हवाएँ जमीन से समुद्र की  
और चलने लगती हैं। भूमध्य रेखा के पास अधिक गर्मी होने के कारण गर्म हवा  
ऊपर उठती रहती है। ये गर्म हवाएँ उत्तर और दक्षिण की ओर बहती रहती हैं।

हवाओं की गति पर पृथ्वी के अपने अक्ष पर धूमने (Rotation) का बहुत  
अधिक प्रभाव पड़ता है। पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर धूमती है इस कारण पछुआ  
हवा पैदा हो जाती है। पृथ्वी के अपने अक्ष पर धूमने के कारण उत्तरी गोलार्द्ध  
में हवाएँ दायीं ओर और दक्षिणी गोलार्द्ध में बायीं ओर विचलित हो जाती हैं।  
वायु के बहने की दिशा पहाड़ों की उपरिथत से भी प्रभावित होती है। पहाड़ हवा  
को गति में अवरोध पैदा करते हैं। जिससे उसकी दिशा में परिवर्तन आ जाते हैं।

### मेघ प्रकरण

शुक्ल वर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते ।

स्निग्धो मन्द गतिश्चापि निवृतः स जलावहः ॥

रक्तवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते ।

स्निग्धो मन्दगतिश्चापि तदा विद्याज्जलं शुभम् ॥

यदाज्जननिभो मेघः शान्तायां यदि दृश्यते ।

स्निग्धो मन्द गतिश्चापि तदा विद्याज्जलं शुभम् ॥  
पीत पुष्प निभो यस्तु यदा मेघः समुत्थितः।  
शान्तायां यदि दृश्यते स्निग्धो वर्ष तदुच्यते ॥  
श्वेत लाल पीत व कृष्ण वर्ण के स्निग्ध और मन्द गति वाले मेघ यदि शान्त दिशा में हो तो श्रेष्ठ वर्षा होवे ।

**स्निग्ध वर्णास्त्व ये मेघाः स्निग्धनादाश्च ये सदा।**

**मन्दगाः सुमुहूर्ताश्च ये सर्वत्र जलावहाः ॥**

स्निग्ध वर्ण वाले, मधुर गाजने वाले, वा मन्दगति वाले मेघ यदि अच्छे मुहूर्त में उत्पन्न हों तो सर्वत्र वर्षा होवे ।

**मेघाः सविद्युताश्चैव सुगन्धाः सुस्वराश्च ये ।**

**सुवेषाश्च सुवाताश्च सुधयाश्च सुभिक्षदाः ॥**

बिजली युक्त, सुगन्धि वाले, श्रेष्ठ गाजने वाले, उत्तम वर्ण वाले, शुभ वायु से युक्त और मीठा जल वर्षने वाले मेघों से सुभिक्ष करने वाली उत्तम वर्षा होवे ॥

**रुक्षा वातं प्रकुर्वन्ति व्याघ्रयो विष्ट गन्धिनः ।**

**कुशन्दाश्च विवर्णाश्च मेघा वर्ष न कुर्वति ॥**

मेघ यदि रुक्ष हों तो वायु चले, दुर्गन्धित हों तो रोग करे और टूटे-फूटे वर्तन के शब्द जैसे भाजने वाले तथा खराब वर्ण के हों तो वर्षा नहीं होवे ।

**पृथक्-पृथक् दिशाओं के मेघों से वर्षा का ज्ञान**

**दक्षिणां दिशिमाश्रित्य आग्नेयां यदि गच्छति ।**

**कुद्धुमोदक संकासा नील वर्ण समप्रभा ॥**

**वृष्टिर्भवति तत्रैव निर्दिष्टशेन्नात्र संशय ॥**

पीले तथा नीले वर्ण के मेघ यदि दक्षिण दिशा से अग्नि कोण को जावें तो अवश्य वर्षा होवे ।

**दक्षिणां दिशिमाश्रित्य मेघा गच्छन्ति चोत्तरे ।**

**सर्ववातं वहेत्क्षिप्रं पश्चात्यानीय मादिशेत् ॥**

दक्षिण के मेघ यदि उत्तर को जावें तो तत्काल चारों ओर का वायु चले और

पीछे वर्षा होवे ।

दक्षिण सूं उत्तर चलै उत्तर दक्षिण धाय ।

खडै (तो) कोरो करवरो मैडै (तो) झड़ी लगाय ॥

यदि मेघ उत्तर वा दक्षिण में आमने सामने आवें जावें तो वर्षा बन्द हो जावे वा झड़ी लगे ।

**पश्चिमे न यदा कोणे मेघा दृश्यन्ति चञ्चलाः ।**

**वृष्टिर्विरजता झेया अल्पोदकाः समादिशेत् ॥**

नैऋत्य कोण के मेघ (उत्तर बादल) यदि बहुत शीघ्रता से आवे तो वर्षा नहीं होवे वा अल्प होवे ।

**पश्चिमेन यदा मेघा आगच्छन्ति समाकुलाः ।**

**वातवृष्टिर्भवेन्नित्यं पश्चात्यानीय मादिशेत् ॥**

पश्चिम से बहुत से मेघ यदि एक के पीछे एक लगातार आवे तो एक दिन वायु चलके फिर वर्षा होवे ।

आमा सामा बादला पूरव पश्चिम जाय ।

पंच मिलावा माघ जी दश दिन झड़ी लग जाये ॥

यदि मेघ पूर्व और पश्चिम में आमने सामने आवें जावें तो 10 दिन तक वर्षा की झड़ी लगे ।

**भूरेबादल पहाड़ से मन्द गति से धाय ।**

**शान्त ओर से आयके तूफान ओर को जाय ॥**

भूरे रंग के तथा पहाड़ जैसे बड़े-2 और मन्द गति वाले बादल (जैसे ज्येष्ठ में होते हैं) जिस ओर से आवे उस ओर मौसमी हवा शान्त है और जिस ओर जावें उस ओर सभी तूफानी है ऐसा जाने ।

**रुई सदृश बादले तूफान में से आय ।**

**हवा शान्त जिस देश में ताहि ओर को जाय ॥**

पांजी हुई रुई जैसे हलके तथा श्वेत बादल (जैसे चैत्र वैशाख में होते हैं) जिस ओर से आवें उस ओर मौसमी तूफानी है और जिस ओर जावें उस ओर मौसिमी हवा शान्त है ।

रुई से बहु बादले शीघ्र गति से आय ।  
उत्तर वायव्य कोण के निश्चय जल बरसाय ॥  
ऐसे बादल जो कभी दक्षिण नैऋत्य तें आय ।  
शीत काल ओले गिरे वर्षा जल बरसाय ॥

पींजी हुई रुई जैसे हलके तथा श्वेत बादल बहुत शीघ्र गति से एक के पीछे एक ऐसे लगातार यदि उत्तर वा वायव्यकोण से आने लगें तो 8 प्रहर के भीतर 2 अवश्य वर्षा होवे। और जो दक्षिण वा नैऋत्य कोण से आने लगें तो शीत काल हो तो ओले गिरे और वर्षा काल हो तो जल वर्षे ।

### बिजली प्रकरण

यत्र देशे सुभिक्षं स्याद्विद्युत्त्रैव गच्छति ।  
दिक्षु भूता स्थिता गुप्ता मेघानां मार्ग दर्शनी ॥

जिस देश में सुभिक्ष होने वाला हो उसी देश की ओर बिजली जाती है। तथा संपूर्ण दिशाओं में गुप्त रूप से रिथत होकर भी मेघों का मार्ग दिखाती है।

पृथक्—पृथक् दिशाओं की बिजली से वर्षा का ज्ञान  
एन्द्री तु जलदा विद्युदाग्नेयां जलनाशनी ।  
याम्या स्वल्पजला प्रोक्ता नैऋत्या डमर प्रदा ॥  
प्रभूत जलदा ज्ञेया वारूणी सर्व शस्यदा ।  
वातं करोति वायव्या कौवेरी जलदा स्मृता ॥  
ईशानी शीघ्रवृष्टिः स्यादेतद्विद्युल्लक्षणम् ।

बिजली पूर्व दिशा की हो तो श्रेष्ठ वर्षा, अग्निकोण की हो तो वर्षा का नाश, दक्षिण की होतो स्वल्प वर्षा, नैऋत्य की हो तो अनावृष्टि का भय, पश्चिम की हो तो संपूर्ण खेतियों की वृद्धि करने वाली अधिक वर्षा, वायव्य की हो तो वायु की वर्षा, उत्तर की हो तो उत्तम वर्षा और ईशान की हो तो तत्काल वर्षा होती है।

उत्तरस्यां यदा विद्युत्स्वर्ण वर्णा प्रदीप्यते ।  
सा विद्युज्जलदाज्ञेया शीघ्रं मेघमहोदये ॥

उत्तर दिशा की बिजली यदि स्वर्ण के समान वर्ण वाली और दीप्तिमान् हो तो शीघ्र वर्षा होती है।

स्निग्धा स्निग्धेषु चाप्रेषु विद्युत्स्लाव्या जलावहा ।  
कृष्णातु कृष्ण मार्गस्था वात वर्षा वहा भवेत् ॥

यदि रिनग्ध वर्ण के बादल में स्निग्ध वर्ण की बिजली हो तो वर्षा होवे और जो कृष्ण वर्ण की और कृष्ण मार्ग (दक्षिण) की हो तो वायु का भय होवे।

अथ रश्ममती स्निग्धा हरिता हरित प्रभा ।  
दक्षिणा दक्षिण वर्त्या कुर्यादुदक सम्प्लवम् ॥

अति प्रकाश वाली स्निग्ध वर्णकी तथा हरे प्रकाश वाली हरे रंग की व प्रदक्षिण फिरने वाली बिजली हो तो अवश्य वर्षा होती है।

रश्मीति मेदिनी भाति विद्युद् पर दक्षिणा ।  
हरितालातिरोमा च सोदकं पाययेद्द्वः ॥

पृथ्वी पर प्रकाश करने वाली हरताल के सदृश पीत वर्ण की बहुत किरणों वाली बिजली यदि दक्षिण के बिना किसी दिशा की हो तो बहुत वर्षा होती है।

अपारेण चु याविद्युच्चरते चोतरा मुखी ।  
कृष्णाभ्र संश्रिता स्निग्धा सापि कुर्याज्जलागमम् ॥

कृष्णवर्ण के बादलों में स्निग्ध वर्ण की बहुत विस्तार वाली बिजली यदि उत्तर की ओर जावे तो अवश्य वर्षा होती है।

या तु पूर्वोत्तरा विद्युददक्षिणा च पलायते ।  
चोरत्यूर्ध्वं च तिर्यक् सापि श्वेता जलावहा ॥

ईशान की श्वेत बिजली यदि शीघ्र गति से दक्षिण की ओर तथा नीची व तिरछी जावे तो वर्षा होती है।

तथैवोद्भव्यो वापि स्निग्धा रश्ममती भृशम् ।  
सद् घोषा वाप्यघोषा वा विद्युत्सर्वेषु वर्षति ।

ऐसे ही ऊँचे व नीचे जाने वाली श्रेष्ठ गर्जन करने वाली या नहीं गाजने वाली स्निग्ध बिजली हो तो वर्षा होती है।

पृथक् रंग की विजली से वर्षा का ज्ञान  
 नीला ताप्रा च गौराश्च खेता वा भ्रान्तरं चरेत् ।  
 सधोषा मन्दधोषा वा विद्युदुदकं सम्मलम् ॥

नीली, श्वेत, ताप्र वा गौर वर्ण की और एक बादल दूसरे बादल में जाने वाली मधुरगर्जना से युक्त विजली हो तो बहुत वर्षा होवे ।

वाताय कपिला विद्युदातया याति लोहिनी ।  
 कृष्णा सर्वविनाशाय दुर्भिक्षाय सिता भवेत् ॥

यदि विजली का रंग कपिल हो तो वायु अधिक चले, लाल हो तो धूप अधिक तपे, काला हो तो सर्व नाश करे और श्वेत हो तो दुर्भिक्ष पड़े ।

ऋतुओं में वर्षा करने वाली विजली  
 शिशिरे नैव वर्षन्ति रक्ता पीताश्च विद्युतः ।  
 नीलाः श्वेता वसन्ते च न वर्षन्ति कदाचन ॥  
 हरिता मधु वर्णाश्च ग्रीष्मे रुक्षाश्च निश्चलाः ।  
 भवन्ति ताप्र गौराश्च वर्षा स्वपि निरोधकाः ॥  
 शारदी नाभि वर्षन्ति नील वर्णाश्च विद्युतः ।  
 हेमन्ते श्याम ताप्रास्तु तद्विद्युन्निर्जला स्मृता ॥

शिशिर ऋतु में लाल वा पीली, वसन्त ऋतु में नीली वा श्वेत, ग्रीष्म ऋतु में हरी वा शहद के रंग की रुक्षी तथा निश्चल, वर्षा ऋतु में ताप्र वा गौर रंग की, शरद ऋतु में नीली और हेमन्त ऋतु में श्याम व ताप्र रंग की ऐसी निर्जल विजलियों से वर्षा न होवे ।

रक्तां रक्तेषु चाभ्रेषु हरिता हरितेषु च ।  
 नीला नीलेषु चाभ्रेषु वर्षन्ति निष्टयोनिषु ॥

किन्तु उक्त ऋतुओं में भी जो लाल बादल में लाल, हरे बादल में हरी वा नीले बादल में नीली विजली हो तो वर्षा होवे । क्योंकि बादल और विजली का एक ही रंग हो तो वह निर्जल नहीं होती ।

विजली से मेघों का सम्बन्ध ।  
 विद्युदिना न गर्जन्ति वर्षन्ति न जलं बहुः ॥

विजली के बिना मेघ कभी नहीं गर्जते तथा वर्षा भी विशेष नहीं करते ।  
 मूशलो गजनीलश्च दुन्दुभिः क्रम पार्थिवो ।  
 पर्जन्यो माधवो धाता महा मेघाः प्रकीर्तिताः ॥  
 वर्षन्ते न च गर्जन्ति न च विद्युदशं गताः ।  
 प्लावयन्ति जगत्सर्व जलेनैकेन वर्षणात् ॥

परन्तु मशाल, गज, नील, दुन्दुभि, विक्रम पार्थिव पर्जन्य, माधव और धाता ये 10 महा मेघ गाज तथा विजली के बिना ही बहुत वर्षा करते हैं जैसे बम्बई आदि में । शास्त्रकारों ने बादलों के अनेक भेद बतलाये हैं किन्तु इस विद्या का प्रचार उठ जाने से इन के फल बतलाना तो दूर रहा लोग इनका पहचानना भी भूल गये ।

#### वैज्ञानिक अनुसंधान-

बादल में जल कण की मात्रा, वातावरण का ताप-चाप, वायु की गति सूर्य-किरण आदि के कारण बादल के विभिन्न रंग, विभिन्न आकार-प्रकार होते हैं । विज्ञान के अनुसार सूर्य-किरण जब विभिन्न माध्यम से गुजरती है तब सूर्य-किरण का विकिरण होता है । मध्यम की सान्द्रता के कारण विकिरण की डिग्री (कोण) में विभिन्नता आती है । इसके कारण ही सूर्य-किरण में जो मुख्यतः सात रंग है वह भी विभिन्न अनुपात से प्रतिबिम्बित होती है । इसके कारण ही इन्द्र-धनुष का निर्माण होता है । बादल में विभिन्न रंग परिलक्षित होते हैं । इसी सिद्धान्त के अनुसार प्रातः व सन्ध्याकाल में लालीमा आदि दिखाई देती है, सूर्य एवं चन्द्र में परिवेष (कुण्डल) दिखाई देते हैं । बादल में जो धन आवेश व ऋण आवेश होता है उस आवेश के कारण विद्युत-चमकती है एवं बादल के गरजने की आवाज आती है । चाप एवं ताप के कारण वायु-संचार प्रभावित होता है । इसके कारण बादल की गति भी प्रभावित होती है । उपर्युक्त वैज्ञानिक कार्यकारणों के सम्बन्धों से ही वायु-संचार, विद्युत, गाज (गरजना), इन्द्र-धनुष, संध्या, विजली, दिग्दाह, परिवेष आदि से वर्षा का पूर्वानुमान लगाते हैं । वैज्ञानिक लोग भी उपर्युक्त

सिद्धान्त के अनुसार वैज्ञानिक उपकरण बोरोमीटर आदि से वर्षा का पूर्वानुमान लगाते हैं।

### आने वाले मौसम का पता लगाने के उपाय

आज आकाश में बादल छाये रहेंगे, शाम को गरज के साथ छीटे पड़ेंगे आज आंधी आने की संभावना है आदि मौसम संबंधी सूचनाएँ हमें रेडियो, टेलीविजन और समाचार पत्रों से रोज ही रोज प्राप्त करते रहते हैं।

मौसम संबंधी पूर्वानुमान लगाने के लिये वायु के दबाव, इसकी दिशा, आर्द्रता, तापमान, बादलों का बनना, वर्षा एवं बर्फ जैसे बहुत से ऐसे तथ्यों का अध्ययन करना पड़ता है। जिनके ऊपर मौसम निर्भर करता है। इन सभी तथ्यों का अध्ययन करने के लिए एवं तत्संबन्धी आंकड़ों को एकत्र करने के लिए हर देश का मौसम विभाग बहुत से यंत्रों एवं उपकरणों का प्रयोग करता है। देश के मुख्य-मुख्य स्थानों पर मौसम संबंधी जानकारी प्राप्त करने वाले केन्द्र होते हैं। ये केन्द्र मौसम संबंधी हर प्रकार के आंकड़े जमा करते हैं। वायु के वेग और दिशा ज्ञात करने के लिए वायुवेगमापी तथा नमी ज्ञात करने के लिये आर्द्रतामापी यंत्र प्रयोग में लाये जाते हैं। वर्षामावी की सहायता से वर्षा होने के आंकड़े तथा सनशाइन रिकार्डर की सहायता से धूप निकलने की अवधि का पता लगाया जाता है। उच्चतम-न्यूनतम तापमापी से दिन और रात का अधिकतम और निम्नतम तापमान ज्ञात किया जाता है। बादलों के विषय में गुब्बारों की मदद से सूचना प्राप्त की जाती है। वायु दाब मापी से वायुमण्डल का दबाव ज्ञात किया जाता है। इन सब आंकड़ों की सहायता से मौसम संबंधी नक्शे तैयार किये जाते हैं, जिन की सहायता से मौसम विशेषज्ञ आने वाले मौसम के विषय में निष्कर्ष निकालते हैं और उन्हीं निष्कर्षों के आधार पर मौसम की भविष्यवाणी की जाती है। कभी-कभी कुछ निष्कर्षों में त्रुटियां रह जाती हैं इसलिये मौसम की भविष्यवाणी गलत हो जाती है।

वायु के दबाव का अचानक कम हो जाना आंधी या तृफान की सूचना देता है। वायु के दबाव में धीरे-धीरे कमी होना वायुमण्डल में की वृद्धि का द्योतक है और वर्षा होने की संभावना बताता है। पुरवा हवाओं का चलना भी वर्षा होने का लक्षण है। वायु के दबाव का बढ़ना अच्छे मौसम की सूचना देता है।

स्वचालित यंत्रों से लैस मौसम सम्बन्धी ऐसे गुब्बारे भी आकाश में उड़ाये जाते

हैं जो मौसम के विषय में बहुत सी बातों का ज्ञान कराते रहते हैं। अब तो वैज्ञानिकों ने मौसम की जानकारी प्राप्त करने के लिये कृत्रिम उपग्रहों का भी उपयोग करना शुरू कर दिया है जो स्वयं ही मौसम संबंधी आंकड़े जमा करते रहते हैं तथा इनमें लगे कम्प्यूटर इन आंकड़ों का विश्लेषण करके मौसम संबंधी सूचना हमें देते रहते हैं।

### बिजली एवं शब्द के कारण

प्राचीनकाल में जब आसमान में बिजली चमकती थी और गड़गड़ाट की आवाज होती थी तो मनुष्य सोचता था कि ईश्वर उससे नाराज हो गया है और उसे किसी दुष्कर्म की सजा दे रहा है। बेन्जामिन फ्रैन्कलिन पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सन् 1872 में बिजली के चमकने का सही कारण बताया। जब आकाश में बादल छाए होते हैं तो उनमें उपस्थित पानी के छोटे-छोटे कण वायु की रगड़ के कारण अविशित हो जाते हैं। कुछ बादलों पर धनात्मक अविश आ जाता है और कुछ पर ऋणात्मक आवेश। जब एक धनात्मक अविशित बादल ऋणात्मक अविशित बादल के पास पहुंचता है तो उनके बीच में लाखों वोल्ट का विद्युत विभवान्तर पैदा हो जाता है। इतने अधिक विभवान्तर के कारण इनकी बीच की वायु में से विद्युतधारा बहने लगती है। जैसे ही विद्युत धारा बहती है वैसे ही प्रकाश की एक रेखा सी पैदा होती है। इसी को हम बिजली का चमकना कहते हैं। विद्युतधारा के कारण बहुत अधिक गर्मी पैदा होती है। जिससे वायु एकदम से फैलती है। अचानक फैलाव के कारण वायु के असंख्यों अणु एक दूसरे से टकराते हैं। इनके टकराने से पैदा हुई आवाज ही गड़गड़ाट (Thunder) कहलाती है। बिजली का चमकना और गड़गड़ाट का पैदा होना एक ही साथ होते हैं, लेकिन हमें बिजली की चमक पहले दिखाई देती है, इसका कारण यह है कि प्रकाश का वेग 300000 किलोमीटर प्रति सैकण्ड है, जबकि ध्वनि का वेग 332 मीटर प्रति सैकण्ड है। इस वेग के अन्तर के कारण रोशनी तो फौरन ही हमारी आंखों तक पहुंच जाती है लेकिन ध्वनि को कानों तक पहुंचने में कुछ समय लगता है।

कभी-कभी जब कोई आवेशित बादल पृथ्वी के किसी ऊंचे पेड़ या ऊंची इमारत के पास से गुजरता है तो उसके आवेश का विपरित आवेश उस पेड़ या इमारत के ऊपर प्रेरण द्वारा पैदा हो जाता है। जब इस अविश की मात्रा बहुत अधिक

हो जाती है तो वायु में होकर विद्युतधारा एकदम से बहती है। जिससे बिजली चमक उठती है। ऐसा होने पर हम कहते हैं कि अमुक पेड़ या इमारत पर बिजली गिर गई है।

ऊंची इमारतों के इस तरह की बिजली से बचाने के लिए उनके साथ-साथ तांबे या और किसी धातु की नुकीली छड़ लगा दी जाती है। इन छड़ों को जमीन में गहरा गाड़ दिया जाता है। इनको तड़ित चालक कहते हैं। जब कोई आवेशित बादल इस इमारत के पास से गुजरता है और इमारत पर विपरित आवेश पैदा करता है तो यह आवेश छड़ में होता हुआ पृथ्वी के अंदर चला जाता है, इमारत के ऊपर जमा नहीं हो पाता। इस प्रकार बिजली गिरने से बच जाती है।

### आद्रता के कारण एवं कार्य

यदि आप अपनी मेज पर बर्फ (Ice) या ठंडे पानी से भरा हुआ एक गिलास रख दो तो देखोगे कि थोड़ी ही देर में गिलास की बाहरी सतह पर पानी की छोटी-छोटी बूंदे जमा हो जाती है। ये पानी की बूंदे वायु में उपस्थित नमी के संघनित (Condense) होने से बनती हैं।

वायु में पानी की नमी जलबाष्य के रूप में हमेशा ही उपस्थित रहती है। यह जलबाष्य हमें दिखाई नहीं देती। अलग-अलग स्थानों पर वायु में जलबाष्य की मात्रा अलग-अलग होती है। यहां तक कि बड़े-बड़े रेगिस्तानों की हवा में भी जलबाष्य भी कुछ मात्रा होती है। हम जानते हैं कि धरती की लगभग 70 प्रतिशत सतह पानी से ढकी हुई है। सूरज की गर्मी के कारण समुद्रों, नदियों, झीलों और तालाबों का पानी बाष्पित होता रहता है और यही बाष्प वायु में मिलती रहती है। इसी को हम हवा की नमी के नाम से पुकारते हैं।

विज्ञान की भाषा में वायु में उपस्थित पानी की नमी को आद्रता कहते हैं। अलग-अलग मौसमों में वायु में नमी भी अलग-अलग होती है। गर्मी में जाड़े की अपेक्षा वायु में जलबाष्य ती मात्रा अधिक होती है, क्योंकि गर्मी के दिनों में अधिक तापमान के कारण समुद्र, नदी, तालाब, आदि से जल अधिक बाष्पित होता है तथा गर्मी के कारण फैली हुई हवा में अधिक भाप समा सकती है। बरसात के दिनों में वायु की नमी बहुत अधिक बढ़ जाती है क्योंकि बरसात में धरती की सतह का बहुत बड़ा हिस्सा पानी से ढक जाता है जो बाष्पित होकर वायुमण्डल

में जाता रहता है।

वायु की नमी के कारण ही ओस पड़ती है। बादलों का बनना और वर्षा का होना भी वायु की नमी पर ही निर्भर करता है। कोहरा (Fog), पाला (Foost), हिमपात (Snowfall) आदि भी वायु की नमी के कारण ही होते हैं।

वायु की नमी के अध्ययन से हमें मौसम सम्बन्धी बहुत सी बातों का पता चलता है। जिन यन्त्रों से वायु की नमी मापी जाती है उन्हें आर्द्रतामापी कहते हैं। यदि वायुमण्डल में नमी अधिक है तो वर्षा होने की सम्भावना रहती है। वायु की नमी के ज्ञान से स्वारथ्य विभाग को भी बहुत मदद मिलती है। कुछ रोगों के कीटाणु नम वायु में तेजी से पनपते हैं। इससे स्वारथ्य विभाग के लोगों को यह पता लग जाता है कि अधिक नमी वाले स्थानों में किस रोग के कीटाणु अधिक होंगे। सूत के कारखानों में भी नम वायु की अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि वायु में नमी अधिक होने से सूत का धागा आसानी से नहीं टूटता। इस प्रकार हम देखते हैं कि वायु में उपस्थित नमी का अध्ययन हमारे लिए बहुत ही उपयोगी है। बादलों में पानी की असंख्य महीन महीन बूंदे होते हैं। ये बूंदे सूर्य के किरणों के पृथ्वी तक पहुँचाने से रोकती हैं। बादलों का रंग पानी की बूंदों की संख्याओं पर भी निर्भर करता है। जितनी ज्यादा बूंदे होंगी सूर्य की किरणें उतनी ही कम पृथ्वी तक आ पाएंगी और बादल उतने की काले नजर आएंगे।

एक किलोमीटर लंगे और गहरे बादल में 790 टन पानी बूंदों के रूप में और 7940 टन पानी जल बाष्प के रूप में विद्यमान रहता है।

एक औसत बरसात की बूंद बनने में लगभग 2 लाख बादल बूंदों की आवश्यकता होती है। हर द्रव की आकृति पृष्ठ तनाव के कारण सिकुड़ कर न्यूनतम क्षेत्रफल में रहने की कोशिश करती है। चूंकि गोल आकृति का क्षेत्रफल न्यूनतम होता है इसलिए वर्षा की बूंदे गोल होती है।

'घने जंगलों में पेड़-पौधों के द्वारा जल बाष्प वायुमण्डल में जाता रहता है जिससे वहां के वायुमण्डल में आद्रता अधिक हो जाती है। यही जल बाष्प ऊपर उठकर, ठंडी होकर बादल बन जाती है और वर्षा होने लगती है। इस तरह अधिक बन अधिक वर्षा का कारण बन जाते हैं।'

बादलों के ठंडा होने से बाष्प के लाखों छोटे-छोटे कण आपस में मिलकर

बूंद बनाते हैं। यही बूंदे भारी होने से बरसात के रूप में गिरने लगती हैं।

बरसात के दिनों में आपने महसूस किया होगा कि सुराही में पानी ठंडा नहीं रहता ऐसा क्यों होता है, जानते हो? ऐसा इशलिए होता है, क्योंकि गर्मियों में ताप अधिक होने से वायु शुष्क रहती है जिसके कारण सुराहीकी बाहरी सतह से बाष्पन की दर अधिक होती है और फलतः पानी ठंडा हो जाता है। लेकिन बरसात में वातावरण की वायु में आद्रता अधिक होने के कारण सुराही की बाहरी सतह से बाष्पन कम होता है और पानी कम ठंडा हो पाता है।

इसी तरह पसीने को पंखे की हवा से सुखाने पर ठंडक अनुभव होती है, क्योंकि हवा मिलने से शरीर के पसीने का बाष्पन होता है और बाष्पन की क्रिया में गुप्त ऊष्मा शरीर से निकलती है, जिससे शरीर का ताप कम होने से ठंडक अनुभव होती है।

### विज्ञानुसार बिजली की शक्ति

पृथ्वी के तापक्रम में वृद्धि अनुमान नहीं बल्कि एक तथ्य बन चुका है। वर्तमान दशक पूरी शताब्दी में सर्वाधिक गर्म दशक है, इस वर्ष के पहले 6 महीने में विश्व का ओसत तापक्रम पिछले 120 वर्षों में सबसे अधिक रहा। दिल्ली में तो इसबार गर्मी ने पिछले असी वर्षों के रिकार्ड को ध्वस्त किया। तापक्रम में वृद्धि के कुछ प्रभाव जैसे ध्रुवं पर हिमखंडों का पिहालना, सागर तटीय क्षेत्रों का ढूबना और फसलों पर बुरे प्रभाव से हम सभी परिचित हैं और पिछले कई वर्षों से लगातार पढ़ते चले आ रहे हैं। इसके अन्य कई प्रभाव हैं जिनके बारे में हमें कम जानकारी है पर भविष्य में खतरा पैदा कर सकते हैं। बढ़ते तापक्रम का आसमान में बादलों के नीचे चमकने वाली बिजली (दामिनी) पर प्रभाव के बारे में भी कम जानकारी है। अमरीका स्थित मेंसेच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी के वैज्ञानिक अलविलियम के अनुसार पूरे विश्व में दामिनी की क्रियाशीलता का सीधा सबंध पृथ्वी के ओसत तापक्रम से है। बिजली की चमक और तापक्रम का रिश्ता संवहन के कारण है। पृथ्वी की सतह का तापक्रम जितना अधिक होगा, संवहन उतना ही तीव्र होगा और इससे आंधी और दामिनी दोनों ही प्रचंड होती जाएगी। पृथ्वी वायुमंडल एक गोलाकार संघारित्र (कैपिसिटर) की तरह व्यवहार करता है, जिसके नीचे पृथ्वी और ऊपर का आयनोरेफ्यर

दोनों ही चालक-सतह का कार्य करते हैं। तेज आधियां संयारेत्रको आवेदित करती हैं अतः सैद्धांतिक तौर पर यह माना जाता है कि किसी भी स्थान पर आयनोरेफ्यर के विभव की माप से विश्व में आंधियों की स्थिति और पृथ्वी के औसत तापमाप को बताया जा सकता है। कैलिफोर्निया स्थित लॉरेंस लिवरमोर नेशनल लैबोरिटरी के वैज्ञानिकर कोलिन प्राइस का मत है कि पृथ्वी की सतह के औसत तापमान में वृद्धि से आयोनोर-फेयर का विभव करीब 10 किलोवोल्ट बढ़ जाएगा। इसलिए यह निश्चित है कि पृथ्वी के तापक्रम के बढ़ने के साथ ही वायुमंडल में बिजली के चमकने की दर और तीव्रता बढ़ती जाएगी। दामिनी या तड़ित की परिक्रमा वायुमंडल में होने वाले प्रकृतिक वैद्युत निरावेशण है। यह चमक प्रायः क्युमुलोनिम्बस बादलों के बीच होती है पर कभी-कभी निम्बोस्ट्रेटस बादलों बर्फाली तथा धूल भरी आंधियों के बीच भी ऐसा होता है। चमक इसलिए होती है क्योंकि घनात्मक और प्रहाणत्मक क्षेत्र अलग अलग बनते हैं। यह अलगाव एक वैद्युतीयविधान को जन्म देता है और जब इस विभव की तीव्रता वायु के विद्युतीय आवेग से अधिक होती है, तब बिजली चमकती है। बादलों और पृथ्वी के बीच एक या कई चमक हो सकती हैं, जिससे इनका झिल-मिलाने का अहसास होता है। पृथ्वी से नंगी आंखों द्वारा बादलों के बीच होने वाले मात्र 20 प्रतिशत तड़ित को ही देखा जा सकता है पर इनके प्रभाव से अकेले अमरीका में प्रतिवर्ष जंगलों में आग लगने की लगभग 10,000 घटनाएं होती हैं। आधुनिक समय में 14 नवम्बर 1969 को केम्प केनेडी में चंद्रमा पर जाने वाले अपोलो-12 पर बिजली का गिरना सर्वाधिक चर्चित रहा है। हालांकि इससे कुछ विशेष नुकशान नहीं हुआ था। बादलों से पृथ्वी के बीच चमकने वाली बिजली में प्रायः सर्वाधिक धारा 20,000 एम्पीयर की होती है, जबकि तापक्रम 30,000 केलिबल तक पहुंच जाता है। कोलिन प्राइस के अनुसार पूरे विश्व में प्रति सेकेंड 70 से 100 तक बार बिजली चमकने की घटना होती है। इनके अनुसार बादलों से पृथ्वी तक आने वाली चमक में अधिकतम धारा 36 किलो एम्पीयर तक पहुंच सकती है, जो परंपरागत अनुमानों से लगभग दो गुना है। हाल में अमरीका में किये गये अनुसंधान से यह स्पष्ट हुआ है कि ऊष्णकटि-बंधीय क्षेत्रों को तड़ित ज्यादा शक्तिशाली होती है। उदाहरण के लिए फ्लोरिडा में चमकने वाली बिजली

के मुकाबले दो गुना तेजी रहती है। गर्मी के दिनों में ज्यादा बिजली चमकती है। और दो-तिहाई बिजली उष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों में पृथ्वी तक पहुंचती है, जहां भूमि के अधिक गर्म होने के कारण तूफान वाले बादलों का जन्म होता है। उत्तरी गोलार्ध में अधिक भूमि है अतः यहां की गर्मी में तड़ित की आवृत्ति अधिक रहती है यह तो पहले ही मालूम था कि बिजली के चमकने के दौरान वायु में नाइट्रोजन तथा ऑक्सीजन गैसें नाइट्रोजन आपस में प्रतिक्रिया कर नाइट्रोजन के ऑक्साइड बनाती हैं पर इसकी मात्रा सही अनुमान नहीं था। बिजली की ज्यादा शक्तिशाली चमक ज्यादा मात्रा में नाइट्रोजन ऑक्साइड बनाती है इन ऑक्साइड में से एक नाइट्रस ऑक्साइड की वायुमंडल को गर्म करने की क्षमता कार्बन डाई ऑक्साइड के मुबाकले 300 गुना अधिक है। दूसरे ऑक्साइड हाइड्रोकार्बन के साथ प्रतिक्रिया कर ओजोन गैस बनाते हैं, जो स्वयं वायुमंडल को मर्म करने में सक्षम हैं। अब तक यह माना जाता रहा था कि विश्व भर में बिजली चमकने की घटना के दौरान प्रतिवर्ष 50 लाख टन नाइट्रोजन के ऑक्साइड का निर्माण होता है, जबकि जीवाण्ड ईंधनों के जलने से 240 लाख टन तथा वनोंके जलने से 80 लाख टन ऑक्साइड प्रतिवर्ष वायु मंडल में मिलते हैं पर कोलिन प्राइस के अनुसार बिजली का चमकना, जो नाइट्रोजन के ऑक्साइड का सर्वप्रमुख प्राकृतिक स्रोत है, का योगदान प्रतिवर्ष करीब एक से डेढ़ करोड़ टन तक है। अधिकांश नाइट्रोजन के ऑक्साइड ट्रोपोस्फेर के ऊपरी परत में बनते हैं, जहां ये वायुमंडल को गर्म करने में ज्यादा सक्षम है। बिजली के चमकने की घटनाएं पूरे विश्व में होती हैं तथा किसी भी समय प्रति सेकेंड 1800 आंधियां और करीब 100 बिजली चमकने की घटना होती है प्रतिदिन के हिसाब से देखें तो पृथ्वी पर 44000 झंझावातों के दौरान 8,00,000 बिजली चमकने की घटनाएं होती हैं अतः भविष्य में तड़ित एक महत्वपूर्ण घटना होगी, क्योंकि पृथ्वी का तापक्रम बढ़ता ही जा रहा है। इतना तो स्पष्ट है कि बढ़ते तापक्रम से बिजली गिरने की घटनाएं बढ़ेगी और शायद जान-माल की हानि भी अधिक होगी। दूसरी तरफ बिजली की तेज चमक अधिक मात्रा में नाइट्रोजन के ऑक्साइड बनाएगी। जिससे पर्यावरण गर्म होता जाएगा। अतः यह खतरनाक चक्र होगा, जिससे भविष्य में जीवन को खतरा बढ़ता ही जाएगा। अतः यह खतरा नाइट्रोजन के ऑक्साइड के बल पर्यावरण

को ही गर्म नहीं करते बल्कि ओजोन की पर्त को भी नुकसान पहुंचाते हैं, अतः यह खतरा भी बढ़ता जाएगा तड़ित या 'डामिनी' पर नियंत्रण तो मनुष्य के हाथ में नहीं है, पर पर्यावरण को गर्म होते जाने से रोकने के लगातार प्रयास किये जा रहे हैं। पर अभी इस क्षेत्र में विस्तृत अनुसंधान की आवश्यकता है। पहले केवल कार्बन डाईऑक्साइड को वातावरण को गर्म करने के लिए जिम्मेदार माना जाता था, पर अब अनेक स्रोत लगातार इस सूचीमें जुड़ते जा रहे हैं। कई विकसित देश वर्षों से सल्फर हेक्साइक्लोराइड नामक एक गैस का प्रयोग प्रदूषण के विस्तार और फैलाव को परखने के लिए करते आ रहे हैं कि यह गैस पर्यावरण गर्म करने के क्षेत्र में कार्बन डाई ऑक्साइड के मुकाबले 25000 गुना ज्यादा प्रभावी है और इसकी हाफ-लाइफ 3200 वर्षों की है। इस रसायन का प्रयोग अमरीका और कुछ यूरोपीय देश विशेष तौर पर डेनमार्क ने खूब किया है। नये अनुसंधान के अनुसार फ्लोरोरोफार्म नामक एक गैस की 1,35,000 टन मात्रा वायुमंडल में व्याप्त है। यह गैस ए.सी.एफ.सी. 22 नामक रसायन के उत्पादन के समय उत्पन्न होती है। फ्लोरोफार्म, कार्बन डाई ऑक्साइड के मुकाबले वायुमंडल को गर्म करने में 10,000 गुना ज्यादा सक्षम है और यह वायुमंडल में 260 वर्षों तक बनी रहती है। अभी प्रतिशत की दरसे इसकी मात्रा वायुमंडल में बढ़ती जा रही है। अमरीकी वैज्ञानिकों ने वाहनों में प्रदूषण कम करने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले केटेलिदिक कल्वर्टर को भी पर्यावरण को गर्म करने का एक स्रोत माना है। अमरीका और जर्मनी में इनका प्रचलन बीस वर्ष पहले शुरू हुआ था और उस समय के कन्वर्टर में नाइट्रस ऑक्साइड को रोकने का कोई प्रावधान नहीं था। अतः इनसे बड़ी मात्रा में यह गैस निकलती है और पर्यावरण को गर्म करने का कार्य करती है। यह गैस कार्बन डाईऑक्साइड के मुकाबले पर्यावरण को गर्म करने में 300 गुना अधिक सक्षम है। अमरीका के वातावरण में 1990 से 1996 के बीच नाइट्रस ऑक्साइड की सांचता 50 प्रतिशत बढ़ गयी।

कई विशेषज्ञों का यह मत है कि अपनी तमाम कोशिशों के बाद भी कार्बन डाई ऑक्साइड को भी नियंत्रित करने में कुछ दशक और लगेंगे, अतः पर्यावरण गर्म होता ही जाएगा। ऐसे में बारिश का मौसम और भयावहा होता जाएगा क्योंकि रिमझिम फुहारों के बीच और तेज बिजली चमकेगी तथा बादलों की कड़क भी

बढ़ जाएगी । (महेन्द्र पाण्डेय)

### गाज प्रकरण

आदित्योदयवेलायां गर्जते च दिन यदि ।  
प्रहर द्वयेनवर्षन्ति अथवा वातमेव च ॥  
सूर्योदय के समय मेघ गाजे तो दो प्रहर में अवश्य वर्षा होवे परन्तु कदाचित् वर्षा न हो तो वायु जोर से चले ।

परभात को गाजियो महा पुरुष को भाषियो॥

जैसे महात्माओं का वचन खाली नहीं जाता वैसे ही प्रभात का गाजा हुआ भी खाली नहीं जाता अर्थात् वर्षा करता ही है।

विन बादल अम्बर गाजे गाजत जा दिशि जाय ।

करे भंग उस देश में लोकन हाय तिराय ॥

यदि बादलों के बिना केवल आकाश ही गाजे तो उस गाज का शब्द जिस देश की ओर जावें उस देश का नाथ तथा वहाँ की प्रजा को कष्ट होवें।

### जलादि वर्षा प्रकरण

रवि उगणते भर्दुली जो जल विन्दु पड़न्त ।

पहर चौथे के पांचवें घन सगलै वर्षन्त ॥

यदि सूर्योदय के समय जल की बूदे वर्षे तो 4थे 5वें प्रहर में सर्वत्र वर्षा होवे ।

रवि आथमते भर्दुली जो जल विन्दु पड़न्त ।

दिन चौथे के पांचवे निश्चय घन वर्षन्त ॥

यदि सूर्यास्त के समय जल की बूदे वर्षे तो 4थे व 5वें दिन में अवश्य वर्षा होगी।

क्षार वा कटुकं वाथ दुर्गन्ध शस्य नाशनम् ।

यस्मिन्देशे ऽभिर्षन्ति स वै देशो विनश्यति ॥

यदि क्षार युक्त वा कटुवा व दुर्गन्ध वाला पानी वर्षे तो खेतियों को हानि तथा देश का नाश होवे ।

मैडक मच्छ ममोल्या वर्षे। होय सुभिक्ष जगत सब हर्षे।

शंख सिंगोट्या वर्षे गार। कहे फोगसी काल विचार ॥

जल की वर्षा के साथ यदि मैडक मच्छी वा ममोल्या (वीर बहृटी) वर्षे तो सुभिक्ष होवें और जो शंख सिंगोट्या वा ओला वर्षे तो दुर्भिक्ष पड़े।

### सन्ध्या प्रकरण

अहोरात्रस्य या सन्धिः सा च सन्ध्या प्रकीर्तिता ।

द्विनाडिका भवेत्साधुर्यावदा ज्योति दर्शनम् ॥

दिन और रात्रि का मेल होता है उस दो घड़ी के समय को सन्ध्या कहते हैं। अर्थात् तारों का तेज मन्द पड़ने से आधे सूर्य के उदय तक प्रातः सन्ध्या और आधे सूर्य के अस्त होने से तारों का प्रकाश होने तक सायं सन्ध्या जाननी चाहिये।

सर्वकाल में सन्ध्या के शुभाशुभ लक्षण

नभोऽमलं शुभ दिशः पद्मारुण समप्रभाः ।

मारुतो वाति सुरभिः सुखदो मृदु शीतलः ॥

एषा सन्ध्या शुभा ज्ञेया विपरीता ऽशुभा स्मृता ।

रुक्षा च सविकारार्का क्रव्याद खर नादिता ॥

सन्ध्या के समय आकाश निर्मल हो, दिशा कमल के सदृश लाल हो, वायु सुगन्धित सुख स्पर्श मन्द तथा शीतल हो तो शुभ और इन से विपरीत हो अथवा रुक्ष हो तथा विकारवान् सूर्य हो और पशु पक्षियों के भयानक शब्द से युक्त हो तो अशुभ जाने।

ऋतुओं में सन्ध्या के शुभाशुभ लक्षण

शिशिरादिषु वर्णः शोण पीत सित चित्र पद्मरुधिर निभाः ।

प्रकृतिभाव सन्ध्या स्वर्तो शस्ता विकृति स्त्या ॥

सन्ध्या शिशिर ऋतु में लाल, वसन्त में पीत, ग्रीष्म में श्वेत, वर्षा में चित्र, विचित्र, शरद में पीत, लाल और हेमन्त में रुधिर के वर्ण की तथा ऊपर कहे लक्षणों से विपरीत हो तो अशुभ जाने।

सन्ध्या समय के चिह्नों से वर्षा का ज्ञान ।

द्योतयन्ति दिशाः सर्वा यदा सन्ध्या प्रदृश्यते ।

महामेघस्तदा विद्याभद्रबाहु वचो यथा ॥

सन्ध्या के समय यदि सम्पूर्ण दिशायें प्रकाशमान् हो जावें तो शीघ्र वर्षा होवे।

सन्ध्या काले स्निग्धा दण्डतडिन्मत्स्यपरिधिपरिवेषा:।  
सुरपतिचापैरावतर विकिरणा श्चा शुद्धिकरा:॥  
अनावृष्टिर्भयं रोगं दुर्भिक्षं राजविद्रवम् ।  
रुक्षायां विकृतायां च सन्ध्यायामपि निर्दिशेत् ॥

सन्ध्या के समय छोटा इन्द्रधनुष, ऐरावत (बड़ा इन्द्रधनुष) दण्ड (इन्द्रधनुष के सदृश छोटा सा सीधा टुकड़ा), परिधि (इस के लक्षण 'प्रति सूर्य प्रकरण' में देखो), सूर्य वा चन्द्रमा के कुण्डल, बिजली, वा सूर्य की किरणें (मोघे) यदि स्निग्ध हो तो तत्काल वर्षा होवे और जो रुक्ष हो तो अनावृष्टि, भय, रोग, दुर्भिक्ष आदि उपद्रव होवे।

अगमतेरो माछलोः आथमतेरी मोघ ।  
भीम कहै सुण भहुली वर्षा तणो संजोग ॥  
प्रातः सन्ध्या के समय मच्छ और सायं सन्ध्या के समय मोघ हो तो वर्षा होवे।

सन्ध्या के समय पृथक् 2 दिशाओं के मेघों से वर्षा ज्ञान।  
पूर्वेण यदि सन्ध्यायां मेघेः सञ्चादितं नभः ।  
के चिदुष्टसदृशमेघाः केचित्कुञ्जरसन्निभाः ॥  
केचिर्देशूकरमुखाः) केचिद् वृषभसन्निभाः ।  
केचिर्देव पर्वताकाराः केचिन्महिषसदृषाः ॥  
ईदृग्वर्णाश्च ये मेघा वर्षन्ते नात्र संशयः॥  
पञ्चरात्रं भवेद् वृष्टिः सप्तरात्रं तथैव च ॥

सन्ध्या के समय पूर्व दिशा में यदि पर्वत हाथी, ऊँट, महिष, बैल या शूकर, आदि के आकार के बादल हों तो 5 वा 7 रात्रि तक अवश्य वर्षा होवे।

सन्ध्या में ललिमा दिखाई देने का कारण

हम जानते हैं कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती रहती हैं। पृथ्वी के जिस स्थान पर सूर्य की किरणें पड़नी शुरू हो जाती हैं, वह प्रकाशमान हो जाता है और इसी को हम दिन कहते हैं। हम यह भी जानते हैं कि सूर्य का प्रकाशजो सफेद दिखता है, वास्तव में वह सात रंगों से मिलकर बना है। ये सात रंग हैं,

बैंगनी (Violet), जामुनी, (Indigo), नीला (Blue), हरा (Green), पीला (Yellow), नारंगी (Orange) और लाल (Red)। सुबह और शाम के बक्त जब सूरज क्षितिज के पास होता है, तो उससे आनेवाले प्रकाश को दोपहर की अपेक्षा वायुमण्डल में बहुत लम्बा मार्ग तय करना पड़ता है। सुबह और शाम के समय सूर्य के प्रकाश द्वारा वायुमण्डल में तय की गई दूरी दोपहर के समय में तय की गई दूरी की अपेक्षा 50 गुना अधिक होती है। सुबह और शाम सूर्य की किरणों को वायुमण्डल से अधिक दूरी से गुजरना पड़ता है। वायुमण्डल में उपस्थित धूल, धूएँ और भाप के कण हरे, नीले, बैंगनी रंग के प्रकाश का प्रकीर्णन (Scattering अनियमित परावर्तन) कर देते हैं। इसलिए हमारी आँखें तक पहुँचने वाले प्रकाश में बैंगनी नीले और हरे रंग की मात्रा बहुत ही कम पहुँच पाती है। केवल लाल, नारंगी व पीले रंग का प्रकाश ही हमारी आँखों तक पहुँच पाता है। इन तीनों रंगों में लाल की मात्रा सबसे अधिक होती है। इसलिए इन तीनों रंगों का मिश्रण नारंगी लाल हो जाता है। यही कारण है कि सूर्य उदय और अस्त होते समय हमें लाल दिखता है।

ईशान्यान्तु यदा मेघा जायन्ते यदि पार्वति ।  
वर्षते चार्द्धरात्रेण संध्याकाले च वर्षति ॥

पूर्वोक्त मेघ यदि ईशान कोण में हों तो प्रातः वा सायं सन्ध्या या आधी रात्रि के समय वर्षा होगी।

उत्तरे यदि संध्यायां दृश्यन्ते गिरिमालिका ।  
तृतीये दिवसे वृष्टिः पर्वमेकं तु वर्षति ॥

उत्तर दिशा में यदि शिखरदार पर्वतों की माला के आकार के मेघ हों तो तीसरे दिन वर्षा होगी।

वायव्यां तु या मेघा जायन्ते यदि पार्वति ।  
वातवृष्टिं विजानीयाहिवारात्रौ न संशयः ॥

पूर्वोक्त मेघ यदि वायव्य कोण में हों तो एक दिन रात्रि तक वायु जोर से चले।

पश्चिमे यदि संध्यायां दृश्यन्ते पर्वता यदि ।  
गिरनारस्य सदृशा दृश्यन्ते यदि पार्वति ॥

वर्षते सप्तरात्रं वा त्रिरात्रं पंचरात्रकम् ।  
द्रोणमेकं तु जायते वर्षते नात्र संशयः ॥



दिग्दाह के समय यदि आकाश निर्मल, तारे स्तिथ, वायु की गति सदा प्रदक्षिण, और दिग्दाह का वर्ण सुवर्ण जैसा तेज हो तो प्रजा तथा राजाओं का कल्याण हो ।

### तारा प्रकरण

तारका यत्र दृश्यन्ते निर्मलस्फटिकोपमाः ।

तन्मासं वर्षते मेघस्ततः सुभिक्षमादिशेत् ॥

तारे यदि निर्मल स्फटिक मणि के सदृश चमके तो उस मास में सुभिक्ष करने योग्य उत्तम वर्षा हो ।

तारकानां यथा वर्ण दृश्यते जलसन्निभम् ।

सप्तरात्रं यदा कुर्यात् तदा वृष्टिं समादिशेत् ॥

तारे 7 दिन तक यदि जल के सदृश चमकते रहें तो अवश्य वर्षा होवे ।

तारा अति झलमल करे अम्बर हरियो रंग ।

जल नहिं मावै मेदनी अनमै मेघ उपंग ॥

तारे बहुत झगमगाहट करें और आकाश का रंग भी हरा हो जावे तो बहुत वर्षा होवे ।

तारका यत्र दृश्यन्ते सूक्ष्मावलिसमप्रभाः ।

सुभिक्षं तत्र दृश्यन्ते अर्धन्तत्रैव वर्द्धते ॥

तारे यदि बहुत छोटे 2 तथा तेज युक्त दीखें तो सुभिक्ष होवे जिससे धान्यादि के भाव मन्दे हो जाये ।

स्थूलाकारास्तु दृश्यन्ते तारका अञ्जनप्रभाः ।

अधस्तित्रैव नश्यन्ति दुर्भिक्षं तत्र दृश्यन्ते ॥

तारे यदि बहुत बड़े 2 तथा विना तेज के और सुरभे जैसे काले रंग के दीखें तो हुर्मिक्ष पड़े जिससे धान्यादि के भाव तेज हो जायें ।

### परिवेष (कुण्डल) प्रकरण

पृथक् 2 ऋतुओं में पृथक् 2 रंग के कुण्डल से वर्षा का ज्ञान

चाषशिखिरतजैलक्षीरजलाभः स्वकालसम्भूतः ।

अविकलवृत्तः स्तिथपरिवेषशिवसुभिक्षकरः ॥

सूर्य वा चन्द्रमा का कुण्डल शिशिर ऋतु में नील कण्ठ पक्षी के, वसन्त ऋतु में मोर के, ग्रीष्म ऋतु में चांदी के, वर्षा ऋतु में तैल के, शरद ऋतु में दूध के, और हेमन्त ऋतु में जल के सदृश वर्ण वाला हो, तथा खण्डित न हों किंतु पूर्ण और स्तिथ हो तो कल्याण तथा सुभिक्ष हो ।

वर्णेनेकेन यदा बहुलः स्तिथः क्षुराभ्रकाकीर्णाः ।

स्वत्तौ सद्यो वर्ष करोति पीतश्च दीप्तार्कः ॥

ऋतु के अनुकूल एक ही वर्ण का बड़ा, स्तिथः और छुरी की धार के सदृश तीक्ष्ण बादलों से युक्त, वा तेज युक्त, वा सूर्य के पीले रंग का कुण्डल हो तो उसी दिन वर्षा होवे ।

चन्द्र सूर्य के कुण्डल होय । पांच प्रहर में वर्ष तोय ।

निपट नजीक लाल रंग साजे । घड़ी पलक महा मेहा गाजे ।

सूर्य वा चन्द्रमा के कुण्डल हो तो पाँच प्रहर में वर्षा होवे और बहुत नजदीक तथा लाल रंग का हो तो बहुत ही शीघ्र वर्षा होवे ।

दो दो कुण्डल सूर्य शशि एक नजीक एक दूर ।

माघा झड़ी लगावसी नदियों बहसी पूर ॥

सूर्य व चन्द्रमा के एक नजदीक और एक दूर ऐसे 2-2 कुण्डल हों तो वर्षा की झड़ी लगे जिससे नदियाँ बहुत जोर से बहें ।

पंच रंगे कुण्डल हुवें निशा नाथ के दोय ।

यों रवि के दिन तीनलों पृथ्वी परलय होय ॥

चन्द्रमा व सूर्य के पंच रंगे 2-2 कुण्डल 3 दिन तक होते रहें तो बहुत वर्षा होती है ।

कुण्डल तीन सूर्य राशि होय । भर भाद्रवडै बरसे तोय ।

गलै साख नदियाँ गरणवै । पृथ्वी पर पाणी नहिं भावै ॥

भाद्रपद में यदि सूर्य के व चन्द्रमा के 3-3 कुण्डल हों तो बहु ही अधिक जल बरसे जिससे खेतियाँ गलने लगें ।

शशि सूरज के कुण्डिया नित नित नवला होय ।

कै टीड़ी के कातरो भेद बताऊँ तोय ॥

यदि चन्द्रमा व सूर्य के नित्य प्रति नवीन-नवीन कुण्डल हों तो खेतियों की हानि करने वाले टीड़ी कातरा आदि जीवों की उत्पत्ति होती है।

चन्द्र के कुण्डल से वर्षा का ज्ञान

चन्द्र कुण्ड जब देखिये चले पवन परभात ।

चन्द्र कुण्ड युत जलहरी कहूँक वर्षा वात ॥

चन्द्रमा के केवल कुण्डल ही हो तब तो दूसरे दिन वायु चले और जो चंद्रमा के नजदीक जलहरी भी हो तो वर्षा होती है।

धूम्र कुण्ड रजनीश के एक नज़ीक एक दूर ।

माघा मेह वरसे नहीं धरा उड़ावे धूर ॥

चन्द्रमा के धुएँ के रंग के (एक नजदीक और एक दूर ऐसे) 2 कुण्डल हों तो वर्षा नहीं होती है किन्तु वायु जोर की चलती है।

चौड़ा कुण्डल तारा मोही । वाय बजावे वर्षा नाहीं ।

जो वर्षे तो झड़ी लगावे । सोता नाग पाताल जगावे ॥

यदि चन्द्रमा के बहुत बड़ा कुण्डल हो और उसके भीतर कोई तारा भी दिखे तो वायु चलती है किन्तु वर्षा नहीं होती है और जो कभी होती है तो फिर बहुत जोर की झड़ी लगे।

यदा तु सोममुदितं परिवेषो रुणद्विहि ।

जीमूत वर्णः स्निग्धश्च महामेघस्तदा भवेत् ॥

यदि नवीन उदय हुए चन्द्रमा के बादल से रंग का स्निग्ध कुण्डल हो तो बहुत वर्षा होती है।

सूर्य के कुण्डल से वर्षा का ज्ञान

कुण्डल श्वेत सूर्य के होय । निश्चय एक तथा हों दोय

तौ परचण्ड पवन चढ़ आवे । टूटे वृक्ष दसों दिस ध्यावे॥

यदि सूर्य के 1 व 2 श्वेत कुण्डल हों तो वृक्षों का गिराने वाला बहुत जो की हवा चलती है।

सूरज के कुण्डल हुवै । धण दूरो धण रंग ।

मेघ धुमड़ माघ जी घर घर चालै गंग ॥

यदि सूर्य के अनेक रंग का बहुत बड़ा कुण्डल हो तो बहुत वर्षा होती है।

चन्द्र और सूर्य के कुण्डल से वर्षा का ज्ञान

शशि के कुण्डल एक हो, रवि के कुण्डल दोय।

दिवस तीसरे माघजी निश्चय वर्षा होय ॥

चन्द्रमा के एक ओर सूर्य के दो कुण्डल हों तो तीसरे दिन अवश्य वर्षा होती है।

शशि के कुण्डल श्वेत हो सूरज के हो लाल ।

ग्वाल भने सुन माघ जी वर्षे द्वादश माल ॥

चन्द्रमा के श्वेत और सूर्य के लाल कुण्डल हों तो वर्षा बहुत होती है।

शशि के कुण्डल लाल हो सूरज के हो श्वेत ।

उमड़े पर वर्षे नहीं धरा उड़ावे रेत ॥

चन्द्रमा के लाल और सूर्य के श्वेत कुण्डल हो तो वर्षा कुछ भी नहीं होवे।

अन्धकार प्रकरण

वर्षे रेणु धुन्ध हो जाय । पवन विना अंधियारा थाय ।

पक्ष सात में वर्षे मेह । पैज बांध जोषी कह देय ॥

वायु के बिना ही रेत की आंधी से अन्धकार हो जावे तो सातवें पक्ष में अवश्य वर्षा होती है।

घुहर वा मेघ का पड़े तुसार । सुनो माघ जी इस का सार ।

पक्ष ग्यारहवें वर्षा होय । निश्चय पैज बांधकर सोय ॥

घुहर व ओस पड़े (जिससे अन्धकार हो जावे) तो ग्यारहवें पक्ष में अवश्य वर्षा होती है।

गन्धर्व नगर प्रकरण

आकाश में नगरादि के आकार के चिह्न दीखे उसे गन्धर्व नगर कहते हैं।

यदा शुभैर्घनौर्मिशं सविद्युत्तराबलाहकम् ।

गन्धर्व नगरं स्निग्धं विद्यादुदकराम्प्लवम् ॥

बिजली सहित श्वेत बादलों से बना हुआ यदि स्निग्ध वर्ण का गन्धर्व नगर दिखें तो वर्षा बहु होवे ।

कापिलं शस्यधाताय मञ्जिष्ठा हरणं गवाम् ।

अव्यक्तवर्ण कुरुते वलक्षोभं न संशयः ॥

गन्धर्व नगर का वर्ण यदि कपिल हो तो खेती का नाश, लाल हो तो गवादि पशुओं का नाश, और मिथ्र हो तो राजाओं की सेना का भय होवें ।

### इन्द्र धनुष प्रकरण

वृष्टि करोत्यवृष्ट्यां वृष्टि वृष्ट्यां निवारत्यैन्द्रयाम् ।  
पश्चात्सदैव वृष्टिं कुलिशमतचापमाच्छे ॥

इन्द्र धनुष यदि पश्चिम में हो तो वर्षा होवे । और जो पूर्व में हो तो पहले वर्षा नहीं होती हो तब तो वर्षा होवे और जो वर्षती हो तो बन्द हो जावें ।

प्रभाते पश्चिमेन्द्रस्य धनुश्च यदि दृश्यते ।  
वारुणे चैव नक्षत्रे शीघ्रं वर्षति माधवः ॥

शतभिषा नक्षत्र के दिन प्रभात के समय यदि पश्चिम में धनुष हो तो तत्काल वर्षा होवे ।

जो इन्द्रयुध पूर्व दिशि रवि आयमणे थाय ।  
वारह पहरे भद्गुली पोवी नीर न माय ॥

सूर्य अस्त के समय यदि पूर्व दिशा में धनुष हो तो 12 प्रहर में बहुत वर्षा होवें ।

जो उत्तरादा धनुष मंडावे । वर्षा ऊठ अचानक आवे ।  
दक्षिण धनुष मेह नहिं आवे । जो वर्षे तो झड़ी लगावे ॥

यदि धनुष उत्तर में हो तो अचानक ही वर्षा आवे, और जो दक्षिण में हो तो वर्षा नहीं आवे, किन्तु जो कभी आ जावे तो झड़ी लगे ।

अर्ध विम्ब आकाश में इन्द्र धनुष जो होय ।  
ग्वाल कहे सुन माघ जी अन्न न मोले कोय ॥

यदि आकाश के मध्य भाग में धनुष होवे तो धान्य कोई नहीं खरीदे अर्थात् अधिक धान्य उत्पन्न करने योग्य उत्तम वर्षा होवे ।

दोय चार छः मच्छ हों धनुष मंडे सुन एक ।  
पवन चले परला पड़े माघ भविष्यत् लेख ॥

यदि धनुष तो एक ओर साथ ही 2-4 वा 4 मच्छ हों तो वायु के सहित

बहुत जोर की वर्षा होवे ।

चन्द्र शुक्र गुरु भौम शनि तने धनुष इन वार ।  
दिन चौथे के पांचवे वरसे मूसलधार ॥  
यदि रवि, चन्द्र, मंगल, बृहस्पति वा शुक्रवार के दिन धनुष होतो 4थे वा 5वें दिन बहुत वर्षा होवे ।

### प्रति सूर्य प्रकरण

एक प्रहर दिन चढ़े तक वा पिछले एक प्रहर दिन से सन्ध्या तक सूर्य से उत्तर दक्षिण ऊपर वा नीच थोड़े अन्तर पर सूर्य के सदृश गोलाकार प्रकाश पड़ता है उसे प्रति सूर्य(दूसरा सूर्य) वा परिधि कहते हैं ।

प्रतिसूर्यकः प्ररास्तो दिवसकृदतु वर्णसमभः स्निग्धः ।  
वैद्यूर्यनिभः स्वच्छः शुक्लश्च क्षेपसौभिक्षः ॥

प्रति सूर्य जिस ऋतु में हो उसी ऋतु की सन्ध्या जैसे वर्ण का वा श्वेत, हरा और रिंग्ध तथा निर्मल हो तो क्षेम कल्याण तथा सुभिक्ष होवे ।

दिवसकृतः प्रतिसूर्यो जलकृदुदगदक्षिणतो ऽनिलकृत ।  
उभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा ॥

प्रति सूर्य यदि सूर्य से उत्तर में हो तो वर्षा, दक्षिण में हो तो प्रबल वायु, दोनों दिशाओं में हो तो अति वृष्टि का भय, ऊपर हो तो राजा का नाश और नीचे हो तो प्रजा का नाश होवे ।

### सूर्य प्रकरण

द्वौ द्वौ राशो मकरादृतवः षट् सूर्यगतिवशाद् ग्राह्याः ।  
शिशिरवसन्त ग्रीष्मवर्षाशरदः सहेमन्ताः ॥4 7 8 ॥

सूर्य की मकर, कुम्भ संक्रान्ति (माघ, फाल्गुन) की शिशिर, मीन, मेष (चैत्र, वैशाख) की वसन्त, वृष, मिथुन (ज्येष्ठ, आषाढ़) की ग्रीष्म कर्क, सिंह (श्रावण, भाद्रपद) का वर्षा, कन्या, तुला (आश्विन, कार्तिक) की शरद ; और वृश्चिक धन (मृगशिर, पोष) की हेमन्त ऋतु होती है ।

शिशिरे ताम्रसंकाशः कपिलो वापि भास्करः ।  
वसन्ते कुड्कुमप्रख्यो हरितो वापि शस्यते ॥4 7 9 ॥

ग्रीष्मे कनकवैदूर्यः सर्वरूपो जलागमे ।

शस्तः शरदि पद्माभो हेमन्ते लोहित प्रभः ॥480॥

सूर्य का वर्ण शिशिर में ताम्र वा कपिल, वसन्त में लाल, पीला वा हरा, ग्रीष्म में सुनहरी वा फीका श्वेत, वर्षा में श्वेत वा सर्व वर्ण, शरद में पीला और हेमन्त क्रतु में लाल हो तो शुभ, और इनसे विपरीत वा रुक्ष हो तो अशुभ होवे ।

वर्षाकाले वृष्टिं करोति सद्यः शिरीषपुष्पाभः ।

शिखिपत्रनिभः सलिलं न करोति द्वादशाद्वानि ॥481॥

वर्षा काल में सूर्य का वर्ण शिरीष (सिरस) पुष्प जैसा वा निर्मल कांति का हो तो शीघ्र वर्षा होवे किन्तु जो मोर की पंख जैसा हो तो 12 वर्ष तक वर्षा नहीं होवे ।

श्वेत शिरीषपुष्पाभः पद्माभो रूपसानिभः ।

वैदूर्यधृतमण्डाभो हेमामश्च दिवाकरः ॥482॥

वर्णरेभिः प्रशस्तः स्यान्महास्त्रिधः प्रतापवान् ।

भावनः सर्वशस्यानां क्षेमारोग्य सुभिक्षदः ॥483॥

अथवा कोई भी समय सूर्य का वर्ण पने, सोने, चांदी, शिरीष के पुष्प, कमल, धृत वा मांड जैसा हो, तथा बड़े विष्व का बहुत तेज युक्त, स्त्रिय कान्ति का हो तो सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य होवे ।

रवि उगन्तो श्याम आत्म-हतो कालो तवो ।

माघा मेह न थाय दिन दश पवन झकोलसी ॥484॥

सूर्य उदय वा अस्त होने के समय श्याम हो तो वर्षा नहीं होती है। किन्तु 10 दिन तक प्रचण्ड वायु चलती है।

**तामस कीलक (सूर्य में काले दाग) प्रकटण**

तामस कीलक संज्ञा राहुसुताः केतवस्त्रयस्त्रिंशत् ।

वर्णस्थाना कारैस्तान् दृष्ट्वाऽर्के फलं ब्रूयात् ॥431॥

तामस कीलक नाम के 33 केतु राहु के पुत्र हैं, वे सूर्य विष्व में काले दाग आदि से दिखते हैं। उनका फल वर्ण स्थान आकार आदि के अनुसार जाने।

क्षुत्रप्रस्तालशरीरा मुनयो ऽप्युत्सृष्टधर्मसद्यरिताः ।

निमसिंवालहस्ताः कृच्छ्रेण यान्ति परदेशम् ॥432॥

काले दाग जिस देश में दीखें उस देश में बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़े जिससे भूख के कारण ऋषि मूनि भी धर्म और श्रेष्ठ आचरण छोड़ें तथा लोग भूखे दुर्बल बालकों को स्वयं छोड़ कर बड़े दुःख से विदेश चले जावें।

गर्भेष्वपि निष्पन्ना वारिमुचो न प्रभूतवारिमुचः ।

सरितो यान्ति तनुत्वं वक्तित्वक्विज्ञायते शस्यम् ॥433॥

मेघ गर्भ धारण हुये हों तथापि काले दाग के कारण वर्षा बहुत न होवे तथा नदी का भी जल सूख जावे। जिससे धान्य भी कहीं 2 उत्पन्न होवे।

ते चार्कमण्डलगताः पापफलाश्चन्द्रमण्डले सौम्याः ।

ध्वाङ्ककवन्धप्रहरणस्पा: पापाः शशाङ्के अपि ॥434॥

काले दाग यदि सूर्य विष्व में दिखें तो अशुभ और चन्द्र विष्व में दीखे तो शुभ फल होवे। परंतु उनका आकार कौबो, बिना सिर के मनुष्य वा खड़ग आदि शस्त्र के सदृश हो तो चन्द्र विष्व में भी अशुभ फल दायक जाने।

**“सूर्य संक्रान्ति प्रकरण” (वार से दुर्भिक्ष का ज्ञान)**

मेघकर्कमकरे ऽर्कसङ्क्रमे कूरवारसहिते जलं नहि ।

धान्यमल्पतरमेव वत्सरे विग्रहो विपुलरोगतस्कराः ॥548॥

कर्कटमगसङ्क्रान्तौ वारे भौमार्कि भानुजे ।

पञ्चदशमुहूर्तो वा तदा दुर्भिक्षिमादिशेत् ॥549॥

कर्क मकर दो वहन है वैठे एक हि वार ।

तो धरती का पति मेरे (वा) पड़े अचिन्ता काल ॥55॥

संक्रान्ति मेघ, कर्क वा मकर की रवि, मंगल वा शनि वार को वा कर्क वा मकर की 15 मुहूर्तों वा दोनों एक ही वार में लगें तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, रोग तथा चोरों का उपद्रव अधिक वा राजा की मृत्यु होवे।

कर्कसङ्क्रमणे मन्दो मकरार्के वृहस्पतिः ।

तुलाऽर्के मङ्गलो वर्षे तत्र दुर्भिक्षिसम्भवः ॥551॥

कर्क संक्रान्ति शनि को तुला मंगल को तथा मकर गुरु को लगे तो दुर्भिक्ष पड़े।

वर्षा से धान्योत्पत्ति का ज्ञान

कर्कटो यदि भिद्येत् सिंहे गच्छत्यभिन्नयकः।  
तथा धान्यस्य निष्पत्तिर्यायते पृथिवीतत्त्वे ॥५५२॥

वर्षा कर्क संक्रान्ति के दिन तो (थोड़ी भी) हो जावे और आगे सिंह संक्रान्ति के दिन कुछ भी न हो तो धान्य बहुत उत्पन्न होवे, किन्तु जो इस से विपरीत हो तो नष्ट होवे ।

मेष संक्रान्ति

चैत्रमासे पुनः प्राप्ते लोकानां हि हेतवे ।  
मेषसङ्क्रान्तिवेलायां लग्नं शोध्यं शुभाशुभम् ॥५५३॥

मेष संक्रान्ति का लग्न बना के वर्ष का शुभाशुभ फल जाने ।  
यदा शुभग्रहैदृष्टं लग्नं स्यात् तदा शुभम् ।  
धनधान्यादि सम्पूर्ण सर्व वर्ष शुभावहम् ॥५५४॥

उस समय के लग्न को शुभ ग्रह देखे तो जगत् में धन धान्यादि सम्पूर्ण पदार्थों की वृद्धि तथा सम्पूर्ण वर्ष शुभ होवे ।

भावा द्वादश ते मासाः सौम्याः कूरा ग्रहाः पुनः ।  
तेषु मासेषु दृष्ट्वा तु फलं ज्ञेयं शुभाशुभम् ॥५५५॥

उस लग्न के 12 घरों से 12 महीनों (मेषादि 12 संक्रान्तियों) का शुभाशुभ फल जाने। जैसे-पहिले घर से पहिले महीने (मेष) का, दूसरे से दूसरे (वृष) का, इस क्रम से जिस महीने के घर को शुभ ग्रह देखे उस महीने में शुभ और जिस को अशुभ ग्रह देखें उस महीने में अशुभ फल होवें।

भानोर्मेषप्रवेशोदयभवनपतिः सङ्ग्रहः (?) स्वोद्यसस्थः  
स्वर्क्षथो वापि केन्द्रे शुभगगनचरैर्दृट्युक्तो वलाद्यः ।  
तस्मिन्वर्षे विद्यव्याज्जगति शुभसुखं भूरि शस्यं सुवृष्टिं  
कूरं: कूराद्वितो वा दिशति नृपभयं कष्टमन्नं महर्धम् ॥५५६॥

मेष संक्रान्ति प्रवेश समय के लग्न का रवामी ग्रह शुभ हो और उच्च वा स्व राशि का केन्द्र (१/८/७/१०- इन घरों) में कहीं बैठा हो और- कोई शुभ ग्रह उसे देखता हो वा उसके साथ बैठा हो-- इत्यादि बलों से बलबान् हो तो उस वर्ष

में सुवृष्टि, खेती की वृद्धि, सुख, सम्पत्ति आदि से जगत् में शुभ फल होवे । किन्तु जो लग्न का रवामी कूर ग्रह हो या कोई कूर ग्रह उसे देखता हो या उसके साथ बैठा हो तो अनावृष्टि, धान्य तेज, प्रजा में कष्ट और राजाओं को भय होवें ।

धने व्यये इपि सौम्यश्च केन्द्रे वा मेषसङ्क्रमे ।

स्वर्क्षं शुभसुहृदृष्टः सुभिक्षं व्यत्ययो इन्यथा ॥५५७॥

पूर्वोक्त लग्न से १/२/४/७/१०/१२- इन घरों के रवामी शुभ ग्रह इन्हीं घरों में बैठे हों तथा उनको कोई शुभ वा मित्र ग्रह देखता हो तो सुभिक्ष, किन्तु जो इस से विपरीत हो तो दुर्भिक्ष होवे ।

मेषप्रवेशलग्ने च यदि स्याद्वर्षजन्मनि ।

सप्तमस्थो यदा पापो धान्यं जातं विनाशयेत् ॥५५८॥

मेष संक्रान्ति वा चैत्र सुदि के प्रवेश समय के लग्न से यदि उवे घर में कूर ग्रह बैठा हो तो उत्पन्न हुआ धान्य भी नष्ट हो जावे ।

मेषसङ्क्रान्तिवेलायां स्वरभेदं विचारयेत् ।

संवसरफलं श्रूयाल्लोकानां तत्त्वचिन्तकः ॥५५९॥

मेष संक्रान्ति लग्ने उस समय तत्त्व वेत्ता विद्वान अपने शरीरस्थ वायु के भेद (अर्थात् कौन सा स्वर तथा तत्त्व चलता है, सो विचारके जगत् में संवत् का शुभाशुभ फल जाने ।

मेषसङ्क्रान्तिवेलायां व्योमतत्वं वहेद्यदि ।

तत्रापि शून्यता ज्ञेयां शस्यादीनां सुखस्यच ॥५६०॥

आकाश तत्व चलता हो तो खेती तथा सुख की हानि होवे ।

मेष सङ्क्रान्तिवेलायां वायुतत्वं वहेद्यदि ।

उत्पातोपद्रवौ भीतिरत्पा वृष्टिः स्युरीतयः ॥५६१॥

वायु तत्व चलता हो तो अति वृष्टि, अल्प वृष्टि, अनावृष्टि, चूहे, टिड़ी, तोते, अनेक प्रकार के उपद्रव, भय वा स्व राजा वा पर राजा की सेना से कष्ट होवे ।

दुर्भिक्षं राष्ट्रभङ्गः स्यादुत्पत्तिश्च विनश्यति ।

अल्पादल्पतरा वृष्टिरनितत्वं वहेद्यदि ॥५६२॥

अग्नि तत्व चलता हो तो वर्षा बहुत ही कम, उत्पन्न हुई, खेती का नाश दुर्भिक्ष और राजा प्रजा को कष्ट होवे ।

अतिवृष्टिः सुभिक्षं स्यादारोग्यं सौख्यमेव च ।  
वहुशस्या तथा पृथ्वी अप्रत्यं च वहेद्यदि ॥५६३॥

जल तत्व चलता हो तो वर्षा तथा खेतियों की पैदावारी अधिक, सुभिक्ष, आरोग्य और सुख होवे ।

सुभिक्षं राष्ट्रवृद्धिः स्यादूहुशस्या वसुन्धरा ।  
वहुवृष्टिस्था सौख्यं पृथ्वीतत्वं वहेद्यदि ॥५६४॥

पृथ्वी तत्व चलता हो तो अतिवृष्टि, सुभिक्ष, खेती तथा राजा प्रजा को वृद्धि और जगत् में सुख सम्पन्नि होवे ।

### कर्क संक्रान्ति

(वार से वर्षा का ज्ञान)

अर्कादिवारे सड़क्रान्तौ कर्कस्याव्दविशोपकाः ।  
दिशो नखागजाः सूर्या धृत्योऽष्टादशशापकाः ॥५७८॥

कर्क संक्रान्ति लगे उस दिन वार रवि हो तो 10, चन्द्र हो तो 20, मंगल हो तो 8, बुध हो तो 12, गुरु हो तो 18, शुक्र हो तो 18 और शनि हो तो 5 विश्वे जमाना होवे ।

यदि कर्कक्सड़क्रान्तौ कुजार्कशनिसोमजाः ।  
अल्पनीरं रणं घोरं स्यात्तदा नीचबुद्धिदः ॥५७९॥

कर्क संक्रान्ति रवि, मंगल, बुध वा शनिवार को लगे तो वर्षा कम, घोर संग्राम तथा मनुष्यों की वृद्धि नीच हो जावे ।

सोमे जोवे तथा शुक्रे जलस्नानं भुवस्तलम् ।  
धान्यं समर्धयाति परदेशाज्जने सुखम् ॥५८०॥

और जो सोम, गुरु वा शुक्रवार को लगे तो वर्षा बहुत, धान्य मन्दा तथा प्रजा में सुख की वृद्धि होवे और लोग पर पीछे स्वदेश में आवे ।

चन्द्रमा की राशि से वर्षा का ज्ञान ।

जलचरराशिगते च शशाङ्के (रविः) संक्रमणं कुरुते च कुलीरे ।  
कणकः कथयति तंदुलयोगं तावदर्षति यावत्तुलान्तम् ॥५२१॥

कर्क संक्रान्ति लगे तब चन्द्रमा जल राशि पर हो तो चारों ही महीनें वर्षे निकलें ।

युग्माजगोमत्स्यगते शशाङ्के रविर्यदा कर्कटके व्रजन्ति ।  
नूनं शतां द्विरिकार्मुकं द्वे व्रजन्ति कन्यां मकरे तदर्दम् ॥५८२॥

तुलातिकर्कट कुभयड़मात्राद्विदशाढ़के ॥५८३॥

कर्क संक्रान्ति लगे तब चन्द्रमा मेष, मिथुन वा मीन का हो तो 100; सिंह वा धन का हो तो 50; कन्या वा मकर का हो तो 25; और कर्क, तुला, वृथिक वा कुम्भ का हो तो साढ़े बारह आठक वर्षा होवे ।

अर्द्ध वर्षति शैलांग्रे तदर्द्ध विपिने तथा ।  
तदर्द्ध चोपरे प्रोक्तं शेष क्षेत्रे विनिर्दिशेत् ॥५८४॥

परंतु उक्त प्रमाण में से पर्वतों पर आधा, जंगल में चौथाई और ऊसर भूमि तथा अन्य क्षेत्रों में आठवां 2 भाग जल वर्षे ।

### अन्य शीतियों से वर्षा का ज्ञान ।

श्रावणे कर्क सड़क्रान्तौ जाते मेघमहोदये ।

सप्तमासान् सुभिक्षं स्यान्नान्यथा जिनभाषितम् ॥५२५॥

कर्क संक्रान्ति श्रावण (वादि) में लगे और उस दिन वर्षों हो तो 7 महीनों तक सुभिक्ष रहे ।

कर्कटे प्रविशन्तन्तु सूर्यं परश्येद्यदा गुरुः ।  
पादोनं पूर्णदृत्या वा तत्र काले महज्जलम् ॥५८६॥

कर्क संक्रान्ति लगे तब सूर्य को बृहस्पति पूर्ण वा पौन वृष्टि से देखे तो बहुत वर्षा होवे ।

कर्का हूती दस दिनां जो ऊगसी बुद्ध।  
तो जाणो रे जोषियां श्रावण वर्षे शुद्ध ॥५८७॥

कर्क संक्रान्ति लगे उससे 10वें दिन बुध उदय हो तो श्रावण में अच्छी वर्षा होवे ।

### सिंह संक्रान्ति

श्रावणे गुरुपक्षे च सिंहसड़क्रान्तिरेव च ।

मेघवृष्टिः समुद्रे तु अन्यशाखामुमे मुने (?) ॥५८८॥

सिंह संक्रान्ति यदि श्रावण सुदि में लगे तो वर्षा समुद्र में अधिक होवे ।

सिंहा हूती दश दिनां जो ऊगे बुधराय ।

पोह विरंग वधावणा पर थल पाणी थाय ॥५८९॥

सिंह संक्रांति लगे उससे 10 वें दिन बुध उदय हो तो वर्षा बहुत होवे ।

### चन्द्र प्रकरण

नवीन चन्द्रमा से वर्षा का ज्ञान ।

सोमा, शुक्रां, सुर गुरां जे चन्द्रा ऊगन्त ।

डंक कहे है भङ्गली जल थल एक करन्त ॥5 9 0॥

सोम, गुरु वा शुक्र वार को नवीन चन्द्रमा उदय हो तो बहुत वर्षा होवे ।

शुक्रलपक्षे द्वितीयायां भानोर्वामोदयः शशी ।

तस्मिन्मासे समर्ध स्यान्महंधे दक्षिणोदयं ॥5 9 1॥

सुदि 2 को सूर्य अस्त हो उस स्थान से नवीन चन्द्रमा उदय हुआ 2 उत्तर की ओर दीखे तो उस मास में सुभिक्ष और दक्षिण की ओर हो तो दुर्भिक्ष होवे ।  
वर्ण तथा रूप द्वारा वर्षा का ज्ञान ।

स्निधः स्थूलः समशृङ्गो विशालस्तुङ्गश्चोदग्विचरन्नागवीथ्याम् ।

दृष्टः सौम्यैरशुभैर्विलयुक्तो लोकानन्दं कुरुते ऽतीव चन्द्रः ॥5 9 2॥

चन्द्रमा स्निध, स्थूल, शृंग दोनों समान वा उत्तर वाला ऊँचा तथा नाग वीथी के (भरणी, कृत्तिका, स्वाति) नक्षत्रों पर हों; और उसे कोई अशुभ ग्रह नहीं देखें किंतु शुभ ग्रह देखे— तो सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम, कल्याण आदि से आनन्द होवे ।

भस्मनिभः परुषो ऽरुणमूर्तिः शीतकरः किरणैः परिहीणः ।

श्यावतनुः स्फुटित स्फुरणो वा क्षुड्मरामयचौरभयाय ॥5 9 3॥

चन्द्रमा, भस्म सदृश मैला, काला, लाल, रुक्ष, किरण रहित, खण्डित वा कम्पाय मान विम्ब का हो तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, युद्ध, रोग तथा चोरों का उपद्रव होवे ।

चन्द्रमा बहुत फीका वा पीला हो तो वर्षा, लाल हो तो स्वच्छ पवन और चांदी जैसा श्वेत हो तो अनावृष्टि होवे ।

### उत्तर दक्षिण मार्ग द्वारा वर्षा का ज्ञान

चित्रा ऽनुराधा ज्येष्ठा च कृत्तिका रोहिणी तथा ।

मधा मृगशिरो मूलं तथा ३३षाढविशाखाश्च ॥5 9 4॥

एतेषामुत्तरे मार्गे यदा चरति चन्द्रमाः ।

सुभिक्षं क्षोमवृद्धि सुवृष्टिर्जयते तदा ॥5 9 5॥

एतेषां दक्षिणे मार्गे यदा चरति चन्द्रमाः ।

क्षयं गच्छन्ति भूनाथा दुर्भिक्षं च भयं पथि ॥5 9 6॥

चन्द्रमा कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, मधा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूला, पूर्वाषाढ वा उत्तराषाढ से उत्तर में निकले तो सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम, कल्याण आदि से राजा प्रजा की वृद्धि; और दक्षिण में निकले तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष युद्ध, चोर आदि से राजा तथा प्रजा का नाश होवे ।

सूरीन्दुजाङ्गारकसौरिभार्गवाः प्रदक्षिणं यान्ति यदा हिमयुते ।

तदा सुभिक्षं धनवृद्धिरुत्तमा विष्यये धान्यधनक्षयादि ॥5 8 7॥

चन्द्रमा यदि मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र वा शनि से उत्तर में हो कर निकले तो सुवृष्टि, सुभिक्ष तथा धनादि पदार्थों की वृद्धि; और दक्षिण में हो कर निकले तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष तथा धनादि पदार्थों का, नाश होवे ।

राशि द्वारा वर्षा का मार्ग ।

मिथुने चैव कन्यायां मीने याति तथा धने ।

वर्षासु तत्र जानोयाद्वर्ते नात्र संशयः ॥5 9 8॥

चन्द्रमा वर्षा काल में मिथुन, कन्या, धन वा मीन का हो तब अवश्य वर्षा होवे ॥

### केतुचार (पुच्छल तारा) प्रकरण

चोटीला तारा उदय सींगर पूँछर होय ।

छत्र भंग दुर्भिक्ष करे, परजा सुखी न कोय ॥4 1 8॥

वर्ष एक दो तीन में पड़े काल भयभीत ।

तारे चरित अशुभ यह आगम लखियो मीत ॥4 1 9॥

चोटी, सींग वा पूँछ आदि के आकार का पुच्छल तारा उदय हो तो उस देश में राजा का नाश, प्रजा को अनेक प्रकार से कष्ट और 1, 2 व 3 वर्षों में बहुत भयानक दुर्भिक्ष होवे ।

श्रावणे भाद्रपदे च वरुणस्य सुतोदयः ।

आवाहयेन्महामेघास्तोयपूर्णा वसुन्धरा ॥4 2 0॥

उन्मार्गे सरितो यान्ति जलवेगसमाहताः ।

समर्धाण्यपि धान्यनिवरुणस्य सुतोदये ॥4 2 1॥

श्रावण वा भाद्रवे में उदय हो तो इतनी वर्षा होवे कि जिससे नदियों में पानी नहीं समावे। तथा धान्य का भाव सरता हो जावे।

आश्विने कात्तिर्के चैव सूर्यपुत्रं विनिर्दिशेत् ।  
नदीकूपतङ्गागानि सर्वाणि परिशोषयेत् ॥4 2 2 ॥  
प्रियन्ते च तदा गावस्तथा उन्ये च चतुष्पदाः ॥  
देवो न वर्षते तत्र दुर्भिक्षं च महाभयम् ॥4 2 3 ॥

अश्विन व कार्तिक में उदय हो तो वर्षा नहीं होवे जिससे नदियाँ, कुएँ, तालाब आदि सूख जावे, तथा बड़ा दुर्भिक्ष पड़े और गवादि पशुओं का नाश होवे।

मार्गशीर्षे च पौषे च अग्निपुत्रान् विनिर्दिशेत् ।  
अग्निदधानि राष्ट्राणि हारितानि धनानि च ॥4 2 4 ॥  
विद्रवन्ति तथा देशाः समस्ता भयपीडिताः ।  
अग्निचौरभयं तत्र प्रजानां व्याधयस्तथा ॥4 2 5 ॥

मृगशिर व पौष में उदय हो तो अग्नि का भय, चोरों का उपद्रव, रोग पीड़ा और देश का नाश होवे।

माघफालुनयोर्मध्ये यमपुत्रं विनिर्दिशेत् ।  
दुर्भिक्षं जायते धोरं सर्वधान्यानि सङ्क्षयेत् ॥4 2 6 ॥

माघ वा फालुन में उदय हो तो सर्वधान्य का नाश हो जावे जिससे बड़ा भयानक दुर्भिक्ष होता है।

चैत्र वैशाखयोर्मध्ये कुवेर सुतमादिशेत् ।  
यादृशा उदिता मेघा जलं पतति तादृशम् ॥4 2 7 ॥  
हविर्धूमाकुलं सर्व नन्दते च महु मुहु ।  
वसुन्धरा शुभाभ्राद्या धन धान्य समाकुला ॥4 2 8 ॥

चैत्र वा वैशाख में उदय हो तो जैसे मेघ उत्पन्न हो वैसा ही जल वर्षे, अग्नि होत्रादि यत्र अधिक होवें और प्रजा में धन धान्य की वृद्धि से सर्व प्रकार का आनन्द होवे।

ज्येष्ठ आषाढ़योर्मध्ये वायुपुत्रोदयो भवेत् ।  
उच्चा मेघाः प्रदृश्यन्ते वायुना सह प्रेरिताः ॥4 2 9 ॥

तस्मप्रासादशिखराः पतन्ति पवनाहताः ।  
विरोधे च महीपाला भवन्ति च समन्ततः ॥4 3 0 ॥  
ज्येष्ठ वा आषाढ़ में उदय हो तो वायु बहुत ज़ोर से चले जिससे बाढ़ल ऊँचे-ऊँचे ही उड़े तथा वृक्ष पर्वत आदि के शिखर टूट पड़ें और राजाओं में विरोध होवे।

### नक्षत्र प्रकरण

नागा तु पवनयाम्यानलानि पैतामहात्रिभास्तिसः ।  
गोवीथ्यामश्विन्यः पौष्णं द्वै चापि भाद्रपदे ॥4 3 5 ॥  
जारद्रव्यां श्रवणात्तिर्भं मृगाख्या त्रिभं तु मैत्राद्यम् ।  
हस्तविशाखात्वाष्टाण्यजेत्याषाढ़द्वयं दहना ॥4 3 6 ॥

ग्रहों के धूमनेके लिये आकाश में अश्विन्यादि 27 नक्षत्रों की 9 वीथियें (मार्ग) हैं। जैसे, भरणी, कृतिका, स्वाति की नाग, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा की गज, पुर्णवसु, पुष्य, अश्लेषा की ऐरावती, मघा, पूर्वा फालुनी, उत्तरा फालुनी की वृष, पूर्वा भाद्रापदा, उत्तरा भाद्रपदा, रेवती, अश्विनी की गो; श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा की जारद्रव्य, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल की मृग, हस्त, चित्रा, विशाखा की अज; और पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा की दहन वीथी है।

तिस्मिन्स्तस्तासां क्रमादुद्गमध्याम्यमार्गस्थाः ।  
तासामप्युत्तरमध्यं दक्षिणे न स्थितैकैका ॥4 3 7 ॥

इनमें नागादि 3 वीथियों का उत्तर मार्ग, वृषादि 3 वीथियों का मध्य मार्ग और मृगादि 3 वीथियों का दक्षिण मार्ग है। इन प्रत्येक मार्ग की 3-3 वीथियों में भी पहलीवीथी उस मार्ग के उत्तर मे, दूसरी उस मार्ग के मध्य मे और तीसरी उस मार्ग के दक्षिण में हो जाने।

उत्तरवीथिगता द्युतिमन्तः क्षेमसुभिक्षशिवाय समस्ताः ।  
दक्षिणमार्गगता द्युतिहीनाः क्षुद्रयतस्कर्मत्युकरास्ते ॥4 3 8 ॥

कोई भी ग्रह तेज द्युक्त और उत्तर मार्ग के नक्षत्रों पर हो तो सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम कल्याण, आदि शुभ; जो तेजहीन और दक्षिण मार्ग के नक्षत्रों पर हो तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, चोर, महामारी, आदि अशुभ; तथा मध्य मार्ग में नक्षत्रों पर

हो तो साधारण फल होवे । इनमें भी उत्तर मार्ग की प्रथम वीथी में अति उत्तम, दूसरी में उत्तम, तीसरी में कुछ कम उत्तम फल, मध्य मार्ग की प्रथम वीथीमें सम, दूसरी में मध्यम, तीसरी में कुछ अधम फल और दक्षिण मार्ग की प्रथम वीथी में अधम, दूसरी में अति अधम और तीसरी में महान अधम फल जाने ।

**उदयास्तमयं कुर्यान्मार्गमुत्तरमाश्रितः ।**

**सुमिक्षं च सुवृष्टिं च योगक्षेमं विनिर्दिशेत् ॥4 3 1 ॥**

**उदयास्तमयं कुर्यान् मध्यमं मार्गमाश्रितः ।**

**मध्यमं चार्धशस्यं च योगक्षेमं विनिर्दिशेत् ॥4 4 0 ॥**

**उदयास्तमयं कुर्यादक्षिणं मार्गमाश्रितः ।**

**धान्यस्य सङ्ग्रहं कृत्वा केदोरेषु तिलान् वपेत् ॥4 4 1 ॥**

कोई भी ग्रह उदय वा अरत उत्तर मार्ग के नक्षत्रों पर हो तो सुवृष्टि, सुमिक्ष, क्षेम, कल्याण, मध्यमार्ग, के नक्षत्रों पर हो तो वृष्टि आदि मध्यम और दक्षिण मार्ग के नक्षत्रों पर हो तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, अक्षेम, अकल्याण होवे इस से धान्य का संग्रह करे तथा तालाबों में तिल बो दे।

**मण्डलेषु च सर्वेषु सङ्क्रमन्तं यदा ग्रहम् ।**

**पादोनं पूर्णदृष्ट्यावागुरुमन्ये जलावहम् ॥4 4 2 ॥**

शुक्र प्रकरण में कहे हुये भरणी आदि 27 नक्षत्रों के 6 मण्डलों में यदि कोई ग्रह एक से निकल के दूसरे में जाये और उस समय उसे बृहस्पति पौन वा पूर्ण दृष्टि से देखे तो अवश्य वर्षा होती है।

**वासवक्षें यदा सौरिभूर्मिपुत्रेण संयुतः ।**

**नवर्षन्ति जलं मेघाः शस्यहानिश्च जायते ॥4 4 3 ॥**

धनिष्ठा नक्षत्र पर मंगल और हो तो वर्षा नहीं होवे जिससे खेती को हानि होवे ।

**मंगल सौरिशुक्राश्च धनिष्ठायां स्थिता यदि ।**

**गर्जिनाश्च नवर्षन्ति तोयविन्दु पयोधराः ॥4 4 4 ॥**

घनिष्ठ नक्षत्र पर मंगल, शुक्र और शनि हो तो गर्जते हुये मेघों से भी एक

बृंद पानी नहीं वर्षे ।

**विश्वभे च यदा मन्दः सप्तमक्षें यदा रविः ।**

**तदा जलं विना शस्यात्प्रजानां क्रन्दनं महत् ॥4 4 5 ॥**

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर शनि और पुनर्वसु पर सूर्य हो तो वर्षा नहीं होवे जिस से प्रजा को कष्ट होवे ॥

### गर्भ प्रकरण

**पुमान् स्त्रिगर्भं संयोगा द्विदयुन्मेधस्तथैव च ।**

**गूढः स गर्भशब्देन वाचो उत्पत्तिरूप्यते ॥3 3 1 ॥**

जैसे स्त्री पुरुष के संयोग से गर्भ धारण होते हैं वैसे ही विद्युत शक्ति और बादल के योग से जल के गर्भ धारण होते हैं; उनकी उत्पत्ति कहता है। क्योंकि-  
**दैवविदविहितचित्तो द्युनिशं यो गर्भलक्षणे भवति ।**

**तस्य मुनेरिव वाणी न भवति मिथ्याम्बुनिर्देशे ॥**

जिस दैवज्ञ का चित्त एकाग्र होके रात दिन गर्भ देखने में लगा रहता है उस की वाणी वर्षा बतलाने में मुनियों की वाणी के तुल्य सदा सर्वदा सत्य होती है, कभी मिथ्या नहीं होती।

**कैचिद्ददत्ति कार्तिकशुक्लान्तमतीत्यगर्भदिवसाः स्युः ।**

**न तु तन्मतं वहूनां गर्गादीनां मतं वक्ष्ये ॥**

कोई 2 दैवज्ञ कार्तिक सुदि 15 के पीछे से ही गर्भ धारण होने का आरम्भ मानते हैं परन्तु यह मत बहुत से आचार्यों का नहीं है, इसलिये गर्गादि महर्षियों के मतानुसार कहता हैं।

**मार्गशिरः—सितपक्षप्रतिपत्रभृतिक्षपाकरेऽषाढाम् ।**

**पूर्वा वा समुपगते गर्भाणां लक्षणं ज्ञेयम् ॥**

मार्गशिर सुदि में पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र आवे उस दिन से गर्भ धारण होने का समय प्रारम्भ होता है; अतः यहाँ से गर्भों के लक्षण देखने चाहियें।

### गर्भों के लक्षण

**वाताभ्रविद्युत्स्तनितोदकानि सरागसन्ध्या परिवेषचापौ ।**

**हिमप्रपातः प्रतिसूर्यकश्च दश प्रकारैर्भवतीह गर्भः ॥3 3 5 ॥**

(1) वायु, (2) बादल, (3) बिजली, (4) गाज, (5) थोड़ी सी वर्षा, (6) सन्ध्या फूलना, (7) सूर्य चन्द्र के कुण्डल, (8) इन्द्र धनुष, (9) बर्फ गिरना, (10) प्रति सूर्य ये 10 लक्षण, गर्भ के कहे हैं। इन में पहिले के 5 लक्षणोंमें से कोई लक्षण हो तो गर्भधारण और पिछले 5 लक्षणों में से कोई लक्षण हो तो गर्भ की पुष्टि होती है। इनमें जितने लक्षण अधिक होंगे उतना ही गर्भ बलवान होगा।

स्वर्तुस्यभावजनितैः सामान्यैयैश्च लक्षणैवृद्धि ।  
गर्भाणां विपरीतैस्त्वैरेव विपर्ययो भवति ॥

गर्भों की पुष्टि करने वाले सामान्य तथा काल विशेष के लक्षणों से गर्भों की पुष्टि होती है और इनके विपरीत होने से गर्भों की हानि होती है। अब उन लक्षणों को आगे कहता हूँ।

पुष्टि करने वाले सामान्य लक्षण  
ह्लदिमृदूदकशिवशक्रदिग्भवयो मारुतो वियद्विमलम्।  
स्त्रिग्धसितवहूलपरिवेष परिवृत्तौ हिममयूखार्को ॥

गर्भ धारण के समय उत्तर ईशान वा पूर्व का आनन्द दायक तथा मृदु वायु, निर्मल आकाश, और चन्द्र वा सूर्य के स्निग्ध श्वेत तथा बहुत बड़ा कुण्डल हो तो श्रेष्ठ जाने।

पृथुवहुलस्निग्धधनं हानसूची क्षुरकलोहिता भ्रयुतम् ।  
काकाण्डमेचकाभं वियद्विशद्वेन्द नक्षत्रम् ॥

बड़े विस्तारवाले, रिनाथ, सूर्य के, अग्र भाग जैसे पैनी नोक के, वा उस्तरे की धार जैसे तीक्ष्ण कोरों वाले, लाल, नीले, वा धृमृ वर्ण के बादल और चन्द्रमा तथा तारे स्वच्छ हो तो श्रेष्ठ जाने ।

मुख्यापन्निद्रगर्जितविद्युत्पृतिसूर्यकाः शुभः सन्ध्याः।  
पश्चिमिश्रशाक्राशास्थाः शान्तरवोः पक्षिमगसङ्घाः॥

संध्या के समय इन्द्र धनुष, मन्द 2 गाज, विजली, वा प्रतिसूर्य हो तथा उत्तर ईशान वा पूर्व में पक्षी, तथा वन में पशु, शान्त शब्द (सूर्य की ओर मुख किये बिना) करें तो श्रेष्ठ जानें।

विपुलाः प्रदक्षिणचराः स्त्रिधमयूखा ग्रहा निरूपसर्गाः ।  
तरवश्च निरूपसृष्टाङ्कुरा नश्चतुष्पदा दृष्ट्याः ॥

सूर्यादि ग्रहों के विम्ब बड़े तथा उत्पाद से रहित स्त्रिध किरणों वाले दिखें, तथा जिन नक्षत्रों के उत्तर में जाना सम्भव हों उन से उत्तर में होकर के निकलें, वृक्षों के किसी बाधा के बिना नये अंकुर निकलें तथा मनुष्य और पशु प्रसन्न चित्त हो तो श्रेष्ठ जाने ।

शीतवातश्च विद्युत्ता गर्जनं परिवेषणम् ।  
सर्वगर्भेषु वर्धन्ति निग्रन्थाः साधुदर्शिनः ॥

शीत वायु, बिजली, गाज और कुण्डल ये 4 लक्षण विशेष त्रेष्ठ जाने।

गर्भाणां पुष्टिकराः सवेषामेव योऽत्र तु विशेषः।  
खत्तुस्व भावजनितो गर्भविवृद्धयै तमभिधास्ये ॥

इन उक्त लक्षणों से गर्भों का सदा पुष्ट हाता है— अथात् गर्भ धारण हा उस समय ऐसे लक्षण हो तो श्रेष्ठ है। और इनके अतिरिक्त जो अपनी अपनी व्रतुओं (महीनों) में गर्भों की पुष्टि करने वाले विशेष लक्षण है उनकों आगे कहता है।

पुष्टि करने वाले काल विशेष के लक्षण ।  
पौधे समार्गशीर्ष सन्ध्यारागो ऽम्बुदाः परिवेषाः ।

नात्यर्थ मृगशीर्षे शीतं पौषे उत्तिहमपातः ॥  
मृगशिर तथा पौष में सन्ध्या फूलना, कुण्डल से युक्त बादल होना, तथा मृगशिर

में अत्यन्त शोत और पाष में अत्यन्त हम नहा पड़ना श्रेष्ठ ह।  
 माघे प्रवलो वायुस्तुषारकलुषधुती रविशशाङ्कौ।  
 एवं एवं एवं एवं ॥

माघ में प्रचण्ड वायु सूर्य की कान्ति शीतल, चन्द्रमा की कान्ति मलिन, शीतल  
अधिक और सर्ग का उदय वथा अस्त बादलों में होना थेर्ष्य है।

पवनघनवृष्टियुक्तास्चैत्रे गर्भा: शुभा: सपरिवेषा:  
धनपवन सलिल विद्युस्तन्तैश्च हिताय वैशाखे ॥

चैत्र में वायु बादल वर्षा तथा कुण्डल होना और वैशाख में वायु बादल बिजली गाज तथा वर्षा होना श्रेष्ठ है।

ज्येष्ठमासे रविकरास्तपत्ति प्रचुरो ऽनिलः ।

लूकासमन्वितो वाति धनगर्भस्तदा शुभः ॥

ज्येष्ठ में बहुत धूप पड़ना और लू सहित बहुत वायु चलना गर्भों के लिये श्रेष्ठ है।

गर्भ धारण में श्रेष्ठ बादल

पूर्वामुदीचीमीशानी ये गर्भा दिशिमाश्रिताः ।

ते शस्यवन्त्स्तोयाद्या ये गर्भास्तु सुपूजिताः ॥

गर्भ धारण के समय पूर्व उत्तर वा ईशान में बादल उत्पन्न हों तो वे गर्भ खेती की वृद्धि होने योग्य उत्तम वर्षा करते हैं।

मुक्तारजतनिकाशास्त मालनीलोपलाज्जनाभासः ।

जलचरसत्वाकारा गर्भेषु घनाः प्रभूतजलाः ॥

बादल यदि मोती वा चाँदी जैसे चमकदार श्वेत वा तमालवृक्ष जैसे नीले पीले वा कमल जैसे नीले वा अज्जन जैसे काले हो और उनका आकार मगर कछुआ केंकड़ा मच्छी आदि जल में रहनेवाले जीवों के सदृश हों तो वे बादल बहुत जल धारण करके वर्षने के समय बहुत वर्षते हैं।

कृष्णाः नीलाश्च रक्ताश्च पीताः शुक्लाश्च सर्वशः ।

व्यामिश्राश्चापि ये गर्भाः स्तिंधाः सर्वत्र पूजिताः ॥

बादल श्वेत, लाल, नीले, पीले, काले, वा मिश्र चाहे जिस वर्ण के हो किन्तु जो स्तिंध हों वे ही श्रेष्ठ हैं।

अप्सराणान्तु सदृशाः पक्षिणां जलचारिणाम्

वृक्षपर्वतसंस्थानां गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ।

वापीकूपतडागानि नद्यश्चापि मुहुर्मुहुः ।

पूज्यते तादृशैगर्भेस्तोयविलप्तधुराव हैः ॥

बादलों का आकार यदि अप्सरा, जलचर पक्षी, वृक्ष, पर्वत, बावड़ी, कुएँ, तालाब व नदी आदि के सदृश हो और वे मन्द गति वाले हो उनको श्रेष्ठ जाने।

सुसंस्थानाः सुवर्णाश्च सुवेषाः स्वाभ्रजा घनाः ।

सुविन्दवाः स्थिता गर्भाः सर्वे सर्वत्र पूजिताः ॥

गर्भधारण के समय बादलों की दिशा, वर्ण, आकार और बूँदे श्रेष्ठ हों उनको

श्रेष्ठ जाने ।

तीव्र दिवाकर किरणाभितापिता मन्दभास्ता जलदाः ।

रुषिता इव धाराभिर्विसृजन्त्यम्भ प्रसवकाले ॥

बादल प्रचण्ड धूप से तर्पे तथा उस समय वायु भी मन्द-मन्द चले तो गर्भ पीछे वर्षने के समय बहुत जोर से वर्षे ।

गर्भ धारण में नेष्ट बादल

कृष्णा रुक्षाः सुखण्डाश्च विद्रवन्ति पुनः पुनः ।

विस्वरा रुक्षशब्दाश्च गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥

काले वर्ण के, रुखे, छोटे-छोटे टुकड़े, बार-बार वर्षनेवाले, बिना शब्द के, रुखे शब्द के बादल श्रेष्ठ नहीं होते ।

वहुवाताश्च छिन्नाश्च विगन्धा दुः प्रदर्शिनः ।

अन्धकारसमुत्पन्ना गर्भास्ते ऽपि न पूजिताः ॥

बहुत वायु से युक्त, छिन्न भिन्न हुये, बिना सुगन्धि के, देखने में अप्रिय लगने वाले, वा अन्धकार करने वाले बादल श्रेष्ठ नहीं होते ।

मन्दवृष्टिरनावृष्टिर्भयं राजपराजयम् ।

दुर्भिक्षं मरणं रोगं गर्भाः कुर्वन्ति तादृशाः ॥

ऐसे निन्दित बादल गर्भ धारण के समय जिस देश में हों, उस देश में मन्दवृष्टि वा अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, भय, राज्य का पराजय, मृत्यु, रोग तथा चोरादि का उपद्रव होवे ।

गर्भ नाश करने वाले उत्पात

गर्भोपघात लिङ्गान्युल्काशनिपांशुपातदिग्दाहाः ।

क्षितिकम्पयपुरकीलके तुग्रहयुद्धनिर्धाताः ॥

रुधिरादिवृष्टि वैकृतपरिघेन्द्र धनूपि दर्शनं राहोः ।

इत्युत्पातैरोभिस्त्रिविधैश्चान्यैर्हतो गर्भः ॥

गर्भ धारण के समय यदि उल्का गिरे बिजली गिरे, आंधी आवेस दिग्दाह हो, भूमि कम्पन हो, गंधर्व नगर कीलक (सूर्य में काली डाग इसका निर्णय दिव्य निमित्त में करेंगे) वा पुच्छल तारा दिखे, ग्रह युद्ध हो मंगल, बुध, गुरु (बृहस्पति), शुक्र और शनि इनमें से कोइ दो ग्रह आकाश में एक दूसरे के बिल्कुल नजदीक आ

जावे।) बिना बाढ़ल के आकाश गाजे, रुधिर मांस, केश, हड्डी, आदि की वर्षा हो, परिघ (सूर्य के उदय वा अस्त के समय बाढ़ल की तिरछी रेखा) हो, संध्या के बिना इन्द्रधनुष हो, अथवा सूर्य वा चंद्रमा का ग्रहण हो। इत्यादि में से कोई हो तो – अथवा भौम, अन्तरिक्ष और दिव्य इन तीन निमिनों के किसी पदार्थ में उत्पात हो जावे तो गर्भ का नाश हो जाता है। अतः जिस गर्भ का धारण काल में ही नष्ट जाता है वह फिर नहीं बरसेगा।

### गर्भों के साव होने (गल जाने) का ज्ञान।

जैसे मनुष्य पशु पक्षी आदि के गर्भ अपने 2 समय तक उदर में पक के फिर प्रसव होते हैं, वैसे ही जल गर्भ अन्तरिक्ष रूपी उदर में 6.1/2 महीनों में पक के फिर प्रसव होते हैं। अतः

**यनक्षत्रमुपते गर्भस्वन्दे भवेत् स चन्द्रवशात्।**

**पञ्चनवते दिनशते तत्रैव प्रसवमायाति ॥**

जिस दिन गर्भ धारण हो उस दिन जो नक्षत्र हो वही नक्षत्र 6.5 महीनों से पीछा आवे उसी दिन उस गर्भ का जल वर्षे।

**पञ्चाङ्गलचन्द्रादिवसानिरुक्तावारस्वतुर्थःकरणं तृतीयम्।**

**योगस्तथा षोडशकस्तदृक्षम् गर्भादिकालःकथितो मुनीन्द्रैः॥**

गर्भ धारण के समय जो तिथि हो वही तिथि, जो नक्षत्र हो वही नक्षत्र जो वार हो उससे 4 था वार, जो योग हो उससे 1 6वां योग और जो करण हो उससे 3रा करण- प्रायः ये सब 6.1/2 महीनों से (प्रसव के समय) आ जाते हैं।

**सितपक्षभवाः कृष्णे शुक्ले कृष्णे द्युसम्भवा रात्रौ।**

**नक्तंप्रभवाश्चाहनि सन्ध्याजाताश्च सन्ध्यायाम्॥**

गर्भ धारण शुक्ल पक्ष में हो तो पीछे कृष्ण पक्ष में, कृष्ण पक्ष में हो तो शुक्ल पक्ष में, दिन में हो तो रात्रि में, रात्रि में हो तो दिन में, प्रातः सन्ध्या में हो तो सायं सन्ध्या में और सायं सन्ध्या में हो तो प्रातः सन्ध्या में (अर्थात् 6.1/2 महीने और 4 प्रहर के पश्चात्) पीछे वर्षेगा।

**पूर्वोद्यूताः पश्चादपरोद्याः प्राग्भवन्ति जीमूताः।**

**शेषास्वपि दिक्षेवं विपर्ययो भवति वायोश्व॥**

गर्भ धारण के समय बाढ़ल यादि पूर्व में उत्पन्न हुये हों तो वर्षने के समय पश्चिम से और पश्चिम में हो तो पूर्व से आ के वर्षे, ऐसे ही दृसरी दिशाओं के बाढ़ल जाने, तथा वायु भी गर्भ धारण के समय जिस दिशा का होगा वर्षने के समय उसके सामने की दिशा का होगा।

**पवनाभ्रवृष्टिविद्युद्गर्जितशीतोष्ण रश्मि परिवेषाः।**

**जलस्यैनसहोक्ता दशधा गर्भ प्रसवहेतुः ॥**

गर्भ प्रसव होने के समय वायु, बाढ़ल, बिजली, गाज, वर्षा, अति शीत, अति उष्णता, मोघ, कुण्डल और जल में उष्णता – ये 10 लक्षण होते हैं; अर्थात् ये लक्षण हो तो जाने कि गर्भ अवश्य वर्षने वाला है। इनमें से जितने लक्षण अधिक होंगे उतना ही जल अधिक वर्षेगा।

**नक्षत्र विशेष में धारण हुये दो गर्भों से वर्षा का ज्ञान।**

**भाद्रपदाद्वयविश्वाम्बुदेव पैतामहेष्वथर्क्षेषु ।**

**सर्वेष्वृत्तुषु विवृद्धो गर्भो बहुतोयदो भवति ॥**

गर्भ धारण के समय यदि रोहिणी, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, पूर्वा भाद्र पदा और उत्तरा भाद्र पदा – इन 5 नक्षत्रों में से कोई नक्षत्र हो और कोल विशेष के लक्षणों से उस की पुष्टि हुई हो तो वह गर्भ बहुत जल बरसे।

**शतभिषगाश्लेषाद्रास्वातिमधा संयुतः शुभो गर्भः।**

**पुण्याति बहून् दिवसान् हन्त्युत्पातैर्हतस्त्रिविधैः ॥**

**मृगमासादिष्वष्टौ षह षोडश विशतिस्वतुर्युक्ता ।**

**विशंतिरथ दिवसप्तयमेकतमर्क्षण पञ्चभ्यः ॥**

किसी भी मास में आद्रा, अश्लेषा, मधा, रवाति और शतभिषा – इन 5 नक्षत्रों में से किसी नक्षत्र में गर्भ धारण हो तो उस की पुष्टि करने वाले सामान्य लक्षण बहुत दिनों तक होते रहते हैं; इसलिए उस गर्भ का जल बहुत दिनों तक वर्षता है। जैसे – मृगशिर के गर्भ 8 दिन, पौष के 6 दिन, माघ के 19 दिन, फाल्गुन के 24 दिन, चैत्र के 20 दिन और वैशाख के गर्भ 3 दिन तक वर्षता है – अर्थात् गर्भ पकने के दिन से ले के इतने दिनों तक वर्षा की झड़ी लगती है। परन्तु जो कभी पुष्टि होने के दिनों में ही तीन प्रकार के (भौम, अन्तरिक्ष और दिव्य) में

से किसी उत्पात से नष्ट हो जावे तो फिर उतने दिन नहीं बरसेगा।

नक्षत्रे न तिथौ चापि मुहूर्ते करणे दिश।

यत्र यत्र समुत्पन्नाः स्निधाः सर्वत्र पूजिताः ॥

चाहे जिस नक्षत्र, तिथि, मुहूर्त, करण और दिश में धारण हो परन्तु स्निध बादलों के गर्भ सब ही त्रेष्ठ होते हैं।

कूर ग्रह संयुक्ते करकाशनि मत्स्यवर्षदा गर्भाः ।

शशिनि रवौ वा शुभसंयुते क्षिते भूरि वृष्टि कराः ॥

जिस नक्षत्र में गर्भ धारण हो वह नक्षत्र यदि किसी पाप ग्रह (सूर्य, मंगल, शनि, राहु व केतु) से युक्त हो तो पीछे बरसने के समय ओले पड़े, बिजली गिरे व जल के साथ मछलियाँ बरसे। और जो उस समय कोई शुभ ग्रह सूर्य व चन्द्रमा के साथ हो व उन्हें देखे तो बरसने के समय बहुत जल बरसे।

प्रकारान्तर से (सूर्य नक्षत्रानुसार) गर्भ धारण व वर्षा का ज्ञान

मूलादेषु दशेन्मितेषु रविभेष्वाभ्राम्बुपातोदाय

श्वेतस्यात्तर्हि शिवर्क्षतो रवियुजां गर्भो दाशानां भवेत् ।

गर्भाहाच्छरनन्द भूमित वृष्टिस्तु मेषे रवौ,

चन्द्राद्ये दशके शिवतोम्बुपतने स्याद्र्भपातो बृथैः ॥

सूर्य मूल नक्षत्र पर आवे वहाँ से ले के अश्विनी पर रहे तब तक गर्भ धारण का समय है, और आद्रा पर आवे वहाँ से स्वाति पर रहे तब तक पीछे वर्षने का समय है अर्थात् मूलके गर्भ आद्रा में, पूर्वाषाढ़ा के पुनर्वसु में, उत्तराषाढ़ा के पुष्य में, श्रवण के अश्लेषा में, घनिष्ठा के मध्य में, शतभिषा के पूर्व फाल्युनि में, पूर्वा भाद्रपदा के उत्तरा फाल्युनि में, उत्तरा भाद्रपदा के हस्त में, रेवती के चित्रा में और अश्विनी के स्वाति में 195 दिन से वर्षते हैं। परन्तु मेष संक्रान्ति में यदि वर्षा हो जावे और उस दिन चन्द्रमा का नक्षत्र अश्विनी हो तो मूल के, भरणी हो तो पूर्वाषाढ़ा के, कृतिका हो तो उत्तराषाढ़ा के, रोहिणी हो तो श्रवण के, मृगशिर हो तो घनिष्ठा के, आद्रा होतो शतभिषा के पुनर्वसु हो तो पूर्वाभाद्रपदा के, पुष्य हो तो उत्तराभाद्रपदा के, अश्लेषा हो तो रेवती के और मध्य हो तो अश्विनी के गर्भ गल जाते हैं। अर्थात् फिर नहीं वर्षते हैं; और जो नहीं गले वे वर्षते हैं।

आद्रा पुनर्वसुः पुष्यमश्लेषाश्च मधास्तथा ।

पञ्चभिर्गतिर्क्षैश्चिद्रं वर्षति माधवः ॥

यदि सूर्य के आद्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा और मध्य-इन पाँचों ही नक्षत्रों में वर्षने वाले गर्भ गल जावे तो फिर वर्षाकाल में बहुत हो कम वर्षा होवे, क्योंकि वर्षा काल के मुख्य रूप ये ही नक्षत्र हैं।

गर्भों के निमित्तों से वर्षा का स्थल परिमाणादि निर्णय

पञ्चनिमित्तैः शतयोजने तदद्वाद्विमेकहान्याऽताः ।

वर्षति पञ्चनिमित्ताद्रूपेणैकैन यो गर्भः ॥

गर्भ धारण के समय पाँचों निमित्त इकट्ठे हो तो पीछे वर्षने के समय 400 कोस में, चार हो तो 200 कोस में, तीन हों तो 100 कोस में, दो हों तो 50 कोस में और जो एक ही निमित्त हो तो 25 कोस में वर्षा होती है। अर्थात् गर्भ धारण के स्थान से चारों ओर इतने कोसों में जल बरसता है।

द्रोणः पञ्च निमित्ते गर्भे त्रोण्याद्कानि पवनेन ।

षट् विद्युता नवाभैः स्तनितेन द्वादश प्रसवे ॥

गर्भ धारण के समय पाँचों निमित्तों में से मुख्य करके वायु प्रथाङ्क<sup>1</sup> हो तो पीछे वर्षने के समय 3 आढ़क बादल हो तो 9 आढ़क, बिजली हो तो 6 आढ़क, गाज हो तो 12 आढ़क और वर्षा (थोड़ी सी) हो तो 4 आढ़क (1 द्रोण) जल बरसता है।

(पैमाना 1 द्रोण = 6.25 से.मी. = 62.5 मि.मी. = 2 इंच)

(एवं 1 द्रोण = 4 आढ़क)

पवन सतिलविद्युदगर्जिताऽभ्रान्वितोयः

स भवति वहुतोयं पंचरूपाभ्युपेतः ।

विसृजति यदि तोयं गर्भकाले ऽतिभूरि

प्रसवसमयमित्वा शीकराम्भः करोति ॥

जिस गर्भ धारण के समय यदि वायु, बादल, बिजली, गाज और जल (थोड़ी सी वर्षा) ये पाँचों निमित्त इकट्ठे हों तो वह गर्भ पीछे वर्षने के समय बहुत अधिक जल बरसे। किन्तु जो कभी गर्भ धारण के समय ही अधिक जल बरस जाय तो फिर प्रसव के समय केवल जल की बृद्धे वर्षे।

मारुतप्रभवा गर्भा धियते मारुतेन च ।

वातवर्षश्च गर्भाश्च करोत्यपकरोति च ॥

वायु से धारण हुये गर्भों से पीछा वर्षने के समय केवल वात वृष्टि अर्थात् ज़ोर की वायु चलती है।

समय पर गर्भ के प्रसव न होने के कारण और आगे वर्षने का काल

गर्भः पुष्टः प्रसवे ग्रहोदातादिभिर्यदि न वृष्टः ।

आत्मीयगर्भसमये करकामिश्नं ददात्यम्भः ॥

गर्भ (धारण के समय) सामान्य तथा काल विशेष के लक्षणों से पुष्ट तो हुआ परंतु पीछा बरसने के समय यदि अनावृष्टि करने वाले ग्रहों के योग से अथवा भौम अन्तरिक्ष व दिव्य के निमित्तों से किसी प्रकार का उत्पात हो जाने से कोई गर्भ वर्षने से रुक जावे तो वह गर्भ जिसमिति में धारण हुआ हो उससे 12 महीने के पश्चात् उसी मिति को ओलों सहित वर्षता है। क्योंकि—

काठिन्यं याति चिरकालधृतं पयः पयस्विन्याः ।

कालातीतं तद्बत्सलिलं काठिन्य मुपयाति ॥

जैसे गाय का दूध बहुत समय तक स्तनों में रहने से कठिन हो जाता है वैसे ही समय पर नहीं बरसा हुआ गर्भ का पानी भी कठिन (ओले) बन जाता है। अर्थात् गर्भ का जल अंतरिक्ष में बहुत ऊँचा चले जाने से ऊपर की अधिक शीतल हवा लगनेके कारण जम जाता है।

गर्भों की महिमा

अनुत्पातस्वभावेन देशे स्युर्जलयोनिकाः ।

वहवः पुद्गला जीवा महावृष्टिस्तदा भवेत् ॥

उत्पातों से रहित चाहे जिस देश में यदि गर्भ अधिक धारण हों तो वहाँ वर्षा भी अधिक होगी। जैसे—

एवश्च जाङ्गतेऽपि स्युभूयांसा जलयोनिकाः ।

शुभग्रह प्रसङ्गेन महावृष्टि विधायिनः ॥

स्वभाव ही से कम वर्षा होने वाले मारवाड़ आदि जाङ्गल देशों में भी यदि

गर्भ अधिक धारण हों और वहाँ अधिकाधिक वर्षा करने वाले शुभ ग्रहों का योग आ जावे तो वहाँ भी वर्षा अधिक होवे ।

अनूपेऽपि यदा कूरग्रहवेधोऽपि सम्भवेत् ।

तदा जीवाः पुद्गलाश्च स्वत्प्लाः स्युर्जलयोनिकाः ॥

अनावृष्टि स्तदा देयस्यात्भावस्य विपर्ययात् ।

ततो यथोदितं वीक्ष्यं सर्वदेशेषु वार्दलम् ॥

और जो स्वभाव ही से अधिक वर्षा होने वाले मालवा आदि अनूप देशों में भी यदि कम गर्भ धारण हों और उनके नक्त्रों को 'कूर्म चक्र'वा 'सर्वतोभद्र चक्र' में कूर ग्रहों का योग आ जावे तो वहाँ भी कम वर्षा होवे अतः सभी देशों में गर्भ देखने चाहिए क्योंकि—

गर्भा यत्र न विद्यन्ते तत्र विद्यान्महद्यम् ।

तन्द्रदेशं प्रथमं त्यक्ता सुगमभित्वरितं श्रयेत् ॥

जिस देश में गर्भ नहीं हुये हों उस देश में बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़ता है। इसलिये उस देश को शीघ्र छोड़कर जिस देश में गर्भ धारण हुए हों उस देश में चले जाना चाहिए ।

गर्भज्ञानमिदं गुह्यं न वाच्यं यस्य कस्य चित् ।

पृथक् परीक्ष्य दातव्यं नोपाहासो यथा भवेत् ॥

यह मेघ गर्भ का ज्ञान बहुत गुप्त था उसको मैंने भले से प्रकट कर दिया है। तथापि कुपात्र शिष्य को देना नहीं किन्तु सुयोग्य शिष्य को तो देना ही चाहिए।

**वायु धारणा प्रकरण**

ज्येष्ठसिते ऽप्तम्याद्याश्चत्वारो वायुधारणा दिवसाः ।

मृदुशुभपवनाः शस्ताः स्निग्धघनस्थगितगगनाश्च ॥

ज्येष्ठ शुक्ल 8/9/10/11 ये चार दिन वायु धारणा के हैं। इन दिनों में पूर्व उत्तर व ईशान का मृदु वायु चले और आकाश स्निग्ध बादलों से ढका रहे तो धारणा शुभ है।

सविद्युतः सपृष्टतः सपांशुत्करमारुताः ।

सार्कचन्द्रपरिच्छिन्ना धारणाः शुभ धारणाः ॥

इन चार दिनों में विजली चमके, जल की बृन्दे बरसे, रेती सहित वायु चले,  
और सूर्य तथा चन्द्रमा बादलों से ढका रहे तो धारणा शुभ है।

यदा तु विद्युतः श्रेष्ठः शुभाशः प्रत्युपस्थिताः ।  
तदापि सर्वशस्यानां वृद्धि वृयाद्विक्षणः ॥

अथवा श्रेष्ठ लक्षणों वाली विजली प्रथम उत्तर, ईशान, पूर्व में उत्पन्न होकर  
चमके तो भी संपूर्ण खेती की करने योग्य उत्तम वर्षा होती है।

सपांशु वर्षा सापश्च शुभावालक्रिया अपि ।  
पक्षिणां सुखरा वाचः क्रीडा पांशुजलादिषु ॥  
रविचन्द्र परिवेषा: स्निग्धाः नात्यन्त दूषिताः ।  
वृष्टिस्तदापि विजेया सर्वशस्यार्थसाधिका ॥

अथवा जल की वर्षा के सहित धूल की वर्षा (आंधी) हो, बालक अच्छे-अच्छे  
खेल करें, पक्षी सुहावने शब्द करें, जल, रेती, गोबर आदि में क्रीड़ा करें, सूर्य  
तथा चन्द्रमा के स्निग्ध कुण्डल हों, किन्तु वे अत्यन्त दूषित न हों तो सर्व की  
खेतियों को उत्पन्न करने वाली बहुत उत्तम वर्षा होती है।

मेघः स्निग्धा संहताश्च प्रदक्षिण गतिक्रिया: ।  
तदा स्यान्महती वृष्टिः सर्वशस्याभिवृद्धये ॥

अथवा स्निग्ध, बहुत बड़े-बड़े और प्रदक्षिण गति से (पूर्व से दक्षिण, दक्षिण  
से पश्चिम, इस क्रम से) जाने वाले बादल हों तो भी संपूर्ण खेती के उपयोगी  
बहुत वर्षा होवे।

एकरूपाः शुभा ज्ञेया अशुभाः सान्तराः स्मृताः ।  
अनार्येस्तस्करैर्धेरिः पीडाचैव सरीसृपैः ॥

ऊपर कहे लक्षणों से युक्त यदि चारों ही दिन एक सरीखे निकलें तो सुवृष्टि,  
सुमिक्ष, क्षेम, कल्याण, आदि-शुभ फल होवे। और जो कभी एक सरीखे नहीं  
निकले, किन्तु कोई कैसा और कोई कैसा निकले, तो दुष्ट, चोर, सर्पादि की पीड़ा  
आदि अशुभ फल होवे।

तत्रैव स्वात्पाद्ये वृष्टे श्चतुष्टये क्रमान्मासाः ।  
श्रावणपूर्वा ज्ञेयाः परिस्तुता धारणास्ताः स्युः ॥

न्येष्ठ शुक्ला में यदि स्वाती आदि 4 रों नक्षत्रों में वर्षा हो जावे तो श्रावण  
आदि 4 महीनों में वर्षा नहीं होवे। यदि स्वाति से श्रावण में, विशाखा से भाद्रवे  
में, अनुराधा से आश्विन में और न्येष्ठा से कार्तिक में वर्षा नहीं होवे क्योंकि  
धारणा गल जाने से गर्भ गल जाते हैं।

### सद्योवृष्टि प्रकरण

अति वातज्व निर्वातं अत्युष्ण चाति शीतलम् ।

अत्यभ्रज्व निरभ्रज्वषडविधं मेघ लक्षणम् ॥

वायु बहुत ज़ोर से चले वा बिल्कुल बन्द हो, गर्मी अधिक हो वा बिल्कुल  
ही नहीं हो जिससे ठंड अधिक हो जावे, बादल बहुत अधिक हो वा बिल्कुल नहीं  
हो तो वर्षा होवे।

गिरयोऽज्जनचूर्णसन्निभा यदि वा वाष्य निरुद्धकन्दराः ।

कृक वा कुविलोचनोपमाः परिवेषाः शशिनश्चवृष्टि दोः ॥

यदि पर्वत सुर में जैसे काले दीखे वा उनकी गुफाओं से बाफ निकले अथवा  
चन्द्रमा के कुर्कुट के नेत्र जैसा जल कुण्डल हो तो वर्षा होवे।

वल्लीनां गगनतलोन्मुखाः प्रवालाः

स्नायन्ते यदि जलपांशुभिर्विहङ्गाः ।

सेवन्ते यदि च सरीसृपास्तृणा

ग्राण्यासन्नो भवति तदा जलस्य पातः॥

यदि वेलों के नवीन पत्ते आकाश की ओर ऊँचे हो जावें, पक्षी जल व रेत  
में रनान करें व कीड़े आदि जन्तु धास के अग्र भाग पर जा बैठें तो वर्षा होवे।

विररसमुदकं गोनेत्राभं वियद्विमला दिशो

लवण विकृतिः काकाण्डभं यदा च भवेन्नभः ।

पवन विगमः पोलूयन्ते झषाः स्थलगामिनो

रसनमसकृन्मण्डुकानां जलागमहे तवः ॥

यदि मेंढ़क बार-बार शब्द करें, जल की मछलियाँ भूमि पर आने लगें, लवण  
गल जाय, जल का स्वाद जाता रहे, वायु बन्द हो जावे, दिशायें निर्मल हो वा

आकाश की कान्ति गाय के नेत्र जैसी हो तथा वर्षा के कौवे के अण्डे जैसा हो तो वर्षा होवे ।

मार्जारा भृशभवनिं नखैर्लिखन्तो,  
लोहानां मलनिचयः सविस्तगन्धः ।  
रथ्यायां शिशुरचिताश्च सेतुबन्धाः  
सम्प्राप्तं जलमचिरान्निवे वदयन्ति ॥

यदि बिल्ली नाखूनों से भूमि खोदे, लोह कांसे आदि में दुर्गन्ध सहित काट आवे वा बालक वर्षा का जल रोकने के लिये मार्ग में पाल बांधे तो शीघ्र वर्षा होवे ।

विनोपधातेन पिपीलिकानामण्डोपसङ्क्रान्तिरहिव्यवायः ।  
द्रुमावरोहश्च भुजड्गमानां वृष्टे निर्मितानि गवां प्लुतं च ।

यदि चीटियाँ बिना कारण अपने अण्डे एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जावे सर्प वृक्ष पर चढ़ वैठे व गाय बार-बार शब्द करे तो वर्षा होवे ।

तरुशिखरोपगताः कृकलासागगनतलस्थितदृष्टिनिपाताः ।  
यदि च गंगा रविवीक्षणमूर्धनिपतति वारि तदा न चिरेण ॥

यदि गिरगिट वृक्ष पर बहुत ऊँचे चढ़ के आकाश की ओर देखे, व गाय आकाश की ओर देखे तो वर्षा होती है।

नचून्ति विनिर्गमं गृहाद् धुन्वन्ति श्रवणान् खुरानंपि ।  
पशवः पशुवद्यं कुकुरा यदाऽम्भः पततीति निर्दिशेत् ॥

यदि गवादि पशु श्वान घर से बाहर नहीं जाना चाहें तथा कान व पैरों को कँपावे तो वर्षा होती है।

यदा स्थिता गृहपटलेषु कुकुरारुदन्ति,  
वा यदि विततं वियन्मुखाः ।  
दिवा तडियदि च पिनाकिदिग्भवातदा,  
क्षमा भवति समैव वारिणा ॥

यदि श्वान घर की छत पर जाकर सोवे वा आकाश की ओर देखता हुआ

बार बार शब्द करे अथवा दिन को ईशान कोण में बिजली चमके तो बहुत वर्षा होवे ।

वर्षत्यपि रटति यदा गोमायुश्च प्रदोषवेलायाम् ।

सप्ताहं दुर्दिनमपि तदा पयो नात्र सन्हेदः ॥

यदि स्याल प्रदोष के समय 7 दिन तक शब्द करें तथा दुर्दिन भी हो तो अवश्य वर्षा होती है।

प्रविशति यदि खद्योतो जलदसमीपेषु रजनीषु ।

केदारपूर्णमधिकं वर्षति देवस्तदा नाचिरात् ॥

यदि रात्रि के समय खद्योत जल के निकट जाय तो बहुत वर्षा होवे जिससे तालाब आदि भर जावे ।

दक्षिणे प्रवत्नो वातः सकृदेव प्रजायते ।

बारुणेचैव नक्षत्रे शीघ्रं वर्षति माघवः ॥

यदि शतभिषा नक्षत्र के दिन वायु दक्षिण की ओर से बहुत जोर की चले तो शीघ्र अवश्य वर्षा होती है।

धूमिताः स्युर्दिशाः सर्वा पूर्ववाते वहत्यपि ।

चतुर्यामान्तरे मेघः सरांसिपरिपूरयेत् ॥

यदि संपूर्ण दिशाओं में धुआँ दिखे और उस समय पूर्व की वायु चले तो 4 प्रहर में बहुत वर्षा होवे ।

स्तनितं निशि विद्युतो दिवा, रुधिरनिभा यदि दण्डवत्सिताः ।

पवनः पुरतश्च शीतलो यदि सलिलस्य तदाऽगमो भवेत् ॥

यदि वायु पूर्व की शीतल चले, दिन में लाल रंग की दण्डाकार बिजली चमके तथा रात्रि में गाजे तो वर्षा होवे ।

वार्दले रात्रिवासश्चेत् खद्योतेषु निशि द्युतिः ।

जलेषु चोष्णता सद्यो मेघवर्षाऽभि लक्षणम् ॥

यदि रात्रि के बादल दिन में वासी रहे तथा रात्रि में खद्योत (आगिया) चमकते दिखें और जल में उष्णता हो तो वर्षा होवे ।

यदि तितिरपत्रनिभं गगनं मुदिताः प्रवदन्ति च पक्षिगणाः।

उदयास्तमये सवितुर्धनिशं विसृजन्ति घना न चिरेण जलम्।

यदि तीतर पक्षी के पंख जैसे विचित्र बादल हों और बहुत से पक्षी एकत्र होकर प्रसन्नता से शब्द करें—ऐसे लक्षण प्रातः सन्ध्या के समय हो तो उसी दिन और साथे सन्ध्या का समय हो तो उसी रात्रि में शीघ्र वर्षा होती है।

मयूरशुक चाष चातक समानवर्णा यदा,

जपाकुसुमपड्क जद्युतिमुषश्च सन्ध्या घनाः।

जलोर्मिनगनेक कच्छ पवराह मीनोपमाः ;

प्रभृतपुटसञ्चया न तु चिरेण यच्छन्त्यषः ॥

यदि बादल सन्ध्या के समय मोर, तोता, नीलकण्ठ वा पीपीहा के जैसे अति हरे वा जया वा कमल पुष्प जैसे अति लाल वर्ण के, पर्वत, नक्ष, कछुआ, मछली वा शूकर के आकार के और अनेक तहवाले सजल बादल हों तो बहुत शीघ्र वर्षा होती है।

पर्यन्तेषु सुधाशशाङ्कधवला मध्येऽज्जनालितिषः

स्तिंग्धा नैकपुटाः क्षरज्जलकणाः सोपानविच्छेदिनः।

माहेन्द्री प्रभवाः प्रयन्त्यपरतः प्राग् वाम्बुपाशोद्भवा

ये ते वारिमुचस्त्यजन्ति न चिरादभ्यः प्रभूतं भुवि॥

यदि बादल किनारों से तो सुधा (मक्कोल) वा चन्द्रमा जैसे खेत और बीच में काजल व मौर जैसे काले, रिंग्ध, अनेक तहवाले, जल की बूंदे वर्षने वाले, मकान के ऊपर चढ़ने के लिये सीढ़ियें हों वैसे आकार के और पूर्व से पश्चिम को वा पश्चिम से पूर्व को जाने वाले हों तो बहुत शीघ्र अत्यन्त वर्षा होती है।

पूर्वस्यां वार्दलं धूम्रं सूर्यास्ते यातिकृष्णता ।

उत्तरस्यां मेघमाला प्रभाते विमला दिशः ॥

मध्यानकाले जनस्ताप ईदृशं मेघलक्षणम् ।

अर्धरात्रै गते वृष्टिः प्रजातोषाय जायते ॥

यदि पूर्व दिशा में धूम्र वर्ण के बादल सूर्यास्तके समय कृष्ण वर्ण हो जावे तथा उत्तर में बादलों की माला दिखे अथवा प्रभात के समय दिशाओं निर्मल हों और

मध्यान्ह के समय सूर्य बहुत तपे तो उसी दिन आधी रात्रि के समय बहुत वर्षा होते ।

यद्यमोघकिरणाः सहस्रगेरस्तभूधरकरा इवोच्छिताः।

भूसमं रसते यदाम्बुदस्तन्महद्रवति वृष्टि लक्षणम्।

यदि बादल बहुत नीचे नीचे चलते हों तथा सन्ध्या के समय सूर्य की अमोघ संज्ञक किरणें (मोघे) बहुत लम्बी हों तो अधिक वर्षा होते ।

शक्रचापपरिधप्रतिसूर्या रोहितोऽथ तड़ितः परिवेषः।

उद्मास्तसमये यदि भानोरादिशेत्यचुरमम्बुतदाशु।

यदि सूर्य के उदय वा अस्त समय में छोटा वा बड़ा इन्द्र धनुष, सूर्य के आड़ी मेघ की रेखा, विजली, कुण्डल वा प्रतिसूर्य हो तो बहुत वर्षा होती है।

उदयां शखरिसंस्थो दुर्निरीक्ष्योऽतिदीप्त्या

द्रुतकनकनिकाशः स्तिंग्धवैदूर्य कान्तिः ।

तदहनि कुरुवेऽभस्तोयकाले विवस्वान्

प्रतपति यदि चोद्यैः खं गतोऽतीव तीक्ष्णम् ।

यदि सूर्य कठिनता से देखा जावे, वा गलाये हुये सोने के समान चक्कर खाता हुआ वा पन्नेके सदृश हरे रंग की स्तिंग्ध कान्ति वाला दीखे अथवा मध्यान्ह के समय बहुत जोर से तपे तो उसी दिन वर्षा होती है।

रात्रौ ताराः इलत्कारः प्रातश्चात्यरुणो रवि

अवृष्टौ शक्रचापश्च सद्यो वृष्टिस्तदा भवेत् ।

यदि रात्रि में तारे जगमगाहट करे, प्रभात के समय सूर्य बहुत लाल हो और इन्द्रधनुष बिना वर्षा के हो तो तत्काल वर्षा होती है।

चढ़न्ति भुजगा वृक्षे सूर्यन्दौ परिधिस्तथा ।

उर्ध्वा चेद्भुली शेते लोहे किट्टः पुनः पुनः ॥

आम्लं च तक्रं तत्कालं मत्येन्द्र धनुरुद्गतः ।

धूमितानिविडः शैलाः चर्मादिषु तथाऽऽर्द्रता ॥

गोमये उत्कराः कीटा परितापोऽतिदारुणः ।

चातकानां खेवृष्टि सद्यः स सूचयेज्जनम् ॥

यदि पर्वत में धूआँ दीखे, छाँ खट्टी हो जावे, लोह में बार-बार काट आवे,

चमड़े केश आटि में गीलापन आ जाये, गोबर में उंकीरे उठें तथा कीड़े पड़े जायें, श्वान मकान की छत पर सोये, पपीहा शब्द करे, सर्प वृक्ष पर चढ़े, मत्स्य वा इन्द्र धनुष हो, प्रतिसूर्य वा प्रतिचन्द्र दीखे वा बहत जोर की गर्मी पड़े तो तत्काल वर्षा होती है।

बादल से बादल लड़े दुग वैठे पंख विखेर ।  
याम दोय के तीन में चढ़े घटा चौफेर ॥

यदि बगुले पंखे फैला के बैठे तथा बादल से बादल टकरावें तो 2 वा 3 प्रहर में चारों ओर से वर्षा की घटा आती है।

पर्लीच्या रुखन चढ़े अम्बर गोरे हुन्तः  
परे परल पानि अति जब सन्ध्याफूलन्त ॥

ट्यादि छोटे-छोटे सर्प वृक्षों पर चढ़े, आकाश का वर्ण गौर दीखे वा सन्ध्या फूले तो बहुत वर्षा होती है।

नाग चीस सुनि रुख पर अम्बर धनुष भक्क।  
खुररि समय दिन तीन में माघव करे करक ॥

यदि सर्प वृक्ष पर चढ़े के जोर से शब्द करे वा आकाश में धनुष तने तो 3 दिन में गाज सहित वर्षा होती है।

सूरज कुण्डल जलहरी दादुर गहरे साद ।  
दिन दूजे तीजे तहाँ अम्बर करे अवाज ॥

यदि मैढ़क गम्भीरता से शब्द करे, दिशायें धुंधली होवे वा सूर्य के जलहरी सहित कुण्डल हो तो दूसरे वा तीसरे दिन गाज सहित वर्षा होती है।

उत्तरादि कांठल बंधै पूर्व वाजै वाय ।  
न्यूत्याजीमैं पावणा वर्षा विना न जाय ॥

यदि उत्तर में बादलों की पंक्ति बने और पूर्व का वायु चले तो अवश्य वर्षा होती है।

फिरयो पवन छूटी परवाई । ऊठी घटा छटा कर आई।  
घर सारी दै छोल घपाई । सारेई नाज करी सरसाई ॥

यदि किसी दिशा का वायु बदल के पूर्व का चलने लगे तथा बादलों की घटा

चढ़े के आवे तो तत्काल बहुत वर्षा होती है।

उत्तर पूर्वा दिशि वीजली चातक लवतोरंत ।

सुरयो परखाई पवन वर्षा करे अचिन्त ॥

उत्तर वा पूर्व का वायु चले वा उस उस ओर बिजली चमके वा पपीहा शब्द करे तो अचानक वर्षा होती है।

मोटे पुरतन बाहले अम्बर लेसर हुन्त ।

पवन वन्द चौफेर जब जल थल ठेल भरन्त ॥

यदि अनेक तहवाले बहुत से बादलों से आकाश ढंक जावे और उस समय वायु बिलकुल बन्द हो तो बहुत वर्षा होती है।

अति उमच काया जजै बादल उदय अनन्त ।

जब असवारी मेघ की जोषी कही निचिन्त ॥

यदि उमच (गर्मी) की अधिकता के कारण शरीर व्याकुल हो और बादल बहुत निकलें तो अवश्य वर्षा होती है।

वासी बादल स्थिर रहे गरमी तन अकुलात ।

प्रात समय जल गर्जना जब झड़ लगे विख्यात ॥

यदि रात्रि के वासी बादल बने रहे, प्रप्तः काल में गाजे और गरमी से शरीर व्याकुल हो जावे तो वर्षा की झड़ी लगे।

तपे सूर्य अति तेज तब अम्बर ताने मच्छ ।

उदय अस्त मोघन रवि वर्षा करे सत्तच्छ ॥

यदि सूर्य बहुत जोर से तपे, आकाश में मच्छ हो और दोनों संध्याओं के समय मोघे खिँचे तो बहुत वर्षा होती है।

सूर्य उगियो सतेज अड बोलै अणियाली ।

माखण गलियो भाट पवन मुख बैठे छाली ॥

कांसै झलियो काट आभ नीलै रंग आवै ।

टीटोडी जल मांह चिड़ी रेती में न्हावै ।

डेढ़का डहक बाड़ां चढ़े विष धर चढ़ बैठे बड़ा ।

माघिया पण्डित कूड़ा पतड़े घन वर्षे ऐते गुणां ॥

मक्खन गल जावें, कांसे को काट आवे, बकरी वायु के समुख बैठे, चिड़ियां रेती में तथा टिटहरी जल में स्नान करें, मेंढक जल से बाहर जा के घास आदि पर चढ़ें तथा शब्द करें, सर्प वृक्ष पर चढ़े, आड पक्षी तेजी से शब्द करे, आकाश नीला हो जावे, व सूर्य बहुत तेजदार उदय हो तो वर्षा होती है।

अधिक अमूज्यो अंग रंग रोली फिर कांच्यो ।

दाढ़ी कँवला केशवली कूंपल रे बाल्यो ॥

बड़ा सुरंगी साख आक कूंपल टहकाई ।

चन्द्र कुण्डियो चक्र तेज तारा निसिताई ॥

उकिरो उठ गोबर गल्यो भ्रमर पांख भणण भणा ।

माधिया पण्डित कूड़ा पतड़े घन वर्षे एते गुणां ॥

शरीर गर्मी से बहुत व्याकुल हो, दाढ़ी के केश कोमल हों जावे, छोटे वृक्षों की कुँपले जल जावें, आक के नवीन कुँपलें निकलें, बड़ की साखें लाल हो जावें, गोबरों में उकीरा निकलें, भौंरे पाथे भनभनावे, गिरगिट का रंग लाल हो जावें, तारों का तेज अधिक हो वा चन्द्रमा के कुण्डल हो तो वर्षा होवे ।

सांडा रोक्या द्वारा जम्बु बोलै झड़ वाया ।

कीड़ी काढ़े अण्ड पांख माखी भणकावे ॥

आलस अंग अपार नेन निद्रा अलुवावै ।

बैके पपड़यो पीव मोर कुल्हार सुणावै ॥

कुकड़ो अर्ध निशि बांगदै आभै बादलछिण छिणा ।

माधिया पण्डित कूड़ा पतड़े घन वर्षे एते गुणां ॥

मनुष्यों को आलस्य, पसीना तथा निद्रा अधिक आवें, चीटियाँ अण्डों को लेकर निकलें, मक्खियों भिनभिनावें; मुर्गा आधी रात्रि में शब्द करे, पपीहा मोर तथा न स्याल बार 2 बहुत शब्द करे, सांडे अपने दर का मुख बन्द कर लें, वा आकाश में तीतर वर्णों का बादल होवें तो वर्षा होती है।

वींभरियां भणकाय बैके पिक अमृत वाणी ।

नाड़ी तत्ता नीर पिधल आफू गुड़ पाणी ॥

श्वान उझंखि मुख श्वास भ्रमर गोबर गुड़ कावै ।

जल जन्तु अकुलाय गीत गोहा जुड़ गावै ॥

बादल रैन वासी रहे उग्रीवे अर्क झलहल जणा ।

माधिया पण्डित कूड़ा पतड़े घन वर्षे एते गुणां ॥

अफीम वा गुड़ आदि गलन लगे, तालाब नाड़ी आदि का पानी उष्ण हो जावे, भौंरे गोबर की गोलियें बनाके गुड़ाते हुये ले जावें, वीभरियों अधिक भ्रमे, कोयल मधुर शब्द करें, जल मे के जन्तु व्याकुल हो जावें, गोहें मिल के शब्द करें वा बादल वासी रहें तो वर्षा होवे ।

पवन चलै परचण्ड थंभै इक थाह थंभावै ।

चौवाया पुनि चाल उमंग बादल चढ़ आवै ॥

गहर दिवस गर्भाय पसीनो अंग बहावै ।

उमंड धुमंड घन घोर मोर कहुं सोर सुनावै ॥

धर धीर नीर वर्षे धरण गयण घोर घणणणघणा

माधिया पण्डित कूड़ा पतड़े घन वर्षे एते गुणा ॥

वायु बिल्कुल बन्द हो जावें वा बहुत जोर का चले वा चारों दिशा का चले जिससे बहुत बादल हो जावें तो वर्षा होवे ।

अनावृष्टि दक्षवाहे वृष्टिस्यादाम वाहके ।

वर्षा का प्रश्न करे उस समय अपना दाहिना स्वर चलता हो तो अनावृष्टि और बायां स्वर चलता हो तो शीघ्र वर्षा होवे ।

वर्षाकाल के प्रारंभ में यदि दक्षिण दिशा में बादल हो वा बिजली चमके वा उक्त दिशा में वायु चले तो शीघ्र वर्षा होवे ।

वर्षा शुक्ल पक्ष के दूसरे सप्ताह में प्रारंभ हो तो एक सप्ताह पर्यन्त वर्षे और कृष्ण पक्ष के दूसरे सप्ताह में हो तो शीघ्र वर्षा होवे ।

शुक्रवार के बादल वासी शनिवार तक रहे तो शीघ्र वर्षा होवे ।

अपने यहाँ से कितनी दूरी पर हो रही है सो जाननेकी रीति :-

बिजली चमकने के बाद जितने सैकंड पीछे गाज सुनाई दे उनको 1142 से गुणा कर लें और जो संख्या आवे वह फीट समझे अर्थात् उतने फीट दूरी

पर वर्षा हो रही है। (प्रकाश की गति अधिक और शब्द की गति कम होने के कारण)

### सद्यः अनावृष्टि प्रकरण

उल्का पातो दिगदाह निर्धातः पांशु वृष्ट्यः ।

इन्द्रा युद्धं च युद्धं च षडै च वृष्टि घातकाः ॥

जब अनेक प्रकार के तारे टूटे, दिगदाह, निर्धात धूलि वृष्टि (अंधकार) वर्षा वर्षने के समय इन्द्रधनुष और गृह युद्ध हो तब अनावृष्टि होती है।

वाजे पश्चिम वाय नाड़ी निरजु निर्मला ।

दिन दश मेह न थाय ग्वाल कहे सुन माघजी ।

वायु पश्चिम वा नैऋत्य का चले तथा लई (जलाशय) का पानी निर्मल वा ठण्डा हो जावे तो 10 दिन तक वर्षा नहीं होती।

पूर्व उत्तर ईश दिशि तथा न वाजे वायः ।

तावन्न वर्षे भहुली (जो) आवे त्रिभुवनरावः ॥

जब तक पूर्व उत्तर वा ईशान का वायु नहीं चले तब तक वर्षा नहीं होती है।

पर बाते गह डम्बर थाय । साझे शीतल वाय चलाय।

रातूं तारा तट मट तटः । माघ मालवे चालो चटुः।

प्रभात के समय बादलों से आकाश ढ़क जावे, मध्याह्न के समय सूर्य बहुत तपे, सन्ध्या के समय ठण्डा वायु चले और रात्रि में तारे साफ दीखें तब तक वर्षा नहीं होती है।

दिवस करे गहडम्वरी बादल रैन विलायः ।

पुनि छत्तिसयों कहे यह दुर्भिक्ष दरसायः ॥

बादल दिन में तो बहुत हो और रात्रि में पीछे सब मिट जावे तो तब तक वर्षा नहीं होती है।

उत्तरादि कांठल बंधे दक्षिण वाजे थायः ।

पय उफनता नीरज्यो आई घटा उडायः ॥

वदि उत्तर में बादलों की पंक्ति बन भी जाय किन्तु उस समय दक्षिण का वायु

चलने लगे तो वर्षने को आई हुई घटा भी बिखर जाती है।

अम्वर ताने धनुष तब वाजे पश्चिम वायः ।

अति झड़ लागी बादली तबही जाय विलायः ॥

वर्षा की झड़ी लगी हो उस समय यदि धनुष हो जावे वा पश्चिम का वायु चलने लगे तो वह वर्षा बिलकुल बन्द हो जाती है।

यावत्काकोहरा मेघा यावत्सूर्य शशी सम ।

यावर्नेऽन्नतिको वायुस्तावन्मेघो नव वर्षति ॥

जब तक नैऋत्य का वायु चले, बादल कोवे के पेट जैसे खाकी रंग के रुखे हो वा सूर्य का तेज चन्द्रमा के जैसा शीतल हो तब तक वर्षा नहीं होती है।

रोहिणी सग्रहा यावद् यावदायुश्वनैऋतै ।

रुक्षो यावत्सहस्रांश्रुस्तावन्मेघो न वर्षति ॥

जब तक नैऋत्य का वायु चले, सूर्य का वर्ण रुक्ष हो वा रोहिणी नक्षत्र पर कोई कूर ग्रह हो तब तक वर्षा नहीं होवे।

ओस जमे सिर धास मोती साझलमल करे ।

शीतल मन्द सुवास वृद्ध हुआ मेह माघजी ।

प्रातःकाल में धास पर ओस की बूंदे मोतीसी चमकें तथा शीतल मन्द सुगन्धित वायु चले तो वर्षा काल समाप्त हुआ जानना चाहिए।

गार पड़े आकाश से जमे नदी सर ताल ।

ढोक मरे वन जन्तु सब पड़े अचिन्ता काल ॥

जिस वर्ष में बहुत ओले वर्षे वा नदी तालाब आदि का पानी जम जावे ऐसी अत्यन्त ठण्ड पड़े तो उस वर्ष में जंगल के पशु-पक्षी बहुत मरे और अचानक ही दुर्भिक्ष पड़े जाता है। सं. 1961 के माघ में ऐसा हुआ था जिस से रबी की फसल तो नष्ट हुई और सं. 1962 के वर्ष में वर्षा की कमी भी रही।

### वर्षा होने का उपाय

अन्नाद्ववत्तिभूतानि पर्जन्यादन्न सम्भवः ।

यज्ञाद्ववति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्धवः ॥

श्रीमद् भगवद् गीता के 3 अध्याय में लिखा है कि सम्पूर्ण प्राणी अन्न से

उत्पन्न होते हैं, अन्न वर्षा से उत्पन्न होता है, वर्षा अग्निहोत्रादि यज्ञ करने से होती है और यज्ञ वैदिक कर्म करने से होता है। अतः सुवृष्टि के लिये यज्ञ करने की परम आवश्यकता है।

### यज्ञ प्रकरण

**सह यज्ञः प्रजाः सृष्टा पुरो वाच प्रजापतिः ।**

**अनेन प्रसविष्यद्यमेषयोऽस्तिवष्ट का मधुक ॥**

पूर्व काल में प्रजापति ने यज्ञ के सलाथ साथ प्रजाजन को कहा कि हे मनुष्यो! इस यज्ञ रूपी वैदिक कर्म को करते रह के तुम बढ़ते रहो। यह क्रिया तुम्हारे अभीष्ट सिद्धि को देने वाली है।

**देवान् भावयतातेन तेदेवा भावयन्तुवः ।**

**परस्परम्भावयन्तः श्रेय परम वाप्स्यथ ॥**

अतः तुम लोग यज्ञ द्वारा देवों का संवर्द्धन करो, वे देवगण भी सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम, कल्याण, आरोग्य, धन, सन्तान आदि से तुम्हें बढ़ावेंगे। इसी प्रकार एक दूसरे का संवर्द्धन करके तुम लोग परम कल्याण को प्राप्त होंगे।

**अग्निहोत्रं च जुहुयादायन्ते घुनिशोः सदा ।**

**दर्शेन चार्द्धमासान्ते पौर्ष मासेन चैवहि ॥**

इसलिये मन्वादि धर्म शास्त्रों में लिखा है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य प्रतिदिन प्रातः और सायंकाल में वेदमंत्रो द्वारा अग्नि में आहुति देता रहे तथा प्रति मास की अमावस्या और पूर्णिमा को विशेष हवन करे। यहाँ तक कि प्रतिदिन अग्निहोत्र किये बिना भोजन ही नहीं करे। क्योंकि

**यज्ञ शिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्व किल्विषैः ।**

**भुज्जते त्वर्ध पापा ये पचन्त्यात्म कारणात् ॥**

जो लोग अग्नि में आहुति दिये बिना अपने ही लिये भोजन बनाते हैं वे पापी लोग पाप ही का भोजन करते हैं किन्तु यज्ञ की बची हुई वस्तु खाने वाले श्रेष्ठ लोग सब पापों से छूट जाते हैं।

तात्पर्य इस का यह है कि मनुष्य के शरीर यान-वाहन, कारखानादि से जितनी दुर्गन्ध उत्पन्न होकर वायु और जल को बिगाड़ के अनावृष्टि, दुर्भिक्ष और महामारी

आदि रोगोत्पत्ति का निमित्त होने से प्राणियों को दुःख प्राप्त होता है। उतना पाप उसको अवश्य होता है। इसलिये पाप के निवारणार्थ उतनी वा उससे अधिक सुगन्ध-वायु और जल में फैलानी चाहिये। किन्तु वह सुगन्ध बिना अग्नि होत्र के सर्वत्र नहीं फैल सकती। इसलिये वैदिक पदार्थविद्या और आत्मविद्या के गृह तत्व के जाननेवाले महर्षियों ने अनेक प्रकार के यज्ञ करने का विधान किया था। यहाँ तक कि मृतक का शरीर भी अग्निहोत्र द्वारा ही भर्स करने की आज्ञा दी है।

**पुष्टं मिष्टं तथा ५५रोग्यं सुगन्धिश्च समन्वितम् ।**

**जुहूयात्तास्त्र विधिना ब्रह्माणौ सर्व कर्मणि ॥**

अतः प्राणिमात्र को सुख पहुँचाने के लिये यज्ञ द्वारा वैदिक अग्नि में दुग्ध, घृत, तन्तुलादि पुष्टि कारक: मधु, गुड़, शर्करादि मिष्टताकारक, ब्राह्मी, अमृता, सोमलतादि रोग नाशक और केशर, कपूर, चन्दनादि, सुगन्धिकारक उत्तमोत्तम पदार्थ वेद मन्त्रों द्वारा हवन करे।

**अग्नै हुत्व हुति सम्यगादित्य मुपतिष्ठते ।**

**आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टरन्तं ततः प्रजाः ॥**

यज्ञ द्वारा विधिपूर्वक अग्नि में हवन करने से होमे हुये पदार्थ सूक्ष्म परमाणु (धुआँ व भाप) रूप होकर वायु के द्वारा सूर्यलोक तक पहुँचकर सूर्य का तेज बढ़ा देते हैं जिससे समय-समय पर पूर्वोक्त पदार्थों के गुणों युक्त उत्तम जल होती है। सुवृष्टि से अन्न उत्पन्न होता है और अन्न से प्रजा की रक्षा होती है। अतः प्रजा की वृद्धि के लिये अग्नि होत्रादि यज्ञों का प्रचार अवश्य, किया जाना चाहिये।

**कर्म व्रत्मोद्धवं विद्धि ब्राह्माक्षर समुद्धवम् ।**

**तस्मात्सर्व गतं व्रत्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठतम् ॥**

इस यज्ञ रूपी कर्म को वेद से उत्पन्न जाने और वेद परब्रह्म से प्रकट हुये हैं। इसलिये सर्वव्यापक परमात्मा ही सदा इसमें व्यापक है। अतः प्राणीमात्र के कल्याणार्थ प्रतिदिन यज्ञ द्वारा ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिये कि-

**शंनो वातः पवता शंनस्तपतु सूर्यः ।**

**शंनः कनिकददेवः पर्जन्योऽभि वर्षतु ॥**

‘हे सर्व नियन्त! हमारे लिये सदैव सुखकारक शीतल, मन्द और सुगन्ध युक्त वायु चले तथा सूर्य भी सुखकारक तपे और मेघ भी सदैव काल-काल में श्रेष्ठ गर्जना से युक्त सुखकारक उत्तम जल की वर्षा करे ।’

काले वर्षतु पर्जन्युः पृथिवी शस्य शालिनी ।  
देशोऽयं क्षोभ रहितो ब्रात्मणः सन्तु निर्भयाः ॥  
सर्वेऽपि सुखिनः सन्त, सर्वे सन्त, निरामयाः ।  
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्युयात् ॥

‘हे सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर – हमारे लिये सदैव ही समय-समय पर उत्तम वर्षा हो, खेती अधिक उत्पन्न हों, देश में किसी प्रकार का उपद्रव न हो, ब्रात्मण निर्भय हों, संपूर्ण प्राणी सुखी, आरोग्य तथा एक दूसरे के कल्याण को देखकर प्रसन्न हों और कोई भी प्राणी किसी प्रकार से भी दुःखी न हो अर्थात् जगत् में सर्वप्रकार से शान्ति वर्ते जिससे हम लोग सदा आपकी प्रेमभाव से भक्ति किया करें ।’

जिस समय इस देश कों प्रतिदिन करोड़ों मनुष्यों से यज्ञ द्वारा परोपकार के लिये ईश्वर से प्रार्थना की जाती थी उस समय यहब देश संपूर्ण प्रकार के सुखों से युक्त था पर जब से यज्ञों का प्रचार घट गया तब से नाना 2 प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं। यदि अब भी यज्ञों का प्रचार पुनः किया जावे तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, महामारी आदि के दुःख मिट सकते हैं।

**अनावृष्टि आदि उपद्रवों का कारण**  
अतिलोभादसत्यादा नास्तिक्यादाप्यर्थमतः ।  
नरापचारान्नियत मुपसर्गः प्रवर्त्तते ॥  
ततोऽप्रचारो मर्त्यानाम परज्यन्ति देवताः ।  
ते सृजन्त्यद्वुतान् भगवान् दिव्यभूम्यन्तरिक्षजान् ॥

गर्गादि महर्षियों ने लिखा है कि जब मनुष्यों की प्रवृत्ति अति लोभ, असत्य वा नास्तिकता में हो जाती है तब धर्म के त्याग के अर्थर्म करने लग जाते हैं। इसलिये देवगण उनकी रक्षा नहीं करते जिससे जगत का नाश होता है। पर वह नाश किस प्रकार से होगा उसकी सूचना देवगण पहिले से ही भौम, आन्तरिक्ष

और दिव्य निमित्तों के उत्पात द्वारा कर देते हैं।  
तान् शास्त्रं निर्गमादिप्राः पश्यन्ति ज्ञानं चक्षुया ।  
प्रवदन्ति तु मर्त्यर्षु हितार्थं श्रद्धयान्विताः ॥  
परन्तु किस उत्पाद के होने से कौन सा उपद्रव होगा सो परोपकारी ब्रात्मण लोग ज्योतिष शास्त्र रूपी ज्ञान नेत्रों से देखके श्रद्धा वाले मनुष्यों के हित के लिये पहिले से प्रकाशित कर देते हैं कि अमुक समय में अमुक उपद्रव होगा ।  
तेतु सम्बोधिता विप्रेः शान्तये मङ्गलानि च ।  
श्रद्धानाः प्रकुर्वन्ति न ते यान्ति परोभवम् ।  
ये तु न प्रति कुर्वन्ति क्रियामश्रद्धयान्वितः ।  
नास्त्यक्यादथवा कोपादिनश्यन्ति चतेऽचिरात् ॥

उन परोपकारी ब्रात्मणों के वचनों पर विश्वास कर के जो लोग उत्पातों की शान्ति कर देते हैं वे लोग दुःख से बच जाते हैं किन्तु जो लोग नास्तिकता से, क्रोध, अभिमान, लोभ आदि के कारण उनके वचनों पर श्रद्धा न करके शान्ति नहीं करते वे लोग उन उपद्रवों से तत्काल नाश को प्राप्त होते हैं। जैसे सं. 1956 के वर्ष में 7 ग्रह एकत्र होने के योग आदि का अशुभ फल ज्योतिर्विदों द्वारा पहिले से प्रकाशित होने पर भी उन पर विश्वास न करने से लोगों को असहनीय कष्ट भोगना पड़ा था। अतः ज्योतिशास्त्र के पूर्ण ज्ञाता विद्वानों के वचनों पर सदा सर्वदा ही विश्वास रखना चाहिये ।

### अनावृष्टि की शान्ति के उपाय

पूर्वोक्त उत्पातों से अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं जिन की शान्ति प्राचीन शास्त्रों में, विस्तार से लिखी है उन में से अनावृष्टिकारक उत्पातों की शान्ति के प्रयोग यहाँ, लिखता हूँ।

### वैदिक मत से वर्षा का प्रयोग

वर्षा वर्षाने के लिये वेदादि शास्त्रों में अनेक प्रकार के प्रयोग लिखे हैं। उन सब में, आत्मविद्या और पदार्थ विद्या मिली हुई है जिससे उनको साधने से अवश्य वर्षा होती है। पर इस समय उस विद्या के जानने तथा साधने वाले बहुत ही कम विद्वान् मिलते हैं। अतः यहाँ केवल संक्षेप से प्रयोगों का निर्देश मात्र करता

हूँ। यदि विस्तार पूर्वक लिखूँ तो यह भी, एक मोटी पुस्तक हो जावे।

“महा २ इन्द्रोयनुजसा पञ्जन्यो वृष्टि मा २ इवस्तो भैर्व-त्सस्यत्वा वृथै।  
उपयाम् गृहीतोसि महेन्द्रायत्वैषते योनिम्है-न्द्राय त्वा स्याहा ॥”

(यजु : अ. 7. मं. 40)

प्रथम इस मंत्र को डेढ़ लक्ष जप करके सिद्ध करके फिर अनावृष्टि के समय में नीचे, लिखे हुए प्रयोग करें तो वर्षा होवे।

(1) ग्यारह दिन तक प्रतिदिन एक एक हजार जाप करे तो वर्षा होवे।

(2) इस मंत्र के अंत में (इन्द्रेहि वरुणेहि वापि कृप तडांग सरितादि परि पूरोहि) इतना और मिला के जप करे तो वर्षा होवे।

(3) इस मंत्र का संपुट रुद्राऽध्याय के प्रत्येक मंत्र को देकर/महारुद्राऽभिषेक करे, तो वर्षा होवे।

“ॐ यथा प्रति शुको भूत्वा तमेव प्रति धावति।

पापं तमेव धावंतु द्वेष्टारं प्रति गछतु” ॥ १४८८ ॥

“ॐ उत्वा मंदंतु स्तोम कृष्णष्व राघो अद्रिवः अव  
ब्रह्म द्विषो जहि” ॥ १४८९ ॥

नाभिमात्रोदके स्थित्वा उदयास्तमयं जपैत् ।

अष्टोत्तर सहस्रंतु दिनानां सप्त संख्या ॥ १४९० ॥

महावृष्टि भवेत्सम्यक् नवग्रह विवर्जितः ।

समिद्धिर्जुलोद्बूतं होमयश्च विशेषतः ॥ १४९१ ॥

(१) इन दोनों मंत्रों में से किसी एक मंत्र को 7 दिन तक नाभि मात्र जल में सूर्योदय, से सूर्योस्त तक खड़ा रह के प्रतिदिन 1008 जपे तो वर्षा होवे।

(२) इन दोनों मंत्रों में से किसी एक मंत्र द्वारा 7 दिन तक वंजूल (बेत) की समीधि में 8000 आहुति प्रतिदिन दे तो वर्षा होवे।

(३) इन दोनों मंत्रों में से किसी एक मंत्र द्वारा महा-देवजी पर सहस्रघट, नामक अभिषेक करे तो वर्षा होवे।

ॐ महान् इन्द्रो जवे जसेति (१४९२) ॥

(यजु. अ. 29 मंत्र

इस मंत्र का सम्पुट ‘इन्द्राक्षिस्तोत्र’ के देकर नाभि मात्र जल में खड़ा होके 100 पाठ करे तो वर्षा होवे।

हुत्वा युतं वैतसीनां क्षीराक्तानां हुताशने ।

तदावर्षा मवाप्सति सूक्तेना छावदेवनहि ॥ १४९३ ॥

वर्षा के लिये ‘छावदे’ सूक्त से बेत की सन्निधा में क्षीर की 10000 आहुती देवे तो महान् वर्षा होवे।

अथवा देवति सूक्तंतु वृष्टिकामः प्रयोजयेत् ।

निराहारः सिक्तन्वासा अचिरेण प्रवर्षति ॥ १४९४ ॥

इसी प्रकार उपवास धारण कर गीले वस्त्रों सहित देवति सूक्तं का जाप करे तो शीघ्र वर्षा होवे।

अनावृष्टि के समय नगर के प्राचीन स्थान व प्रतिष्ठित मन्दिर के महादेवजी, के लिंग को जल में अमुझावे अर्थात् मन्दिर के दरवाजे को आधा मूँद कर फिर लिंग पर इतना जल छढ़ावे कि जिस से वह लिंग जल में झूब जावे और उस समय वर्षा वर्षनेवाले मंत्रों का भी जाप करावे तो अवश्य वर्षा होवे।

पुराणों से वर्षा का प्रयोग ।

ॐ ऋषि शृंग महा प्राज्ञ शांतं शांताधि नायकः ।

व्रतानौमानि सर्वाणि सकलानि कुरुष्वमै ॥ १४९५ ॥

ऋषि शृंगाय मुनये विभाण्डक सुताय वै ।

नमः शांताधिपतये सद्यः सुवृष्टि हेतवे ॥ १४९६ ॥

गणपो भास्कर श्रैव कदर्पश्च दिवाकरः ।

नंदिनारायण शैव वालखिल्या महा सुराः ॥ १४९७ ॥

द्विजाः सुराश्च सन्मान्या तथा मासोप वासिनः ।

तेषां स्परण मात्रेण सद्यो वृष्टिर्भविस्यति ॥ १४९८ ॥

एहिरिन्द्रां एहि वरुणां एहि पर्जन्यं एहि ३ पुरोवातं जनय जनया तस्या

तव प्रमादयः प्रमादया ॥ १४९९ ॥

मेघ पंक्ति मुंच मुंच महदर्षय वर्षयं श्रावप-श्रावप भोसुरान् रक्षया सर्व

तडागान् परिपूर्णे कुरु २ सद्यः सुवृष्टि दे हि ॥ १५०० ॥

सद्य सुदृष्टि देहि सद्यः सुवृष्टिं देहि महा वासा सिंधुः,  
अजिराज्योति स्मृति नमेश्वरी सुकेना मित्रव्रताः ॥1509॥  
क्षत्रव्रताः सुराष्ट्रा इहमावता ५ इह वर्षतु ३  
सुब्रह्मण्यो ३ इंद्र अगच्छ अरिवः आगष्ट ॥1502॥  
मधातिथे मेषण श्वेते गौरा वस्कं दिन वर्त्तत्पायै जराः ।  
कोशिक ब्राह्मण गौतम ब्राह्मणं आवर्त्त ध्वनिवर्त्तध्व मृतवः परिवत्तरे ॥1503॥

यह शृङ्गि ऋषि का पर्जन्य सूक्त है इस को ब्राह्मणों द्वारा एक दिन में डेढ़ लक्ष पाठ कराने से वर्षा होवे ।

एरावतं समानीतो गजरत्नं पुरं दरात् ।  
पारिजातश्चत्रुश्चायं तयैवौज श्रवाइय ॥1504॥  
मारकण्डेय पुराणोक्त चण्डि पाठे

अ. ५ श्लोक ९४

प्रथम मृत्तिका का हाथी बनाकर सूखे तालाब में गाड़ दे फिर वहाँ ऊपर लिखे मंत्र का जाप करे तो वा इस मंत्र का संपुट देकर सत चण्डी का प्रयोग करे तो वर्षा होवे ।

तांत्रिका मत से वर्षा काल का प्रयोग ।  
यदा मेघा न वर्षन्ति पार्वति श्रुणु चा ५५दितः:  
आकर्षणं मन्त्र यन्त्र पूजा चैव वदाम्यहम् ॥1505॥

जगत् के कल्याण के लिये परम दयालु श्री शिवजी पार्वति से कहते हैं कि देवकोप से यदि मेघ वर्षा न करें तो वर्षा वर्षाने के लिये मेंघों बुलाने का मन्त्र यन्त्र तथा पूजा की विधि कहता हूँ जिससे अनावृष्टि से सुवृष्टि हो जावे ।

नद्यां चैव बने गत्वा मेघानां वाह्ययेद् बुधः ।  
शिवालये तडागे वा वर्जयित्वा महानदीम् ॥1506॥

गंगा, यमुना आदिज महानदी को छोड़ के किसी नदी के तट पर वा तालाब वा बन वा शिव के मन्दिर में जाके वहाँ मेघों का आवाहन करे ।

कमलेऽष्टदले वृष्टपै प्रतिष्टाव्य पयोधरान् ।  
धूप दीपैश्च कुसुमैनैवैद्यैः परि पूजयेत् ॥1507॥

कमल के आकार का अष्टदल का यन्त्र बना के उस में पर्जन्य सहित सातों मेंघों को, स्थापन करके कनेर के पीले लाल तथा श्वेत पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से पूजा करे ।

(मेघों के नाम और आवाहन मन्त्र)

ॐ ही मेघ दूताय नमः आगष्ट २स्वाहा ॥१॥  
ॐ हीं मेघ दूती कमलोद्वाय नमः आगष्ट २ स्वाहा ॥२॥  
ॐ हीं महानीलराजाय हिमवद्वासिने मेघ राजाय आगष्ट २ स्वाहा ॥३॥  
ॐ हीं नन्दकेश्वरायः जटरनिवासिने मेघराजाय आगष्ट २ स्वाहा ॥४॥  
ॐ हीं सिंहराजाय कैलाशनिवासिने मेघराजाय आगष्ट २ स्वाहा ॥५॥  
ॐ हीं कुम्भराजाय वामशृङ्गमेरु निवासाय मेघराजाय आगष्ट २ स्वाहा ॥६॥  
ॐ हीं नन्दराजाय दक्षिण शृङ्ग मेरु निवासाय मेघराजाय आगष्ट २ स्वाहा ॥७॥  
प्रविश्यार्द्धजलेदेति जपेन्मन्त्र सहस्रकम् ।  
कुसुमं करवीरं च श्री खण्डागर गुग्गुलं ॥1508॥  
अष्टोत्तर शेतं होम प्रचुर मधु सर्पिषा ।  
वर्षते नात्र सन्देहो यथा रुद्रेण भाषितम् ॥1509॥

फिर नाभि मात्र जल में खड़ा हो के ऊपर लिखे प्रत्येक मंत्र को 1000-1000 जपे पश्चात् गुग्गल, श्वेत चन्दन, अगर, कनेर के पुष्प और बहुत सी मधुर वस्तु तथा घृतकी 108, 108 आहुति प्रत्येक मंत्र से दे तो निश्चय ही वर्षा होवे ।

(इस की विशेष विधि हस्त लिखित इन्द्रयामलोक्त “रौद्रि मेघमाला” में देखो ।)

“ॐ हीं बटुकाय आपुद्वारणाय कुरु कुरु बटु काय स्वाहा” ॥  
मंत्रं जप करिष्येव दिनानां मेकं विंशति ।  
होमे वेतस सम्भुते समिद्बिर्वृष्टि दायकम् ॥1510॥  
ऊपर लिखे मंत्र का 21 दिन तक जप तथा वेत की समिधि से होम करे तो वर्षा होवे ।  
“हुं श्री हुं”  
नाभि मात्रे जले स्थित्वा जपेन्मन्त्रं प्रसन्न धीः ।  
सपादलक्षमेकं च तदावृष्टि भवेद्व्रुवम् ॥1511॥

इस मंत्र का नाभी मात्र जल में खडे रह कर के 12500 जाप करे तो वर्षा होवे

### जैन मत से वर्षा का प्रयोग

परिणामोम्बुदादीनां प्रयोगद्वा स्वभावतः  
द्विविधशागमे प्रोक्तः श्री वीरेणार्हता स्वयम् ॥1 5 1 2 ॥

जैन के शास्त्रकारें ने दो प्रकार से वर्षा होनी माना है एक तो मन्त्र प्रयोग से और दुसरी सृष्टि के स्वभाव से है।

तेत्र वर्षार्धिना सर्वेऽप्याराध्यास्तु दिवौकसः ।

विशेषाद्वृभूत् पाशी नागाभूताश्च गुह्यकाः ॥1 5 1 3 ॥

यदि सृष्टि के स्वभाव से वर्षा न हो तो प्रयोग द्वारा वर्षा वर्षाने के लिये आकाश के देवताओं की, आराधना करे। उनमें भी इन्द्र, नाग, भूत और गुह्यकों की विशेष करे।

जिनेन्द्र पूजिते सर्वे देवाः स्युर्भुवि पूजिताः ।

यस्माद्वागवती शक्तिः सर्वदेवेष्वरित्था ॥1 5 1 4 ॥

जैन के शास्त्रों में लिखा है कि पृथ्वी के सम्पूर्ण देवताओं में एक ही प्रकार की शक्ति, विद्यमान है। जिससे जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करने से पृथ्वी के सब देवताओं की पूजा हो जाती है।

### शान्ति का फल

भौमं शान्तिं हतं नाशमुपगच्छति मार्दवम् ।

नाभसं, न शमं याति दिव्यमुत्पात दर्शनम् ॥1 4 8 0 ॥

विधि पूर्वक शान्ति करने से भौम निमित्त का उत्पात तो बिलकुल शान्त हो जाता है, आन्तरिक निमित्त का उत्पात कम हो जाता है किन्तु कोई आचार्य कहते हैं कि दिव्य निमित्त का उत्पात तो शान्ति करने से भी शान्त नहीं होता क्योंकि भौम की अपेक्षा आन्तरिक और आन्तरिक की अपेक्षा दिव्य उत्पात प्रबल होता है इसलिए अल्प शान्ति करने से कभी-2 उत्पात शान्त नहीं होते हैं।

दिव्यमपि समुपैति प्रभूत कनकान्ग गो मही दानैः।

रुद्राय तने भूमौ गो दोहात् कोटि होमाच्य ॥

परन्तु बहुत सा सुवर्ण, बहुत सा अन्न, बहुत सी गायें, वा बहुत सी भूमि दान करने से अथवा महारूप की प्रसन्नता के लिये देश की सम्पूर्ण गायों का दृध भूमि पर ही दोह देने से अथवा 1 करोड़ आहुती अग्नि में हवन करने से दिव्य निमित्त का उत्पात भी शान्त हो जाता है जिससे फिर किसी प्रकार का उपद्रव नहीं होता।

ब्रात्मण भोजन की आवश्यकता

यावद्विप्रान् संतुष्टा तावतुष्टानचामरा ।

तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन ब्रात्मणान् तोषयेत्सदा ॥

जहाँ तक ब्रात्मण (ब्रह्मवेत्ता, साधु) संतुष्ट नहीं होते वहाँ तक देवता भी पूजा आदि को स्वीकार नहीं करते क्योंकि ब्रात्मण भूमि के देवता हैं। अतः स्वर्ग के देवताओं की प्रसन्नता के लिये सदैव ही सर्व प्रकार से ब्रात्मणों को संतुष्ट करें।

ब्रात्मणान् वेद विद्युषः सर्वं शास्त्रस्य विशारदान् ।

तत्र वर्षति पर्जन्यो यत्रैतान्पूज्ययेन्दृः ॥

जिस राजा के राज्य में सदैव ही वेदादि सर्व शास्त्रों के ज्ञाता ब्रात्मणों, (ब्रह्मवेत्ता साधु) का भोजनादि से सत्कार किया जाता है उस राजा के राज्य में सुवृष्टि, सुभिक्ष, क्षेम, कल्याण आरोग्य आदि से सुखों की वृद्धि होती है किंतु अनावृष्टि आदि उपद्रव नहीं होते हैं। क्योंकि-

विद्या तपः समृद्धेषु हुतं विप्र मुखाग्निषु ।

निस्तारयति दुर्गाच्च महतश्चैव किल्विषात् ॥

मनुस्मृति में लिखा है कि विद्या और तप से समृद्धिवान ब्रात्मणों (ब्रह्मवेत्ता, साधु) की मुखरूपी अग्नि में आहुति देने (अर्थात् भोजन कराने) से मनुष्य संपूर्ण प्रकार के महान् दुःखों से बच जाते हैं।

यस्य राजास्तु विषये श्रोत्रियः सीदतिक्षुधा ।

तस्यापि तत् सुधाराष्ट्रं मचिरेणैव सीदति ॥

किन्तु जिस राजा के राज्य में वैदिक कर्म कर्त्ता ब्रात्मण (साधु) भूखे मरें तो उस राजा का सम्पूर्ण देश भी तत्काल भूखे मरने लगे अर्थात् उस देश में शीघ्र

दुर्भिक्ष पड़ जावे ।

विद्वद्वोज्यमविद्वांसो येषुराष्ट्रेषु भुञ्जते ।  
तेनपापेनावृष्टि मिच्छन्ति महदा जायते भयम् ॥

क्योंकि राजा की असावधानी से ब्राह्मणों का भोजन शूद्रों (क्षुद्रों, दुष्टों) को मिलने लगे जिससे ब्राह्मण लोग क्षुधादि से दुःख भोगें तब उस अपराध से स्वर्ग के देवता अप्रसन्न हो जाते हैं जिसके कारण उस राज्य में वर्षा नहीं होवे अथवा अन्य कोई महान् भयानक उपद्रव होवे ।

पद्धिनी राजहंसश्च निग्रन्थाश्च तपोधनाः ।

यस्मिन् क्षेत्रे विसर्पन्ति सुभीक्ष तत्र निश्चयः ।

पद्धिनी स्त्री, राजहंस और नग्न (दिग्म्बर) साधु जिस क्षेत्र में विचरण करते हैं वहाँ निश्चय रूप से सुभीक्ष होता है ।

### वैज्ञानिक अनुसंधान

विश्व की अनेक घटनाएँ, गतिविधियां अनेक कार्यकरण रूपी शृंखलाओं से आबद्ध रहती हैं। जिस प्रकार एक शृंखला (चैन) अनेक कढ़ियों से बनती है किन्तु यदि कोई कड़ी टुट जावे तो वह शृंखला अखण्ड न रहकर खण्डित हो जाती है इसी प्रकार वैश्विक घटनाओं के बारे में जान लेना चाहिए। सन्दर्भ प्राप्त वर्षा के बारे में हमें विचार करना है। वर्षा भी एक दीर्घ भौतिक, रासायनिक, प्राकृतिक प्रक्रिया है। इसके अनेक कारक होते हैं। यथा समुद्र, नदी आदि जलाशय, वनस्पति, धूल-कण, सूर्य-किरण, वायु, पशु-पक्षी, मनुष्य, भूमि, पर्वत आदि-आदि। इनमें से कोई एक कड़ी / कारक / घटक / कारण / निमित्त में व्यवधान होने पर वह व्यवधान वर्षा को प्रभावित करता है। इसी प्रकार कारण की प्रबलता होने पर कार्य में भी प्रबलता आती है। आधुनिक विज्ञान में इसे पारिस्थितिकी विज्ञान कहते हैं। आधुनिक पारिस्थितिक विज्ञान तथा पर्यावरण संतुलन के अनुसार विश्व के प्रत्येक घटक की संतुलित-उपस्थिति अनिवार्य है नहीं तो पर्यावरण का संतुलन बिगड़ जाता है। वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया कि वनस्पति की कमी से तापमान का संतुलन बिगड़ जाता है। वायुमण्डल में प्राणवायु की मात्रा कम हो जाती है और  $CO_2$  कार्बन डाय ऑक्साइड की मात्रा बढ़ जाती है। इतना ही नहीं ओजोन परत में छेद पड़ जाता है और ग्रीन हाऊस पर प्रभाव पड़ता है। इससे वर्षा का संतुलन

बिगड़ जाता है। वैज्ञानिक अनुसंधान से यह भी सिद्ध हो गया है कि जलचर जीवों की हत्या से जल प्रदृष्टि होता है, आकाशचर जीवों की हत्या से वायुमण्डल प्रदृष्टि हो जाता है तथा भू-चर जीवों की हत्या से मृदा शक्ति-ह्रास हो जाती है। जब पृथ्वी के शक्तिशाली बुद्धिमान मनुष्य क्रोध, लोभ, हिंसा आदि से ग्रसित होकर जड़ या चेतनात्मक घटकों को क्षति पहुँचाता है तो वर्षा आदि भी अस्वाभाविक होना स्वाभाविक है। इसलिए पृथ्वी को संतुलित रखने के लिए, समृद्ध करने के लिए समय पर उचित वर्षा के लिए अहिंसा, सत्य, न्याय, प्रेम, निर्लोभता, सन्तुष्टि आदि गुणों की आवश्यकता है। पवित्र-भावना से भगवान की पूजा करने से जो शुभ भावात्मक तरंगे निकलती है वह तरंगे भी विश्व में अनुकूल प्रभाव डालती है। विभिन्न प्राचीन साहित्य में वर्णन पाया जाता है कि तीर्थकर, महापुरुष जिस क्षेत्र में विहार करते हैं उस क्षेत्र में सुवृष्टि होती है, सुकाल होता है और छः ऋतु के फल-फूल एक साथ वृक्ष पर लगते हैं। इसका कारण उपर्युक्त ही है।

अधिक लोभ के कारण, परिग्रह वृद्धि के कारण जब वनस्पति को काटकर कारखानाओं आदि निर्माण करते हैं तब वनस्पति की कमी तथा पर्यावरण असंतुलन के कारण वर्षा भी प्रभावित होती है। इसी प्रकार हिंसा आदि के बारे में भी जान लेना चाहिए। जो प्राचीन साहित्य में धार्मिक-वृष्टि से वर्णन किया गया है वह पूर्ण वैज्ञानिक है; इससे सिद्ध होता है। इसलिए धार्मिक सिद्धान्त के अनुसार विश्व को सुख शान्तिमय और समृद्ध बनाने के लिए अच्छी भावना भाई जाती है, अच्छे कार्य किये जाते हैं और भगवान से विश्व मंगल कामना की प्रार्थना की जाती है। यथा—

संपूजकानां प्रतिपालकानां, यतींद्रसामान्यतपोधनानम् ।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥

अर्थ— वे केवल ज्ञानी जिनेन्द्र भगवान्, पूजा करने वाले के लिए चैत्य, चैत्यालय और धर्म की रक्षा करने वालों के लिये आचार्य, उपाध्याय और साधुओं के लिये, शैक्ष्य आदि सामान्य तपस्त्रियों के लिए देश के लिए, राष्ट्र के लिए, नगर के लिए, प्रजा के लिए, शान्ति प्रदान करें।

क्षेमं सर्वप्रजानां, प्रभवतु वलवान् धार्मिको भूमिपालः,

काले काले च सम्पादितरतु मधवा, व्याधयो यांतु नाशम् ॥

दुर्भिक्षं चोरमारि; क्षणमपि जगतां मास्म भूजीव-लोके,  
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं, प्रभवतु सततं, सर्वसौख्यप्रदायि ॥15॥

**अर्थ :-** इस संसार में समस्त प्रजा का कल्याण हो, बलवान् राजा धार्मिक हो समय-समय पर इन्द्र (बरसने वाले बादल) अर्छी वर्षा करें रोग, सब नष्ट हो जावे, चोर और मारी अर्थात् प्लेग आदि मारक रोग व शस्त्रादिक से होने वाले अपघात इन संसारी जीवों के कभी नहीं हो तथा जो समस्त जीवों को सुख देने वाला है ऐसा भगवान् जिनेन्द्र देव का कहा हुआ उत्तम क्षमादि धर्मों का समूह बिना किसी रुकावट के सदा प्रवृत्त होता रहे।

### अशुभ शकुन के शक्ति के उपाय

दो मित्र थे। उनमें से एख वेश्या के यहाँ गया और एक मंदिर में भगवान् के दर्शन करने गया। लौटकर जब आये तो मंदिर में जाने वाले के पैर में काँटा लगा और वेश्या के यहाँ जाने वाले को एक Money Bag मीला जिसमें 1000 रुपये थे। वेश्यागामी ने कहा— देखा मैंने पहले ही कहा था Eat, Drink and be Merry खूब मौज उड़ाओ क्या रखा धर्म-कर्म में। और मंदिर जाने वाले ने यही कहा कि धर्म से कभी दुःख हो ही नहीं सकता। वेश्यागामी ने कहा कि पुण्य-पाप तो, जब शरीर जला दिया जाता है वहीं भ्रम हो जाता है, उसका फल नहीं मिला करता। जो कुछ हुआ उसका रहस्य जानने के लिए वे दोनों एक मुनि राज के पास गये, जो अवधि ज्ञानी थे। उन्होंने कहा कि मंदिर जाने वाले ने ऐसा कर्म बांध रखा था, जिससे उसके भाग्य में शूली का दण्ड मिलना था। परन्तु उसने वर्तमान में धर्म का पुरुषार्थ किया जिसके कारण शूली से शूल रह गया परन्तु धर्म रूपी पुरुषार्थ इतना नहीं था कि जो पूर्व में पाप-कर्म बांधा था वह पूरा का पूरा नष्ट हो जाये। इसलिए उसको काँटा ही लगा, और वेश्यागामी के भाग्य में था राज्य का मिलना, परन्तु वर्तमान के कु पुरुषार्थ से पाप से दैव नष्ट हुआ और उसे 1000रु. ही मिले। परन्तु उसका भी पुरुषार्थ इतना, नहीं था कि पूरा का पूरा पुण्य-कर्म नष्ट हो जाता। इसी प्रकार शुभ एवं अशुभ शकुन कर्म के सूचक स्वरूप दर्शन के बाद अशुभ शकुन अर्थात् पाप के शान्त के लिए भाव को निर्मल, शान्त करके भगवान् का स्मरण, मन्त्र जाप, पूजा-पाठ, दान आदि करना चाहिए और शुभ शकुन देखने पर भाव को शान्त रख करके अपना कर्तव्य

करना चाहिए। अशुभ शकुन देखने पर भयभीत, विश्वास्थ होकर के अपना पवित्र कर्तव्य को नहीं छोड़ना चाहिए। दिगम्बर जैन आचार्य गुणभद्रस्वामी ने कहा भी है—

यत्प्राप्यमन्मनि संचितं तनुभृतां कर्माशुभं वा शुभं,  
तदेवं तदुदीरणादनुभवन् दुःखं सुखं वागतम् ।  
कुर्यादः शुभमेव सोऽप्यभिमतो यस्तूभयोच्छित्तये,  
सर्वारम्भं परिग्रहं परित्यागी स वन्धं सताम् ॥

(आत्मानुशासन 262)

जीव ने पूर्वभव में जिस पाप या पुण्यकर्म का संचय किया, वह दैव है। वह दैव दो प्रकार का है। (1) पाप दैव, (2) पुण्य दैव। इन दोनों दैव का सृष्टि करने वाला जो कर्ता है वह यथाक्रम (1) असत् पुरुषार्थ, (2) शुभ पुरुषार्थ।

“शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ।”

Virtuous activity is the cause of merit (Punya) and wicked activity is the cause of demerit (Paap)

उसकी कर्म की उदीरणा से अर्थात् पाप दैव एवं पुण्य दैव का शासनकाल में दोनों दैव को अनुभव करता हुआ जो बुद्धिमान शुभ को ही करता है अर्थात् शुभ-पुरुषार्थ को करता है, पाप-पुरुषार्थ का त्याग करता है, वह ही प्रशंसा योग्य है किन्तु जो परम पुरुषार्थ दोनों दैव को ही नष्ट करने के लिए समस्त दैव का (अनुग्रह एवं कृतज्ञता, आरम्भ व परिग्रह) रूपी पराधीनता को त्याग करके परम-पुरुषार्थ रूप स्वाधीन, स्वराज्य में रमण करता है, वह तो सञ्चन परुषों के लिए भी वन्दनीय है। अनादि काल से अनन्त कुपुरुषार्थ सम्पन्न जीव प्रबल दैव के आधीन होकर संसार में परिभ्रमण कर रहा है। जब तक असम्यक् पुरुषार्थ का सिलसिला चलता रहेगा तब तक दैव की प्रचण्ड शक्ति जीव के ऊपर अनुशासन करती रहेगी। जब यह चेतन्य अनंत वीर्य युक्त आत्मा अपने पुरुषार्थ को सम्यक् रूप में परिवर्तित करके जागृत होगी तब दैव की शक्ति क्षीण होती जायेगी, जैसे घने अन्धकार भी प्रचण्ड रश्म के धारी सूर्य के उदय से विध्वंस हो जाता है, उसी प्रकार सम्यक् पुरुषार्थ के माध्यम से दैव की शक्ति विध्वंस हो जाती है। आत्मानुशासन में कहा है—

कु षोधरागादि विचेष्टितैः फलं  
त्वयापि भूयो जननादिलक्षणम् ।  
प्रतीहि भव्यः प्रतिलोम वृत्तिभिः  
ध्रुवं फलं प्राप्स्यसि तद्विलक्षणम् ॥106॥

हे भव्य ! तूने बार-बार मिथ्याज्ञान एवं रागद्वेषादि जनित प्रवृत्तियों से जो जन्म-मरणादिरूप फल प्राप्त किया उसके विरुद्ध प्रवृत्तियों रूप-सम्यग्ज्ञान एवं वैराग्य जनित आचरणों के द्वारा तू निश्चय से उसके विपरीत फल- अजर अमर पद को प्राप्त करेगा ऐसा निश्चय कर।

रागद्वेष कृताभ्यां जन्तोबन्धः प्रवृत्तयवृत्तिभ्याम् ।  
तत्वज्ञानकृताभ्यां ताम्यामेवेक्ष्यते मोक्षः ॥

(आत्मानुशासन)

राग और द्वेष के द्वारा की गई प्रवृत्ति और निवृत्ति से जीव के बंध होता है तथा तत्व ज्ञान पूर्वक की गई उसी प्रवृत्ति और निवृत्ति के द्वारा उसका मोक्ष देखा जाता है।

देषानुराग बुद्धिर्गुणदोषकृता करोति खलु पापम् ।  
तद्विपरीतापुण्यं तदुभयरहितं तयोमोक्षम् ॥181॥

गुण के विषय में की गयी द्वेष, बुद्धि तथा दोष के विषय में की गयी अनुरक्ताग बुद्धि इनसे पाप का उपार्जन होता है। इसके विपरीत गुण के विषय में होने वाली अनुराग बुद्धि और दोष के विषय में होने वाली द्वेष बुद्धि से पुण्य का उपार्जन होता है तथा उन दोनों से रहित - अनुराग बुद्धि और द्वेष बुद्धि के बिना उन दोनों पाप-पुण्य का मोक्ष अर्थात् संवर पूर्वक निर्जरा होती है।

मोहबीजाद्रतिद्वेषौ बीजान्मूलाङ्कुराविव ।  
तस्माज्ञानाग्निना दाह्यं तदेतौ निर्दिधक्षुणा ॥182॥

जिस प्रकार बीज से जड़ और अंकुर उत्पन्न होते हैं उसी प्रकार मोह रुपी बीज से राग और द्वेष उत्पन्न होते हैं, इसलिए जो इन दोनों (राग-द्वेष) को जलाना चाहता है उसे ज्ञान रुपी अग्नि के द्वारा मोह रूप बीज को जला देना चाहिये।

पुराण ग्रहदाषोत्थो गम्भीरः सगतिः सरूक् ।  
त्यागजात्यादिना मोहव्रणः शुद्धयति रोहति ॥183॥

मोह एक प्रकार का घाव है, क्योंकि वह घाव के समान ही पीड़ाकारक होता है। जिस प्रकार पुराना (बहुत समय का) शनि आदि ग्रह के दोष से उत्पन्न हुआ गहरा, नस से सहित और पीड़ा देने वाला घाव औषधियुक्त थी (मलहम) आदि से शुद्ध होकर - पीव आदि से रहित होकर भर जाता है, उसी प्रकार पुराना अर्थात् अनादिकाल से जीव के साथ रहने वाला परिग्रह के ग्रहण रूप दोष से उत्पन्न हुआ, गम्भीर (महान्) नरकादि दुर्गति का कारण और आकुलता रूप रोग से सहित ऐसा वह घाव के समान कष्टदायक मोह भी उक्त परिग्रह के परित्याग रूप मलहम से शुद्ध होकर (नष्ट होकर) ऊर्ध्वगमन (मुक्ति प्राप्ति) में सहायक होता है।

असम्यक् पुरुषार्थ से उपजे दैव, जीव को बन्धन में डालकर विविध प्रकार कष्ट देता है। परन्तु सम्यक् पुरुषार्थ से उपजे कर्म जीव को अभ्युदय सुख के साथ-साथ कर्म बन्धन को काटने के लिए सहायक होता है, जिससे जीव को स्वातंत्र्य-सुख मिलता है। जैसे- चोरी आदि अनैतिक कुपुरुषार्थ करने वाले जीव के साथ पुलिस रहती है और नैतिक देश सेवा आदि करने वाले सुपुरुषार्थी के पास पुलीस रहती है। चोर के साथ रहने वाली पुलिस चोर को अधीन में रखती है परन्तु मंत्री के साथ रहने वाली पुलिस मंत्री के अधीन में रहती है, चोर को पुलिस बन्धन आदि में डालकर कष्ट देती है, परन्तु मंत्री की रक्षा पुलिस करती है। उसी प्रकार मिथ्यावृत्ति के कुपुरुषार्थ से जो दैव संचय होते हैं वे उस जीव को बन्धन में डालकर संसार में विभिन्न प्रकार के कष्ट देते हैं परन्तु सम्यग्दृष्टि के सुपुरुषार्थ से संचित सुदैव उस जीव को स्वाधीन सुख प्राप्त करने के लिए सहायक होते हैं।

नारायण कृष्ण ने गीता में कहा है-

युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।  
युक्तस्यप्नावबोधस्य योगोभवति दुःखहा ॥

जो आहार, विहार, चेष्टा, कर्म, स्वप्न (निद्रा) एवं जाग्रत अवस्था में जो सतर्कता पूर्वक पवित्र भावना से बर्ताव करता है उसका योग अर्थात् उसका पुरुषार्थ

दुःख को, कष्ट को, विपत्तियों को नष्ट करने के लिए होता है।

य हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभः ।

सम दुःख सुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥

(गीता दूसरा अध्याय)

हे पुरुष श्रेष्ठ ! सुख दुःख में सम रहने वाले जिस बुद्धिमान पुरुष को ये विषय व्याकुल नहीं करते वह मोक्ष के योग्य बनता है।

दधे वीजे यथात्यन्तं प्रादुर्भवति नांकुर ।

कर्म वीजे तथा दधे न रोहति भंवाकुर ॥

इस प्रकार बीज अंकुर न्यायवत् अनादि अनन्त असत् पुरुषार्थ एवं भाग्य की परम्परा को परम पुरुषार्थ रूपी अग्नि से जलाकर भस्म कर देने के कारण जिस प्रकार अनादि परम्परा से चले आये बीज को दग्ध कर देने पर फिर उस बीज से अनन्त काल बीत जाने पर भी अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता, उसी प्रकार भाग्य को दग्ध करने के बाद उस भाग्य से भाग्यांकुर (संसार) पैदा नहीं हो सकता है।

उपरोक्त सिद्धान्तों से अवगत होता है कि यह संसारी जीव अनादिकाल से दैवाधीन है। जब तक आत्मविश्वास, वीतराग-विज्ञान, एवं स्व में रमण करने रूप प्रचण्ड पुरुषार्थ को नहीं करता है तब तक वह दैव के अधीन रहता है। जब स्वयं में निहित सुसुप्तशक्तियों को उजागर करके आत्म विश्वास, स्व पर विवेक करके, दैविक-शक्ति को नष्ट करने के लिए एवं स्वशक्ति को विकसित करने के लिए पुरुषार्थ करता है, तब दैविक-शक्ति क्षीण से क्षीणतर, क्षीणतम होते हुए पूर्ण रूप से विलीन हो जाती है।

प्रारभ्यते न खलु विघ्नं भयेन नीचै :

प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः ।

विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः ।

प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति ।

(भर्तृहरि नीति शतक)

अधम श्रेणी के लोग विघ्न के भय से कोई कार्य प्रारम्भ नहीं करते, मध्यम श्रेणी के लोग कार्य प्रारम्भ कर देते हैं, परन्तु विघ्न उपरिथत हो जाने पर उसे छोड़ देते

हैं। उत्तम श्रेणी के लोग कार्य प्रारम्भ करने के बाद विघ्नों से बराबर सताये जाने पर भी वे कार्य को बीच ही में छोड़ते नहीं, उसे पूरा करके ही छोड़ते हैं।

जो दृढ़ संकल्पहीन पुरुषार्थ विहीन, धैर्यहीन, आलस्य परायण लोग होते हैं, वे भविष्यत् कालीन संभाव्य, काल्पनिक-प्रकृत विघ्नों के भय से साहसहीन होकर कोई कार्य ही प्रारम्भ नहीं करते हैं। ऐसे व्यक्ति जीवन रूपी संग्राम में कभी भी विजयलक्ष्मी को वरण नहीं कर पाते। इस प्रकार के व्यक्ति निम्न श्रेणी के होते हैं। कुछ मध्यम श्रेणी के व्यक्ति कार्य तो प्रारम्भ कर लेते हैं प्रतिकूल परिस्थिति, बाधा, विघ्नों के उपरिथत होने पर धैर्य विहीन पुरुषार्थहीन होकर उस कर्म को मध्य में ही छोड़ देते हैं जो अदम्य, धैर्य, साहस, कर्तव्यनिष्ठ, पुरुषार्थवादी होते हैं, वे जिस कार्य को विचार-विमर्श करके प्रारम्भ करते हैं, उस कार्य को पूर्ण करके ही विराम लेते हैं। भले उस कार्य में अनेक बाधाओं, विघ्न, उपसर्प परिषह आये तब भी वह अपने पुरुषार्थ को तब तक गतिशील रखता है जब तक आरम्भ किया हुआ कार्य पूर्ण नहीं होता है। इसी प्रकार उन्नत श्रेणी के महान् पुरुषार्थवादी पुरुष ही स्वपर के लिए देश, राष्ट्र, समाज की उन्नति के वरदान स्वरूप होते हैं। नीतिकारों ने कहा है-

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः ।

दैवेन देयमिति का पुरुषा वदन्ति ॥

उद्योगशील पुरुषसिंह विजय लक्ष्मी को वरण करता है, परन्तु जो पुरुषार्थहीन कापुरुष होते हैं, वे केवल भाग्य का ही आश्रय लेकर बैठा रहता है।

अभी तक राजनैतिक, धार्मिक, ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में जिन्होंने उन्नति की हैं वे केवल भाग्य के ऊपर आलम्बित नहीं हुये किन्तु अदम्य, साहस, धैर्य, पुरुषार्थ का सहारा लेकर आगे बढ़े हैं। ‘जिस बात को पूर्ण करने का निश्चय किया है उसे क्षणिक असफलता के कारण मत छोड़ो’ (शेक्सपीयर)

सम्पूर्ण वेदान्त दो शब्दों में सीमित है। ‘सहो’ और ‘बचो’। (एपिक्स्टेट्स)

निरन्तर प्रयत्न और दृढ़ विश्वास से कठिनाइयाँ भी लज्जा जाती हैं और असम्भव भी सम्भव में परिवर्तित हो जाता है। (जेरेमी कोलीयर)

साहस मत छोड़ो ! आशावान् को सहायता देने के लिए सैकड़ों अवसर और क्रान्तियाँ आती हैं। शर्त यह है कि जुटे रहो ! जितना व्यक्ति बुद्धिमान होगा उतना

ही साहसी होगा। एक ही बात याद रखो—‘साहस बनाए रखो!’ तैमूर के बारे में कहते हैं कि जब शत्रुओं ने उसका पीछा न छोड़ा तो उसने किसी भग्न भवन में आश्रय लिया। एकान्त और विचारों में लीन उसकी दृष्टि एक चींटी पर पड़ी जो अनाज का एक दाना घसीटे लिए जा रही थी; उनहतर (69) प्रयत्नों के बाद भी उसने साहस न छोड़ा। दीवार के एक कोने से भारी दाने के साथ-साथ वह स्वयं भी गिर पड़ती। मगर सत्तरवीं(70) बार वह सफल होकर रही। तैमूर का टूटा हुआ साहस फिर बंध गया और उसे पुनः विजय का विश्वास हो गया। यदि फ्रेंकलिन पीयर्स वस्तुतः स्थिर प्रकृति का न होता तो वह कदापि संयुक्त राष्ट्र का प्रेसिडेंट न होता। प्रारम्भ में वह वकील के रूप में असफल रहा और इससे उसके मन पर आश्राम पहुँचा। प्रायः ऐसे अवसर पर लोग साहस त्याग बैठते हैं; किन्तु उसने कहा, नौ सौ निन्यानवे बार (999) असफल रहकर भी मैं फिर एक बार उसी कार्य को करने के लिए तत्पर हूँ। भला ऐसे महान् संकल्प के आगे कौन सी कठिनाई ठहर सकती है। ऐसे व्यक्ति के लिए कुछ भी असम्भव नहीं। एक खान के स्वामी का अनुमान था कि खान में से सोना निकलेगा। उसने मील भर लम्बी सुरंग खुदाई जिस पर एक लाख की रकम व्यय हो गई। डेढ़ साल की महेनत भी रास न आई और काम बन्द कर देना पड़ा। तब किसी दूसरी कम्पनी ने वही काम हाथ में लिया और सुरंग की गज भर आगे खुदाई करने पर स्वर्ण धातु हाथ लग गई। स्मरण रखो कि समभव है, जीवन का सोना भी गज भर आगे ही पड़ा हुआ हो।

कभी-कभी प्रचण्ड कर्म शक्ति के सामने सामान्य जीव का पुरुषार्थ निष्प्रभ होता है तो भी प्रबल पुरुषार्थ से महान शक्तिशाली महान पुरुष कर्म की शक्ति को भी पराभूत कर देते हैं। जैसे अग्नि से बीज को भ्रम करने के पश्चात् वह भ्रमभूत बीज से अंकुर की उत्पत्ति नहीं होती, उसी प्रकार प्रबल पुरुषार्थ रूपी अग्नि से भाग्य रूपी बीज को पूर्ण रूप से भ्रम किया जा सकता है। अतः सापेक्ष दृष्टि से देखने पर पुरुषार्थ भाग्य से श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त करता है। अतः भाग्य को जाग्रत करने के लिए तथा भाग्य पर विजय प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थीयों को अपने प्रबल पुरुषार्थ से भाग्य को जगाना चाहिए। उपनिषद् में भी कहा है—

आस्ते भग आसीन् स्योर्ध्वं तिष्ठति तिष्ठतः ।  
शेते निषद्य मानस्य चरति चरतो भगः ।

(चरवैति चरवैति)

पुरुषार्थ हीन होकर बैठे रहने से भाग्य भी बैठा रहता है। प्रबल पुरुषार्थ से खड़ा होने से भाग्य भी खड़ा हो जाता है। पुरुष, पुरुषार्थ हीन होकर सोने से भाग्य भी सो जाता है। प्रबल पुरुषार्थ से आगे बढ़ने से भाग्य भी आगे बढ़ता है। इसीलिए हे पुरुषार्थी! आगे बढ़ते चलो, बढ़ते चलो!

कलिः शयनो भवति संजिहानस्तु द्वापरः ।  
उत्तिष्ठतेता भवति कृतं संपद्यते चरन्—॥

चरवैति—चरवैति

पुरुष शयन करने से उसके लिए वह समय कलियुग होता है अर्थात् पुरुषार्थ नहीं करना कलियुग का आह्वान करना है। पुरुषार्थ के लिए जाग्रत होने पर उसके लिए वह काल द्वापर युग हो जाता है। कार्य करने के लिए खड़े होने पर वह काल उसके लिए त्रेता युग हो जाता है, कार्य करने के लिए आगे बढ़ने से वह काल सत्युग हो जाता है। इसलिए हे पुरुषार्थी! सत्य को प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ते ही चलो। बढ़ते ही चलो।

### कुदरती टाईम टेबल वाली चिड़िया

रीफ हेरॉन नामक चिड़िया जो ग्रेट बारियार रीफ पर सीपियों आदि का आहार करती है, प्रतिदिन ऑस्ट्रेलिया की मुख्य भूमि से 30 मील की उड़ान भरकर रीफ (समुद्री चट्टान) पर ठीक उसी समय पहुँचती है जब पानी घट रहा होता है, यद्यपि ज्वार-भाटे का समय प्रतिदिन 45 मिनट आगे-पीछे हो जाता है।

### दुनिया का सबसे अनोखा भाषाविद्

साधू तरीम नामक एक एकान्तवासी भारतीय, जो बद्रीनाथ (भारत) के पास रहता है (गुफा में), केवल हिन्दी एवं अंग्रेजी जानता है। किन्तु वह दुनिया की 1000 भाषाओं में से किसी भी भाषा में पूछे गये प्रश्नों का उत्तर दे सकता है। वह जो कहता है, उसे स्वयं नहीं समझता, किन्तु प्रश्नकर्ता यदि उत्तर पर ध्यान केन्द्रित करे तो साधू उसकी ही भाषा में ‘मानसिक दूरबोधता’ द्वारा उत्तर देता है।

श्री कृष्णपुत्राचार्य प्रणीत

यदि आकाश में बहुत मनुष्यों का शब्द तो सुनाई पडे किन्तु मनुष्य दिखे नहीं तो पाँचवे महीने में भारी रोग उत्पन्न होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥44॥

जहाँ पर मनुष्यों का अभाव होने पर भी लड़ने के शब्द सुनाई पडे तो समझो वहाँ अवश्य ही नाश होगा ॥45॥

जिस किसी देश में दुःख से भरे शब्द अचानक होने लगे तो समझो वहाँ पर घोर युद्ध होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥48॥

जहाँ पर ध्रुव पदार्थ चलने लगे और चलित पदार्थ ध्रुव हो जाय तो समझो वहाँ पर तीन महीने में गाँवों का विनाश हो जायेगा ॥49॥

जहाँ पर बाजे नहीं बजाने पर भी बहुत से बाजों के बजने का शब्द सुनाई पड़े तो उस देश या ग्राम का शीघ्र नाश होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं करना चाहिये ॥50॥

यदि गाड़ी को सर्प खींचकर गाँव की ओर लाते हुए दिखे तो समझो उस ग्राम में युद्ध का भय उपस्थित होगा ॥51॥

यदि अकस्मात् हल खेत के अन्दर खड़ा होकर नाचने लगे तो समझो नगर का नाश परचक्र के द्वारा होगा ॥52॥

नाना प्रकार के वृक्ष यदि अकस्मात् भूमि पर गिर पड़े तो उस गाँव में महामारी रोग उत्पन्न होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥53॥

यदि शहर के ठीक मध्य में कुत्ते उँचे मुँह करके रोवें तो नगर का नाश परचक्र के द्वारा होगा ॥54॥

जिस शहर में दिशा-विदिशा में कंकाल दिखे तो वहाँपर परचक्र के द्वारा राजा का विनाश होगा ॥55॥

मांस भक्षी के जत्थे जत्थे के जिस ग्राम या नगर के ऊपर उड़ते हुए दिखे तो नगर का विनाश परचक्र के द्वारा अवश्य होगा। ऐसा समझो ॥56॥

जहाँ पर बालक खेलते - खेलते आपस में ढौड़कर लड़ने लगे तो उस नगर

में अवश्य ही युद्ध होगा, ऐसा जानना चाहिये ॥67॥

यदि बालक घर में से अग्नि ला-लाकर खेलते हो तो समझो उस नगर में पाँचवे दिन अग्नि लग जायेगी, इसमें सन्देह नहीं है ॥58॥

यदि बालक चोर आया चोर आया ऐसा शब्द करते-करते ढौड़ते हो तो समझो, उस गाँव में तीसरे दिन चोर का भय उपस्थित होगा ॥59॥

मनुष्यों के गाना गाने पर हाथिनी या घोड़ी आदि उस गाने को सुने तो समझो उस देश का नाश अवश्य होगा ॥60॥

जहाँ मनुष्य गाना गावे वहाँ आकर हाथिनी घोड़ी एक महीने या पन्द्रह दिन तक गाना सुने तो उस देश का, हाथिनी या घोड़ी छह महीने में या एक वर्ष में नाश करेगी ॥61॥

यदि दोनों पशु पाँच महीने तक गाना सुनते रहे तो समझो उस देश का छह महीने में नाश हो जायेगा ॥62॥

अकाल में यदि लातादि फलती-फूलती हुई दिखाई दे तो समझना चाहिये कि थोड़े ही दिनों में देश का विनाश होगा, इसमें सन्देह नहीं है ॥69॥

छत्र के भंग होने पर राजा भंग होता है, रथ के भंग होने पर राजा का मरण होता है, और छह महीने में उस नगर का विनाश होता है ॥72॥

आभामण्डल के भंग होने पर तीसरे महीने में या पाँचवे महीने में राजा को मरण के समान पीड़ा होगी ॥73॥

अगर प्रतिमा का हाथ भंग हो जाय तो तीसरे महीने में राजकुमार का मरण होगा, और पाँच के भंग होने पर लोगों को पीड़ा होगी ॥74॥

अगर प्रतिमा स्वरथान से अपने आप चलने लगे तो समझो तीसरे महीने में प्रजा के लोगों को पीड़ा होगी ॥75॥

यदि प्रतिमा जी का सिर भंग हो जाय तो सातवें महीने में राजा के प्रधानमंत्री का मरण होगा, भुजा के टूटने पर चारों वर्णों के लोगों को पीड़ा होगी ॥76॥

यदि प्रतिमा सिंहासन से खत: ही गिर पड़े तो समझो तीसरे महीने में राजा का मरण होगा, और चोर अग्नि का भय उत्पन्न होगा ॥77॥

यदि पुनः ये सब उत्पात पन्द्रह दिन तक लगातार चलते रहे तो दुर्भिक्ष नियम से होगा ऐसा निवेदन करे ॥78॥

यदि प्रतिमा नाचती है, जिहा निकालती है, पसीना छोड़ती है एवं उसी प्रकार रोती है, धूमती है, चलती है, हँसती है, अथवा विविध रूप धारण करती होती ॥79॥

उपर्युक्त निमित्त रूप उत्पाद हो तो भारी, दुर्भिक्ष उसी प्रकार राजा को पीड़ा और तीन महीने में दुष्काल पड़ जाता है ॥80॥

यदि प्रतिमा रोते हुए दिखे तो राजा का मरण होगा, हँसने पर सारे प्रदेश में विभ्रम होगा, चलती हुई प्रतिमा दिखे वा कंपायमान दिखे तो वहाँ पर संग्राम होगा ऐसा जानना चाहिये ॥81॥

उसी प्रकार प्रतिमा के पसीना, धूम सहित निकाले तो वा ऐसे उत्पात और भी प्रकार के निकले तो फल भी बहुत प्रकार के होते हैं, यदि शिव की प्रतिमा से ऐसा हो तो समझो शीघ्र ही ब्रात्मणों का विनाश होगा ॥82॥

कुबेर की प्रतिमा से धूम सहित पसीना निकले तो वेश्यों का नाश होता है, कंधे से ऐसा हो तो भोजियों का नाश हाथों से ऐसा हो तो कायस्थों का नाश इन्द्र की प्रतिमा से ऐसा हो तो राजा का नाश होता है ॥83॥

यदि कामदेव की प्रतिमा से धूम सहित पसीना निकले तो आगम की बातों की हानि होती है, कृष्ण की मूर्ति में से ऐसा होता हुआ दिखाई दे तो समझों सब जाति के मनुष्यों की हानि होती हैं और अरिहंत, सिद्ध, बुद्ध की प्रतिमा से ऐसा दिखाई देवे तो यात्रियों एवं मनुष्यों का नाश होता है ॥84॥

यदि चण्डिका देवी के बालों से धुआँ निकल : हुए दिखे तो समझो स्त्रियों का नाश होगा, वाराही देवी की प्रतिमा के सिर से ऐसा दिखे तो हाथियों का नाश होगा ॥85॥

यदि नागिनी के शरीर से ऐसा चित्त दिखे तो स्त्रियों के गर्भ का नाश होता है। इस प्रकार जो कुछ भी कहा है उन सबका फल अशुभ ही होता है ॥86॥

यदि शिवलिंग के फूटने पर अग्नि की ज्वाला निकलती हुई दिखाई दे तो देश का नाश होगा और खून की धारा निकलती हुई दिखे तो घर-घर में रोना पड़ेगा ॥88॥

यदि छत्र चमर टूटकर राजा के आगे गिरे तो समझो पाँचवे दिन राजा का मरण अवश्य होगा ॥93॥

यदि ढोल, तुरई, शंखादिक के शब्द कान में सुनाई पड़े तो समझो पाँचवे महीने में ही राजा का मरण होगा ॥94॥

यदि भूतों से यक्ष लड़ते हुए दिखे तो समझो, वहाँ के राजा का पाँचवे महीने में अवश्य मरण हो जायेगा ॥95॥

कोट पर नाचते दिखने पर बच्चों की हानि, तोरण पर दिखे तो गर्भवती स्त्रियों को हानि, गोशाला या अश्वशाला पर यदि ऐसा दिखेतो वेश्यों का नाश अवश्य होगा ॥97॥

देव मन्दिर पर यक्ष नाचते दिखे तो ब्रात्मणों का नाश राजा के महल पर नाचे तो राजा का नाश होगा, चौराहे पर नाचते दिखे तो नगर का नाश होगा ॥98॥

यदि सूर्य में छेद दिखे तो, बीसवें दिन राजा का मरण होगा और एक वर्ष में युद्ध होगा ऐसा जानो ॥99॥

यदि दिन में उल्लू धूमते दिखे वा रात्रि में कुत्तों के रोने का शब्द सुनाई पड़े तो राजा के नगर का नाश होगा और युद्ध का भय होगा ॥100॥

यदि रात्रि में सफेद धनुष दिखे तो समझो युद्ध में रथों का नाश होकर वीर यौवा जमीन पर लेट जायेंगे ॥101॥

यदि दिन में इन्द्र धनुष पूर्व या दक्षिण अथवा वाम भाग में दिखे तो पानी का नाश करेगा और बहुत वायु चलेगी ऐसा समझो ॥102॥

यदि इन्द्र धनुष पश्चिम भाग में थोड़ा दिखे तो समझो वर्षा अच्छी होगी, और उत्तर की ओर थोड़ा झुका रहे तो शुभ नहीं है अशुभ करेगा ॥103॥

यदि इन्द्र धनुष मण्डलाकार दिखे तो अग्निदाह, और चोर भय होगा ऐसा जानो ॥104॥

जो इन्द्र धनुष का दोष जिस नगर में वा जिस राज्य में दिखे तो समझो उसकता फल उसी देश वा राज्य में होगा ॥105॥

यदि इन्द्र धनुष लम्बा, चौड़ा होता हुआ आकाश में उठते समय दिखाई पड़े तो, समझो वहाँ पर राज्य भय अवश्य होगा ॥106॥

यदि इन्द्र धनुष खड़ा होकर गिर पड़े तो मन्त्री और राजा में वैमनस्य होता है। इन्द्र धनुष उठता हुआ गिर पड़े तो समझो राजा का राज्य भंग होगा ॥107॥

इन्द्र धनुष यदि टूटता हुआ दिखे तो राजा की मृत्यु होगी, बिखरता हुआ दिखे तो रोग फैलेगा, अग्नि निकलती हुई दिखे तो युद्ध करायेगा ॥108॥

यदि इन्द्र धनुष अग्नि की ज्वाला सहित धूम छोड़े तो राजा का मरण करेगा और

देश का विनाश करता है ॥109॥

यदि इन्द्र धनुष मधुमक्खी के छत्ते के समान नगर को वेष्टित करे तो भयंकर मारी रोग होता है वा दुर्भिक्ष होगा ॥110॥

यदि इन्द्र धनुष एक के ऊपर एक दिखे एवं बहुत रूपवाला दिखे तो नगर व मनुष्यों का नाश करेगा ॥111॥

इस प्रकार इन्द्र धनुष के उत्पात सबका नाश करते हैं, और वह एक वर्ष या पाँच दिन या सात रात्रिमें फल देते हैं ॥112॥

यदि इन्द्र धनुष शान्त दिखे तो समझो उस देश में या नगर में क्षेम कुशल होता है ॥113॥

जहाँ पर बालक चलते-चलते भिक्षा दो ऐसा कहे तो उस देश में निश्चित दुर्भिक्ष-पड़ेगा ॥115॥

आचार्य कहते हैं पथरों का पड़ना भी कई प्रकार का होता है और पथर भी कई तरह के होते हैं, इसलिये उन निमित्तों को भी अलग-अलग कहा है ॥148॥

यदि पथर माला के दाने बराबर या खजूर के बराबर पड़े तो समझो सुभिक्ष होगा ॥149॥

यदि बेर के फल के समान व मूँग के समान या तुवर के समान पथर गिरें तो समझो सुभिक्ष होगा ॥150॥

शंख और सुक्ती के समान यदि पथर गिरे तो घोर वर्षा कहना चाहिये, रसों की वर्षा हो तो समझो वर्षा का शीघ्र आगमन होगा ॥151॥

मेढ़क, कुम्भ, हाथी दाँत के समान पथर गिरे तो समझो देश का नाश अवश्य होगा ॥152॥

यदि हाथी के गंडरथल के बराबर या छत्र के समान, थाली व वज्र के समान पथर गिरे तो देश का नाश अवश्य होगा व राजा की मृत्यु होगी ॥153॥

### बिजली का लक्षण

यदि उत्तर दिशा की ओर बिजली चमके तो समझो वायु चलकर वर्षा अवश्य होगी ॥154॥

यदि अग्नि कोण में बिजली चमके तो व्याधि से मरण होगा और तीन महीने में वर्षा होगी ऐसी सूचना देती है ॥155॥

यदि उपर्युक्त बिजली चमकती दिखे तो गाँव नगर का नाश अवश्य होगा और

सर्प, बिछू, मच्छर, चूहे आदि की उत्पत्ति ज्यादा होती है ॥156॥

यदि दक्षिण दिशा में बिजली चमकती द्वाई दिखाई दे तो सुभिक्ष और निरोगता बढ़ती है, किन्तु स्त्रियों के गर्भ नाश और बच्चों का नाश अवश्य कराती है ॥157॥

यदि नैऋत्य दिशा में बिजली चमके तो हवा बहुत चलती है और समय-समय पर पानी की भी वर्षा होती है ॥158॥

यदि वायव्य कोण में बिजली चमके एवं हवा अधिक चले और वर्षा कम हो तो बहुत चोरों की उत्पत्ति होती है, राजा और देश का विनाश होता है ॥159॥

यदि वरुण दिशा में बिजली चमके तो बहुत वर्षा होती है, और क्षेम सुभिक्ष कारक होता है, एवं वायव्य दिशा में चमके तो ब्रात्यों को भय करती है ॥160॥

यदि पश्चिम दिशा में बिजली चमके एवं ठण्डी हवा चले, वर्षा अच्छी हो, तो धान्यों की उत्पत्ति अच्छी होती है ॥161॥

ईशान कोण की बिजली सुभिक्ष कारक होती है, किन्तु चोरों का भय एवं राजा का नाश व रोग कारक होता है ॥162॥

### मेघ योग

जिस देश में या नगरी में मृगशिर महीने में वर्षा हो तो वहाँ पर नियम से ज्येष्ठ मास की वर्षा का नाश होता है ॥163॥

यदि पौष मास में बिजली चमककर वर्षा बरसे तो समझो आषाढ़ मास में बहुत अच्छी वर्षा होती है ॥164॥

यदि माघ या फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष में लगातार तीन दिन पानी बरसे तो समझो छेंडे महीने में या नौवे महीने में वर्षा अवश्य होगी ॥165॥

यदि प्रतिक्षण आकाश से मेघ बरसते रहे तो समझो वहाँ रोग, भय रात-दिन लोगों को सतावेगा ॥166॥

### केतु योग

जिस दिशा का धूमकेतु हो उसी दिशा में यह अशुभ फल देता है, नाश का कारण होता है ॥177॥

यदि पश्चिम दिशा में धूमकेतु का उदय हो तो पूर्व भाग का नाश करता है, और पूर्व भाग में इसका उदय हो तो पश्चिम भाग का नाश करता है ॥178॥

जहाँ धूमकेतु की पूँछ हो वहाँ भय, जहाँ सिर हो वहाँ संग्राम, जहाँ मध्य हो वहाँ आनन्द होता है ॥179॥

यदि गुरु के साथ केतु का उदय दिखे तो ब्राह्मणों का नाश चार महीने में अवश्य हो जायेगा ॥180॥

उपर्युक्त केतु धान्यों का नाश करता है, यदि शुक्र के साथ उदय हो तो क्षत्रियों का नाश करता है, चन्द्रमा के साथ उदय दिखे तो बाल-बच्चों का घात होता है॥181॥

चन्द्रमा के साथ केतु का उदय दिखे तो राजा का नाश करता है, बुध के साथ दिखे तो अच्छा है। सर्व के साथ इसका उदय दिखेतो देश का नाश करता है॥1 82 ॥

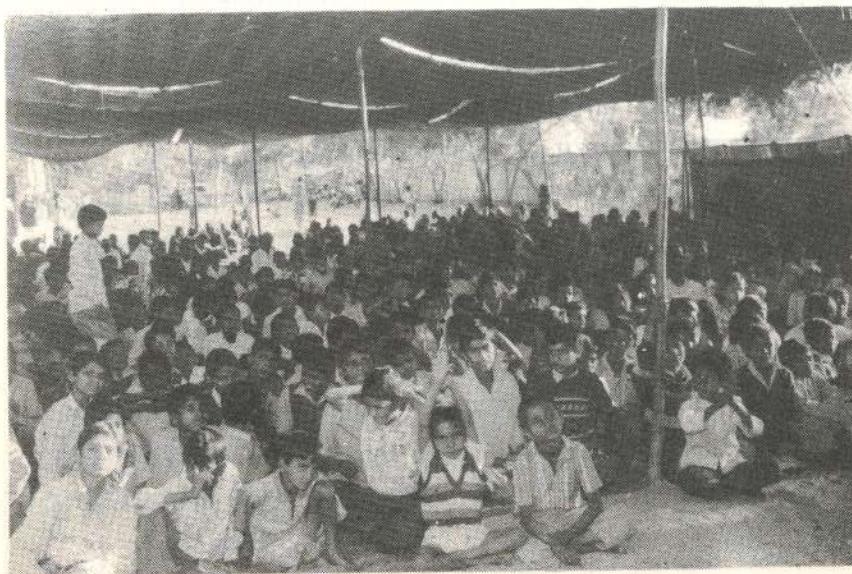
यदि केतु सायंकाल में नक्षत्र चक्र में दिखाई पड़े तो समझो, महाअशुभ है। पीछे के क्षेत्रों का विनाश करता है ॥ 183 ॥

- यदि केतु ध्रुव के अन्दर दिखाई पड़े तो सम्पूर्ण पृथ्वी का नाश करता है, और अचल पदार्थों को चलायमान कर देता है ॥ 184 ॥

जहाँ पर केतु दिखाई पड़े तो उस देश का नाश हो जाता है। इसलिये उस जगह को शीघ्र प्रयत्न से छोड़ देना चाहेये ॥ १८५ ॥

## प्रशिक्षण शिविर (डालग्राम) में शिविरार्थी बालक

(शिविर में जैनों के ५० तथा जैनेतर २५० विद्यार्थियों ने भाग लिया)



ध्यानस्त मुद्रा में  
आचार्यरत्न श्री कनकनंदीजी गुरुदेव

